जयधवलासहितं

क साय पा हु डं

भाग १०

(बेंदगी)



भारतीय दिगम्बर जैन संघ

वीर ता म. ाय जिल्ला ५० ५ ई १ हिल्ली

भा० दि० जैनसंघग्रन्थमालायाः प्रथमपुष्पस्य दशमोदलः

श्रीयतिवृषभाचार्यरचितचूर्णिसूत्रसमन्वितम् अभगवद्गुणभद्राचार्यप्रणीतम्

क सा य पा हु डं

तयोश्र श्रीवीरसेनाचार्यविरचिता जयधवला टीका

[सप्तमोऽधिकारः वेदकश्चनुयोगद्वारम्]

सम्पादको

पं० फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री, सिद्धान्ताचार्य मम्पादक महावन्ध, महमम्पादक धवला पं ० केंताशचन्द्र सिद्धान्तरत्न, सिद्धान्ताचार्य, सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थ प्रधानाचार्य स्याद्वाद महाविद्यालय काशी

प्रकाशक मंत्री साहित्य विभाग भा० दि० जैन संघ, चौरासी मथुग

वि० सं० २०२४ ।

वीरनिर्वाणाब्द २४९३ मूल्यं रूप्यकद्वादशकम् हि सं १६६७

भा० दि० जैन संघ ग्रन्थमाला

इस प्रन्थमालाका उद्देश्य
संस्कृत प्राकृत आदिमें निबद्ध दि॰ जैनागम, दर्शन,
साहित्य, पुराण आदिका यथासम्मव
हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशन

सञ्चालक

भा० दि० जैनसंघ

ग्रन्थाङ्क १-१०

प्राप्तिस्थान मैनेजर भा० दि० जैनसंघ चौरासी, मथुरा

मुद्रक श्री पं० शिवनारायण उपाध्याय नया संसार प्रेस, काशी।

Sri Dig. Jain Sangha Granthamala No 1-X

KASAYA-PAHUDAM



Churni Sutra Of Yativrashabhacharya

AND

THE JAYADHAVALA COMMENTARY OF VIRASENACHARYA THERE UPON

EDITED BY

Pandit Phulchandra Siddhantashastri

EDITOR MAHABANDHA
JOINT EDITOR DHAVALA.

Pandit Kailashachandra Siddhantashastri

Nyayat rtha, Siddhantaratna, Pradhanadhyapak Siadvada Digambara Jain Maharidyalaya Varanasi

PUBLISHED BY

THE SPERETARY PUBLICATION DEPARTMENT
THE ALL-INDIA DIGAMBAR JAIN SANGHA
CHAURASI, MATHURA

Sri Dig Jain Sangha Granthamala

Foundation year-

| Vira Niravan Samvat 2468

Asm Of the Series :-

Publication of Digambara Jain Siddhanta,

Darshana. Purana, Sahitya and other works

in Prakrit Sanskrit etc, possibly with Hindi

Commentary and Translation

DIRECTOR -

SRI BHARATA VARSHIYA DIGAMBARA JAIN SANGHA NO. 1. VOL. X.

To be had from :-

THE MANAGER

SRI DIG. JAIN SANGHA,

CHAURASI, MATHURA.

PRINTED BY
Naya Sansar Press,
Bhadaini, Varanasi-1

800 Copies,

Price Rs. Twelve only

प्रकाशककी ओरसे

कसायपाहुडं (श्री जयधवल जी) का दसवां भाग पाठकों के कर-कमलोंमें ग्रापित करते हुए हमें प्रसन्तता हो रही है। यद्यपि इस भागका प्रकाशन चार बर्प के बाद हो रहा है। नौवां भाग चार वर्ष पूर्व प्रकाशित हुग्रा था।

इस समय देशमें घोर महॅगाई होनेसे कागज, छपाई, जिल्द बॅधाई ग्रादिके व्ययमे भी वृद्धि हुई है ग्रौर इस तरह लागत व्यय पहलेसे ड्योढ़ा हो गया है। फिर भी मूल्य पुराना ही रखा गया है। ऐसे महान् ग्रन्थ बार-बार नही छपते। ग्रतः मन्दिरोके शास्त्र भण्डारोमे इन ग्रन्थराजोकी एक-एक प्रति सर्वत्र विराजमान ग्रवश्य करना चाहिये।

यह ऐसा ग्रन्थ है जिसका जिनवाग्गीसे एक तरहसे साक्षात् सम्बन्ध है। पं० श्राशाधर जीने कहा है—

> ये यजन्ते श्रुतं भक्त्या ते यजन्तेऽक्जसा जिनम्। न किञ्चिद्दन्तरं प्राहुराप्ता हि श्रुतदेवयोः॥

जो शास्त्रकी पूजन करते हैं वे वस्तुतः जिनदेवकी ही पूजन करते हैं। क्योंकि सर्वज्ञदेवने जिनवागीमें ग्रौर जिनदेवमें कुछ भी ग्रन्तर नहीं कहा है।

ग्रत जिन मन्दिरों ग्रौर जिन मृर्तियोंके निर्मागामें द्रव्य व्यय करनेके इच्छुक दानी जनोंको जिनवागाीके उद्घारमें भी ग्रपना धन लगाकर सुकीर्तिके साथ सम्य-ग्जानके प्रसारमें हाथ बटाना चाहिये।

ग्रब इस ग्रन्थके केवल चार भाग शेप है। यदि उदार धनिक एक-एक भाग ग्रपनी ग्रोरसे प्रकाशित करा दें तो यह महान् कार्य जल्द पूर्ण हो सकता है।

ग्रन्तमें हम इस कार्यमें सहयोग देनेवाले सभी सज्जनोंका ग्राभार मानते हैं।

जयधवला कार्यालय भदैनी, वाराणसी बी० नि० सं० २४६३ कैलाशचन्द्र शास्त्री मंत्री साहित्य विभाग भा० दि० जैन संघ चौरासी, मथुरा

भा० दि० जैन संघके साहित्य विभागके सदस्योंकी नामावली

संरत्तक सदस्य

- १३०००) दानवीर सेठ भागचन्दजी डोगरगढ
- ८१२५) दानवीर श्रावक शिरोमणि साह शान्तिप्रमादजी कलकत्ता
- ५०००) स्व० श्रीमन्त सर सेठ हुकुमचन्दजी इन्दौर
- ५०००) सेठ छदामीलालजी फिरोजाबाद
- ३००१ सेठ नानचन्दजी हीरालालजी गांधी उस्मानाबाद
- २५००) लाला इन्द्रसेन जी जगाधरी
- २००१) सिंघई श्रीनन्दनलालजी बीना

सहायक सदस्य

- १२५०) सेठ भगवानदामजी मधुरा
- १०००) बा० कैलाशचन्दजी एस० डी० ओ० बम्बई
- १००१) सकल दि० जैन परवार पञ्चान नागपुर
- १००१) सेठ श्यामलालजी फर्रखाबाद
- १००१) सेठ घनश्यामदामजी मरावगी लालगढ

[रा० ब० सेठ चुन्नीलालजी के सुपुत्र स्व० निहालचन्दजी की स्मृति मे]

- १०००) लाला रघुवीर सिंहजी जैना वाच कम्पनी देहली
- १०००) रायसाहब लाला उल्फतरायजी देहली
- १०००) स्व० लाला महावीरप्रमाद जी ठेकेदार देहली
- १०००) स्व० लाला रतनलाल जी मादीपुरिये देहली
- १०००) लाला धूमीमल जी धर्मदास जी देहली
- १००१) श्रीमती मनोहरी देवी मातेश्वरी लाला बसन्तलाल फिरोजीलाल जी देहली
- १०००) बाबू प्रकाशचन्द जी खण्डेलवाल ग्लार्स वर्क्स सासनी (अर्लागढ)
- १०००) लाला छोतरमल शंकरलाल जी मथुरा
- १००१) सेठ गरोशीलाल आनन्दीलाल जी आगरा
- १०००) सकल दि० जैन पंचान गया
- १०००) सेठ मुखानन्द शंकरलाल जी मुन्तानवाले देहली
- १००१) मेठ मगनलाल जी हीरालाल जी पाटनी आगरा
- १००१) स्व० श्रीमती चन्द्रावती जी धर्मपत्नी स्व० साह रामस्वरूप जी नजीवाबाद
- १००१) सेठ सुदर्शनलाल जी जसवन्तनगर
- १०००) प्रोफेसर खुशालचन्द जी गोरावाला वाराणमी
 - [स्व० पूज्य पिता शाह फुन्दीलाल जी तथा मातेश्वरो केशरोवाई गारावाला को पुण्यस्मृति में]
- १००१) सेठ मेधराज खूबचन्द जी पेंडरा रोड
- १०००) सेठ ब्रजलाल बारेलाल विरमिरी

विषय-परिचय

अनादिकालमे जैन परम्परामें जो भी मङ्गल कार्य किया जाती है उसके मंगलाचरण पूर्वक करनेका प्रधात है। टीकाकार आचार्यने अपने इष्ट मंगलकार्यकी सिद्धिके अभिप्रायवश वेदक महाधिकारके आदिमें सर्व प्रथम सिद्धोंको भाव-द्रव्य नमस्कार किया है।

जैसा कि इस अर्थाधिकारके नामसे स्पष्ट है इसमें यह संसारी जीव मोहनीय कर्म और उसके अवान्तर भेदोका कहाँ कितने काल तक सान्तर या निरन्तर किस रूपमें वेदन करता है आदि विषयका स्पष्ट निर्देश किया गया है। इसके मुख्य अधिकार दो है— उदय और उदीरणा यहाँ कथायप्राभृतके पन्द्रह अधिकारोमेंसे इसे छटा अधिकार कहा गया है। इस ग्रन्थके प्रारम्भमें आचार्यवर्य वीरसेनने इन अधिकारोंका विचार तीन प्रकारसे किया है। उसके अनुसार एक इिट्टिंग यह सातवाँ अधिकार भी ठहरता है। हमने उस हिन्टिंकी मुख्यतासे इसे सातवाँ अधिकार सूचित किया है। इसके लिए इस ग्रन्थकी प्रथम पुस्तक पर हिन्टिंगत कीजिए।

यो तो उदीरणा उदयविशेषका ही दूसरा नाम है। किन्तु उन दोनोमें अन्तर यह है कि कर्मीका जो यथाकाल फलविषाक होता है उसकी उदय संज्ञा है और जिन कर्मीका उदयकाल प्राप्त नही हुआ उनको उपाय विशेषसे पचाना उदीरणा कहलाती है इस महाधिकारको आचार्यवर्य गुणधरने चार सूत्र गाथाओं ने निबद्ध किया है। उनमें से प्रथम सूत्र गाथा किद् आवित्यं पवेसे इ इत्यादि है।

इसका विवेचन यहाँ दो प्रकारमे किया गया है। इसको प्रथम व्याख्यामे बतलाया है कि इस द्वारा प्रकृति उदीरणा, प्रकृति उदय और उसकी कारणभूत बाह्य सामग्रीका निर्देश किया गया है। वहाँ बतलाया है कि इसके प्रथम पाद द्वारा उदीरणा सूचित की गई है, दूसरे पाद द्वारा विस्तार सहित उदय सूचित किया गया है। उक्त गाथाके दूसरे पादद्वारा क्या सूचित किया गया है इसका प्रकारान्तरसे निर्देश करते हुए वहाँ बतलाया है कि अथवा उदयाविलके भीतर प्रविष्ट हुई उदय प्रकृतियों और अनुदय प्रकृतियोंको ग्रहण कर प्रवेश संज्ञावाला अर्थाधिकार इस सूत्रवचन द्वारा सूचित किया गया है।

यहां यह शंका होनेपर कि पहले जब कि वेदक महाधिकारमें उदय और उदीरणा ये दो अधिकार ही सूचित किये गये है ऐसी अवस्थामे उक्त पाद द्वारा तीसरे अधिकारका सूचन हुआ है यह कहना उपयुक्त नहीं है, समाधान करते हुए बतलाया है कि किसी भी प्रकारसे इस प्रवेश संज्ञावाले अधिकारका उदयके भीतर ही अन्तर्भाव हो जाता है, इसलिए कोई दोष नहीं है।

इसप्रकार गाथाके पूर्वार्धका स्पष्टीकरण करनेके बाद उसके उत्तरार्धका स्पष्टीकरण करते हुए बतलाया है कि क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलोको निमित्तकर कर्मोका उदम और उदीरणारूप फलविपाक होता है। यहाँ क्षेत्र पदसे नरकादि गतियोका क्षेत्र लिया गया है, भवपदमे एकेन्द्रिय आदि पर्यायोंको ग्रहण किया गया है, काल पदसे शिपिर, वसन्त, ग्रीटम और अर्घाकाल आदिका ग्रहण हुआ है तथा पुद्गल पदसे गन्ध, ताम्बुल, वस्त्र, आभरण आदि पुद्गलोका ग्रहण हुआ है।

प्रकृति उदीरणाके समग्र विवेचनके बाद प्रकृति उदयका संकेत करते हुए उक्त गाथाके उत्तरार्धका आलम्बन लेकर चूर्णिसूत्र और उसकी टीकामें पुन: इसका विचार किया गया है। वहाँ उदयकी व्याख्या करनेके बाद लिखा है कि कमौंका वह उदय क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलोंको निमित्तकर होता है। टीकाके खब्द है—खेत्त-भव-काल-पोग्गले अस्थिऊण जो द्विदिक्खयो उदिग्णफलकम्भक्खंधपरिधङ्गण-लक्खणो सोद्यो त्ति सुत्तत्थावलंबणादो।

ध्रुव, अध्रुव, एव जीवकी अपेक्षा काल, अन्तर, नाना जीवोकी अपेक्षा भगविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्धान, काल, अन्तर, भाव और अप्यबहुत्व ।

इस प्रकार इन अनुयोगद्वाराका नाम निर्देश वर सर्व प्रथम उनक गाध्यममे मूलप्रवृतिउदीरणाका विवेचन किया गया है। सुगम हानसे यहा उनका विस्तारमे स्पष्टीकरण नही करेंगे।

एकैकउत्तरप्रकृतिष्ठदीरणा

इसके बाद एकंक उत्तरप्रशृति उदीरणाता उत्तरप्र तर उच्चारणाते बलस २४ अनुयोगद्वाराका आलम्बन लेकर उसका जिचार किया गया है। १७ अनुयागद्वार तो पूर्वीक्त हैं। है। इतमे सर्व, नोमर्व, उत्कृष्ट, अनुत्रृष्ट, जघन्य, अजघन्य और सिज्ञिष्ट इत ७ अनुयोगद्वाराते मिलानेपर २४ अनुयोगद्वार हो जाते है। मोहनीयकी २६ प्रकृतियामेस प्रत्येक्वी उदीरणाका जिचार एकंक प्रकृतिउदीरणा अविकारम जिस्तारा किया गया है। मुगम होतम इसका विचार भी हम यहा पर अठगमे नकी कर रहे है।

प्रकृतिस्थान**उदीरणा**

ाग प्रभार दतना विवेचन करार बाद प्रिमृत और उच्चारणा दानामा आहानम्बन लेकर प्रष्टितिस्थानउदीरणामा विचार विधा गया है। प्रष्टानमाम रत्या जमीत् प्रप्रतिग्रूरणा नाम प्रष्टुतिस्थान है और उमकी उदीरणामा प्रणान्यानउदीरणा नाम है। एक रायम जिनना प्रप्रतियामा नदीरणा एक जीवके सम्भव है उन्ती प्रानियान रमुदावनी ए। नर्मा उदिरणा मा। ने यह उक्त क्वन्या ॥ प्याहे। इसम १७ अनुयोगद्वार ह—समुर्त्वातीनास जार अल्पाहु य तह। साथ नी मुक्तार, प्रान्ते । तार पृष्टि य ति अनुयागद्वार और जानन चाहिए।

प्रकृतिप्र**वे**श

आगे प्रात्तिप्रस्य प्रराणका जीवतार है जिसकी मुनना प्रति जनुसागहारकी प्रसा गायाके दूसरे पादर मिलती है। उस प्रकरणमें उदयाविलन प्रमेश करनेवाली उदय और अनुक्रम्प प्रमृतिमानका ग्रहण किया गया है, इसी पिए इसका प्रमृतिप्रदेश यह नाम सार्थक है। इसके दा भद है—मूल प्रमृतिप्रदेश और उत्तर प्रमृतिप्रदेश और अन्व प्रात्तिप्रदेश और उत्तर प्रमृतिप्रदेश और प्रमृतिप्रदेश दो प्रार्थ किया मुगम होतेसे यहा मूल प्रमृतप्रश और एक्किनर प्रमृतिप्रदेश जिया ग्रहण व्याप्तान न कर मात्र प्रमृतिस्थानप्रदेश जावराका समुक्त तीरा आद १७ जुयागहारा तथा भुजगार, पदिनक्षण और वृद्धि इन अधिकारा द्वारा निरू गण किया गया है।

२६ प्रइतिक प्रवेशस्थानसे लेकर १ प्रकृतिक प्रवेशस्थान तक बुल प्रवेशस्थानोकी सख्या २० है। मध्यके १६, १७, १६, १७ और १४ प्रवृतिक १ प्रवेशस्थान, ११ प्रवृतिक १ प्रवेशस्थान, ६ प्रवृतिक १ प्रवेशस्थान तथा १ प्रवृतिक १ प्रवेशस्थान कुल ६ प्रवेशस्थान नहीं है। इनमेसे कौन प्रवेशस्थान किम प्रकार घटित होना है और प्रत्येक प्रवेशस्थानमे किन प्रवृतियोग प्रतण हुआ है इसका अधिकारी भेदके वथनपूर्वक सागोपाग विचार किया गया है। आगे इसी क्रमस शेप अनुयोगद्वारी तथा भुजगार आदिका विचार कर यह अधिकार समाप्त हाता है।

प्रकृति उदय

यह तो हम पहले ही मुचित कर आये है कि बेदक अनुयोगद्वारकी प्रथम गायाके उत्तरार्धद्वारा मकारण प्रकृति उदयकी मुचना की गई है, इमलिए प्रमृतिप्रवेश अधिकारकी प्ररूपणावे बाद प्रकृति उदय अधिकारका कथन अवसर प्राप्त है, क्योंकि मोहनीय कर्मका उदय चार प्रकारका है—प्रमृति उदय, स्थिति उदय, अनुभाग उदय और प्रदेश उदय। अताप्त प्रकरणानुमार यहा मर्वप्रथम प्रमृति उदयका कथन करना चाहिए, किन्तु उदीरणाम ही उदयका ग्रहण हा जाता है, क्यांकि किचित् विशेषताको छोडकर उदीरणामे उदय मर्वया भिन्न नहीं है। इसलिए यहा उदयका म्यकारने अलगते व्याख्यान नहीं किया है।

स्थिति उदीरणा

अब वेदक अनुयोगद्वारकी दूसरी गायाके प्रथम पादद्वारा गृचित स्थितिउदीरणामा वथन अवसर प्राप्त है। स्थितिउदीरणा दा प्रकारकी हे—भूठ प्रगति स्थितिउदीरणा और उत्तर प्रवृति स्थितिउदीरणा। प्रमाणानुगम आदि कुळ अनुयागद्वार २४ है। उनमेंने मूळ प्रशृति स्थितिउदीरणामा सिनकर्षक सिवाय २३ अनुयागद्वाराक द्वारा और उत्तर प्रशृति स्थितिउदीरणामा सिन्तकर्ष महित २४ अनुयागद्वाराके द्वारा वथन हुआ है। इसके सिवाय भुजगार, पदिनक्षेप, बृद्धि और स्थान ये चार अधिकार और है। इन द्वारा भी दीना प्रकारकी स्थितिउदीरणाआका विचार । स्था गया है। इतन विचारके बाद अन्तमे सक्षेतिस स्थानका प्रस्पणा करने स्थितिउदीरणाका प्रकरण समाप्त स्था गया है।

~ 97% C~

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
मंगलाचरण	१	प्रकृति उदीरणाके दो भेदोकी तथा उसके १७	
वेदक अनुयोगद्वारके दो उत्तर भेदाकी सूचना	२	अनुयोगद्वारोकी सूचना	११
उदयका लक्षण	ર		
उदीरणांका लक्षण	२	१ मृत्तप्रकृतिउदीरणा	
उदय और उदीरणा दोनोकी वेदक संज्ञा होनेका		समुत्कीर्तनानुगम	११
बुलामा	२	मादि आदि ४ अनुयोगद्वार	 ११
इस विषयमें चार मूत्र गाथाओकी सूचना	२	स्वामित्वानुगम	१ २
प्रथम सूत्रगाथा और उसका खुलासा	₹	कालानुगम	१ २
प्रथम सूत्र गाथाके प्रथम पादसे प्रकृतिउदीरणाकी		अन्तरानुगम	१३
मूचना मिलती है इसका निर्देश	3	नाना जीवोकी अपेक्षा भंगविचय	१३
दूसरे पादसे प्रकृतिउदय और प्रकृतिप्रवेशकी		भागाभागानुगम	१४
सूचना मिलती है इसका निर्देश	४	परिमाणानुगम	8 %
क्षेत्र, भव, काल और पुगद्ल ये कर्मोदय और		क्षेत्रानुगम	१५
कर्मोदीरणाके निमित्त है इसका उक्त गाथाके		स्पर्शनानुगम	१४
उत्तरार्ध द्वारा निर्देश	ጸ	- कालानुगम	१६
कुछ परिवर्तन पूर्वक उक्त गाथाके उक्त अर्थका		अन्तरानुगम	१७
खुलासा	X	भावानुगम	१७
द्वितीय सूत्र गाथाके पूर्वार्घ द्वारा स्थिति, अनुभाग		अल्पबहुत्वानुगम	१७
और प्रदेशोदीरणाकी सूचना	દ્		
तथा उत्तरार्घ द्वारा कालादि अनुयोगद्वारोकी		२ एकैकउत्तरप्रकृतिउदीरणा	
सूचना	Ę	उत्तरप्रकृतिउदीरणाके दो भेदोका निर्देश	१८
तृतीय सूत्र गाथा द्वारा भुजगार अनुयोगद्वार और	7	एकैकउत्तरप्रकृतिउदीरणाके २४ अनुयोग	(-
उसके कालादि उत्तर अनुयोगद्वारोकी सूचना	ø	द्वारोका निर्देश	१=
चतुर्थं सूत्र गाथा द्वारा बन्ध, संक्रम, उदय,		समुत्कीर्तनानुगम	१=
उदीरणा और सत्त्व इनकी तथा इनके अल्प-		• •	
बहुत्वकी सूचना	5	सर्व नोसर्व उदीरणानुगम	38
प्रथम गाथा किस अर्थमै निबद्ध है इसका चूर्णि-		उत्कृष्टानुत्कृष्ट उदीरणानुगम	38
मूत्रो द्वारा खुलासा	3	जघन्याजघन्य उदोरणानुगम	38
प्रकृतिउदीरणाके दो भेद और उन्हे स्थगित		सादि आदि ४ अनुयोगद्वार	२ <i>०</i>
करनेकी सूचना	१०	स्वामित्वानुगम	२१
ऐकैंक प्रकृति उदोरणाके दो भेद और उनके	•	कालानुपम	२२
चौबीम अनुयोगद्वारोकी सूचना	१०	अन्तरानुगम 	२६
उदीरणाके चार भेदोकी सूचना	११	सन्निकर्पानुगम	२६

(\$\$)

विषय	पृ	ष्ठ विषय	
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगम			पृष्ठ
भागाभागानुगम	₹ a		88
परिमाणानुगम	3		kЗ
क्षेत्रानुगम ्	۶۱ د		<i>¥</i> 3
स्पर्शनानुगम	ر د	· · ·	१ ६
कालानुगम	3 5	at 14th Aufes	७३
अन्तरानुगम	88	a tall didle	5ع
भावानुगम	8:		33
अल्पबहुत्व	8:	पदागदाद	१००
3 . ·	४२	३ अनुयोगद्वारोंकी सूचना	रुठ
३ प्रकृतिस्थान उदीरणा		र अपुनारकाराका सूचना समुत्कीर्तना	१००
		स्वामित्वके दो भेद	१००
प्रकृतिस्थान उदीरणाका तात्पर्य	४२		१०१
उसके १७ अनुयोगद्वारोकी तथा भुजगारादि	४५		१०२
पदोकी मूचना		जघन्य स्वामित्व	१०२
स्थानममुन्कीर्तना	83	अल्पबहुत्वके दो भेद	१०२
स्थानोमें प्रकृतियोका निर्देश	83	उत्कृष्ट अल्पबहुत्व	१०२
सादि आदि ४ अनुयोगद्वार	8४	जघन्य अल्पबहुत्व	१०३
जुलाबार स्वामित्व	ξķ	वृद्धिउदीरगा	
एक जीवकी अपेक्षा वाल	५३	१३ अनुयोगद्वारोंकी सूचना	१०३
एक जीवकी अपेक्षा अन्तर	৬ ও	१२ अपुनाम्बराका सूचना समुत्कीर्तना	१०३
नाना जीवोकी अपेक्षा भंगविचय	६०	सञ्जनसम्ब स्वामित्व	१०३
भागाभागानुगम	₹ &		१०३
परिमाणानुगम	હ શ	कालानुगम	१०४
क्षेत्रानुगम	७२	अन्तरानुगम	१०४
स्पर्शनानुगम	७२	नाना जीवोकी अपेक्षा भंगविचय	१०६
	७३	भागाभागानुगम	७०९
नाना जोवोकी अपेक्षा काल	७४	परिमाणानुगम	१०७
नाना जीवोकी अपेक्षा अन्तर	৬৩	क्षेत्रानुगम	१०८
सन्निकर्ष	७८	स्पर्शनानुगम	१०५
भावानुगम	30	कालानुगम	308
अल्पबहुत्व	૭ છ	अन्तरानुगम	११०
भुजगार	5	भावानुगम	१ ११
अर्थपद	5	अल्पबहुत्व	
१३ अनुयोगद्वारोंकी सूचना	58	_	१११
प्रमुत्कीर्तना	58	४ प्रकृतिप्रवेश	
न्त्रामित्व		प्रकृतिप्रवेश अधिकारके दो भेद	
एक जीवकी अपेक्षा काल	- ۷	विकास प्रस्तिक के कार्य के विकास के किया है कि किया के किया के किया के किया के किया किया किया किया किया किया किया किया	११२
क जीवकी अपेक्षा अन्तर	= 8	उत्तर प्रकृतिप्रवेश अधिकारके दो भेद	११२
ाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	83	मूल प्रकृतिप्रवेश और एकँक उत्तर प्रकृतिप्र	विश
	(0	अधिकार सुगम है	११२

(88)

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ट
प्रकृतिस्थानप्रवेशके १७ अनुयागद्वार	११२	उत्कृष्ट समुन्कीर्तना	१७७
समुत्कीर्तनाके दो भेद	११२	जघन्य समुन्कीर्तना	१७७
इन दोनाके एक साथ कथनका निर्देश	883	स्वामित्वके दो भेद	१७७
स्थानममुत्कीर्तनाका लक्षणनिर्देश	११३	उत्कृष्ट स्वामित्व	१७७
प्रवृतिनिर्देशका लक्षणकथन	११३	जघन्य स्वामित्व	१७=
इन दोनोका एक साथ कथन	११३	अल्पबहुत्वके दा प्रकार	१७६
सादि आदि ४ अनुयोगद्वार	१३०	उत्कृष्ट अल्पबहुन्व	3e 8
स्वामित्व	१३०	जघन्य अल्पबहुन्व	308
एक जीवकी अपेक्षा काल	१३१	_	
एक जीवकी अपेक्षा अन्तर	१८२	५ बृद्धिप्रवेशक	
नाना जीवाकी अपेक्षा भगविचय	9/3	इसक १३ अनुयागद्वार	250
भागाभागानुगम	388	समुत्कीर्तनानुगम	१८०
परिमाणानुगम	१४६	स्वामित्वानुगम	१५०
क्षेत्रानुगम	१५०	रालानुगम -	959
स्पर्शनानुगम	840	ज न्तरानुगम	१५२
कालानुगम	823	नाना जीवाकी अपक्षा भगी त्यानुगर	257
अन्तरानुगम	114	भागाभागानुगम	, ,
भात्रानुगम	१५८	परिमाणानुगम	/ 54
अन्तवहुरम	१४८	क्षत्रानुगम	१८३
भुजगार	१६ ४	स्पर्शनानुगम	958
इसक १३ अनुयोगद्वार	926	कालानुगम	१८४
ममुन्कीर्तनानुगम	१६४	अन्तरानुगम	β⊑y
स्वामित्वान्गम	१६५	भावानुगम	१८५
कालानुगम	१६५	अल्पबहुत्वानुगम	१८४
अन्तरानुगम	१६८	'सत्त भव काल' इत्यादि गाद्यारामा	
नाना जीवाकी अपेक्षा भगविचय	१७१	विशेष व्याय्यान	१८७
भागाभागानुगम	१७१	क्मांदय और उसक बाह्य निमित्ताना निदश	१८७
परिमाणानुगम	१७१	कर्मोदय चार प्रकारका है इसका निदश	१८७
क्षेत्रानुगम	१७१	उदय आर उदीरणामे अन्तरका निर्देश	१५५
स्पर्शनानुगम	१७२	उदीरणाके कथनस ही उदयका कथन हा जाता	
कालानुगम	१७४	है इसका निर्देश	१८८
अन्तरानुगम	१७५	६ स्थितिउदीरणा	
भावानुगम	१७६		
अल्पबहुत्व	१७६	स्थितिउदीरणाके दा भेदोका निर्देश	१८८
पदिनचेप	(৩৩	स्थितिउदीरणाके अनुयोगद्वाराका निर्देश	३ = ६
इसके तीन अनुयोगद्वारोकी सूचना	१७७	७ मुलप्रकृतिस्थितिउदीरणा	
समुत्कीर्तनाके दो भेद	१७७	मलप्रकृति स्थिति उदीरणामे २३ तथा उत्तर	•

(१५)

चिप य	વૃષ્ઠ	विषय	पृष्ठ
प्रप्रति स्थितिउदीरणामे २४ अनुयोगद्वार ह	ोते	जघन्य अन्तरानुगम	308
हैं इमना निर्देश	१८६	दोना प्रकारके भावका निर्देश	२१०
स्थितिउदीरणाके २ भेदाका निर्दश	१६०	अल्पबहुत्वके दो भेद	२१०
प्रमाणानुगम दो प्रकारका है इसका निर्दश	039	उत्दृष्ट अल्पबहुत्व	२१०
सर्व नोमर्व स्थितिउदोरणा	१ड१	जचन्य अन्पबहुन्व	२१०
उन्त्रष्ट अनु कृष्ट स्थितिउदै रणा	939	भुजगारस्थिति उदीरणा	२ १
जघन्य अजघन्य स्थितिउदीरणा	१६२		
सादिआदि स्थितिउदीरणा	१६२	उसके १३ अनुयोगद्वारोकी मूचना	२११
स्यामित्वानुगमके दा भेद	\$ £ 5	ममुत्कीर्तनानुगम	२११
उप्पट स्यामित्वानुगम	१६२	स्वामित्वानुगम	२११
जघन्य स्वामित्वानुगम	٤3 ٩	कालानुगम	२१२
कालानुगमने दो भेद	838	अ तरान्गम	२१४
उ प्रत्य कालानुगम	838	नाना जीवोक्री अपेक्षा भगविचयानुगम	२१५
जघन्न वाळानुगम	१६६	भागाभागानुगम	၁၇ဧ
अन्तरानुगमके दो भेद	१६८	परिमाणानुगम	၁၇၃
उ द्वरण अन्तरातुगम	१९५	क्षेतानुगम	२१७
जधन्य अन्तरानुगम	338	स्पर्शनानुगम	२१७
नाना जीवार्गा अपेक्षा भगविचयानुगमके		काळानु गम	२१=
दो भेद	२००	अन्तरानुगम	२१६
उत्कृप्ट भगविचयानुगम	200	भावानुगम	२१६
जघन्य भगविच यानुगम	२०१	अन्पबहुन्वानुगम	२१६
भागाभागानुगमक दो भेद	२०१	पद्निच्चेप	२२०
उन्हरट भागाभागानुगम	२०१	इसके तीन अनुयोगद्वार	२२ ०
जधन्य भागाभागानुगम	203	यमुत्वीर्तनानुगमर दो भेद	220
परिमाणानुगमर दा भेद	202	समुत्यावनानुगमन या मय उन्दृष्ट समुत्रीर्तनानुगम	
उ-३ष्ट परिमाणानुगम	201	जप्यन्य समुत्वार्तनानुगम जघन्य समुत्वीर्तनानुगम	550
जघन्य परिमाणानुगम	202	स्वामित्वानुगमके दा भेद	220 220
क्षेत्रानुगमक दा भद	२०३	उन्दृष्ट स्वामित्वानुगम	
उत्प्रष्ट क्षेत्रानुगम	२०३	जवन्य स्वामित्वानुगम जवन्य स्वामित्वानुगम	220
जघन्य क्षेत्रानुगम	२०३	अपबहुत्वके दो भेद	२२१
स्पर्धनानुगमा दा भेद	208	अ पबहुत्यक दे। नद उ तृष्ट अल्पबहुत्व	२२२ २ २ २
उत्प्रष्ट स्पर्शनानुगम	२०४		
जघन्य स्पर्शनानुगम	२०५	जघन्य अल्पबहुत्व	२२၁
कालानुगमके दा भेद	२०६	वृद्धिउदीरगा	२२२
उन्हर्ष्ट कालानुगम	२०६	उसके तेरह अनुयोगद्वार	२२२
जघन्य कालानुगम	२०८	समुत्कीर्त्तनानुगम	२२२
अन्तरानुगमके दो भेद	२०६	स्वामित्वानुगम	२२३
उन्ह ट अन्तरानुगम	३०१	कालानुगम	२२३

विथय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
अन्तरानुगम	२२६	जघन्य परिमाणानुगम	२६१
नाना जीवोकी अपेक्षा भंगविचयानुगम	२२६	क्षेत्रानुगमके दो भेद	२६३
भागाभागानुगम	२२८	उत्कृष्ट क्षेत्रानुगम	२६३
परिमाणानुगम	२२६	जघन्य क्षेत्रानुगम	२६३
क्षेत्रानुगम	२२६	स्पर्शनानुगमके दो भेद	२६५
स्पर्शनानुगम	३२६	उत्कृष्ट स्पर्शनानुगम	२६४
कालानुग न	२३०	जघन्य स्पर्शनानुगम	२१८
अन्तरानुगम	२३०	कालानुगमके दो भेद	३०२
भावानुगम	२३०	उत्कृष्ट कालानुगम	३०२
अत्रवहुत्वानुगम	२३०	जघन्य कालानुगम	४०६
		अन्तरानुगमके दो भेद	305
८ उत्तरप्रकृतिस्थिति उदीरणा		उन्कृप्ट अन्तरानुगम	३०८
२४ अनुयोगद्वारो तथा भुजगार आदिकी सूच	ना २३१	जघन्य अन्तरानुगम	३०⊏
अद्धाच्छेदके दो भेद	२३१	दो प्रवारका भाव	३११
उन्कृष्ट अद्धाच्छेद	२३१	अलाबहुत्वके दो भेद	३११
जघन्य अद्धाच्छेद	२३२	उत्कृष्ट अल्पबहुन्व	3 , 6
मर्वआदि ४ अनुयोगद्वार	२३४	जघन्य अत्यबहु व	३१२
मादिआदि ४ अनुयोगद्वार	२३४	स्थिति अल्पबहुत्वके दो भेद	३१३
स्वामित्वानुगमके दो भेद	२३५	उन्कृष्ट स्थिति अल्पबहुत्त्र	३१३
उत्कृष्ट स्वामित्वानुगम	シェル	जघन्य स्थिति अल्पबहुन्व	३१४
जधन्य स्वामित्वानुगम	२३६	भुजगार	३१⊏
कालानुगमके दो भेद	२४०		३१८
उन्कृष्ट कालानुगम	٠٥٠	स्वामित्वानुगम	388
जघन्य कालानुगम	२४६	कालानु ग म	378
अन्तरानुगमके दो भेद	२४४	अन्तरानुगम	३२८
उत्रृष्ट अन्तरानु गम	२४४	नाना जीवोकी अपेक्षा भंगविचयानुगम	३३५
जघन्य अन्तरानुगम	३४६	भागाभागानुगम	३३७
मन्निकर्षकेदो भेद	२ ६७	परिमाणानुगम	3,₹€
उत्कृष्ट सन्निकर्ष	२६७	क्षेत्रानुगम	3 ₹ \$
जघन्य मन्निकर्ष	२७४	स्पर्शनानुगम	330
नाना जीवोकी अपेक्षा भंगविचयके दो भेद	२८८	कालानुगम -	383
उत्कृष्ट भंगविचय	२८८	अन्तरानुगम	३४६
जघन्य मांगविचय	२८८	भावानुगम	३४⊏
भागाभागानुगमके दो भेद	२८८	अल्पबहुत्वानुगम	३४५
उत्कृष्ट भागाभागानुगम	२८८	पदिनद्येप	
जघन्य भागाभागानुगम	२=६		३ ४
परिमाणानुगमके दो भेद	२६०	इसके ३ अनुयोगद्वार	३५१
उत्कृष्ट परिमाणानुगम	२६०	समुत्कीर्तनानुगमके २ भेद	३५१

(१७)

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ट
उत्कृष्ट समुत्कीर्तनानुगम	३५१	स्वामिस्वानुगम	३ሂ드
जघन्य समुत्कीर्तनानुगम	३५१	कालानुगम	३६०
स्वामित्वानुगमके दो भेद	३५१	अन्तरानुगम	३६६
उत्कृष्ट स्वामित्वानुगम	३५१	नानाजीवोकी अपेक्षा भंगविचयानुगम भागाभागानुगम	४७६ ४७६
जघन्य स्वामिरवानुगम	३५४	परिमाणानुगम	 ७७ <i>६</i>
अल्पबहुत्त्र के दो भेद	३ ሂሂ	क्षेत्रानुगम	३७८
उत्कृष्ट अल्पबहुत्व	३५५	स्पर्शनानुगम	₹७5
जघन्य अत्पबहुत्व	३ ५३	कालानुगम	३⋍२
वृद्धि स्थितिउदीरणा	३५६	अन्तरानुगम भावानुगम	3 5 4 4
उमके १३ अनुयोगद्वार	३५६	अ स ाबहुरत्रानुगम	355
समुत्कीर्तनानुगम	३४६	स्थान	३६३



सिरि-जइवसहाइरियविरइय-चुण्णिसुत्तसमण्णिदं सिरि-भगवंतगुणहरभडारस्रोवइट्ठं

क सा य पा हु डं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरियविरइया टीका जयधवला

तत्थ

वेदगो णाम सत्तमो अत्थाहियारो



वेदगवेदगवेदगमवेदगं वेदगंथसंसिद्धं। सिद्धं पर्णामिय सिरसा वोच्छं वेदगमहाहियारमहं॥१॥

जो सब वेदकोंमें श्रितशय वेदक हैं श्रिर्थात् चराचर विश्वके ज्ञाता हैं, जो शुभाशुभ कर्मफलके वेदनसे मुक्त हैं श्रीर वेदमन्थों (जिनागम) से जिनके श्रिस्तित्वकी सिद्धि होती है उन सिद्ध परमेश्रीको सिरसे प्रणाम करके मैं (वीरसेन श्राचार्य) वेदक नामक महाधिकारका व्याख्यान करता हूँ ॥ १॥

- अविदंगे ति ऋषियोगद्दारे दोख्णि ऋषियोगद्दाराणि । तं जहा
 उदयो च उदोरणा च ।
- § १. एदस्स सुत्तस्स अत्थो बुच्चदे । तं जहा—वेदगे ति अणियोगहारं कसायपाहुडस्स पण्हारसण्हमत्थाहियाराणं मज्मे छट्टं । तत्थेमाणि दोण्णि अणियोगहाराणि भवंति । काणि ताणि ति सिस्साहिप्पायमासंकिय उदयो च उदीरणा चैव
 तेसिं णामणिहेसो कत्र्यो । तत्थोदयो णाम कम्माणं जहाकालजणिदो फलविवागो ।
 कम्मोदयो उदयो ति भणिदं होइ । उदीरणा पुण अपरिपत्तकालाणं चेव कम्माणमुवायविसेसेण परिपाचनं 'अपक्वपरिपाचनमुदीरणा' इति वचनात् । बुत्तं च—

कालेण उवायेण य पच्चंति जहा वणप्फइफलाइं। तह कालेण तवेण य पच्चंति कयाइं कम्माइं।। १।। इदि

§ २. एवंविहउदयोदीरणाञ्चो जत्थ परूविज्जंति ताणि वि श्रिणियोगद्दाराणि तण्णामधेयाणि । कधं पुण उदयोदीरणाणं वेदगववएसो १ ण, वेदिजमाणत्तसामण्णा-वेक्खाए दोण्हमेदेसिं तन्ववएससिद्धीए विरोहाभावादो ।

% तत्थ चत्तारि सुत्तगाहाश्रो।

§ ३. तम्मि वेदगसण्णिदे महाहियारे उदयोदीरणवियापिदे चत्तारि सुत्त-

\$ १. श्रब इस सूत्रका श्रर्थ कहते हैं। यथा—जो यह कषायप्राभृतके पन्द्रह श्रर्थाधिकारों में वेदक नामका छठा श्वनुयोगद्वार है उसमें ये दो श्रनुयोगद्वार हैं। वे कौन हैं इस प्रकार शिष्यके श्रमिप्रायके श्रनुरूप श्राशंका करके उदय श्रीर उदीरणा इस प्रकार उनका नामनिर्देश किया। प्रकृतमें कर्मोंके यथाकाल उत्पन्न हुए फलके विपाकका नाम उदय है। कर्मोंके उदयका नाम उदय है वह उक्त कथनका तात्पर्य है। परन्तु जिन कर्मोंके उदयका काल प्राप्त नहीं हुआ उनका उपाय विशेषसे पचाना उदीरणा है, क्योंकि श्रपक्वका परिपाचन करना उदीरणा है ऐसा वचन है। कहा भी है—

जिस प्रकार वनस्पतिके फल परिपाककालके द्वारा या उपायके द्वारा परिपाकको प्राप्त होते हैं उसी प्रकार किये गये कर्म परिपाककालके द्वारा या तपके द्वारा पचते हैं।। ।।

५२. इस प्रकार उदय ऋौर उदीरणाका जिन श्रनुयोगद्वारोंमें कथन किया जाता है वे श्रनुयोगद्वार भी उन्हीं नामवाले होते हैं।

शंका-उदय और उदीरणाकी वेदक संज्ञा कैसे है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उदय श्रीर उदीरणा दोनों ही सामान्यसे वेद्यमान हैं इस श्रपेता उन दोनोंकी उक्त संज्ञाके सिद्ध होनेमें कोई विरोध नहीं श्राता।

* वेदक नामके इस अनुयोगद्वारमें चार स्त्रगाथाएँ हैं।

६३. उदय श्रीर उदीरणा इन भेदोंसे युक्त वेदक संज्ञावाले इस महाधिकारमें गुणधर

^{*} वेदक इस अनुयोगद्वारके दो अनुयोगद्वार हैं । यथा—उदय और उदीरणा ।

गाहाच्चो गुणहराइरियमुहकमलविणिग्गयाच्चो त्र्यत्थि ति भणिदं होइ। एदेण 'चत्तारि वेदगम्मि दु' इच्चेदस्स संबंधगाहावयवस्स परामरसो कन्नो ति दहुच्वो। संपिह संखाविसेसेणावहारिदाणं गाहाणं सह्नवाणुवादमुहेण तदट्टविवरणं कुणमाणो पुच्छावकमाह—

∰ तं जहा।

६४. सुगमं।

कदि आविलयं पवेसेइ कदि च पविस्संति कस्स आविलयं । स्रोत-भव-काल-पोग्गल-द्विदिविवागोदयस्वयो दु ॥५९॥

§ ४. एसा पढमगाहा। एदीए पयिडउदीरणा पयिडउदयो तदुभयकारण-दन्वादिपरूवणा च कया। संपिंद एदिस्से गाडाए अवयवत्थिविवरणं कस्सामो। तं जहा—'कदि आवित्तयं पवेसेदि' ति एदेण पढमावयवेण पयिडउदीरणा परूविदा, कदि पयडीम्रो उदयावित्वभंतरं पत्रोगिविसेसेण पवेसेदि ति सुत्तत्थावलंवणादों। सा बुण पयिडउदीरणा दुविहा—मूलपयिडउदीरणा च उत्तरपयिडउदीरणा च। उत्तरपयिडउदीरणा दुविहा—एगेगुत्तरपयिडउदीरणा पयिडहाणउदीरणा चेदि। एत्थ सेसाणं देसामासयभावेण पयिडहाणउदीरणा चेव मुत्तकंठमेदेण सुत्तावयवेण णिहिहा। तदो पयिडउदीरणा सव्या चेव एदिम बीजपदे णिलीणा ति दह्वां।

श्राचार्यके मुख कमलसे निकली हुई चार सूत्र गाथाएँ हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस वचन द्वारा सम्बन्ध गाथाके 'चत्तारि वेदगिम्म' इस श्रवयववचनका परामर्श किया है ऐसा जानना चाहिए। श्रव संख्याविशेषके द्वारा श्रवधारण को प्राप्त गाथाश्रोंके स्वरूपके श्रनुवाद द्वारा उनके श्रर्थका विवरण करते हुए प्रच्छावाक्यको कहते हैं—

*** यथा** ।

९४. यह सूत्र सुगम है।

कितनी प्रकृतियोंको उदयाविलमें प्रवेश कराता है और किस जीवके कितनी प्रकृतियाँ उदयाविलमें प्रविष्ट होती हैं, क्योंकि क्षेत्र, भव, काल और पुद्रलको निमित्त-कर कर्मोंका स्थितिविषाक और उदयत्तय होता है।।४९॥

५५. यह प्रथम गाथा है। इस द्वारा प्रकृति उदीरणा, प्रकृतिउदय और इन दोनों के कारणभूत द्रव्यादिका कथन किया गया है। त्रव इस गाथाके ऋवयवोंका ऋर्थविवरण करते हैं। यथा—'किंद आवित्यं प्रवेसेदि' इस प्रथम अवयवके द्वारा प्रकृतिउदीरणा कही गई है, क्योंकि कितनी प्रकृतियोंको उद्यावितके भीतर प्रयोग-विशेषके द्वारा प्रवेश कराता है इस प्रकार यहाँ उक्त गाथासूत्रके ऋर्थका अवलम्बन ितया गया है। वह प्रकृतिउदीरणा दो प्रकार की है—मृलप्रकृतिउदीरणा और उत्तरप्रकृतिउदीरणा। उत्तरप्रकृतिउदीरणा दो प्रकार की है—एकैकउत्तरप्रकृतिउदीरणा और प्रकृतिस्थानउदीरणा। यहाँ पर शेष उदीरणा औं देशामर्षक-भावसे इस सूत्रावयवके द्वारा प्रकृतिस्थानउदीरणा ही मुक्तकण्ठ होकर निर्देष्ट की गई है।

- § ६. 'कदि च पित्रसंति कस्स आविलयं' इच्चेदेण वि विदियसुत्तावयवेण पयिडउदयो सप्पमेदो समुद्दिहो। किं कारणं ? किंदि च केत्तियाओ खलु पयडीओ कस्स जीवस्स आविलयमुद्दयाविलयभंतरमुदीरणाए विणा द्विदिक्खएण पिवसंति ति पुच्छावलंबणादो। अथवा उदयाविलयपिवद्वोदयाणुदयपयडीओ घेत्रण पवेससिण्णदो अत्थाहियारो एदेण सुत्तावयवेण सचिदो ति दहुव्वो; चुिएणसुत्तिणबद्धत्तपरूवणाए सिवत्थरमुविर समुवलंभादो। जइ एवं; वेदगे ति अणियोगद्दारे उदयो च उदीरणा चेदि दोएहमत्थाहियाराणं पुच्चमञ्भवगमं कादृण संपिह तदुभयविदिरत्तपवेसपरूवणावलंबणे सुत्तयारस्स पइएणादत्थपरिच्चागदोसो पसज्जइ ति ? ए एस दोसो, केण वि पयारेश तस्स वि उदयंतन्भावदंसणादो। तदो पयिडउदयो पयिडपवेसो चेदि एदे दोिएण अणियोगा 'कदि च पविस्संति कस्स आविलयं' इच्चेदेण सुत्तावयवेण संगिहदा ति दहुव्वं।
- § ७. एवं गाहापुन्बद्धे पिडबद्धारां पयाडिउदयोदीरसारां स्पिरहेउत्त-िरायरसमुहेसा सहेउत्तपदुष्पायसहं गाहापिच्छमद्धस्सावयारो— 'खेत्त-भव-काल-पोग्गल-द्विदि-विवागोदयस्त्रओ दु।' एतदुक्तं भवति—खेत्त-भव-काल-पोग्गले समस्सिऊस जो द्विदिविवागो उदयक्खयो च सो जहाकममुदीरसा उदयो च भण्साइ

इसलिए प्रकृतिउदीरणा समस्त ही इस बीजपदम श्रन्तिनिहत है एसा जानना चाहिए।

[§] ६. 'कदि च पिवसंति कस्स आविलयं' इस दूसरे सूत्रावयवके द्वारा भी श्रपने उत्तर भेदोके साथ प्रकृतिउदयका कथन किया गया है, क्योंकि इसमें 'किट् च' अर्थात् कितनी प्रकृतियाँ किस जीवके 'आविलयं' अर्थात् उदयाविलके भीतर उदीरणाके बिना स्थितिका चय होनेसे प्रवेश करती है इसप्रकार प्रच्छाका अवलम्बन लिया है। अथवा उदयाविलके भीतर प्रविष्ट हुई उदयप्रकृतियों और अनुद्यप्रकृतियोंको धहण कर प्रवेश संज्ञावाला अर्थाधिकार इस सूत्रा वयवके द्वारा सूचित किया गया हे ऐसा प्रकृतमे जानना चाहिए, क्योंकि चूर्णिसूत्रमे निबद्ध होकर उक्त प्रकृपणा विस्तारके साथ आगे उपलब्ध होती है।

शंका—यदि ऐसा है तो वेदक इस अनुयोगद्वारमे उदय श्रीर उदीरणा इन दो अनुयोगद्वारोको पहले स्वीकार करके श्रव इन दोनो अर्थाधिकारोसे भिन्न प्रवेशश्ररूपणावाले श्रर्थाधिकारके कथनका श्रवलम्बन लेने पर सूत्रकारको प्रतिज्ञात श्रर्थका त्याग करनेका दोष लगता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि किसी भी प्रकारसे उसका भी उदयके भीतर अन्तर्भाव देखा जाता है। इसलिए प्रकृति उदय श्रीर प्रकृतिप्रवेश य दो श्रनुयोगद्वार 'किद च पविसंति कस्स श्रावलियं' इस सूत्रावयवके द्वारा संग्रहीत किये गये है ऐसा यहाँ जानना चाहिए।

[§] ७. इसप्रकार गाथाके पूर्वार्धमे जो प्रकृतिउदय झोर प्रकृतिउदीरणा प्रतिबद्ध है उनके निरहेतुकपनेके निराकरणद्वारा सहेतुकपनेका कथन करनेके लिए गाथाके 'खेत्त-भव काल-पोग्गल- हिदिविवागोदयखत्रो दु' इस पश्चिमार्धका ऋवतार हुआ है। उक्त कथनका यह तात्पर्य है कि चेत्र, भव, काल झौर पुदलोका ऋाश्रय लेकर जो स्थितिविपाक झौर उदयत्त्वय होता है उसे

ति । संपिं खेत्तादीरामत्थो वुच्चदे । तं जहा—खेत्तमिदि भणिदे णिरयादिखेत्तस्स गृहणं कायच्वं । भव इदि भणिदे एइंदियादिभवस्स गृहणं कायच्वं । काल इदि भणिदे सिसिर-वसंतादिकालविसेसस्स गृहणं कायच्वं । वाल-जोव्वरण-थिवरादिकाल-जिल्दिपज्जायस्स वा । पोग्गल इदि भणिदे गंध-तंबृल-वत्थाभरणविसेसत्थकंदयादि-द्व्वाणिमद्वाणिद्वसह्त्वाणं [गृहणं] कायच्वं । एवमेदे खेत्त-भव-काल-पोग्गले पहुच कम्माणामुदयोदीरणसह्त्वो फलविवागो होदि ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो ।

§ ८. अधवा 'कदि आविलयं प्रवेसेदि' ति प्यडिउदीरणा 'कदि च प्रविसंति कस्स आविलयं' इदि उदयोदीरणावदिरित्तो प्यडिप्रवेसो ति विदियो अत्थाहियारो । एवं गाहा-पुन्वद्धे दो चेव अत्थाहियारा पिडवद्धा । पुणो 'खेत-भव-काल-पोग्गल द्विदिविवागोदयख्यो दु' ति एदिम्म गाहापच्छद्धे कम्मोदयो सकारणो पिडवद्धो ति चेत्तव्वो, चुणिणसुत्तयारेण मुत्तकंठमुविर तहा परूविस्समाणत्तादो । कधं पुण कम्मोदयस्स एसो गाहावयवो वाचओ ति वृत्ते वृत्तदे— खेत्त-भव-काल-पोग्गले अस्सिऊण जो द्विदिक्खयलक्खणो कम्मस्स विवागो सो उदयो ति वविदिसंबंधवसेण सुत्तत्थवक्खाणादो, एसो गाहापच्छिमद्धो कम्मोदयस्स बाचओ ति चेत्तव्वं ।

क्रमसं उदारणा और उदय कहतं हैं। ब्राब चेत्रादिकका ब्रार्थ कहते हैं। यथा - चेत्र एक्षा कहतं पर नरकादि चेत्रका प्रह्ण करना चाहिए। भव ऐसा कहने पर एकेन्द्रियादिरूप भवका प्रहण करना चाहिए। काल ऐसा कहने पर शिपिर छोर वसन्त छादि काल विशेषका प्रहण करना चाहिए अथवा बालकाल, योवनकाल छोर स्थविर छादि कालके छालम्बनसे उत्पन्न हुई पर्भाय का प्रहण करना चाहिए। तथा पुद्रल ऐसा कहने पर इष्टानिष्टरूप गन्ध, ताम्बूल, वस्त्र छोर छाभरणविशेषरूप स्कन्ध छादि द्रव्योका प्रहण करना चाहिए। इसप्रकार इन चेत्र, भव, काल और पुद्रलोंका छालम्बन लेकर कमीका उदय और उदीरणारूप फलविपाक होता है यह इस सुक्रका भावार्थ है।

§ ८. श्रथवा 'किंद श्रावित्यं पर्वसेदि' इस द्वारा प्रकृतिउदीरणा नामवाला पहला श्रर्था-धिकार तथा 'किंद च पविसंति कस्स श्रावित्यं' इस द्वारा उदय श्रोर उदीरणाके सिवा प्रकृति-प्रवेश नामवाला यह दूसरा श्रधिकार कहा गया है। इमप्रकार गाथाके पूर्वार्धमे दो ही श्रर्था-धिकार प्रतिबद्ध हैं। पुनः गाथाके 'स्रेत्त-भव-काल-पोग्गलिटिदिविवागोदयखयो दु' इस पश्चि-मार्धमें कारण सिहत कर्मोदय नामक श्रिधकार प्रतिबद्ध हैं ऐसा यहाँ प्रहण् करना चाहिए, क्योंकि चूिणसूत्रकार मुक्तकण्ठ होकर श्रागे इसीप्रकार कथन करनेवाले हैं।

शंका-यह गाथाका पश्चिमार्ध कर्मीदयका वाचक कैसे है ?

समाधान—चेत्र, भव, काल श्रौर पुरूलोंका आश्रय लेकर जो स्थितित्तयलत्तरण कर्मका विपाक होता है वह उदय है इसप्रकार व्यवहित सम्बन्धवश सूत्रके अर्थका व्याख्यान करनेसे यह गाथाका पश्चिमार्थ कर्मादयका वाचक है ऐसा यहाँ प्रहुण करना चाहिए।

को कदमाए द्विदीए पवेसगो को व के य ऋणुभागे। सांतर-णिरंतरं वा कदि वा समया दु बोद्धव्वा॥६०॥

\$ ९. एसा विदियगाहा हिदि-अणुभाग-पदेसुदीरणासु पिडवद्धा । तं जहा'को कदमाए हिदीए पवेसगो' इच्चेदेण पढमावयवेण हिदिउदीरणा सचिदा । 'को व के य अणुभागे इच्चेदेण वि विदियावयवेण अणुभागुदीरणा परूविदा । एत्थेव पदे पदेस उदीरणा वि णिदिहा ति दहुच्वाः हिदि-अणुभागाणं पदेसाविणाभावित्तादो । देसामासयणाएण तस्सेह गहणं काच्यच्यं । एवमेदेण गाहापुच्यद्धेण हिदि-अणुभाग-पदेसुदीरणाओ मामित्तमुहेण पुच्छिदाओ । एदेणेव हिदि-अणुभाग-पदेसुदयो तेसिं पवेसो च सचिदोः देसामासयभावेणेदस्म पयहत्तादो । 'सांतरणिरंतरं वा० बोद्धच्वा' ति उदयोदीरणाणं पयि -हिदि-अणुभाग-पदेसविसेसिदाणं सांतरकालो णिरंतरकालो वा केतिया समया ति एदेण पुच्छावकेण णाणेगजीवसबंधिकालंतराणं परूवणा सचिदा । एत्थतणविदिय'वा'-सदेण अणुत्तसमुचयहेण समुक्तिणादिसेसाणियोगदागणं परूवणा सचिदा । तदो ममुक्तिलणादि जाव अप्पावहुए ति चउवीसमिणिओगदागणं जहासंभवमुद्योदीरणाविमयाणं स्वणमेदेण कदिमिदि धेत्तच्वं ।

कौन जीव किस स्थितिमें श्रीर कौन जीव किस श्रनुभागमें कर्मोंका प्रवेश करानेवाला है तथा इनका सान्तर और निरन्तर काल श्रीर श्रन्तर कितने समय तक होता है यह जानने योग्य है।।६०।।

५ ६. यह दूसरी गाथा स्थितिउदीरणा, ऋनुभागउदीरणा श्रोर प्रदेशउदीरणाके विषयमे प्रतिबद्ध है। यथा-'का कदमाए द्विदीए पर्वसगा' इसप्रकार इस प्रथम ऋवयवके द्वारा स्थिति-उदीरणा सचित की गई है। 'को वा के य ऋगाभागे' इसप्रकार इस द्वितीय श्रवयवके द्वारा भी श्चनुभागउदारणा कही गई है। तथा इसी पदमे प्रदेशउदीरणा भी निर्दिष्ट की गई है ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि स्थिति त्रौर त्रानुभाग प्रदेशोंके त्राविनाभावी होते हैं। त्राथवा देशामर्षक न्यायसे उसका यहाँ पर प्रहण करना चाहिए । इसप्रकार इस गाथाके पूर्वार्धद्वारा स्थितिउदीरणा, श्रनु-भागउदीरणा ऋौर प्रदेशउदीरणाके स्वामित्वकी प्रमुखता द्वारा पृच्छा की गई है। तथा इसी द्वारा स्थिति उत्य, ऋतुभाग उदय श्रीर प्रदेश उदय तथा उनका प्रवेश सूचित किया गया है, क्योंकि देशामर्पकभावसे यह वचन (गाथाका पूर्वार्घ) प्रवृत हुआ है। 'सातर-णिरंतरं वा॰ बोद्धव्वा।' श्रर्थात् प्रकृति, स्थिति, श्रनुभाग श्रीर प्रदेशसे विशेषताको प्राप्त हुए उदय श्रीर उदीरणाका सान्तर श्रीर निरन्तर काल कितना है इसप्रकार इस प्रच्छावाक्यके द्वारा नाना जीव श्रीर एक जीवसम्बन्धी काल श्रीर श्रन्तरप्ररूपणा सूचित की गई है। तथा यहाँ श्राये हुए श्रनुक्तका समुचय करनेवाले दूसरे 'वा' शब्दके द्वारा समुत्कीर्तना श्रादि शेष श्रनुयोगद्वारोकी प्ररूपणा सूचित की गई है। इसलिए यथासम्भव उदय श्रीर उदोरणाको विषय करनेवाले समुत्कीर्तनासे लेकर श्रल्पबहुत्व तक चौबीस श्रनुयोगद्वारोका सूचन इस वचनके द्वारा किया गया है ऐसा यहाँ पर प्रहण करना चाहिए।

बहुगदरं बहुगदरं से काले को ण थोवदरगं वा। अणुसमयमुदीरेंतो कदि वा समयं उदीरेदि।।६१।।

§ १०. एसा तदियगाहा। एदीए पयडि-द्विदि-श्रणुभाग-पदेसविसयस्स भ्रजगाराणियोगो सप्पभेदो णिहिद्वो। तं जहा—ि णिरुद्धसमयादो 'से काले' समणंतरसमए 'वहुगदरं० को उदीरेदि' ति एदेण पयडि-द्विदि-श्रणुभाग-पदेसविसयस्स भ्रजगारपदस्स गिहेसो कश्रो। 'को णु थोवदरगं वा' ति एदेण वि तव्विसयश्रप्पदरपदं
जाणाविदं। एत्थतण-'वा'-सहेणाणुत्तसम्बयहेणाविद्ववित्तव्वपदाणं गहणं कायव्वं।
तदो एदेण गाहापुव्वद्धेण पयडि-द्विदि-श्रणुभाग-पदेसुदीरणाविसयो भ्रजगाराणियोगो
पक्षविदो ति सिद्धं। 'अणुसमयमुदीरेतो' श्रणुसमयं समयं पडि भ्रजगारादिसक्ष्वेणुदीरेमाणो 'किदि वा समए' केतिए वा समए णिरंतरमुदीरेदि ति एदेण भुजगारविसयकालाणियोगदारं स्वचिदं। एदेणेव देसामासयवयणेण सेसाणियोगदाराणं पि
संगहो कायव्यो। एदेणेव पदणिक्खेवो वही च पक्षविदा; भुजगारविसेसो पदणिक्खेवो,
पदणिक्खेवविसेसो विह ति णायादो।

^{*} विविधित समयसे तदनन्तर समयमें कीन जीव बहुतर बहुतर कर्मोंकी उदी-रणा करता है श्रीर कीन जीव श्रल्पतर श्रल्पतर कर्मोंकी उदीरणा करता है तथा प्रति ममय उदीरणा करता हुआ यह जीव कितने समय तक निरन्तर उदीरणा करता है।।६१।।

१०. यह तीसरी गाथा है। इत द्वारा प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशिवषयक अपने भेदोंके साथ भुजगारअनुयोगद्वार निर्दिष्ट किया गया है। यथा — विवित्तत समयसे 'से काले' अर्थात् तदनन्तर समयमें बहुतर बहुतर कर्मोंकी कीन उदीरणा करता है इसप्रकार इस वचनद्वारा प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशिविषयक भुजगारपदका निर्देश किया गया है। 'को गु थोवदर्ग वा' इसप्रकार इस वचन द्वारा भी तद्विषयक अल्पतरपदका ज्ञान कराया गया है। यहाँ पर अनुक्तका समुख्य करनेके लिए आये हुए 'वा' शब्दके द्वारा अवस्थित और अवक्तव्य पदोंका महण करना चाहिए। इसलिए गाथाके पूर्वार्धद्वारा प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश-विषयक भुजगार अनुयोगद्वारकी प्ररूपणा की गई है यह सिद्ध होता है। 'आगुसमयमुदीरेंनो' अर्थात् प्रत्येक समयमें भुजगारादि रूपसे उदीरणा करता हुआ यह जीव 'कदि वा समए' अर्थात् कितने समय तक निरन्तर उदीरणा करता है इसप्रकार इस वचनके द्वारा भुजगार विषयक कालानुयोगद्वार सूचित किया गया है। तथा इसी देशामर्थक वचनके द्वारा श्रेजगार विषयक कालानुयोगद्वार सूचित किया गया है। तथा इसी वचन द्वारा पदिनचेप और वृद्धि अनुयोगद्वार की प्ररूपणा की गई है, क्योंकि भुजगार विशेषका नाम पदिनचेप है और पदिनचेपिवशेषका नाम वृद्धि है ऐसा न्याय है।

जो जं संकामेदि य जं बंधदि जं च जो उदीरेदि । तं केण होइ अहियं द्विदि अणुभागे पदेसग्गे ॥६२॥

११. एसा चउत्थी मृलगाहा । एदिस्से वत्तव्वं पयि -हिदि-अणुभाग-पदेस-विस्पाणं वंध-संक्रमोदयोदीरणा-संतक्तमाणं जहण्णुकस्स-पद्विसेसियाणमप्पाबहुअ-गवेमणं । तं जहा—'जो जं संकामेदि' ति वृत्ते संक्रमो गहेयव्वो । सो च पयि हिदि-अणुभाग-पदेमभेयभिण्णो जहण्णुकस्सपद्विसेसिदो घेत्तव्वो । 'हिदि अणुभागे पदेसग्गे' ति वयणादो पयडीए गहणमेत्थ ण पावदि ति णासंकियव्वं; पयि विदिर्गणाणं हिदि-अणुभाग-पदेसाणमभावेण पयडीए अणुत्तसिद्धत्तादो । 'जो जं वंधि दे' ति एदेण वंधो पयि -हिदि-अणुभाग-पदेसभेयभिण्णो घेत्तव्वो । एत्थेव संतकम्मस्स वि अंतव्भावो वक्खाणेयव्वो । 'जं च जो उदीरेदि' ति एदेण वि पयि -हिदि-अणुभाग-पदेसभेयभिण्णाए उदीरणाए उदयसहगदाए गहणं कायव्वं । 'तं केण होइ अहियं' हिद वुत्ते वंधसंक्रमोदयोदीरणासंतकम्मवियप्याणं मज्भे कत्तो कदमं केतिएणाहियं होई ति पुच्छा कया होई । 'हिदि अणुभागे पदेसग्गे' इदि सुत्तावयवो वंधसंक्रमोदीरणाणं संतक्रमोदयमहगयाणं विसयपदंमणहो दह्वव्वो । ण च पयडीए एत्थामंभवो आसंक्रणेओ; दत्तुत्तरत्तरादो । तम्हा वंधो संक्रमो उदयो उदीरणा

^{*} जो जीत्र स्थिति, श्रनुभाग और प्रदेशोंमें से जिसे संक्रमित करता है, जिसे बाँधता है त्रीर जिसे उदीरित करता है वह किससे श्रधिक होता है।।६२।।

५ ११. यह चौथी मूलगाथा है। जघन्य त्र्यौर उत्क्रष्ट पदोसे विशेषताको प्राप्त हुए प्रकृति, स्थिति, श्रनुभाग श्रौर प्रदेशविषयक बन्ध, संक्रम, उदय, उदीरणा श्रौर सत्कर्मीके अल्पबहुत्वकी गवेपणा करना इसका वक्तव्य है। यथा--(जो जं संकामेदि! ऐसा कहने पर संक्रमका यहण करना चाहिए। श्रीर वह जघन्य श्रीर उत्कृष्ट पदसे विरोपताको प्राप्त होकर प्रकृति, स्थिति, अनुभाग श्रौर प्रदेशभेदसे अनेक प्रकारका प्रहाग करना चाहिए। 'द्विदि अगुभागे पदेसग्गे' इस बचन द्वारा यहाँ पर प्रकृतिका घ्रहण नहीं प्राप्त होता ऐसी त्राशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि प्रकृतिके बिना स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंका अभाव होनेसे प्रकृति अनुक्तसिद्ध है। 'जो जं बंधदि' इसप्रकार इस वचनद्वारा प्रकृति, स्थिति, श्रनुभाग श्रौर प्रदेशोंके भेदसे श्रनेक प्रकारके बन्धका प्रहुण करना चाहिए। तथा यहीं पर सत्कर्मके अन्तर्भावका भी व्याख्यान करना चाहिए। तथा 'जं च जो उदीरेदि' इसप्रकार इस वचनके द्वारा भी प्रकृति, स्थिति, श्रनु-भाग श्रौर प्रदेशोंके भेदसे श्रनेक प्रकारकी उदयके साथ उदीरणाका प्रहण करना चाहिए। 'तं केण होइ अहियं' ऐसा करने पर बन्ध, संक्रम, उदय, उदीरणा और सत्कर्मरूप विकल्पोंके मध्य किससे कौन कितना अधिक होता है यह पृच्छा की गई है। 'द्विदि अगुभागे परेसगो' यह सूत्रावयव सत्कर्म और उदय सहित बन्ध, संक्रम श्रीर उदीरणाके विषयको दिखलानेके लिये त्राया है ऐसा जानना चाहिए। यहाँ पर प्रकृतिका कथन ऋसम्भव है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इसका उत्तर पूर्व में ही दे आये हैं। इसिलए बन्ध, संक्रम, उदय, उदी-

संतकम्मिनिद एदेसि पंचएहं वियप्पाएां जहएएएसस जहण्णएण, उक्तस्सस्स उक्तस्सएण पयडीहिं द्विदीहिं अणुभागेहिं पदेसेहिं य थोवबहुत्तपरूवणा । एदिस्से चउत्थसुत्तगाहाए अत्थो त्ति सिद्धं।

१२. एवमेदासि सुत्तगाहाणमवयारं कादृण संपिंह एत्थ पढमगाहाए वक्खाएां कुरणमाणो चुरिणसुत्तयारो एसा गाहा एदिम्म अत्थिवसेसे पिंडबद्धा ति जाणा-वणद्वम्रत्तरसुत्तमाह—

🛞 तत्थ परमिल्लगाहा पयिंडउदीरणाए पयिंडउदए च बद्धा।

- § १३ गयत्थमेदं सुत्तं, गाहाणमुत्थाणत्थपरूवणाए चेव पयदत्थस्स समित्थि-यत्तादो । एवमेदेण सुत्तेण पयिंडउदीरणाए पयिंडउदए च पढमगाहाए पिंडबद्धतं सामएणेण जाणाविय संपिंह पदच्छेदमुहेण पढमगाहाए कदमिम पदे पयिंडउदीरणा पिंडबद्धा, कदमिम वा पयिंडउदयो ति एदस्स विसेसस्स जाणावणहमुत्तरं सुत्तमाह—
 - कि कि श्राविषयं प्रवेसेदि सि एस गाहाए पहमपादो प्रयिव्विदिश्णाए।
- § १४. एत्थ पिडबद्धो त्ति च्रिहियारसंबंधो कायव्यो । सेसं सुगमं । एवं ताव गाहापढमावयवे पयडिउदीरणाए पिडबद्धत्तं परूविय पुणो वि तत्थेव विसेस-णिद्धारणद्वमिदमाह—

रणा श्रौर सत्कर्म इसप्रकार इन पाँच भेदोंके जघन्यका जघन्यके साथ श्रौर उत्कृष्टका उत्कृष्टके साथ प्रकृतियों, स्थितियों, श्रनुभागों श्रौर प्रदेशोंका श्रयतम्बन लेकर अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की गई है। इसप्रकार यह चौथी सूत्रगाथाका श्रथं है यह सिद्ध हुश्रा।

े १२. इस प्रकार इन सूत्रगाथात्रोंका अवतार करके ऋष यहाँ पर प्रथम गायाका व्याख्यान करते हुए चूर्गिसूत्रकार यह गाथा इस ऋर्थविशेषमें प्रतिबद्ध है ऐसा जतलानेके लिये आगोके सूत्रको कहते हैं —

* उनमेंसे प्रथम गाथा प्रकृति उदीरणा और प्रकृति उदयमें प्रतिबद्ध है।

- § १३. यह सूत्र गतार्थ है, क्योंकि उक्त गाथाश्चोंके उत्थानिकारूप ऋर्थ की प्ररूपणाके द्वारा ही प्रकृत श्चर्यका समर्थन कर आये हैं। इस प्रकार इस सूत्रके द्वारा प्रथम गाथा प्रकृति उदीरणा और प्रकृति उदयमें प्रतिबद्ध है इस बातका सामान्यसे ज्ञान कराके श्रव पदच्छेदकी प्रमुखतासे प्रथम गाथाके किस पदमें प्रकृतिउदीरणा ∳प्रतिबद्ध है तथा किस पदमें प्रकृतिउदय प्रतिबद्ध है इस प्रकार इस विशेष हा ज्ञान करानेके लिये आगोका सूत्र कहते हैं—
- * 'कदि आवित्यं पवेसेदि' यह गाथाका प्रथम पाद प्रकृतिउदीरणामें प्रति-
- § १४. यहाँ प्रतिबद्ध है इस पदका ऋषिकारके साथ सम्बन्ध करना चहिए। शेष कथन सुगम है। इस प्रकार गाथाके प्रथम ऋवयवमें प्रकृतिउदीरणाकी प्रतिबद्धताका कथन करके फिर भी उसीमें विशेष ऋर्षका निर्धारण करने के लिए यह बचन कहा है—

🏶 एदं पुण सुत्तं पयिबद्धाणवदीरणाए बद्धं।

§ १५. कुदो १ कदिसद्दस्स भेदगणणप्ययस्स अरणत्थासंभवादो । एतदुक्तं भवति—पयिडिउदीरणा दुविहा—मूलपयिडिउदीरणा उत्तरपयिडिउदीरणा च । उत्तर-पयिडिउदीरणा दुविहा—एगेगुत्तरपयिडिउदीरणा पयिडिडाणउदीरणा चेदि । एत्थ पयिडिडाणउदीरणाए पिडिबद्धमेदं सुत्तं; णाण्णत्थेति । जद्द एवं; मूलपयिडिउदीरणाए एगेगुत्तर-पयिडिउदीरणाए च एत्थ परूवणा ण जुझदे; गाहासुत्तेण तासिमसंगिहयत्तादो १ ण एस दोसो; देसामासयण्णाएण तेसि पि तत्थ संगिहयत्तादो ।

🛞 एदं नाव द्वाणीयं।

- अ एगेगपयिडिउदीरणा दुविहा—एगेगमूलपयिडिउदीरणा च एगेगु चरपयिडिउदीरणा च ।
- १७. एगेगपयडिउदीरणा ताव मूलुत्तरपयडिमेय भिएणा विहासियव्वा ति
 वृत्तं होइ ।

🛞 एदाणि वे वि पत्तेगं चउवीसमणियोगदारेहिं मग्गिऊण ।

* परन्तु यह सूत्र प्रकृतिस्थानउदीरणामें प्रतिबद्ध है।

§ १५. क्योंकि भेदोंकी गणना करनेवाला 'कित' शब्द श्रनर्थक नहीं हो सकता। तात्पर्य यह है—प्रकृति उदीरणा दो प्रकारकी है—मूल प्रकृति उदीरणा श्रोर उत्तर प्रकृति उदीरणा। उत्तर प्रकृति उदीरणा दो प्रकारकी है—एकैकप्रकृतिउदीरणा श्रोर प्रकृतिस्थान-उदीरणा। इनमेंसे यहाँ पर प्रकृतिस्थान-उदीरणामे यह सूत्र प्रतिबद्ध है, श्रन्यत्र नहीं।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि देशामर्षक न्यायसे उनका भी उसमें संग्रह हुआ है।

परन्तु इसे स्थिगित करना चाहिए ।

- ह १६. प्रकृतिस्थान उदीरणासे सम्बन्ध रखनेवाले इस सूत्र पदको स्थगित करना चाहिए, क्योंकि एकैकप्रकृतिउदीरणाकी प्ररूपणा किये बिना उसकी प्ररूपणा नहीं हो सकती।
- श्रम् एकैकप्रकृतिउदीरणा दो प्रकारकी है—एकैकप्र्वप्रकृतिउदीरणा श्रीर एकैक उत्तरप्रकृतिउदीरणा।
- § १७. मूलप्रकृतियों श्रौर उत्तरप्रकृतियोंके भेदसे भेदको प्राप्त हुई एकैकप्रकृतिउदीरणा सर्व प्रथम व्याख्यान करने योग्य है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।
- * इन दोनों ही प्रकारकी उदीरणाश्चोंको पृथक् पृथक् चौबीस श्रनुयोगद्वारोंके-श्राश्रयसे श्रनुमार्गण करके।

- १८. एदाणि वे वि अहियास्वत्थृणि एगेगपयडिपडिबद्धाणि पादेक्कं चउ-वीसमणियोगदारेहिं अणुमग्गिऊण तदो पच्छा 'कदि आवित्तयं पवेसेदि' ेति एदस्स सुत्तावयवस्स अत्थविद्यासा कायच्वा, तेसु अविद्यासिदेसु तस्सावसराभावादो ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो । काणि ताणि चउवीसमणियोगदाराणि ति वृत्ते समुक्तित्तणा-दीणि अप्पाबहुअपजंताणि ।
- § १९. संपित जहासंभवमेदेति आणियोगदारेति मृत्तपयिष्ठदीरणा एगेगुत्तर-पयिष्ठदीरणा च परूवणमेदेण सुत्तेण समिष्यद्युश्चारणायत्तेण वत्तद्दसामो । तं जहा—उदीरणा चउन्तिहा—पयिष्ठदीरणा द्विदेउदीरणा आणुभागुदीरणा पदेसुदीरणा चेदि । पयिष्ठदीरणा दुविहा—मृत्तपयिष्ठउदीरणा च उत्तरपयिष्ठउदीरणा च । मृत्तपयिष्ठउदीरणाए तत्थेमाणि सत्तारस अणिश्चोगद्दाराणि—सम्रुक्तित्तणा सादि० श्रणादि० धुव० श्रद्धव० सामित्तं जाव अष्याबहुगे ति ।
- § २०. सम्रक्तित्ताणाणुगमेण दुविहो णिदेसो—श्रोषेण श्रादेसेण य । श्रोषेण मोह० श्रात्थि उदीरगा च श्रणुदीरगा च । एवं मणुसतिए । श्रादेसेण णेरइय० मोह० श्रात्थि उदीरगा । एवं सन्वणेरइय-सन्वतिरिक्खमणुस्सश्रपञ्ज०-सन्वदेवा त्ति । एवं जाव० ।
 - § २१. सादि०-त्र्यणादि०-धुव०-ऋद्भुवाणु० दुविहो णि०---स्रोघे० स्रादेसे०।

५ १८. एकैक प्रकृतिसं सम्बन्ध रखनेवाले इन दोनों ही श्रिधकारवस्तुश्रोंका प्रथक पृथक चौबीस श्रनुयोगद्वारोंके श्राश्रयसे श्रनुमार्गण करके इसके बाद 'कदि श्रावलियं प्रवेसेदि' इस सूत्रावयवके श्रर्थका व्याख्यान करना चाहिए, क्योंकि उक्त दोनों श्रनुयोगद्वारोंका व्याख्यान किये बिना उक्त सूत्रवचनके व्याख्यानका श्रवसर नहीं हैं। इस प्रकार यह इस सूत्रका भावार्थ हैं। वे चौबीस श्रनुयोगद्वार कौनसे हैं ऐसा पूछने पर समुत्कीर्त्तनासे लेकर श्रल्पबहुत्व पर्यन्त यं चौबीस श्रनुयोगद्वार है ऐसा कहा हैं।

९१६. श्रव यथासम्भव इन श्रनुयोगद्वारोंका श्राश्रय लेकर मूलप्रकृतिउदीरणा श्रीर एकैंकउत्तरप्रकृतिउदीरणाका कथन इस सूत्रसे प्राप्त हुए उद्यारणाके बलसे बतलाते हैं। यथा—उदीरणा चार प्रकारकी हं—प्रकृतिउदीरणा, स्थितिउदीरणा. श्रनुभागउदीरणा श्रीर प्रदेशउदीरणा। प्रकृति उदीरणा दो प्रकारकी है—मूलप्रकृति उदीरणा भौर उत्तरप्रकृति उदीरणा। मूलप्रकृति उदीरणाके ये सत्रह श्रनुयोगद्वार हैं—समुत्कीतना, सादि, श्रनादि, ध्रुव, श्रभुव, श्रीर स्वामित्वसे लेकर श्रवपद्वहुत्व तक।

[§] २०. समुत्कीर्तनानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। घोघसे मोहनीयके उदीरक और अनुदीरक जीव हैं। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमं जानना चाहिए। आदेशसे नारिकयोंमें मोहनीयके उदीरक जीव हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब तियंक्र, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

[ु] २१. सादि, अनादि, धुव और अधुवानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है-- श्रोघ

श्रोघेण मोह० उदीरगा किं सादि० ४? सादि० अणादि० धुव० श्रद्धुवा वा। श्रादे० णेर्ट मोह० उदीर० किं० सादि० ४? सादि० श्रद्धुवा वा। एवं चदुगदीसु। एवं जाव०।

§ २२. सामित्ताणु० दुविहो णिदे०। श्रोघे० मोह० उदीरणा कस्स ? श्रण्णदरस्स सम्माइट्टि० मिच्छाइट्टिस्स वा। एवं चदुगदीसु। पंचिदियतिरिक्ख-श्रपज-मणुसश्रपज्ञ०-श्रणुद्दिस।दि। सन्बद्घा त्ति मोह० उदीरणा कस्स० ? श्रण्णद०। एवं जाव०।

§ २३. कालाणु० दुविहो णि० — श्रोघे० श्रादेसे० । ओघेण मोह० उदीरणा केविचरं कालादो ? तिण्णि भंगा । तत्थ जो सो सादि-सपज्जवसिदो तस्स जह० श्रांतोम्रहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियष्टं । श्रादेसेण णेरइय० मोह० उदीर० केव० ? जहण्णुकस्सिट्टदीश्रो । एवं सन्वणेरइय०-सन्वतिरिक्ख०-मणुसत्रपज्ञ०-सन्वदेवा ति । मणुसतिए मोह० उदीर० जह० एयसमन्त्रो, उकस्सेण तिण्णि पिलदोवमाणि पुन्वकोडिपुधत्तेणक्मिहियाणि । एवं जाव० ।

श्रीर श्रादेश । श्रोघसे मोहनीय कर्मके उदीरक जीव क्या सादि हैं, श्रनादि हैं, ध्रुव है या श्रध्रुव हैं ? सादि हैं, श्रनादि हैं, ध्रुव हैं श्रीर श्रध्रुव हैं । श्रादेशसे नारिकयोंमें माहनीयकर्मके उदीरक जीव क्या सादि हैं, श्रनादि हैं, ध्रुव हैं या श्रध्रुव हैं ? सादि श्रीर श्रध्रुव हैं । इसी प्रकार चारों गतियोमें जानना चाहिए। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक यथायोग्य जान लेना चाहिए।

विशेषार्थ — सूचमसाम्पराय गुणस्थान तक मोह्नीयकर्मकी उदीरणा श्रनादि है श्रौर सम्यग्दृष्टि जीवके उपशमश्रेणिसे उतरने पर उसकी उदीरणा सादि है। तथा वह श्रभव्योंकी श्रपेचा ध्रुव श्रौर भव्योंकी श्रपेचा श्रध्रुव है, इसिलए यहाँ पर मोहनीयके उदीरक जीव श्रोघसे श्रनादि, सादि, ध्रुव श्रौर श्रध्रुव कहे गये हैं। किन्तु नरकगित श्रादि चारों गित मार्गणाएँ सादि श्रौर सान्त है, इसिलए इनमें मोहनीय कर्मके उदीरकोंको सादि श्रौर सान्त कहा है। शेप कथन सुगम है।

- ६ २२. स्वामित्वानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रौर श्रादेश। श्रोघसे मोहनीय कर्मकी उदीरणा किसके होती है । श्राव्यतर सम्यन्दृष्टि श्रौर मिश्यादृष्टिके होती है । इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। पञ्चीन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्त, मनुष्य श्रपर्याप्त श्रौर श्रमनुदिशसे लेकर सर्वार्यसिद्धि तकके देवोमें मोहनीय कर्मकी उदीरणा किसके होती है । श्रम्य-तरके होती है । इसी प्रकार श्रमाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।
- ५२३. कालानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका हं श्रोघ और आदेश। श्रोघसे मोहनीयकी उदीरणाका कितना काल है ? तीन भंग हैं। उनमेसे जो सादि-मान्त भंग हैं उसकी अपेत्ता जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त हैं श्रोर उत्कृष्ट काल उपार्घ पुद्रलपरिवर्तनप्रमाण है। आदेशसे नारिकयोंमें मोहनीयकी उदीरणाका कितना काल है ? जघन्य श्रीर उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्वञ्च, मनुष्य अपर्याप्त श्रीर सब देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यिकमें मोहनीयकी उदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पूर्वकोटि पृथक्त अधिक तीन पल्य है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

६ २४. अंतराणु० दुविहो णि०—आवेण आदेसेण य। ओवेण मोह० उदीर० जह० एयसमञ्चो, उक० अंतोग्र०। मणुसतिए मोह० उदी० जहण्णुक० अंतोग्र०। सेसगइमग्गणासु णत्थि अंतरं, णिरंतरं। एवं जाव०।

ः २४. णागाजीवभंगविचयाणु० दुविहो० णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य। श्रोघेण मोह० सिया सन्वे जीवा उदीरया, सिया उदीरया च श्रणुदीरगो च। सिया उदीरगा च अणुदीरगा च ३। एवं मणुसतिए। श्रादेसेण णेरइय० मोह० अस्थि

विशेषार्थ — श्रोघसे मोहनीय कर्मकी उदीरणाके कालके तीन भंग हैं — श्रनादि-श्रनन्त श्रनादि-सान्त श्रोर सादि-सान्त । श्रमञ्योंके श्रोर श्रमञ्यसमान भन्योंके श्रनादि-श्रनन्त भंग होता है। जो भन्य जीव उपशमश्रेणि पर प्रथमबार चढ़ कर उसके श्रनुदीरक होते हैं उनके श्रनादि-सान्त भंग होता है। श्रोर जो जीव उपशमश्रेणिसे उतर कर पुनः उसकी उदीरणा करने लगते हैं उनके सादि-सान्त भंग होता है। यतः ऐसा जीव कमसे कम श्रन्तमुंहूर्त काल तक श्रोर श्रिधिकसे श्रिषक कुछ कम श्राधपुद्रल परिवर्तन काल तक इसका उदीरक हो सकता है, श्रतः इसका जघन्य काल श्रन्तमुंहूर्तप्रमाण श्रीर उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्रल परिवर्तनप्रमाण कहा है। श्रादेशसे चारों गतियोंमें जो काल कहा है वह स्पष्ट ही है। मात्र मनुष्यितकमें जघन्य काल एक समय उपशमश्रेणिमें उतरते समय एक समय उदीरक होकर जो मर कर देव हो जाता है उसकी श्रपेत्ता कहा है।

६ २४. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है — आय और आदेश। आधिसे मोहनीय कर्मकी उदीरणाका जपन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। मनुष्यित्रिकमें मोहनीयकी उदीरणाका जपन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। शेष मार्गणाओं में मोहनीयकी उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है, वह िरन्तर है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — जो जीव उपशमश्रीण पर चढ़ कर सूच्मसाम्पराय गुणस्थानमे एक आवली कालके शेष रहने पर एक समयके लिए अनुदीरक होकर तथा मरकर देव हो जाता है उसके मोहनीयकी उदीरणाका अन्तरकाल एक समय देखा जाता है और जो जीव उपशमश्रीण पर चढ़ कर सूच्मसाम्परायमें चढ़ते समय एक आवली काल तक तथा उपशानतगुणस्थानमें चढ़ते और उतरते समय अन्तर्मुहूर्त काल तक उसका अनुदीरक रह कर पुनः उसकी उदीरणा करने लगता है उसके उसकी उदीरणाका अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त देखा जाता है। यही कारण है कि यहाँ पर ओघसे मोहनीयकी उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। यतः ओघसे जघन्य अन्तर दो गितयांके आश्रयसे कहा है जो मनुष्यित्रकों नहीं बनता, इसलिए उनमें मोहनीयकी उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। गितमार्गणाके शेष भेदोंमें उपशमश्रेणिकी प्राप्ति सम्भव नहीं है। इसलिए उनमें मोहनीयकी उदीरणाके ज्ञानय मार्गण(ओमें इस व्याख्यान को ध्यानमें रखकर जहाँ अन्तरकाल सम्भव हो उसे उस प्रकारसे और जहाँ सम्भव न हो उसे उस प्रकारसे और जहाँ सम्भव न हो उसे उस प्रकारसे और जहाँ सम्भव न हो उसे उस प्रकारसे प्रीटत कर लेना चाहिए।

§ २५. नाना जीवों की श्रपेचा भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रौर श्रादेश। श्रोघसे मोहनीयकर्भके कदाचित् सब जीव उदीरक हैं। कद्ववित् नाना जीव उदीरक हैं श्रौर एक ज∣व श्रनुदीरक हैं। कदाचित् नाना जीव उदीरक हैं श्रौर नाना जीव श्रनुदीरक उदीरगा, श्रणुदीरगा णित्थ । एवं सम्बर्णेरइय-सम्बतिरिक्ख-सम्बदेवा ति । मणुस-श्रपञ्ज ० मोह० सिया उदीरगो सिया उदीरगा । एवं जाव० ।

१२६. मागाभागाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण त्रादेसेण य । श्रोघेण मोह० उदी० सव्वजी० केविडिश्रो भागो १ अर्णता भागा । अर्णुदीर० अर्णतभागो । मणुसेस उदीरगा असंखेजा भागा । अर्णुदीर० असंखे०भागो । मणुसपज ०-मणुसिणी० मोह० उदी० केविड० १ संखेज्जा भागा । अर्णुदी० संखेजिदिभागो । सेसगइमग्गणास णित्थ भागाभागो । एवं जाव० ।

है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारिकयोंमें मोहनीयके सब जीव उदीरक हैं, अनुदीरक नहीं हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्येख्न और सब देवोंमे जानना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयका कदाचित् एक जीव उदीरक है। कदाांचन् नाना जीव उदीरक है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशोषार्थ — जितने काल तक एक भी जीव श्रेणी पर त्रारोहण कर एक त्राविल प्रविष्ट सूद्रमसाम्पराय नहीं होता उतने काल तक सब संसारी छद्यस्थ जीव मोहनीयके उदीरक ही होते हैं. इसलिए तो कदाचित सब जीव मोहनीयके उदीरक होते हैं यह वचन कहा है। तथा जब नाना जीव श्रेग़ी पर त्रारोहण नहीं करते. किन्तु एक जीव उस पर त्राराहण कर एक श्राविल प्रविष्ट सूद्दमसाम्पराय या उपशान्तकषाय हो जाता है, तब नाना जीव माहनीयके उदीरक और एक जीव श्रनुदीरक होता है, इसिलए कदाचित् नाना जीव मोहनीयके उदीरक श्रीर एक जीव श्रनुदीरक हाता है यह वचन कहा है। तथा जब नाना जीव श्रेणी पर श्रारो-हम कर एक त्रावित प्रविष्ट सूच्मसाम्पराय श्रीर उपशान्तकवाय हो जाते है तब नाना जीव मोहनीयके उदीरक और अनुदोरक दोनों प्रकारके पाये जाते हैं, इसलिए यहाँ पर कदाचित नाना जीव मोहर्नायके उदीरक श्रीर नाना जीव मोहनीयके श्रनदीरक होते हैं यह वचन कहा है। यह स्रोधप्ररूपणा है जो मनुष्यत्रिकमें भी बन जाती है, इसलिए मनुष्यत्रिकमे स्रोधके समान जाननेकी सचना को है। इनके सिवा गतिमार्गणाके श्रन्य जितने भेद हैं उनमें सब जीव मोहनीयके उदीरक ही होते हैं, इसलिए मोहनीयके सब जीव उदीरक होते हैं, अनुदीरक नहीं होते यह वचन कहा है। मात्र मनुष्य अपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है। इसमें कदाचित् एक जीव होता है श्रीर कदाचित् नाना जीव होते है, इसलिए मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें कदाचित् एक जीव उदीर कहोता है श्रीर कदाचित् नाना जीव उदीर कहोते हैं यह वचन कहा है।

् २६. भागाभागानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—स्रोघ स्रोर श्रादेश। स्रोपसे मोहनीयके उदीरक जीव सब जीवोके कितने भागप्रमाण है ? अनन्त बहुभागप्रमाण है। स्रानुदोरक जीव अनन्तमे भागप्रमाण है। मनुष्योंमें उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण है त्र्योर अनुदारक जीव असंख्यात में भागप्रमाण हैं श मनुष्य पर्याप्त स्रोर मनुष्यितयोंमें मोहनीयके उदीरक जीव कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं तथा अनुदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं । शेप गित मार्गणाके भेदोंमें भागाभाग नहीं है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विश्वापार्थ — श्रागे श्रोघसे श्रीर गति मार्गणाके श्रवान्तर भेदोमें मोहनीयके उदीरको श्रोर श्रनुदीरकोके परिमाणका विचार किया है, उससे भागाभागका झान हो जाता है, इसलिए यहाँ पर श्रलगसे खुलासा नहीं किया है।

§ २७. परिमाणाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य। श्रोघेण मोह० उदी० केति० ? श्रणंता। श्रणुदी० केति० ? संखेजा। आदेसेण र्णरइय० मोह० उदीर० केति० ? श्रसंखेजा। एवं सन्वर्णरइय०-सन्वर्णाचिदियतिरिक्ख०-मणुस०-श्रपज०-देवगइदेवा भवणादि जाव श्रवराइदा ति। मणुसेसु मोह० उदी० केति० ? श्रसंखेजा। श्रणुदी० केति० ? संखेजा। मणुसपज०-मणुसिणी० मोह० उदी० श्रणुदी० केति० ? संखेजा। सन्वट्टे मोह० उदीर० केति० ? संखेजा। तिरिक्खेसु मोह० उदीरगा केतिया ? श्रणंता। एवं जाव०।

§ २८. खेतारा० दुविहो सि • — स्रोघेश आदेसे०। ओघेण मोह० उदी० केव० १ सव्वलोगे। अर्णुदी० लोगस्स असंखे०भागे। एवं तिश्क्खा०। स्वति अर्णुदीरगा रात्थि। सेसगइमग्गाशासु मोह० उदीर० लोगस्स असंखे०भागे। मण्सतिए अर्णुदी० ओघभंगो। एवं जाव०।

इत्. पोसणाणु० दुविहो णि०—ग्रोघे० त्रादेसे०। श्रोघेण मोह० उदी० सन्त्रलोगो। त्रणुदी० लोगस्स असंखे०भागो। एवं तिरिक्खेसु। एवरि त्रणुदी०

§ २७. परिमाणानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर आदेश। श्रोचसे मोहनीयके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। अनुदी क जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। आदेशसे नारिकयोंमें मोहनीयके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रसंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारिकी, सब पश्चेन्द्रिय तिर्यक्ष, मनुष्य श्रपर्याप्त श्रीर देवगतिमें देव तथा भवनवािसयोंसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चािह्ए। मनुष्योंमें मोहनीयके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। अनुदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त श्रीर मनुष्यिनयोंमें मोहनीयके उदीरक श्रीर अनुदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। सर्वार्थसिद्धिमें मोहनीयके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चािहए।

६२८, त्रेत्रानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—आघ श्रीर आदेश। श्रोघसे मोहनीयके उदीरक जीवोंका कितना त्रेत्र है १ सब लोक त्रेत्र हे । श्रनुदीरक जीवोंका लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण त्रेत्र है । इसीप्रकार तिर्यञ्जोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें श्रनुदीरणा नहीं है । गतिमार्गणाके शेष भेदोंमें मोहनीयके उदीरकोंका लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण त्रेत्र है । मनुष्यित्रकमें श्रनुदीरकोंके त्रेत्रका भंग श्रोघके समान है । इसीपकार श्रनाहरक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—श्रांघसे जो चेत्र बतलाया है श्रौर गितमार्गणाके श्रवान्तर भेदोंका जो चेत्र है उसे जानकर यहाँ पर मोहनीयके उदीरकोंका चेत्र जान लेना चाहिए। श्रमुदीरक श्रेणिमें होते हैं श्रौर उनका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण होता है, इसलिए यहाँ पर वह श्रोवसे तत्प्रमाण कहा है। किन्तु ये श्रमुदीरक जीव मनुष्यत्रिकमें ही होते हैं, इसलिए इनमें श्रोघके समान जाननेकी सूचना की है।

५ २६. स्पर्शनानुगमकी अपेद्या निर्देश दो प्रकारका है—आव और आदेश। आवसे मोहनीयके उदीरक जोवोंका स्पर्शन सब लोकप्रमाण है। तथा अनुदीरक जीवोंका स्पर्शन लोकके णित्थ । श्रादेसेण एंग्ड्य॰ मोह॰ उदीर॰ केव॰ पोसिदं ? लोगस्स असंखे॰मागो अचोइसमागा वा देखणा । एवं सन्वर्णरइय॰ । एवरि सगफोसएां । पढमाए खेत्तं । सन्वर्णचिदियतिरिक्ख-सन्वमणुस॰ मोह॰ उदीर॰ लोग॰ असंखे॰मागी सन्वलोगो वा । णवरि मणुसतिए अणुदी॰ श्रोघभंगो । सन्वदेवेसु उदीर॰ अपप्पणो पोसणं एंदन्वं । एवं जाव॰ ।

१ ३०. कालाणु० दुविहो ि ए० — भोषेण आदेसे० । श्रोषेण मोह० उदीर० केविचरं १ सन्बद्धा । अणुदी० जह० एयस०, उक० अंतोमु० । एवं चदुसु गदीसु । एवरि मणुसियपियं मोत्तूणएणत्थाणुदीरगा एत्थि । मणुसयपञ्ज० मोह० उदी० जह० सुद्दाभवग्गहणं, उक० पिलदो० असंखे०भागो । एवं जाव० ।

श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार तिर्यक्रोमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें श्रनुदीरक जीव नहीं हैं। श्रादेशसे नारिकयोंमें मोहनीयके उदीरक जीवोंने कितने लेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमें से कुछ कम छह भागप्रमाण लेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। प्रथम प्रथवामें लेत्रके समान स्पर्शन है। सब पद्धोन्द्रिय तिर्यक्ष श्रीर सब मनुष्योंमे मोहनीयके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर सब लोकका स्पर्शन किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यित्रकमें श्रनुदीरकोंका स्पर्शन श्रीयके समान है। सब देवोंमें उदीरकोंका स्पर्शन श्रपने श्रपने श्रपने स्पर्शन कानना चाहिए।

विश्रोषार्थ — मोहनीयके श्रनुदीरक श्रेणिगत जीव होते हैं श्रोर उनका स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण होता है, इसलिए यहाँ पर श्रोपसे श्रनुदीरकोंका स्पर्शन तत्प्रमाण बतला कर मनुष्यत्रिकमें भी इसे श्रोपके समान जाननेकी सूचना की है। श्रोपसे श्रोर गति-मार्गण के श्रवान्तर भेदोंमें जहाँ जो स्पर्शन है उसे ध्यानमें रख कर सर्वत्र उदीरकोंका स्पर्शन बतलाया है यह स्पष्ट ही है।

\$ २०. कालानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ और आदेश। श्रोघसे मोहनीयके उदीरकोंका कितना काल है ? सर्वदा है। अनुदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्भुहूर्त है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यित्रकको छोड़कर अन्यत्र अनुदीरणा नहीं है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयके उदीरकोंका जघन्य काल जुल्लकभवमहण्यप्रमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—नाना जीवोंकी श्रपेक्षा भी मोहनीयकी श्रनुदीरणाका जघन्य काल एक समय श्रौर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त बन जाता है, क्योंकि बहुतसे नाना जीव एक साथ उपशम-श्रेणि पर श्रारोहण करके एक समयके लिए श्रनुदीरक होकर उदीरक हो जॉब यह भी सम्भव है श्रौर लगातार सख्यात समय तक उपशमश्रेणि पर श्रारोहण करके मरणके बिना वे उपशम-श्रेणिमें श्रन्तर्मुहूर्त काल तक उसके श्रनुदीरक बने रहें यह भी सम्भव है। यही कारण है कि यहाँ पर श्रोघ तथा मनुष्यत्रिककी श्रपेक्षा मोहनीयके श्रनुदीरकोंका जघन्य काल एक समय

- ६ ३१. अंतराणु० दुनिही णि०— श्रीषे० श्रादेसे०। श्रीषेण मोह० उदी० णित्य श्रंतरं। श्रणुदी० जह० एयसमश्री, उक्क० वासपुधत्तं। एवं चदुसु गदीसु। णविर मणुसत्तियं मोत्तूणएणत्थ श्रणुदीरगा णित्थ। मणुसश्रपञ्ज० मोह० उदी० जह० एयसमश्रो, उक्क० पिट्ठदी० श्रसंखे०भागो। एवं जाव०।
 - § ३२. मावो सन्वत्थ श्रोदहश्रो मावो ।
- § ३३. अप्पावहुगाणु० दुविहो णि०—श्रोघे० श्रादेसे०। श्रोघेण मोह० सन्वत्थोवा श्रणुदी०। उदीरगा अणंतगुणा। मणुसेसु सन्वत्थो० मोह० श्रणुदी०। उदीरगा श्रसंखे०गुणा। एवं मणुसपञ्ज०-मणुसिणी०। णविर संखेजगुणा कायन्वा। सेसगदीसु णित्थ श्रप्पाबहुश्चं। एवं जाव।

श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त कहा है। तथा मनुष्य श्रपर्याप्त यह श्रन्तर मार्गणा है श्रीर उसका जधन्य काल जुल्लकभवप्रमाण तथा उत्कृष्ट काल पल्यके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे इस मार्गणामे उदीरकोंका जधन्य श्रीर उत्कृष्ट काल कमसे उक्त प्रमाण कहा है। शेष गतिमार्गणाके भेदोमें उदीरकोंका काल जो सर्वदा कहा है सो वह उन मार्गणाश्रोंके निरन्तर होनेसे ही कहा है।

६ ३१. श्रन्तरानुगमकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रौर श्रादेश श्रोघसे मोहनीयके उदीरकोंका श्रन्तरकाल नहीं है। श्रनुदीरकोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकको छोड़कर श्रन्यत्र श्रनुदीरणा नहीं है। मनुष्य श्रप्याप्तकोंमें मोहनीयके उदीरकोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — उपशमश्रेणिमें मोहनीयके अनुदीरक जीव होकर तथा एक समयका अन्तर देकर पुनः दूसरे जीव अनुदीरक हो जावें यह भी सम्भव है और वर्षपृथक्त्वके अन्तरसे अनुदीरक हों यह भी सम्भव है। यही कारण है कि यहाँ श्रोघ और मनुष्यत्रिककी अपेत्ता अनुदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व प्रमाण कहा है। मनुष्य अपर्याप्तक सान्तर मार्गणा होनेसे उनका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इनमें मोहनीयके उदीरकोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर कमसे उक्त कालप्रमाण कहा है। गितमार्गणाके शेष भेदोंमें अनुदीरक न होकर उदीरक ही होते हैं, इसलिए उनमें उदीरकोंके अन्तरकालका निषेध किया है। श्रोघसे भी सब या नाना जीव मोहनीयके उदीरक पाये जाते हैं, इसलिए इस अपेत्तासे भी उदीरकोंके अन्तरका निषेध किया है।

- § ३२. भाव सर्वत्र खौदयिक होता है।
- § ३३. श्रल्पबहुत्वानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश । श्रोघसे मोहनीयके श्रनुदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उदीरक जीव श्रनन्तगुर्गे हैं । मनुष्योंमें मोहनीयके श्रनुदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उदीरक जीव श्रसंख्यातगुर्गे हैं । इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त श्रीर मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुर्गे करने चाहिए । शेष गतियोंमें श्रल्पबहुत्व नहीं है । इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ३४. उत्तरपयिंडउदीरणा दुविहा—एगेगउत्तरपयिंडउदीरणा पयिंडहाणउदीरणा च । एगेगउत्तरपयिंडउदीरणाए तत्थ इमाणि चउवीसमिणिश्रोगदाराणि—
सम्रकित्तणा जाव श्रप्पाबहुए ति । सम्रकित्तणाणु० दुविहो णि०—श्रोघे० श्रादेसे० ।
श्रोघेण श्रद्धावीसपयडीणमित्थ उदीरगा श्रणुदीरगा च । श्रादेसेण गेरइय० इत्थिवे०पुरिसवे० अणुदीरगा, सेसाणमुदीरगाणुदीरगा श्रात्थ । एवं एचिदियतिरिक्खितए ।
एवं एचिं०तिरि०पञ्ज० इत्थिवे० श्रणुदी० । जोणिणी० पुरिस०-णवृंस०
श्रणुदी० । इत्थिवे० श्रणुदी० एणिंव०तिरि०श्रपञ्ज०-मणुसश्रपञ्ज० सम्म०सम्मामि०-इत्थि-पुरिसवे० श्रणुदी० । मिच्छ०-णवृंस० श्रात्थ उदीरगा, श्रणुदीरगा
एत्थ । सोलसक०-ञ्रएणोक० श्रत्थ उदीर० श्रणुदीर० । मणुसतिए श्रोघं । एवरि
मणुसपञ्ज० इत्थिवे० श्रणुदी० । मणुसिणी० पुरिस०-णवृंसयवे० श्रणुदीर० । देवेसु
श्रोघं । एवरि एवं श्रणुदी० । एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसिय-सोहम्मीसाणदेवाणं ।
सणकुमारादि जाव एवगेवञा ति एवं चेव । एवरि इत्थिवे० श्रणुदी० । पुरिसवे०
श्रणुदी० णित्थ । श्रणुदिसादि सव्वद्वा ति मिच्छ०-सम्मामि०-श्रणंत। ए०४-इत्थिवे०एवंस० श्रणुदी० । सेसाणमित्थ उदीर० श्रणुदी० । एवरि पुरिसवे० श्रणुदी० । सेताणमित्थ उदीर० श्रणुदी० । एवरि पुरिसवे० श्रणुदी० । स्विण्यानिक प्रात्थ ।

६ ३४. उत्तरप्रकृति उदीरणा दो प्रकारकी है-एकैकप्रकृति उदीरणा श्रीर प्रकृतिस्थान उदीरणा। एकैकप्रकृति उदीरणाके विषयमें ये चौबीस अनुयोगद्वार होते हैं - समुत्कीर्तनासे लेकर श्रलपबहुत्व तक । समुत्कीर्तनानुगमकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है-श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे श्रद्वाईस प्रकृतियोंके उदीरक श्रीर श्रनुदीरक जीव हैं। श्रादेशसे नारिकयोंमें स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदके अनुदीरक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंके उदीरक और अनुदीरक जीव हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदकी ऋनुदीरणा नहीं है । इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। तिर्यक्रोंमें स्रोघके समान भंग है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्कत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पक्केन्द्रिय तिर्येक्क पर्याप्तक स्त्रीवेदके ऋनुदीरक होते हैं तथा योनिनी जीव पुरुपवेद श्रीर नपु सकवेदके अनुदीरक होते हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्त जीव सम्यक्त्त्र, सम्यग्मिश्यात्व, स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदके श्रनुदीरक होते हैं। मिश्यात्व श्रीर नपु सकवेदके उदीरक होते हैं, श्रनुदीरक नहीं होते। सोलह कपाय श्रीर छह नोकषायोंके उदीरक श्रौर श्रनदीरक दोनों प्रकारके होते हैं। मनुष्यत्रिकमें श्रोघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य पर्याप्त स्त्रीवेदके अनुदीरक होते हैं तथा मनुष्यिनी पुरुषवेद और नपु सकवेदके अनुदीरक होते हैं। देवोंमें श्रोधके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि ये नपु सकवेदके अनुदीरक होते हैं। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, तथा सौधर्म श्रीर ऐशानकल्पके देवोंमें जानना चाहिए । सनत्कुमारसे लेकर नौप्रैवेयकतकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि ये खीवेदके अनुदीरक होते हैं। इनमे पुरुषवेदकी अनुदीरणा नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धि तकके देव मिध्यात्व, सम्यग्मिध्यात्व, अन-न्तानुबन्धी चतुष्क, स्त्रीवेद श्रीर नपुंसकवेदके श्रानुदीरक होते हैं। शेष प्रकृतियोंके उदीरक भी होते हैं भौर अनुदीरक भी होते हैं। इतनी विशेषता है कि ये पुरुषवेदके अनुदीरक नहीं होते।

एवं जाव० ।

- § २४. सव्वउदीर०-णोसव्वउदीरणागु० दुविहो णि०—श्रोषे० श्रादेसे० । श्रोषेण सव्वाभो पयडीश्रो उदीरेंतस्स सव्वुदीरणा। तद्गां णोसव्बुदीर० । एवं जाव०।
- § ३६. उकस्साणुक०उदीरणाणु० दुवि० णिद्दे०। स्रोधेण सन्तुकस्सियास्रो पयडीस्रो उदीरयंतस्स उक० उदीरणा । तदूणमणुक० उदीरणा । एवं० जाव० ।
- § ३७. जह०उदी०-श्रज०उदीरणाणु० दुनिहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे०। श्रोघेण एगं पयिडमुदीरयंतस्स जहएगाउदीरणा। तदो उनिरमजह०उदीर०। एवं मणुसितए। त्रादेसेण गोरहय० छप्पयडीश्रो उदीरेमाण० जह० उदी०। तदो उनिर श्रजह०उदीर०। एवं सन्नगोरइय०-सन्नदेवा०। सन्नितिरक्खेसु पंचपयडीश्रो उदीरेमाणयस्स जहण्णउदी०। तदो उनिरमजह०उदीर०। णनिर पंचि०तिरिक्ख-श्रपज०-मणुसश्रपज० अद्वपयडीश्रो उदीरेमागा० जह० उदीर०। तदो उनिर

इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — कुछ अपवादोंको छोड़कर साधारण नियम यह है कि जब जिस प्रकृतिका उदय होता है तब उसकी उदीरणा भी होती है। इस नियमको ध्यानमें रखकर सर्वत्र समुत्की-तेनाका विचार कर लेना चाहिए।

§ ३४. सर्व और नोसर्व उदीरणानुगमकी अपेद्या निर्देश दो प्रकारका है—स्रोघ और आदेश। स्रोघसे सब प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके सर्व उदीरणा होती है तथा उससे कमकी उदीरणा करनेवाले जीवके नासर्व उदीरणा होती है। इसीप्रकार अनाहारक मर्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३६. उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट उदीरणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ और श्रादेश। श्रोघसे सबसे उत्कृष्ट प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके उत्कृष्ट उदीरणा होती है श्रोर उससे कम प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जोवके श्रनुत्कृष्ट उदीरणा होती है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

\$ ३७. जघन्य उदीरणा श्रोर श्रजघन्य उदीरणानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोय श्रोर श्रादेश। श्रोघसे एक प्रकृतिकी उदीरणा करनेवाले जीवके जघन्य उदीरणा होती है। तथा इससे श्रिषक प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके श्रजघन्य उदीरणा होती है। इसीप्रकार मनुष्यित्रकमें जानना चाहिए। श्रादेशसे नारिकयोंमें छह प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके अजघन्य उदीरणा होती है श्रीर उनसे श्रिषक प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके श्रजघन्य उदीरणा होती है। इसीप्रकार सब नारकी श्रीर सब देवोंमें जानना चाहिए। सब तिर्यक्रोंमें पाँच प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके जघन्य उदीरणा होती है। है श्रीर इनसे श्रिषक प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके श्रजघन्य उदीरणा होती है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पक्रीन्द्रय तिर्यक्र श्रपर्याप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें श्राठ प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है।

श्रजह०उदीर० । एवं जाव० ।

§ ३८. सादि०-अणादि०-धुव०-श्रद्धुवाणु० दुविहो णि०—स्रोघे० स्रादेसेण । स्रोघेण मिच्छ० उदीर० किं सादि० ४ ? सादिया वा त्रणादिया वा धुवा वा त्र्रद्धुवा वा । सेसाणं पयडीणं सादि-श्रद्धुवा उदीरसा । श्रादेसेण रोरइय० सन्वपयडीणं० सादि० श्रद्धुवा वा । एवं चदुगदीसु । एवं जाव० ।

उदीरणा करनेवाले जीवके श्रजघन्य उदीरणा होती है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विश्लोषार्थ--श्रोघसे कमसे कम एक लोभ प्रकृतिकी उदीरणा होती है। यह जघन्य उदीरणा है। श्रिधिकसे श्रिधक एक मिध्यात्व, सांलइ कषायोंमेंसे क्रोध, मान, माया श्रीर लोभ जातिकी कोई चार कषाय, हास्य श्रीर शोकमेंसे कोई एक, रित श्रीर श्ररतिमेंसे कोई एक, तीनों वेदोंमेंसे कोई एक तथा भय श्रीर जुगुप्सा इन दस प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है। यह श्रजघन्य उदीरणा है। मनुष्यत्रिकमें यह श्रोघप्ररूपणा बन जाती है, इसलिए उनमें श्रोघके समान जाननेकी सूचना की हैं। नारिकयोंमें कमसे कम बारह कषायोंमेंसे क्रोध, मान, माया श्रीर लोभ जातिकी कोई तीन कषाय, हास्य श्रीर शोकमेंसे कोई एक, रित श्रीर श्ररतिमेंसे कोई एक तथा एक नपुंसकवेद इन छह प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है। यह जघन्य प्रकृति उदीरणा है। श्रधिकसे श्रधिक श्रोघके समान दस प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है। मात्र इनमें तीनों वेदोंमेंसे एक नपुंसक वेदकी ही उदीरणा होती है। यह ऋजधन्य प्रकृति उदीरणा है। नारिक थोंके समान सामान्य देवोंमें ऋौर ऐशान कल्प तकके देवोंमें व्यवस्था बन जाती है, इस-लिए उनमें नारिकयोंके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र इनमें स्त्रीवेद श्रौर पुरुषवेद इनमेंसे कोई एक वेदकी उदीरणा कहनी चाहिए, क्योंकि देवोंमें नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। श्रागे नौ प्रैवेयकतकके देवोंमें श्रन्य सब कथन पूर्वोक्त प्रमाण है। मात्र इनमें एक पुरुषवेदकी ही उदीरणा कहनी चाहिए। तथा नौ ऋन दिशादिकमें कमसे कम छह और ऋधिकसे ऋधिक नौ प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है। तिर्यक्कोंमें पक्चम गुणस्थानकी प्राप्ति सम्भव होनेसे कमसे कम पॉच ऋौर ऋधिकसे ऋधिक दस प्रकृतियोंकी उदीरणा सम्भव है। तथा पख्रेन्द्रिय तिर्यक्र श्रपर्याप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें एक मिध्यात्व गुणस्थान सम्भव होनेसे कमसे कम श्राठ श्रीर श्रविकसे श्रविक दस प्रकृतियोंकी उदीरणा सम्भव है। सर्वत्र श्रजधन्य उदीरणाके जो श्रन्य विकल्प सम्भव हैं वे यथायोग्य लगा लेना चाहिए। यह जघन्य श्रीर श्रजघन्यकी श्रपेत्ता व्याख्यान है। यही व्याख्यान उत्कृष्ट श्रानुत्कृष्टकी श्रपेत्तासे भी जान लेना चाहिए। मात्र सर्वत्र सबसे अधिक प्रकृतियोंकी उदीरणा उत्कृष्ट प्रकृति उदीरणा है और उनसे कम प्रकृतियोंकी उदीरणा श्रानुत्कृष्ट प्रकृति उदीरणा है इस व्याख्यानके श्रानुसार यह कथन करना चाहिए। सर्वप्रकृति उदीरणा श्रौर नोसर्वप्रकृति उदीरणाका खुलासा भी इसीप्रकार घटित कर लेना चाहिए।

§ ३८. सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—स्त्रोध और आदेश । श्रोघसे मिथ्यात्वक उदीरक क्या सादि, अनादि, ध्रुव या अध्रुव हैं ? सादि, स्रनादि, ध्रुव और अध्रुव ह । राप प्रकृतियोंकी सादि स्त्रोर अध्रुव उदीरणा है । आदेशसे नार-कियोम सब प्रकृतियोकी सादि और अध्रुव उदीरणा है । इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। § ३९. सामित्राणु० दुविहो णि०—ग्रोषे० भ्रादेसे०। भ्रोषेण मिच्छ०सम्म०-सम्मामि० उदीर० कस्स १ श्रण्णद० मिच्छाइद्विस्स सम्माइद्विस्स सम्मामिच्छाइद्विस्स । श्रणंताणु०४ उदीर० कस्स १ श्रण्णद० मिच्छाइद्वि० सासणसम्माइद्विस्स वा। वारसक०-णवणोक० उदीरणा कस्स १ श्रण्णद० मिच्छाइद्वि० सम्माइद्विस्स वा। श्रादेसेण णेरइय० श्रोषं। णविर इत्थिवे०-पुरिसवे० णत्थि उदीर०। एवं स्व्वणेरइय०। तिरिक्खेसु श्रोषं। एवं पंचिदियतिरिक्खितिए। णविर पंचिदियतिरिक्खपञ्ज० इत्थिवेद०उदीरणा णित्थ। जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंसय०उदीरणा णित्थ। पंचि०तिरि०श्रपञ्ज०-मणुसश्रपज्ज० चउवीसंपयडीणं उदीर० कस्स १ श्रण्णद०। मणुसतिए पंचि०तिरिक्खितयभंगो। देवेसु श्रोषं। णविर णवुंस०उदीर० णित्थ। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाण०। सणक्कुमारादि जाव णवगेवज्जा त्ति एवं चेव। णविर इत्थिवे०उदीरणा णित्थ। श्रणुदिसादि सव्वद्वा त्ति

विशेषार्थ—मिथ्यात्व प्रकृतिकी उदीरणा मिथ्यात्व गुणस्थानमे निरन्तर होती रहती है, इसलिए श्रोघसे भव्य श्रीर श्रभव्य दोनोंकी श्रपेत्ता इसकी उदीरणाके सादि श्रादि चारों भंग बन जाते हैं। किन्तु श्रन्य प्रकृतियोंकी उदीरणा श्रपने श्रपने उदयानुसार कादाचित्क है, इसलिए उनकी उदीरणाके सादि श्रीर श्रधुव ये दो ही भंग वनते हैं। यह श्रोघप्ररूपणा है। गति श्रादि मार्गणाएँ प्रत्येक जीवकी श्रपेत्ता कादाचित्क है, इसलिए इनमें सब प्रकृतियोंकी उदीरणा सादि श्रीर श्रधुव ही है।

[§] ३९. स्वामित्वानुगमको श्रपेत्ता निर्देश दा प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोधसे मिध्यात्व, सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिध्यात्वकी उदीरणा किसके होती है ? श्रन्यतर मिध्यादृष्टि, सम्यग्दृष्टि श्रौर सम्यग्मिथ्यादृष्टिके होती है। श्रानन्तानुबन्धीचतुष्ककी उदीरणा किसके होती है ? श्रन्यतर मिथ्यादृष्टि श्रौर सासादनसम्यग्दृष्टिके होती है । बारह कपाय श्रौर नौ नोक-षायोंकी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतर मिध्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टिके होती है। आदेशसे नारिकयोंमे श्रोचके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके स्त्रीवेद श्रौर पुरुषवेदकी उदीरणा नहीं होती। इसी प्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। तिर्यश्चोंमें श्रोधके समान भङ्ग है। इसी प्रकार पञ्जेन्द्रिय तिर्यक्रविकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पख्रेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्तकोमे स्वीवेदकी उदीरणा नहीं होती। तथा योनिनी तिर्यक्रोंमें पुरुपवेद श्रीर नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्तकोमें चौबीस प्रकृतियोंकी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतरके होती है। मनुष्यत्रिकमें पश्चेन्द्रिय तिर्यंचित्रकके समान भङ्ग है। देवोमं श्रोयके समान भङ्ग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमे नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। इसी प्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी सौधर्म श्रौर ऐशान-देवोमें जानना चाहिए। तथा सनत्कमारसे लेकर नौ प्रेवेयक तकके देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें स्रोवेदकी उदीरणा नहीं होती। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थंसिद्धि तकके देवोंमें बीस प्रकृतियोकी उदीरणा किसके होती हैं ? अन्यतरके होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

ई ४०. कालाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे०। श्रोघेण मिच्छ०उदीर० केविचरं० ? तिण्णि भंगा। तत्थ जो सो सादिश्रो सपज्जविसदो तस्स इमो०—जह० श्रंतोष्ठ०, उक्क० श्रद्धपोग्गल० देस्व०। सम्मा० उदीर० जह० श्रंतोष्ठ०, उक्क० श्राविक्षणाणि । सम्मामि० जह० उक्क० श्रंतोष्ठ०। सोलसक०-भय-दुगुंछ० जह० एयस०, उक्क० श्रंतोष्ठ०। हस्स-रदि० जह० एयसमश्रो, उक्क० अम्मासा। श्ररिद-सोग० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि। इत्थिवे० जह० एयस०, उक्क० पिलदोवमसदपुधत्तं। पुरिसवे० जह० श्रंतोष्ठ०, उक्क० सागरोवमसदपुधत्तं। ण्वंस० जह० एयस०, उक्क० श्रणंतकालभसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा।

§ ४१. त्र्यादेसेण ऐरहय० मिच्ब० उदी० जह० श्रंतोम्र०, णवुंस० जह० दसवस्ससहस्साणि, ब्ररदि०-सोग०जह० एयस०, उक्क० सव्वेसिं तेत्तीसं सागरोवमं । सम्म० जह० एय०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देखणाणि । सम्माम्मि० श्रोघं ।

विशेषार्थ---पश्चेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त श्चीर मनुष्य अपर्याप्तकांमें सम्यक्त्व, सम्य-ग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद श्चीर पुरुपवेदके बिना चौबीस प्रकृतियोकी उदीरणा सम्भव है। तथा श्चनु-दिशादिकमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, श्चनन्तानुबन्धीचतुष्क नपुंसकवेद श्चीर स्त्रीवेदके बिना बीस प्रकृतियोंकी उदीरणा सम्भव है। शेष कथन सुगम है।

\$ ४०. कालानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। श्रोघसे मिश्यात्वके उदीरकका कितना काल हें ? तीन भङ्ग हैं। उनमेंसे जो सादि-सान्त भंग है उसका यह निर्देश है—जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल उपार्थ पुद्रल परिवर्तनप्रमाण है। सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त हें और उत्कृष्ट काल एक आविल कम छ्यासठ सागर है। सम्यिमश्यात्वके उदीरकका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है। सोलह कपाय, भय और जुगुप्साके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। हास्य और रितके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल छह महीना है। अरित और शोकके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। स्त्रोवेदके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ पत्य प्रमाण है। पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ सागर प्रमाण है। पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ सागर प्रमाण है। नपुंसकवेदके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पृथक्त सौ सागर प्रमाण है। नपुंसकवेदके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रनन्त काल है।

विश्रोपार्थ — प्रत्येक प्रकृतिका जो जघन्य और उत्कृष्ट उदय काल है वही यहाँ लिया गया है। अरित-राोकके उदीरकका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त अधिक तेतीस सागर है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका एक समय काल उपशम श्रेणिसे गिरकर मरनेकी अपेत्ता है। अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें भय जुगुप्साका एक समयके लिये वेदक होकर अनन्तर समयमें अनिवृत्तिकरण गुग्रास्थानके प्राप्त होनेपर उक्त प्रकृतियोंकी उदीरणा व्युच्छित्ति देखी जाती है।

§ ४१. श्रादेशसे नारिकयोंमें निष्यात्वके उदीरकका जघन्य काल श्रन्तमुंहूर्त है, नपुंसक-वेदके उदीरकका जघन्य काल दश हजार वर्ष है, श्रादि श्रीर शोकके उदीरकका ज न्य काल एक समय है तथा सबका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल सोलसक०-हस्स-रिद०-भय-दुगुंछा० जह० एयस०, उक्क० द्यंतोग्र०। एवं सत्तमाए। एविर एविर एविर जह० वावीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि। सम्म० जह० द्यंतोग्र०। पढमाए जाव छि ति णारयभंगो। एविर सगिहिदी। द्यरिद-सोग० जह० एयस०, उक्क० द्यंतोग्र०। एवं स० जहण्णुक्कस्सिहिदी। विदियादि जाव छि ति सम्म० जह० द्यंतोग्र०, उक्क० सगिहिदी देख्णा।

§ ४२. तिरिक्खेसु मिच्छ०-णवुंसयवे० जह० खुद्दामव०, उक्क० श्रणंतकाल-मसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। सम्म० उदीर० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पिलदोवमाणि देस्रणाणि। सम्मामि० श्रोघं। सोलसक०-छण्णोक० जह० एयस०, उक्क० श्रंतोस्र०। इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० श्रंतोस्र०, उक्क० तिण्णि पिलदो० पुच्वकोडिपुधत्तेणव्महियाणि। एवं पंचिंदियतिरिक्खितिए। णवरि मिच्छ० जह०

एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। सम्यग्मिश्यात्वका मंग श्रोघके समान है। सोल ह कषाय, हास्य, रित, भय श्रोर जुगुप्साके उदीरकका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त है। इसी प्रकार सातवी पृथिवीमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि नपु सकवेदके उदीरकका जघन्य काल साधिक बाईम सागर है तथा सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल श्रन्तर्मुहर्त है। पहिली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारिकयोंमे सामान्य नारिकयोंके समान मंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रपनी स्थित कहनी चाहिए। तथा श्ररित श्रोर शोकके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त हैं। नपु सकवेदके उदीरकका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल जघन्य श्रोर उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारिकयोंमे सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल श्रन्तर्मुहर्त हैं श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम श्रपनी स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—चायिक सम्यक्त्वके सन्मुख वेदक सम्यग्दृष्टि जीव भी मर कर प्रथम नरकमे उत्पन्न होता है इसिलए इसमे सम्यक्त्वकी उदीरणाका एक समय काल बन जाता है और इसी अपेचासे सामान्य नारिकयोंमे सम्यक्त्वकी उदीरणाका एक समय काल कहा है। ना कियोंमे हास्य और रितकी उदीरणाका उत्कृष्ट काल छह महीना देवोंमें ही घटित होता है। अन्यत्र वह अन्तर्मुहूर्त ही बनता है, इसिलए नारिकयोंमे भी वह अन्तर्मुहूर्त ही कहा है। अरित और शोककी उदीरणाका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर सातवें नरकमे ही बनता है। अन्यत्र वह अन्तर्मुहूर्त ही प्राप्त होता है। यही कारण है कि सामान्य नारिकयोंमे और सातवें नरकमे तेतीस सागर कहा है तथा शेष नरकोंमे अन्तर्मुहूर्त बतलाया है। शेष कथन सुगम है।

६ ४२. तिर्यंचोंमे मिथ्यात्व श्रौर नपुंसक्र वेद्देश्वका जघन्य काल बुल्लकभवमह्ण-प्रमाण है श्रौर उत्कृष्ट श्रमन्त कालप्रमाण है जो श्रसंख्यात पुद्रल परिवर्तनके बराबर है। सम्यक्त्वकी उदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रौर उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पत्य है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग श्रोघके समान है। सोलह कषाय श्रौर छह नोकपायोंके उदीरकका जघन्य काल एक समय है श्रौर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है। स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य काल श्रन्तर्मुहूर्त है श्रौर उत्कृष्ट काल पूर्व कोटिपृथक्त्व श्रिषक तीन पत्य है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्रितिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्वक्रे खुद्दाभव० श्रंतोग्च०, उक्क० सगष्टिदी। एवंस० जह० खुद्दाभव० श्रंतोग्च०, उक्क० पिलदोवमाणि पुन्यकोडिपुधत्तेणन्मिहियाणि। एविर पंचि०तिरि०पज्ज० इत्थिवेद० एत्थि। जोणिणी० पुरिस०-एवं स० एत्थि। सम्म० जह० श्रंतोग्च०, उक्क० तिण्णि पिलदो० देख्रणाणि। पंचि०तिरि०श्रपज्ज०-मणुसश्चपज्ज० मिच्छ०-एवंस० जह० खुद्दाभव०, उक्क० श्रंतोग्च०। सोलसक०-छएणोक० तिरिक्खोघं।

१४३. मणुसेसु पंचिं०तिरिक्खभंगो । णविर सम्म० जह० त्रांतोमु० ।
तिण्णिवे० जह० एयस० । एवं मणुसपज्ज० । एविर सम्म० जह० एयस० । इत्थिवे०
एिथ । मिच्छ० जह० त्रांतोमु० । मणुसिणी० मणुसोघं । णविर मिच्छ० जह०
त्रांतोमु० । पुरिस-एवंस० णिथ ।

उदीरकका जघन्य काल सामान्य पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्चोंमें चुल्लकभवम्रह्णप्रमाण श्रोर शेप दो में श्रम्त मुंहूर्त है तथा उत्कृष्ट काल श्रपनी श्रपनी कायस्थितिप्रमाण है। नपु सक्वेदके उदीरकका जघन्य काल पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्चोंमें चुल्लकभवम्रह्णप्रमाण श्रोर शेपमें श्रम्त मुंहूर्तप्रमाण है तथा उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिप्रथक्त्व है। किन्दु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्च पर्याप्तकों में खीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनी तिर्यक्चोंमें पुरुषवेद श्रोर नपु सक्वेदकी उदीरणा नहीं है। सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तमुहूर्त हैं श्रोर उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पत्य है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्च श्रपर्याप्त श्रोर भनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व श्रोर नपु सक्वेदके उदीरकका जघन्य काल खुल्लक भवश्रह्णप्रमाण है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रम्त मुंहूर्त है। सोलह कपाय श्रोर छह नोकपायोंका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है।

विशेषार्थ—चायिकसम्यक्त्वके सन्मुख चायिक सम्यन्दष्टि जीव मर कर योनिनी तिर्यक्षोंमें नहीं उत्पन्न होते, इसलिए उनमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पत्य कहा है। तथा नपुंसकवेदकी उदीरणा और उदय भोगभूमिमें नहीं होता, इसलिए इसके उदीरक तिर्यक्षांका उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिप्रथक्वप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ४३. मनुष्योंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्श्वश्चोंके समान मंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। तथा तीनों वेदोंके उदीरकका जघन्य काल एक समय है। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल एक समय है। इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्यिनियोंमें सामान्य मनुष्योंके समान मंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। तथा इनमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती।

त्रिशेषार्थ — पहले पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें सम्यक्त्वके उदरीकका जघन्य काल एक समय कह आये हैं, इसलिए यहाँ सामान्य मनुष्योंमें उसका निषेध करके वह अन्तर्मुहूर्त बतलाया है। वैसे मनुष्य पर्याप्तकोंमें यह काल एक समय बन जाता है, क्योंकि जिसने पहले मनुष्यायुका बन्ध किया है ऐसा मनुष्यिनी जीव यदि चायिक सम्यक्त्वको उत्पन्न करता हुआ सम्यक्त्वकी उदीरणा में एक समय शेप रहने पर मर कर यदि पर्याप्त मनुष्योंमें उत्पन्न होता है तो उसके सम्यक्त्वकी

१४४. देवेसु मिच्छ० जह० श्रंतोस्च०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरोवमं। सम्म० जह० एयस०, उक्क तेत्तीसं सागरोवमं। सम्मामि०-सोलसक०-श्ररदि-सोग-भय-दुगुं छ० तिरिक्खोघं। हस्स-रइ० श्रोघं। इत्थिवे० जह० दसवस्ससहस्साणि, उक्क० पणवणणपिलदो०। पुरिस० जह० दसवस्ससहस्साणि, उक्क० तेत्तीसं सागरो०। भवणादि जाव णवगेवजा ति मिच्छ०-सम्म० जह० श्रंतोसु० एयस०, उक्क० सगद्विदी। पुरिस० जहण्णु० जह०-उक्क०ठिदी। सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० तिरिक्खोघं। णवरि भवण०वाणवें-जोदिसि० सम्म० जह० श्रंतोसु०, उक्क० सगद्विदी देसुणा। इत्थिवे० जह० दसवस्ससहस्साणि दसवस्ससह० पिलदो० श्रद्धमभागो, उक्क० तिणिण पिलदो० पिलदो० सादिरेथाणि पिलदोव० सादिरे०। सोहम्मीसाण० इत्थिवे० जह० पिलदो० सादिरे०, उक्क० पणवण्णं पिलदोवमाणि। सदर-सहस्सार० हस्स-रइ० देवोघं। श्रणुहिसादि सन्बद्धा ति सम्म० जह० एयस०, उक्क० सगद्विदी। बारसक०-

उदीरणाका जघन्य काल एक समय बन जाता है। परन्तु ऐसा होने पर भी सामान्य मनुष्योंमें इसकी उदीरणाका जघन्य काल स्नन्तर्मुहूर्त ही बनता है। यही कारण है कि यहाँ पर सामान्य मनुष्योंमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल स्नन्तर्मुहूर्त बतलाया है। सामान्य मनुष्योंमें तोनों वेदांके उदीरकका जघन्य काल एक समय उपशामश्रेणिमें एक समय तक उस उस वेदकी उदीरणा करा कर मरणकी स्त्रपेचा कहा है। पर्याप्त मनुष्योंमें पुरुषवेद स्त्रीर नपुंसकवेदके उदीरकका तथा मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदके उदीरकका जघन्य काल एक समय इसीप्रकार घटित कर लेना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

§ ४४. देवोंमें मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य काल श्रन्तर्मुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट काल इक-तीस सागर है। सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय, श्ररति, शोक, भय श्रौर जुगुप्साका भंग सामान्य तिर्यक्रोंके समान है। हास्य श्रीर रतिका भंग श्रोधके समान है। स्नीवेदके उदीरकका जघन्य काल दस हजार वर्ष है श्रीर उत्कृष्ट काल पचवन पल्य है। पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य काल दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। भवनवासियोंसे लेकर नौ मैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व श्रीर सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल क्रससे श्रन्नर्भुहूर्त श्रीर एक समय है। तथा उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थितिप्रमाण है। पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल जघन्य श्रीर उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सन्यग्मिण्यात्व, सोलह कषाय श्रीर छह नोकषायोंके उदीरकका भंग सामान्य तिर्यंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि भवनवासी, व्यन्तर श्रीर ज्योतिषी देवोंमें सम्यक्तक उदीरकका जधन्य काल धन्तर्महर्त है श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिश्रमाण है। स्त्रीवेदके उदीरकका जघन्य काल कमसे दस हजार वर्ष, दस हजार वर्ष स्रोर पल्यके आठवें भागप्रमाण है तथा उत्कृष्ट काल तीन पल्य, साधिक एक पल्य श्रीर साधिक एक पत्य है। सौधर्म श्रीर ऐशान कल्पमें स्त्रीवेदके उदीरकका जधन्य काल साधिक एक पल्य श्रीर उत्कृष्ट काल पचवन पल्य है। शतार श्रीर सहस्रार कल्पमें हास्य श्रीर रतिके उदीरकका काल सामान्य देवोंके समान है। ऋनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिखि तकके देवोंमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है।

व्यरणोक० जह० एगस०, उक० श्रंतोम्र०। पुरिसवेद० जहराणुकस्सद्विदी। एवं जाव०।

§ ४४. अंतराणु० दुविहो णि०—श्रोषेण श्रादेसे०। ओषेण मिच्छ० उदीर० श्रंतरं जह० श्रंतोग्रु०, उक० बेद्याविद्वसागरो० देसणाणि। सम्म०-सम्मामि० जह० श्रंतोग्रु०, उक० श्रद्धपोग्गल० देसणाणि। श्रणंताणु०चउक० जह० एयस०, उक० बेद्याविद्वसागरो० देसणाणि। अट्ठक० जह० एयसमश्रो, उक० पुठ्यकोडी देसणा। चदुसंज०-मय-दुगुंछ० जह० एयस०, उक० श्रंतोग्रु०। हस्स-रदि० जह० एयस०, उक० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि। श्ररदि-सोग० जह० एयस०, उक० द्रम्मासा। हित्थवे०-पुरिसवे० जह० श्रंतोग्रु० एगस०, उक० श्रणंतकालमसंखेजा पोग्गलपरियद्या। णवंस० जह० श्रंतोग्रु०, उक० सागरोवमसदपुधतं।

बारह कषाय श्रीर छह नोकपायोंके उदीरकका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है। पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रपनी जघन्य श्रीर उत्कृष्ट स्थितिप्रमास है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — भवनित्रकमें ज्ञायिक सम्यक्त्वके सन्मुख वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंकी उत्पत्ति नहीं होती, इसलिए उनमें सम्यक्त्वके उदीरकका ज्ञथन्य काल श्रन्तर्मुहूर्त कहा है। किन्तु श्रन्यत्र ऐसे जीवकी उत्पत्ति होती है, इसलिए सामान्य देवोंमें श्रीर सीधर्म कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्वके उदीरकका ज्ञथन्य काल एक समय बन जानेसे वह तत्प्रमाण् कहा है। हास्य श्रीर रितके उदीरकका श्रोधसे ज्ञधन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल छह महीना पहले बतला श्राये हैं। यह काल सामान्यसे देवोंमें प्राप्त होकर भी वह शतार श्रीर सहस्रार कल्पमें ही प्राप्त होता है, श्रन्यत्र नहीं। इसलिए यहाँ पर सामान्य देवोंमें वह काल श्रोयके समान बतला कर शतार श्रीर सहस्रार कल्पमें उक्त श्रर्थको फलित करनेके लिए उसे सामान्य देवोंके समान जाननेकी सूचना की है। शेष कथन सुगम है।

§ ४५. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—अघ और आदेश। श्रोधसे मिध्यात्वके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्यासठ सागर है। सम्यक्त और सम्यग्मिध्यात्वके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्रल परिवर्तन प्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्यासठ सागर है। आठ कथायोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकीटि है। चार संज्वलन, भय और जुगुप्साके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। हास्य और रितके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। हास्य और रितके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अरित और शोकके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अविद और पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्रल परिवर्तन प्रमाण है। न्युंसकवेदके उदीरकका जघन्य अन्तर सो सागरप्रथक्त प्रमाण है। न्युंसकवेदके उदीरकका जघन्य सन्तर सो सागरप्रथक्त प्रमाण है।

१४६. आदेसेण ऐरइय० मिच्छ०-सम्मा०-सम्मामि-अएंताणु०४-इस्स-रदि० जह० अंतोग्रु०, उक० तेत्तीसं सागरो० देख्रणाणि । बारसक०-अरदि-सोग०-भय-दुर्गुछ० जह० उक० अंतोग्रु०। एवंस्त णित्थ अंतरं। एवं सत्तमाए। एवं पढमाए जाव छट्टि ति। णवरि सगद्विदी देख्रणा। हस्स-रदि० जहरु गुंक० अंतोग्रु०।

विश्लोषार्थ---मिथ्यात्व गुग्रस्थानका जघन्य और उत्कृष्ट जो अन्तरकाल बतलाया है वही यहाँ मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल लिया गया है। तथा सम्य-ग्दर्शनका जघन्य श्रौर उत्कृष्ट जो श्रन्तरकाल है वही यहाँ सम्यक्त श्रौर सम्यग्मिध्यात्वके उदीरकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल लिया गया है। इसीप्रकार श्रनन्तानुबन्धीचतुष्क श्रादि कषायोंके उदीरकका यथायोग्य उत्कृष्ट श्रन्तरकाल घटित कर लेना चाहिए। मात्र इनके उदीरकका जघन्य अन्तरकाल एक समय इसिलए बन जाता है, क्योंकि प्रत्येक कषायकी तद्नुगत उदीरणा कारणविशेषसे कमसे कम एक समय तक देखी जाती है। किसी जीवके भय श्रीर जुगुप्साकी उदीरणा कमसे कम एक समय तक श्रीर श्रधिकसे श्रधिक श्रन्तर्मुहूर्त काल तक न हो यह सम्भव है, इसलिए इनके उदीरकका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त कहा है। आगे जो हास्य, रति, अरित और शोकके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय कहा है वह अपनी सप्रतिपन्न शक्कृतिकी उदीरणा कमसे कम एक समय तक सम्भव होनेसे कहा है। मात्र सातवें नरकमें निरन्तर श्रारति श्रीर शोकका उदय रहता है। तथा वहाँ जानेके पूर्व भी श्रन्तर्मुहर्त काल तक इनका उदंच रहता है, इसलिए तो हास्य और रतिके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर कहा है और शतार-सहस्रार कल्पमें हास्य श्रीर रतिका उत्कृष्ट उदय छह महीना तक सम्भव है, इसलिए श्रारति श्रीर शोकके उदीरकका उत्कृष्ट श्रान्तर छह माह कहा है। स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदका उदय तिर्यक्रीमें श्रनन्तकाल तक न हो यह सम्भव है। तथा इसीप्रकार जो जीव सौ सागर पृथक्त कालतक पुरुषवेदी है उसके उतने कालतक नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती यह भी सम्भव है, इस-लिए तो स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदके उदीरकका उत्कृष्ट श्रन्तर श्रनन्त काल श्रीर नपु सकवेदके उदीरकका उत्कृष्ट श्रन्तर सौ मागरपृथक्त्वप्रमाण कहा है। तथा स्त्रीवेद श्रौर नपुंसकवेदकी अनुदीरणा कमसे कम अन्तर्मुहर्त कालतक न हो यह भी सम्भव है, क्योंकि एक तो प्रतिपत्त वेदका वेदन करनेवाले जीवके इन वेदोंकी उदीरणा नहीं होती। दूसरे उपशमश्रेणिमें भी इनकी उदीरणाका श्रन्तरकाल श्रन्तर्मुहर्तसे कम नहीं बनता, क्योंकि जो इन वेदोंके उदयसे उपशम-श्रेणि पर चढ़ता है उसके इनकी अनुदीरणा होकर पुनः उदीरणा होनेमें श्रन्तर्मुहूर्तसे कम काल नहीं लगता, इसलिए इनके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। किन्तु पुरुषवेदके विषयमें यह बात नहीं है, क्योंकि उपशमश्रेणिमें इसकी श्रनुदीरणा होनेपर एक समय तक ही वह इसका अनुदीरक रहे श्रौर दूसरे समयमें मर कर उसके देव हो जानेपर पुनः पुरुषवेदका उदीरक हो जाय यह सम्भव है, इसिलए इसके उदीरकका जघन्य श्रन्तर एक समय कहा है।

§ ४६. श्रादेशसे नारिकयोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, श्रनन्तानुबन्धी-चतुष्क, हास्य श्रीर रितके उदीरकका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। बारह कषाय, श्ररित, शोक, भय श्रीर जुगुप्साके उदीरकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। नपुंसकवेदके उदीरकका श्रन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए। इसीप्रकार पहली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिबी तक जानना चाहिए। § ४७. तिरिक्खेसु मिच्छ०-अर्णताणु०४ जह० अंतोग्रु०, उक्क० तिरिण पिल्रिदोनमाणि देस्रणाणि। सम्म०-सम्मामि० अधि। अपचक्खाणचउक्क० जह० अंतोग्रु०। इत्थिने०-पुरिस० जह० खुदाभन०, उक्क० अर्णतकालमसंखेआ पोग्गलपरियद्वा। एवं पर्चिदियतिरिक्खाणं०। एवं पंचिदियतिरिक्खाणं०। एवं पंचिदियतिरिक्खाणं०। एवं पर्चिदियतिरिक्खाणं०। प्राविश्व सम्म०-सम्मामि० जह० अंतोग्रु०, उक्क० तिरिणण पिल्रिदोनमाणि पुञ्चकोडि-पुधत्तेणक्मिहियाणि। इत्थिनेद-पुरिस० जह० खुद्दाभन०, उक्क० पुञ्चकोडिपुधत्तं। एवं पंचि०तिरि०पज०। एवरि इत्थिने० एत्थि। पुरिस० जह० अंतोग्रु०। जोणिणी० पंचिदियतिरिक्खभंगो। एवरि एवंस०-पुरिस० एत्थि। इत्थिने० एत्थि अंतरं। पंचि०तिरि०अपज०-मणुसअपज० मिच्छ-एवंस० एत्थि अंतरं। सोलसक०-छण्णोक० जह० उक्क० अंतोग्रु०। मणुसतिए पंचिदियतिरिक्खतियभंगो। एवरि

किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम श्रपनी-श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। तथा इन नरकोंमें हास्य श्रीर रतिके उदीरकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है।

विशेषार्थ—नरकमें अरित, शोक, भय और जुगुप्साका वेदक जीव अवेदक होकर पुनः अन्तर्भुहूर्त कालके पहले उनका वेदक नहीं होता, इसिलए इनके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त कहा है। यहाँ इतना विशेष समक्षना चाहिए कि अरित और शोकका अवेदक होनेपर ऐसा जीव हास्य और रितका अन्तर्भुहूर्त कालतक नियमसे वेदन करता है।

६ ४७. तिर्यक्कोंमें मिथ्यात्व श्रौर श्रनन्तानुबन्धीचतुष्कके उदीरकका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तीन षल्य है। सम्यक्त्व **मौ**र सम्यग्मिथ्यात्वका भंग त्रोघके समान है। श्रप्रत्याख्यानावरणचतुष्कके उदीरकका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्महर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। श्राठ कषाय और छह नोकषायोंके उदीरकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्भृहर्त है। स्त्रीवेद श्रीर पुरुपवेदके उदीरकका जघन्य श्रन्तर बुल्लक भव प्रहराप्रमारा है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रनन्त काल है जो श्रसंख्यात पुरुल परिवर्तन-प्रमाण है। नपुंसकवेदके उदीरकका जबन्य अन्तर अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि-पृथक्त्वप्रमागा है। इसीप्रकार पक्केन्द्रियतिर्यक्कके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त श्रीर सम्यग्मिध्यात्वके उदीरकका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्महर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्वकोटिपृथक्तव अधिक तीन पत्य है। स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य अन्तर सञ्जक-भवप्रहण्प्रमाण् है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण् है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च पर्याप्तकोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें स्वीवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा पुरुषवेदके उदीरकका जधन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। योनिनी तिर्यक्कोंमें पक्केन्द्रियतिर्यक्कोंके समान भंग है। किंतु इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेद और पुरुषवेदकी उदीरणा नहीं होती । तथा स्त्रीवेदकी उदीरणाका श्रम्तरकाल नहीं है। पञ्जेन्द्रिय तिर्यञ्ज श्रपयीप श्रीर मनुष्य अपर्याप्तकोंमे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदके उदीरकका अन्तरकाल नहीं है। सोलह कपाय और छह नोकषायोंके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महर्त है। मनुष्यत्रिकमें पश्चक्लाण०४ श्रपचक्लाग४भंगो । मगुसिग्गी० इत्थिवे० जह० उक्क० अंतोग्रहुत्तं ।

§ ४८. देवेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अर्णताणु०४ जह० श्रंतोसु०, उक० एकत्तीसं सागरोवमाणि देस्रणाणि । बारसक०-हस्स-रदि-भय-दुगुंछ० जह० उक० श्रंतोसु० । अरदि-सोग० जह० श्रंतोसु०, उक० छम्मासा । इत्थिवे०-पुरिस० एत्थि श्रंतरं । भवणादि जाव एवगेवजा ति एवं चेव । एवरि सगद्विदी देस्रणा । अरदि-सोग० जह० उक० श्रंतोसु० । सदर-सहस्सार० अरदि-सोग० देवोघं । सएक्कुमारादि जाव णवगेवजा ति इत्थिवेदो एत्थि । अर्णुहिसादि जाव सव्वद्वा ति सम्म०-पुरिस० एत्थि श्रंतरं । बारसक०-छएणोक० जह० उक० श्रंतोसुहुत्तं । एवं० जाव० ।

\$ ४९. सिएएयासागु० दुविहो णि०—श्रोषे० श्रादेसे०। श्रोषेण मिच्छत्तमुदीरेंतो सोलसक०-एवर्णोक० सिया उदीर० सिया श्रणुदीर०। सम्मत्तमुदीरेंतो
बारसक०-एवर्णोक० सिया उदीर० सिया श्रणुदीर०। एवं सम्मामि०। श्रणंताणु०कोधमुदीरेंतो तिएहं कोधाएं णिय० उदीर०। मिच्छ०-एवणोक० सिया उदीर०।
एवं तिएहं कसायाएं। श्रपचक्खाएकोहमुदीरेंतो दोएहं कोहाएं एिय० उदीर०।
पञ्चेन्द्रियत्वर्श्वत्रिकके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें प्रत्याख्यानावरएचतुष्कका भंग श्रप्रत्याख्यानावरणचतुष्कके समान है। तथा मनुष्यिनियांमें स्रीवेदके उदीरकका
जधन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है।

§ ४८. देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्ब, सम्यग्मिथ्यात्व श्रीर श्रनन्तानुबन्धीचतुष्कके उदीरक्का जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। बारह कषाय, हास्य, रित, भय श्रीर जुगुप्साके उदीरकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मृहूर्त है। श्रारित श्रीर शोकके उदीरकका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मृहूर्त है। श्रावेद श्रीर पुरुषवेदके उदीरकका श्रन्तरकाल नहीं है। भवनवासियोसे लेकर नो श्रैवेयक तक हे देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। तथा इनमें श्ररित श्रीर शोकके उदीरकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर मृहूर्त है। शतार श्रीर सहस्रारमें श्ररित श्रीर शोकके उदीरकका श्रम्तरकाल सामान्य देवोंके समान है। सनत्कुमारसे लेकर नो भैवेयक तकके देवोंमें खीवेदकी उदीरणा नहीं है। श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्व श्रीर पुरुषवेदके उदीरकका श्रन्तरकाल नहीं है। बारह कषाय श्रीर छह नोकषायोंके उदीरकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मृहूर्त है। इसीप्रकार श्रनहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४८. सिन्नकर्षानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है — श्रोघ श्रोर श्रादेश । श्रोघसे मिण्यात्वकी उदीरणा करनेवाला जीव सोलह कषाय श्रोर नी नोकपायोंका कदाचित् उदीरक होता है श्रोर कदाचित् श्रनुदीरक होता है । सम्यक्त्वकी उदीरणा करनेवाला जीव बारह कषाय श्रोर नौ नोकपायोंका कदाचित् उदीरक होता है । श्रीप्रकार सम्यग्मिण्यात्वकी मुख्यतासे जान लेना चाहिए । श्रनन्तानुबन्धी कोधकी उदीरणा करनेवाला जीव तीन कोधोंका नियमसे उदीरक होता है । भिण्यात्व और नौ नोकपायोंका कदाचित् उदीरक होता है । श्रमत्यान्वकी मुख्यतासे जान लेना चाहिए । श्रप्रत्यान्वस्था कोधकी उदीरणा करनेवाला जीव दो कोधोंका नियमसे उदीरक होता है । श्रमन्तानुबन्धी

श्रणंताणु०कोह०-मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-एवणोक० सिया उदीर०। एवं माण-माय-लोभाणं। पश्चक्खाणकोधमुदीरंतो कोधसंजलण० णिय० उदीर०। दोण्णि कोध०-मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-एवणोक० सिया उदीर०। एवं पश्चक्खाणमाण-माया-लोहाणं। कोहसंजलणमुदीरंतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-तिण्णिकोध०-एव-णोक० सिया उदीर०। एवं तिएहं संजलणाणं। इत्थिवे० उदीरंतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-छएणोक० सिया उदीर०। एवं पुरिसवे०-एवंस०। हस्समुदीरंतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-करणोक० सिया उदीर०। एवं पुरिसवे०-एवंस०। हस्समुदीरंतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-तिण्णिवे०-भय-दुगुंछ० सिया उदीर०। रदीए णिय० उदीर०। एवं रदीए। एवमरदि-सोगाणं। भयमुदीरंतो दंसणितय-सोलसक०-तिण्णिवेद-हस्स-रदि-श्ररदि-सोग-दुगुंछ० सिया उदीर०। एवं दुगुंछा०।

४०. त्रादेसेण ऐरइय० मिच्छत्त ग्रुदीरेंतो० सोलमक०-छण्णोक० सिया
उदीर०। एवं स० िणय० उदीर०। सम्मत्तमुदीरेंतो० बारसक०-छण्णोक० सिया
उदीर०। णवंस० िणयमा उदीर०। एवं सम्मामि०। त्र्यांताणु०कोधमुदीरेंतो
तिएहं कोधाणं एवंस० िणय० उदीर०। मिच्छ०-छण्णोक० सिया उदीर०। एवं

नुबन्धी कोध, मिण्यात्व, सन्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व श्रीर नी नोकषायांका कदाचित उदीरक होता है। इसीप्रकार श्रप्रत्याख्यानावरण मान, माया श्रीर लोभकी मुख्यतासे जान लेना चाहिए। प्रत्याख्यानावरण कोधकी उदीरणा करनेवाला जीव कोधसंज्वलनका नियमसे उदीरक होता है। दो कोध, मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व श्रीर नी नोकपायोंका कदाचित उदीरक होता है। इसीप्रकार प्रत्याख्यानावरण मान, माया श्रीर लोभकी मुख्यतासे जान लेना चाहिए। कोधसंज्वलनकी उदीरणा करनेवाला जीव मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व तीन कोध श्रीर नो नोकपायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार तीन संज्वलनोंकी मुख्यतासे जानना चाहिये। स्रीवेदकी उदीरणा करनेवाला जीव मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व, सोलह कपाय श्रीर छह नोकपायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार पुरुपवेद श्रीर नपुंसकवेदकी मुख्यतासे जानना चाहिए। हास्यकी उदीरणा करनेवाला जीव मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कपाय, तीन वेद, भय श्रीर जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है। रातिका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार रातिकी मुख्यतासे जानना चाहिए। तथा इसोप्रकार श्ररति श्रीर शोककी मुख्यतासे भी जानना चाहिए। भयकी उदीरणा करनेवाला जीव तीन दर्शनमोहनीय, सोलह कपाय, तीन वेद, हास्य, रित, श्ररति, शोक श्रीर जुगुप्साका कदाचित उदीरक होता है। इसीप्रकार जुगुप्साका मुख्यतासे जानना चाहिए।

§ ५०. श्रादेशसे नारिकयोंमें मिध्यात्वकी उदीरणा करनेवाला जीव सोलह कषाय श्रौर छह नोकषायोंका कराचित् उदीरक होता है। नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है। सम्यक्त्व की उदीरणा करनेवाला जीव बारह कषाय श्रौर छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है। नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार सम्यग्मिध्यात्वकी सुख्यतासे जानना चाहिए। श्रनन्तानुबन्धी कोघकी उदीरणा करनेवाला जीव तीन कोघ श्रौर नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है। मिध्यात्व श्रौर छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार श्रनन्तानुबन्धी मान

तिण्हं कसायाणं । श्रपचक्खाणकोधमुदीरेंतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-श्रणंताणु० कोध०-छएणोक० सिया उदीर० । दोण्हं कोधाणं णवंस० णिय० उदीर० । एवमेका-रसक० । हस्समुदीरेंतो० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० सिया उदीर० । णवं स०-रदि० णिय० उदीर० । एवं रदीए । एवमरदि-सोग० । भयमुदी-रेंतो० दंसणतिय-सोलसक०-हस्स-रदि-अरदि-सोग०-दुगुंछा० सिया उदीर० । णवंस० णिय० उदीर० । एवं दुगुंछा० । एवं सत्तसु पुढवीसु ।

४१. तिरिक्खेसु दंसणितय-श्रणंताणु०४-श्रपचक्खाणचउक०-णवणोकसाय०
श्रोघं। पचक्खाणकोधमुदीरेंतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-श्रणंताणु०४-श्रपचक्खाण-कोघ०-णवणोक० सिया उदीर०। कोहसंज० णिय० उदीर०। एवं सत्तकसा०। एवं पंचिदियतिरिक्ख३। णविरे पंचिदियतिरिक्खपज्जचएसु इत्थिवेदो णित्थ। जोणिणी० पुरिस०-णवुंस० गित्थ। इत्थिवे० धुवं कायव्वं।

६ ४२. पंचिदियतिरिक्खश्रपज्ञ०-मणुसश्रपज्ञ० मिच्छत्तमुदीरें० सोलसक०-द्यण्णोक० सिया उदीर०। एवं पर्वस०। श्रणंताणु०-

त्रादि तीन कपायोंकी मुख्यतासे जानना चाहिए। श्रप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, श्रानन्तानुबन्धी क्रोध श्रीर छह नोकपायोंका कदाचित् उदीरक होता है। प्रत्याख्यानावरण क्रोध श्रीर संज्वलन क्रोध इन दो क्रोधोंका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार श्रप्रत्याख्यानावरण मान श्रादि ग्यारह कषायोंकी मुख्यतासे जानना चाहिए। हास्यकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्याक्त्व, सम्यक्त्व, सम्यग्पिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय श्रीर जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है। नपु सकवेद श्रीर रितका नियमसे उदीरक होता है। नपु सकवेद श्रीर रितका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार रितकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार श्ररित श्रीर शोककी मुख्यतासे भी सिन्नकर्ष जानना चाहिए। भयकी उदीरणा करनेवाला जीव तीन दर्शनमोहनीय, सोलह कषाय, हास्य, रित, श्ररित, शोक श्रीर जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार जुगुप्साकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार सातों प्रथिवियोंमें सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

े ११. तिर्यक्कोंमे दर्शनमोहनीय तीन, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, अप्रत्याख्यावरण्चतुष्क आर नौ नोकवायोंका भंग खोघके समान है। प्रत्याख्यानावरण् क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यम्भिध्यात्व अनन्तानुबन्धीचतुष्क, अप्रत्याख्यानावरण् क्रोध और नौ नोकपायोंका कदाचित् उदीरक होता है। क्रोधसंज्वलनका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार प्रत्याख्यानावरण् मान आदि सात कषायोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्चित्रकमें जानना चाहिए। किंतु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्च पर्याप्तकोंमें स्वीवेदकी उदीरणा नहीं होती। तथा योनिनी तिर्यक्चोमें पुरुषवेद और स्वीवेदकी उदीरणा नहीं होती। योनिनी तिर्यक्चोमें स्वीवेदकी उदीरणाको ध्रुव करना चाहिए।

े ४२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तक और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिध्यात्वकी उदीरणा करनेवाला जीव सोलह कषाय और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। नपुंसकवंदका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार नपुंसकवंदकी मुख्यतासे सिक्नकर्ष जानना चाहिए।

कोधमुदीरेंतो मिच्छ०-णवुंस० तिग्रहं कोधाग्यं णिय० उदीर०। छण्णोक० सिया इदीर०। एवं पण्णारसकसाय०। हस्समुदीरेंतो मिच्छ०-णवुंस०-रदि० णिय० उदी०। सोलासक०-भय-दुगुंछ० सिया उदीर०। एवं रदीए। एवमरदि-सोग०। भयमुदीरेंतो मिच्छ०-णवुंस० णिय० उदीर०। सेसाग्यं सिया उदीर०। एवं दुगुंछ०।

§ ४३. मणुसतिए श्रोषं । एवरि पजनएसु इत्थिवेदो एात्थि । मणुसिणी० पुरिस०-एावुंस० एात्थि । इत्थिवे० धुवं कादव्वं । एवरि चदुसंजलरणमुदीरेंतो इत्थिवेद० सिया उदीरेंतो० ।

§ ४४. देवेसु मिच्छ० उदीरेंतो सोलसक०-श्रहुणोक० सिया उदीर० । सम्म० उदीरेंतो बारसक०-श्रहुणोक० सिया उदीर० । एवं सम्मामि० । श्रणंताणु०कोहमुदिरेंतो मिच्छ-श्रहुणोक० सिया उदीर० । तिण्हं कोहाणं णिय० । एवं तिण्हं कसायाणं । श्रपचक्लाणकोहमुदीरेंतो दोण्हं कोहाणं णियमा उदीर० । श्रणंताणु०कोह-दंसणितय-श्रहुणोक० सिया उदीर० । एवमेकारसकसाय० । इत्थिवेदमुदीरेंतो दंसणितय-सोलस-

श्चनन्तानुबन्धी कोधको उदीरणा करनेवाला जीव मिध्यात्व, नपुंसकवेद श्चौर तीन कोधोंका नियमसे उदीरक होता है। इह नोकपायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार शेष पन्द्रह कपायोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। हास्यकी उदीरणा करनेवाला जीव मिध्यात्व, नपुंसकवेद श्चौर रितक। नियमसे उदीरक होता है। सोलह कपाय, भय श्चौर जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार रितकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार श्चरित श्चौर शोककी मुख्यतासे भी सिन्नकर्ष जानना चाहिए। भयकी उदीरणा करनेवाला जीव मिध्यात्व श्चौर नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है। शेपका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार जुगुप्साकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

- ५ १३. मनुष्यत्रिकमें श्रोधके समान भंग है। किंतु इतनी विशेषता है कि मनुष्य पर्या-प्रकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। तथा मनुष्यिनयोंमें पुरुषवेद श्रीर नपुंसकवेदकी उदी-रणा नहीं होती। इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा ध्रुव करनी चाहिए। किंतु इननी विशेषता है कि चार संज्वलनकी उदीरणा करनेवाला जीव स्त्रीवेदका कदाचित् उदीरक होता है।
- ९ ४४. देवोंमें मिध्यात्वकी उदीरणा करनेवाला जीव सोलह कषाय श्रीर श्राठ नोक-षायोंका कदाचित उदीरक होता है। सम्यक्त्वकी उदीरणा करनेवाला जीव बारह कषाय श्रीर श्राठ नोकषायोंका कदाचित उदीरक होता है। इसीप्रकार सम्यिगध्यात्वकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। श्रान्तानुबन्धी कोधकी उदीरणा करनेवाला जीव मिध्यात्व श्रीर श्राठ नोकपायोंका कदाचित् उदीरक होता है। शेष तीन कोधोंका नियमसे उदीरक होता है। इसी-प्रकार श्रान्तानुबन्धी मान, माया श्रीर लोभ कषायोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जान लेना चाहिए। श्राप्तयाख्यानावरण कोधकी उदीरणा करनेवाला जीव प्रत्याख्यानावरण श्रीर संज्वलन इन दो कोधोंका नियमसे उदीरक होता है। श्रान्तानुबन्धी कोध, तीन दर्शनमोहनीय श्रीर श्राठ नोकषायों-का कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार श्राप्तयाख्यानावरण मान श्रादि ग्यारह कषायोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। क्षावेदकी उदीरणा करनेवाला जीव तीन दर्शनमोहनीय,

क०-छण्णोक० सिया उदीर०। एवं पुरिसवे०। हस्सम्रुदीरेंतो दंसणितय-सोलसक०इत्थिवे०-पुरिस०-भय-दुगुंछ० सिया उदीर०। रिद० णियमा उदीर०। एवं रदीए। एवमरिद-सोग०। भयमुदीरेंतो सेसं सिया उदीरेंतो। एवं दुगुंछा०। एवं भवण०वाणवें०जोइसि०-सोहम्मीसाण०। एवं चेव सणकुमारादि जाव णववगेजा ति
णविर इत्थिवेदो णित्थ। पुरिस० धुवं कायव्यं। अणुदिसादि सव्वद्वा ति सम्म०
उदीरेंतो बारसक०-छण्णोक० सिया उदीर०। पुरिस० णिय० उदीर०। अपचक्खाणकोहमुदीरेंतो दोण्हं कोहाणं पुरिसवे० णिय० उदीर०। सम्म०-छण्णोक० सिया।
उदीर०। एवमेकारसक०। पुरिस० उदीरेंतो सम्म०-बारसक०-छण्णोक० सिया।
उदीर०। एवसेकारसक०। पुरिस० उदीरेंतो सम्म०-बारसक०-छण्णोक० सिया।
उदीर०। एवसेकारसक०। पुरिस० उदीरेंतो सम्म०-बारसक०-छण्णोक० सिया।
उदीर०। एवं रदीए। एवमरिद-सोग०। भयमुदिरेंतो सम्म०-बारसक०पंचणोक० सिया उदीर०। पुरिसवे० णिय० उदीर०। एवं दुगुंछ०। एवं जाव०।

४४. णाणाजीवेहं भंगविचयाणु० दुविहो णि०—अोघेण आदेसेण य।

सोलह कपाय श्रीर छह नोकयायोंका कदाचित उदीरक होता है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। हास्यकी उदीराणा करनेवाला जीव तीन दर्शनमोहनीय, सोलह कषाय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, भय श्रीर जुराप्साका कदाचित उदीरक होता है। रितका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार रितकी मुख्यतासे सन्निकर्षे जानना चाहिए। तथा इसी-प्रकार त्ररति त्रौर शोककी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। भयकी उदीरणा करने-वाला जीव शेष प्रकृतियोंका कदाचित उदीरक होता है। इसीप्रकार जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, सीधर्म श्रीर ऐशानमें जानना चाहिए। सनत्कुमारसे लेकर नौ प्रेवेयक तकके देवोंमें भी इसीप्रकार जानना चाहिए। किंतु इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। पुरुषवेदकी उदीरणा प्रव करनी चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमं सम्यक्त्यकी उदीरणा करनेवाला जीव बारह कषाय श्रौर छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। पुरुषवेदका नियमसे उदीरक होता है। श्रप्रत्याख्यानावरण क्रांधकी उदीरणा करनेवाला जीव प्रत्याख्यानावरण श्रीर संज्वलन इन दो क्रोधों और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक होता है। सम्यक्त्व और छह नोक-षायोंका कदाचित उदीरक होता है। इसीप्रकार अप्रत्याख्यानावरण मान आदि ग्यारह कषायोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। पुरुषवेदकी उदीरणा करनेवाला जीव सम्यक्तव, बारह कपाय श्रीर छह नोकपार्थोका कदाचित उदीरक होता है। हास्यकी उदीरणा करनेवाला जीव सम्यक्त, बारह कवाय, भय श्रीर जुगुप्साका कदाचित उदीरक होता है। पुरुषवेद श्रीर रतिका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार ऋरति ऋौर शोककी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। भयकी उदीरणा करनेवाला जीव सम्यक्त्व, बारह कषाय श्रीर पाँच नोकषायोंका कदाचित उदीरक होता है। पुरुषवेदका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

६ ४४. नाना जीवोंकी श्रपेत्ता भंगविचयानुगमके आश्रयसे निर्देश दो प्रकारका है--भोघ

भोषेण मिच्छ०-सम्म-सोत्तसक०-रावणोक० उदीर श्राणुदीर० णिय० श्रातथ । सम्मामि० सिया सन्त्रे श्राणुदीर०, सिया श्राणुदीरगा च उदीरगो च, सिया अणुदीरगा च उदीरगा च ३ ।

१ १६. आदेसेण ऐरइय० ओघं। णविर इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० णित्थ। णवुंस० उदीर० णियमा श्रत्थि। एवं सञ्वऐरइय०। तिरिक्खेसु श्रोघं। पंचिदय-तिक्खितए श्रोघं। णविर पञ्जत्तएसु इत्थिवेदो एप्तिथ। जोएएपी० पुरिस०-एवुंस० णित्थ। इत्थिवे० उदीर० एपिय० श्रात्थि, श्रणुदीरमा एप्तिथ। पंचिदियतिरिक्ख-भपञ्ज० मिन्छ०-पावुंस० सन्वे उदिरया, श्रणुदीरया णित्थ। सोलसक०-छण्योक० उदीर० श्रणुदीर० णिय० श्रत्थि। मणुसतिए श्रोघं। णविर पञ्जत्तएसु इत्थिवे० एप्तिथ०। मणुसिणी० पुरिस०-णवुंस० एप्तिथ। इत्थिवे० सिया सन्वे जीवा उदीरमा। एवं तिण्या भंगा। मणुसश्रपञ्ज० मिन्छ०-एवुंस० सिया उदीरमो, सिया उदीरमा। सोलसक०-छण्योक० श्रद्ध भंगा। देवेसु श्रोघं। एवं राणकुमारादि जाव एविरामा। सोलसक०-छण्योक० श्रद्ध भंगा। देवेसु श्रोघं। एवं सण्कुमारादि जाव एविरामा। भवण०-वार्णवे०-जोदिसि०-सोहम्मीसाण०। एवं सण्कुमारादि जाव एविरामा मिर्णा०-वार्णवे०-जोदिस०-सोहम्मीसाण०। एवं सण्कुमारादि जाव एविरामा क्रीर श्रोदशा। श्रोधसे। श्रोधसे मिथ्यात्व, सन्यक्त्व, सोलह कपाय श्रीर नौ नोकपायोंके उदीरक श्रीर श्राद्दीरक जीव नियमसे हैं। सम्यिम्थयत्वके कदावित सब जीव श्रनुदीरक होते हैं। कदावित् नाना जीव श्रनुदीरक होते हैं श्रीर एक जीव उदीरक होता है। कदावित् नाना जीव श्रनुदीरक होते है श्रीर एक जीव उदीरक होता है। कदावित् नाना जीव उदीरक होते हैं श्रीर नाना जीव उदीरक होते हैं।

§ ४६. त्रादेशसे नारिकयोंमें त्र्योघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें स्वीवेद और पुरुपवेदके उदीरक जीव नहीं हैं। नपुंसकवेदके उदीरक जीव नियमसे हैं। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। तिर्यख्रोमे स्रोघके समान भंग है। पक्केन्टिय तिर्यक्कत्रिकमें श्रोघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि तिर्यक्क पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। योनिनी तिर्यक्कोंमें पुरुषवेद श्रीर नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। इनमें स्वीवेदकी उदीरणा नियमसे होती है। इसके अनुदीरक नहीं हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्युक्त श्रपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व श्रौर नपंसकवेदके सब जीव उदीरक होते हैं। इनके श्रनहीरक नहीं है। सोलह कषाय श्रीर छह नोकपायोंके उदीरक श्रीर श्रनुदीरक नाना जीव नियमसे होते हैं। मनुष्यत्रिकमें श्रोधके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य पर्याप्रकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। स्त्रीवेदके कदाचित सब जीव उदीरक होते हैं। कदाचित नाना जीव उदीरक श्रीर एक जीव अनुदीरक होता है। कदाचित् नाना जीव उदीरक और नाना जीव अनुदीरक होते हैं। इस प्रकार तीन भंग होते हैं। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिध्यात्व और नप्सकवेदका कदाचिन एक जीव उदीरक होता है। कदाचिन नाना जीव उदीरक होते हैं। सीलह कषाय और छह नोक-पायोंकी ऋपेता आठ भंग हैं। देवोंमें श्रोघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। इसीप्रकार भवनवासी, ब्यन्तर, ज्योतिषी, सौधर्म श्रीर ऐशान देवोंमें जानना चाहिए। सनत्कुमारसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें भी इसीप्रकार जानना चाहिए। किन्त इनमें स्वीवेदकी उदीरणा नहीं होती। इनमें पुरुषवेदके उदीरक नियमसे होते श्रणुद्दिसादि जाव सन्बद्घा ति सम्मत्त० सिया सन्वे उदीर०, सिया उदीरगा च श्रणुदीरगो च, सिया उदीरगा च श्रणुदीरगा च। बारसक०-छण्णोक० उदीर० श्रणुदीर० णिय० श्रत्थि। पुरिसवे० उदीर० णिय० श्रत्थि। श्रणुदीरगा णत्थि। एवं जाव०।

१५७. भागाभागाणु० दुविहो० णि०—श्रोघे० श्रादेसे०। श्रोघेण मिच्छ०-णवुंस० उदीर० श्रणंता भागा। श्रणुदी० श्रणंतभागो। सम्म० उदीर० श्रसंखेजा भागा। श्रणुदी० श्रसंखे०भागो। सम्मामि० उदीर० श्रसंखे०भागो। श्रणुदी० श्रसंखेजा भागा। चउएहं लोभाणग्रुदीर० चउन्भागो सादिरे०। श्रणुदी० संखे०-भागा। वारसक० उदीर० चउन्मागो देखणा। श्रणुदी० संखेजा भागा। हत्थिवे०-पुरिस० उदीर० श्रणंतभागो। श्रणुदीर० श्रणंता भागा। हस्स-रदि-भय-दुगुंझा० उदीर० संखे०भागो। श्रणुदीर० संखेजा भागा। श्ररदि-सोग० उदीर० संखेजा भागा। श्रणुदी० संखे०भागो।

१ ४८. त्रादेसेण ऐरहय० मिच्छ०-सम्म० उदीर० त्रसंखे० भागा । त्र्यणुदीर० त्रसंखे०भागो । सम्मामि० त्रोघं । चउएहं कोघ० त्ररदि-सोग० उदीर० संखे०

हैं। अनुदीरक नहीं होते। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्वके कदाचित् सब जीव उदीरक होते हैं। कदाचित् नाना जीव उदीरक होते हैं और एक जीव अनुदीरक होता है। कदाचित् नाना जीव उदीरक होते हैं और नाना जीव अनुदीरक होते हैं। बारह कषाय और छह नोकपायोंके उदीरक और अनुदीरक नाना जीव नियमसे हैं। पुरुषवेदके सब जीव नियमसे उदीरक होते हैं। अनुदीरक नहीं होते। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१५% भागाभागानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—अघ श्रीर श्रादेश। श्राघसे मिध्यात्व श्रीर नपुंसकवेदके उदीरक जीव श्रनन्त बहुभागप्रमाए हैं। तथा श्रनुदीरक जीव श्रनन्तवें भागप्रमाए हैं। सम्यत्वके उदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाए हैं श्रीर श्रनुदीरक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाए हैं। सम्यग्मिध्यात्वके उदीरक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाए हैं। सम्यग्मिध्यात्वके उदीरक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाए हैं। चार लोभोंके उदीरक जीव कुछ श्रधिक चतुर्थ भागप्रमाए हैं श्रीर श्रनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाए हैं। बारह कषायोंके उदीरक जीव कुछ कम चतुर्थ भागप्रमाए हैं श्रीर श्रनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाए हैं। स्नीवेद श्रीर पुरुषवेदके उदीरक जीव श्रनन्तवें भागप्रमाए हैं श्रीर श्रनुदीरक जीव संख्यात वहुभागप्रमाए हैं। हास्य, रित, भय श्रीर जुगुष्साके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाए हैं। श्रीर श्रनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाए हैं। श्रीर श्रनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाए हैं। श्रीर श्रनुदीरक जीव संख्यात वहुभागप्रमाए हैं।

९ ४८. श्रादेशसे नारिकयोंमें मिथ्यात्व श्रीर सम्यक्त्वके उदीरक जीव श्रसंख्यात बहु-भागप्रमाण हैं श्रीर श्रनुदीरक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग श्रोघके समान है। चार क्रोध, श्ररति श्रीर शोकके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं।

भागा । श्रणुदीर० संखे०भागो । बारसक०-हस्स-रइ-भय-दुगुंछ० उदीर० संखेजिदिभागो । श्रणुदी० संखेजा भागा । एवं सन्त्रणेरइय० । तिरिक्खाणमोघं । एवं
पंचिंदियतिरिक्खतिय३ । णविर मिन्छ०-णवुंस० उदीर० श्रसंखेजा भागा । श्रणुदी०
श्रसंखे०भागो । इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० श्रसंखे०भागो । श्रणुदी० श्रसंखे० भागा ।
णविर पज्ज० इत्थिवेदो णित्थ । णवुंस० उदीर० संखेजा भागा । श्रणुदी० संखे०भागो । पुरिसवे० उदीर० संखे०भागो । श्रणुदी० संखेजा भागा । जोणिणी०
पुरिस०-णवुंस० णित्थ । इत्थिवेद० णित्थ भागाभागो । पंचिदियतिरिक्खश्रपज्ज०मणुसश्रपज्ज० मिन्छ०-णवुंस० णित्थ भागाभागो । सोलसक०-छरणोक० पंचि०तिरिक्खभंगो । मणुसाणं पंचिदियतिरिक्खभंगो । णविर सम्म० उदीर० श्रसंखे०मागो । श्रणुदी० श्रसंखेजा भागा । एवं पज्जत० । णविर संखेजं कायव्वं । इत्थिवे०
णित्थ । एवं मणुसिणी० । णविर पुरिस०-णवुंस णित्थ । इत्थिवे० उदीरगा संखेजा
भागा । श्रणुदी० संखे०भागो ।

४९. देवेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० णिखोघं । चउएहं लोभ० इत्थिवे० हस्स-रिद० उदीर० संखेज्जा भागा । अणुदी० संखे०भागो । बारसक०-अरिद-सोग-

श्रीर श्रनुदीरक जीव संख्यातवे भागप्रमाण हैं। बारह कषाय, हास्य, रति, भय श्रीर जुगुप्साके उदीरक जीव संख्यातवें भागश्रमाण हैं त्र्यौर त्र्यनुदीरक जीव संख्यात बहुभागश्रमाण हैं। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। तिर्यक्कोंमें स्रोघके समान भंग हैं। इसीप्रकार पश्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकमं जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिध्यात्व श्रीर नपुंसक-वेदके उदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाण हैं श्रीर श्रनुदीरक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं। स्त्रीवेद स्त्रीर पुरुपवेदके उदीरक जीव स्त्रसंख्यातवें भागप्रमाण है स्त्रीर ऋनुदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि तिर्येश्च पर्याप्तकोंमें स्वीवेदके उदीरक जीव नहीं है। तथा नपु सकवेदके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है और श्चनुदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। पुरुषवेदके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं श्रौर श्रनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। योनिनी तिर्यक्क्वोंमें पुरुषवेद श्रौर नप सकवेदके उदीरक जीव नहीं हैं। तथा इनमें स्वीवेदकी श्रपेत्ता भागाभाग नहीं है। पक्रोन्द्रियतिर्यक्त श्चपर्याप्त और मनुष्य त्रपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व ऋौर नपुंसकवेदकी श्वपेत्ता भागाभाग नहीं है। सोलह कषाय श्रौर छह नोकषायांके उदीरक जीवोंका भंग पख्रीन्द्रियतिर्यक्कोंके समान है। मनुष्योंमें पक्चेन्द्रिय तिर्यक्चोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वके उदीरक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं श्रीर श्रनुदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए । इनमे स्त्रीवेदके उदीरक नहीं होते । इसीप्रकार मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें पुरुषवेद श्रीर नपु सकवेदके उदीरक नहीं होते। तथा स्त्रीवेदके उदीरक संख्यात बहुभागप्रमाण हैं श्रीर श्रनुदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण है।

६ ५६. देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग नारिकयोंके समान है। चार लोभ, स्त्रविद, हास्य और रितके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदरिक

भय-दुगुंछा०-पुरिसवे० उदीर० संखेजिदिभा०, श्राणुदीर० संखेजा भागा। एवं भवण०-बाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसा०। सणकुमारादि सहस्सारा ति एवं चेव। णविर हित्थवे० णित्थ। पुरिसवे० णित्थ भागा०। श्राणदादि णव गेवजा ति मिच्छ०-तेरसकसाय०-अरदि०-सोग-भय-दुगुंछा० उदीर० संखे०भागो। श्रणुदी० संखेजा भागा। सम्म०-हस्स-रह० तिएहं लोभाणप्रदीरगा संखेजा भागा। श्रणुदी० संखे०-भागो। पुरिसवे० णित्थ भागाभागो। सम्मामि० श्रोघं। श्रणुदिसादि श्रवराजिदा ति सम्म० उदीर० श्रसंखेजा भागा। श्रणुदीर० असंखे०भागो। तिण्हं लोभाणं हस्स-रि उदीर० संखेजा भागा। श्रणुदीर० संखे०भागो। णवकसा०-अरदि-सोग-भय-दुगुंछा० उदीर० संखे०भागो। श्रणुदीर० संखेजा भागा। पुरिसवे० णित्थ भागा०। एवं सव्वहे। णविर संखेजं कायव्वं। एवं जाव०।

६६०. परिमाणाणु० दुविहो िण०— स्रोघे० स्रादेसे० । श्रोघेण मिच्छ०-जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। बारह कषाय, श्रात, शोक, भय, जुगुप्सा श्रीर पुरुषवेदके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं श्रौर श्रनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसी-प्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, सौधर्म श्रीर ऐशान देवोंमें जानना चाहिए। सनस्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्प तककं देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें स्वीवेदके उदीरक देव नहीं हैं। पुरुषवेदकी अपेचा भागाभाग नहीं है। श्रानतसे लेकर नी प्रैवेयक तकके देवोंमें भिथ्यात्व, तेरह कषाय, श्ररति, शोक, भय श्रौर जुगुप्साके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रभाग हैं श्रौर श्रनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाग है। सम्यक्त्व, हास्य, रति श्रीर तीन लोभके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं श्रीर धनुदीरक जीव संख्यातवें भाग-प्रमाण है। पुरुषवेदकी ऋषेचा भागाभाग नहीं है। सम्यग्मिध्यात्वका भंग ऋषिके समान है। ऋतु-दिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें सम्यक्त्वके उदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाण हैं श्रीर अनुदीरक जीव ऋसंख्यातवें भागप्रमाण है। तीन लोभ, हास्य ऋौर रातिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं श्रीर श्रनुदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। नौ कषाय श्ररति, शोक भय श्रीर जुगुष्साके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाग हैं श्रनुदीरक जीव संख्यात बहुभाग-प्रमाण है। पुरुपवेदकी अपेज्ञा भागाभाग नहीं है। इसीप्रकार सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि ऋसंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — श्रोघ श्रीर श्रादेशसे जहाँ जितनी प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है उसे ध्यानमें रखकर भागाभागका विचार किया है। इतना श्रवश्य है कि जहाँ सप्रतिपद्म प्रकृतियोंकी उदीरणा न होकर मात्र एक प्रकृतिकी उदीरणा होती है वहाँ उसकी श्रपेचा भागाभाग सम्भव न होनेसे उसका निषेध किया है। इतना श्रवश्य है कि श्रनुदिशादिकमें मात्र सम्यन्दष्टि जीव होते हैं श्रीर वहाँ मात्र सम्यक्दव प्रकृतिकी उदीरणा सम्भव है फिर भी वहाँ सम्यक्दव प्रकृतिकी श्रपेचा भागाभाग बन जाता है, क्योंकि वहाँ पर बहुतसे वेदक सम्यग्दृष्टि जीव उसकी उदीरणा करनेवाले होते हैं श्रीर श्रवण उपश्मसन्यग्दृष्टि तथा चायिक सम्यग्दृष्टि जीव उसकी उदीरणा नहीं करते। शेष कथन सगम है।

६०. परिमाणानुगमकी अपेका निर्देश दो प्रकारका है--आंघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसं

सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० केत्तिया ? अएांता । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० केत्तिया ? असंखेजा । आदेसे० ऐरह्य० सव्वपयडी० उदीर० केत्ति० ? असंखेजा । एवं सव्वऐरह्य०-सव्वपंचिंदिय०तिरिक्ख-मणुसअपज्ञ०-देवा भवणादि जाव अवराजिदा ति । तिरिक्खेसु श्रोघं । मणुसेसु मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० असंखेजा । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० केत्तिया ? संखेजा । मणुसपज्ञ०-मणुसिणी०-सव्वद्वदेवा जात्रो पयडीश्रो उदी० तत्थ संखेजा । एवं जाव० ।

६१. खेताणु० दुविहो णि०—श्रोघे० श्रादेसे०। श्रोघेण मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० केव० १ सव्वलोगे । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० लोग० श्रसंखे०भागे । एवं तिरिक्खाणं । सेसगइमग्गणासु सव्वपदा० लोगस्स श्रसंखे०भागे । एवं जाव० ।

§ ६२. पोसणाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे० । श्रोघेण मिच्छ०•

मिश्यात्व, सोलह कपाय त्रोर सात नोकपायके उदीरक जीव कितने हैं ? त्रान्त हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्निश्यात्व, स्नीवंद त्रीर पुरुषवंदके उदीरक जीव कितने हैं ? त्रासंस्थात है। श्रादेशसे नारिकयोंमें सब प्रकृतियोंके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रासंस्थात है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्जेन्द्रिय तिर्यक्क, मनुष्य त्राप्याप्त, सामान्य देव त्रीर भवनवासियोसे लेकर श्रपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिए। तिर्यक्कोंमें त्रायके समान भंग हैं। मनुष्योंमें मिश्यात्व, सोलह कषाय श्रीर सात नोकषायोके उदीरक जीव श्रासंख्यात हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिश्यात्व, स्नीवंद श्रीर पुरुषवंदके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी श्रीर सर्वार्थ-सिद्धिके देवोंमें जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है उनके उदीरक जीव संख्यात हैं। इसी प्रकार श्रानाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ६१. चेत्रानुगमकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रौर त्रादेश। श्रोघसे मिण्यात्व, सोलह कपाय श्रौर सात नोकपायोंके उदीरक जीवोंका कितना चंत्र है ? सर्व लोक चेत्र है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व, स्त्रीवेद श्रौर पुरुषवेदके उदीरक जीवोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार तिर्यञ्चोमें जानना चाहिए । शेष गति मार्गणाश्रोमें सब पदोंकी श्रपेचा चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व, सोलह कपाय और सात नोकषायोंकी उदीरणा एकेन्द्रियादि जीव भी करते हैं, इसलिए इनका चेत्र सब लोक बन जानेसे वह श्रोघसे तथा सामान्य तिर्यक्कोंमें सर्व लोकप्रमाण कहा है। परन्तु रोष प्रकृतियोंकी उदीरणा पक्रेन्द्रिय जीवोंमें ही सम्भव है और ऐसे जीवोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है, इसलिए सर्वत्र इन प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका चेत्र उक्त प्रमाण कहा है। सामान्य तिर्यक्कोंको छोड़ कर गित मार्गणाके श्रान्य जितने भेद है उन सबका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे उनमें सम्भव सब प्रकृतियोंके उदीरकोंका चेत्र उक्तप्रमाण कहा है।

६६२. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकार हैं - श्रोघ और आदेश। आघसे

सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० सञ्जलोगो । सम्म०-सम्मामि० उदीर० लोग० असंखे०-भागो श्रद्धचोद्दस भागा० देखणा । इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० लोग० असंखे०भागो श्रद्धचोद्दस० देखणा सञ्जलोगो वा ।

६३. आदेसेण ग्रेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० लोग० श्रसंखे०भागो छचोइस० देस्रणा । सम्म०-सम्मामि० खेत्तं । एवं विदियादि० जाव सत्तमा त्ति । णवरि सगपोसग्रां । पढमाए खेत्तं ।

§ ६४. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० सव्वलोंगो । सम्मामि० खेत्तं । सम्म० उदीर० लोगस्स असंखे० छच्चोइ० । इत्थिवे०-पुरिस० मिथ्यात्व, सोलह कपाय और सात नोकपायोंके उदीरकोंने सब लोकप्रमाण नेत्रका स्पर्शन किया है । सम्यक्तव और सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और बौदह राजुमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण नेत्रका स्पर्शन किया है । स्रीवेद और पुरुषवेदके

उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण, चौदह राजुमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण श्रीर सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

विश्रोषार्थ—मिध्यात्व आदि चौबीस प्रकृतियोंकी उदीरणा एकेन्द्रिय जीबोंमें भी होती है और उनका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण है, इसिलए यहाँ पर उक्त चौबीस प्रकृतियोंके उदीरकोंका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण कहा है। सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदृह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण बतलाया है। इसी बातको ध्यानमें रख कर यहाँ पर सम्यक्तव और सम्यग्मिध्यात्वके उदीरकोंका उक्त प्रमाण स्पर्शन कहा है। स्त्रीवेदकी उदीरणा नारिकयों और पञ्चेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंको छोड़कर अन्य पञ्चेन्द्रिय जीवोंमें यथायोग्य होती है और उनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, विहार आदिकी अपेत्ता अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदृह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण और मारणान्तिक समुद्धात या उपपाद पदकी अपेत्ता सर्व लोकप्रमाण बतलाया है। इसीसे यहाँ पर इन दो प्रकृतियोंके उदीरकोंका स्पर्शन उक्त प्रमाण कहा है।

§ ६३. त्रादेशसे नारिकयोंमें मिध्यात्व, सोलह कषाय श्रीर सात नोकपायोंके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर त्रसनालीके चोदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व श्रीर सन्यग्मिध्यात्वके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इसीप्रकार दूसरो पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रपना श्रपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली प्रथिवीमें स्पर्शन चेत्रके समान है।

विशेषार्थ—नरक श्रीर प्रत्येक पृथिवीका जो स्पर्शन है वही यहाँ पर साधारणतः जानना चाहिए। मात्र सम्यक्त्वकी उदीरणा सम्यग्दृष्टि जीवोंमें श्रीर सम्यग्निध्यात्वकी उदीरणा सम्यग्निध्यादृष्टि जीवोंमें होती है, इसिलए इन दो प्रकृतियोंके उदीरकोंका स्पर्शन उक्त गुरास्थानवाले नारिकयोंके स्पर्शनको ध्यानमें रखकर चेत्रके समान लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

\$ ६४. तिर्यक्क्नोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय श्रीर सात नोकषायोंके उदीरक जीवोंने सब लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरक जीवोंका स्पर्शन केत्रके समान है। सम्यग्निक्यात्वें मागप्रमाण श्रीर त्रसनालीके चौंदह भागोंमें

लोग० ऋसंखे०भागी सन्वलोगी वा।

§ ६४. पंचिदियतिरिक्खतिय३ मिच्छ० सोलसक० णवणोक० उदीर० लोगस्स असंखे०भागो सन्वलोगो० । सम्म०-सम्मामि० तिरिक्खोघं । णविर पञ्ज० इत्थिवे० णित्थ । जोणिणी० पुरिस० णवुंस० णित्थ । पंचि०तिरि० अपञ्ज० मणुसग्रपञ्ज० मिच्छ० सोलसक० सत्तणोक० उदीर० लोग० असंखे०भागो सन्वलोगो वा । मणुसितए पंचि०तिरिक्खितयभंगो । णविर सम्मत्तं खेतं ।

§ ६६. देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-ग्रहणोक० उदीर० लोगस्स ग्रसंखे०भागो ग्रहु-णवचोइस० । सम्म०-सम्मामि० लोग० श्रसंखे०भागो ग्रहुचोइस० । एवं सव्व-देवाणं । णवरि श्रप्पप्पणो पयडीश्रो णादृण सगपोसणं ऐदव्वं । एवं जाव० ।

से कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद श्रौर पुरुपवेदके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रौर सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्ज सोलहवें कल्प तक मारणान्तिक समुद्धात करते हैं, इसीलिए तिर्यञ्चोंमें सम्यक्त्वके उदीरक जीवोंका अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमें से कुछ कम छह भागप्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ६५. पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्चित्रिक में मिथ्यात्व, सोलह कपाय श्रोर नो नोकपायों उदीरक जीवोंने लोक श्रमंख्यातवें भागप्रमाण श्रोर सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व श्रोर सम्यिग्मिथ्यात्वके उदीरकोंका स्पर्शन सामान्य तिर्यक्चोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्च पर्याप्तकोंमें स्नीवेदकी उदीरणा नहीं होती श्रोर पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्च योनिनियोंमें पुरुषवेद श्रोर नपु सकवेद श्री उदीरणा नहीं होती। पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच श्रपर्याप्त श्रोर मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय श्रीर सात नोकषायोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रियतिर्यक्चित्रक समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग चेत्रके समान है।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकमें संख्यात मनुष्य ही सम्यक्त्वके उदीरक होते हैं च्रीर ऐसे मनुष्योंका द्यतीत स्पर्शन भी लोकके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण होता है, इसलिए यहाँ पर इसके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान कहा है। सम्यग्मिध्यात्त्रके उदीरकोंका स्पर्शन भी इसीप्रकार प्रकृतमें चेत्रके समान जान लेना चाहिए। इसका स्पष्टीकरण सामान्य तिर्यक्षोंमें स्पर्शनका कथन करते समय कर ही आये हैं। शेष कथन सुगम है।

§ ६६. देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय श्रीर श्राठ नोकषायोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ श्रीर कुछ कम नो भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सब देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रपनी अपनी प्रकृतियोंको जानकर श्रपना श्रपना स्पर्शन जातना चाहिए। इसीप्रकार श्रमाहारक

६७. कालाणु० दुविहो णि०—ओषे० आदेसे०। ओषेण अद्वावीसंपयडीणं उदीर० सन्बद्धा। णविर सम्मामि० जह० श्रंतोग्र०, उक० पिलदो० असंखे०-मागो। एवं सन्वणेरइय०। एवरि इत्थिवे०-पुरिस० एप्त्थि। तिरिक्खेग्र ओषं। एवं पंचि०तिरिक्खितए। एवरि पञ्ज० इत्थिवेदो एप्त्थि। जोणिणी० पुरिस०-एवंस० णित्थ। पंचि०तिरिक्ख्यपञ्ज० मिन्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० सन्बद्धा। मणुसितए पंचि०तिरिक्खित्रमंगो। एवरि सम्मामि० उदीर० जह० उक० श्रंतोग्र०। मणुसत्रपञ्ज० मिन्छ०-एवंसय० जह० खुद्दाभव०। सोलसक०-छएणोक० जह० एयसमञ्चो, उक० दो वि पिलदो० असंखे०भागो। देवेग्र श्रोघं। एवरि एवंस० एर्वे भवण०-वाण०-जोदिस०-सोहम्मीसाण०। एवं चेव सएकुमारादि जाव एवगेवजा ति। णविर इत्थिवे० णित्थ। श्रणुद्दिसादि सन्बद्धा सि सम्म०-वारसक०-सत्तणोक० सन्बद्धा। एवं जाव०।

मार्गणा तक जानना चाहिए।

विश्लोषार्थ—यहाँ इतना ही वक्तव्य हैं कि सम्यक्त्वके उदीरक जीव एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्धात नहीं करते, इसलिए इसके उदीरक जीवोंका अतीत स्पर्शन मात्र त्रसनालीके चौदह भागोंमें से कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

६६७. कालानुगमकी अपेत्रा निर्देश दो प्रकारका है-श्रोघ श्रौर श्रादेश। श्रोघसे श्रद्वाईस प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्य-रिमध्यात्वके उदीरक जीवोंका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद श्रौर पुरुषवेदकी उदीरणा नहीं है। तिर्यक्रोंमें श्रोधके समान कालका भंग है। इसी प्रकार पक्के न्द्रिय तिर्यक्कित्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पक्केन्द्रिय तिर्येख पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है और पख्रेन्द्रिय तिर्येख योनिनियोंमें पुरुषवेद श्रीर नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्तकोंमें मिध्यात्व, सालह कषाय श्रीर सात नोकषायोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। मनुष्यत्रिकमें पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरक जीवोंका जघन्य श्रौर उत्कृष्ट काल अन्तर्महर्त है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवंदके उदीरक जीवोंका जघन्य काल जल्लकभवप्रहरणप्रमाण है, सोलह कषाय श्रीर छह नोकषायोंका जघन्य काल एक समय है तथा उत्कृष्ट काल दोनों प्रकारकी प्रकृतियोंके उदीरकोंका पर्वयके असंख्यातवें भागप्रमाण है। देवोंमें श्रोधके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। इसी प्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, सौधर्म श्रौर ऐशान देवोंमें जानना चाहिए। सनत्कुमारसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशोषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थ सिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त, बारह कवाय श्रीर सात नोकवायोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — सम्यग्निश्यात्व गुणस्थान सान्तर मार्गणा है। उसे ध्यानमें रखकर यहाँ भोघसे सम्यग्निश्यात्वके उदीरक जीवोंका जघन्य काल धन्तर्मुहूर्त श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके § ६८. श्रंतराणु० दुविही णि०— श्रोषेण श्रादेसे० । श्रोषेण अद्वावीसपयडीएं उदीरणा णिथ अंतरं । णविर सम्मामि० जह० एयस०, उक्क० पितदो० श्रसंखे०-भागो । सञ्बर्णरइय०-सञ्बतिरिक्ख०-सञ्बमणुस्स०-सञ्बदेवेसु जाओ पयडीश्रो उदीरिजंति तासिमोघभंगो । एवरि मणुसश्रपञ्ज० सञ्बपयडी० जह० एयसमश्रो, उक्क० पितदो० श्रमंखे०भागो । एवं जाव० ।

६९. भावाणुगमेण सञ्वत्थ श्रोदहश्रो भावो ।७०. श्रप्पाबहुश्रं भागाभागादो साहेद्ण ऐदिव्वं ।

एवमेगेगउत्तरपयहिउदीरणा समत्ता।

🛞 तदो पयिंडहाण्डदीरणा कायव्वा ।

§ ७१. तदो एगेगपयडिउदीरणादो श्रणंतरिमदाणि पयडिट्ठाणउदीरणा विद्यासियव्वा ति श्रहियारपरामरसवक्तमेदं काऊण पयडिट्ठाणउदीरणा णाम बुचदे-

असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। किन्तु ऐसे मनुष्य संख्यात ही होते हैं जो इसकी उदीरणा करते हैं। अतः इनमें इसके उदीरक जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहुर्त बन सकनेसे उतना ही कहा है। मनुष्य अपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है अतः इस विशेषताको ध्यानमें रखकर इनमें जिनकी उदीरणा सम्भव है उनका काल कहा है। शेष कथन सगम है।

§ ६८. श्रन्तरानुगमकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रौर श्रादेश। श्रोघसे श्रद्दाईस प्रकृतियोंके उदीरकोंका श्रन्तरकाल नहीं है। िकन्तु इतनी विशेषता है िक सम्यग्मिध्यात्वके उदीरकोंका ज्ञचन्य श्रन्तर एक समय है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। सब नारकी, सब निर्यञ्च, सब मनुष्य श्रौर सब देवोंमें जो प्रकृतियाँ उदीरित होती हैं उनका भंग श्रोघके समान है। िकन्तु इतनी विशेषता है िक मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके उदीरकोंका ज्ञघन्य श्रन्तर एक समय है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — सम्यग्मिश्यात्व गुणस्थान सान्तर मार्गणा होनेसे उसका जो जघन्य ख्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर है उसे ध्यानमें रखकर ही यहाँ श्रोघ ख्रौर ख्रादेशसे सम्यग्मिश्यात्वके उदीरकोंका ख्रान्तरकाल कहा है। तथा लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योंमें सब प्रकृतियोंके उदीरकोंके ब्रान्तर काल कथनमें यही हिष्ट मुख्य है। शेष कथन सुगम है।

🖇 ६९. भावानुगमकी श्रपेत्ता सर्वत्र श्रीदियक भाव है।

§ ७०. श्रल्पबहुत्वको भागाभागसे साधकर ले जाना चाहिए ।

इसप्रकार एकेक-उत्तरप्रकृति-उदीरणा समाप्त हुई।

* तदनन्तर प्रकृतिस्थान उदीरणा करनी चाहिए।

§ ७१. ततः अर्थात् एकैकप्रकृतिउदीरणाके बाद इस समय प्रकृतिस्थान उदीरणाका ज्याख्यान करना चाहिए इसप्रकार अधिकारका परामर्श करनेवाले इस वाक्यको करके प्रकृति- पयडीएां द्वाएां पयडिद्वाएां । पयडि-समुहो ति मिएदं होइ । तस्स उदीरणा पयडि-द्राणउदीरणा । पयडीणं एककालम्मि जेत्रियाणमुदीरेदुं संभवी तेत्रियमेत्रीणं सम्रदायो पयडिद्वाराउदीरणा ति वृत्तं भवदि । तत्थ इमाणि सत्तारस ऋणियोगद्दाराणि णादन्वाणि भवंति-सम्रक्तित्तणा जाव अप्पाबद्वए ति । भुजगार-पदणिक्लेव-वड्ढीओ च । एत्थ समुक्तित्तणा दुविहा-हाणसमुक्तित्तणा पयडिसमुक्तित्तणा चेदि । तत्थं ताव द्वाणसमुक्तित्त गां भणामि ति आह—

% तत्थ हाणसमुक्तिलणा।

§ ७२. तम्मि पयडिट्ठाणउदीरणाए द्वाणसम्रक्तिच्छा ताव श्रहिकीरदे चि वृत्तं होइ ।

अध्यात्थ एकिस्से पयडीए पवेसगी।

ः ७३. तं जहा---श्रएणदरवेद-संजलणाणम्रदएण खवगसेदिम्रवसमसेदिं वा समारूटस्स वेदपटमद्विदीए श्रावलियमेत्तसेसाए वेदोदीरणा फिट्नदि ति तदो प्पृहृि एकिस्से संजलणपयडीए पवसगी होइ।

🕸 दोगहं पयडीएं पवेसगो।

े ७४. तं जहा---उवसम-खवगसेटीसु श्रणियट्टिपढमसमयप्पहुडि समयाहियावलियमेत्ती वेदपढमिट्टिदि त्ति ताव दोएहं पयडीणमुदीरगो होदि, तत्थ पयारंतरासंभवादो ।

स्थान उदीरणाका कथन करते हैं-प्रकृतियोंका स्थान प्रकृतिस्थान कहलाता है। प्रकृतिस्थान श्रर्थात् प्रकृतिसमृह् यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उसकी उदीरणा प्रकृतिस्थान उदीरणा है। एक कालमें जितनी प्रकृतियोंकी उदीरणा सम्भव है उतनी प्रकृतियोंका समुदाय प्रकृतिस्थानउदीरणा है। यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उसके विषयमें ये सत्रह श्रनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं—समुत्कीर्तना-से लेकर श्रल्पबहुत्व तक तथा भुजगार, पदनिन्नेप श्रीर वृद्धि। यहाँ पर समुत्कीर्तना दो प्रकारकी है-स्थानसमुत्कीर्तना श्रीर प्रकृतिसमुत्कीर्तना । उनमेंसे सर्वप्रथम स्थानसमुत्कीर्तनाका कथन करते हैं, इसलिए कहते हैं — * प्रकृतमें स्थानसमुत्कीतनाका श्रिधिकार हैं।

् ७२. उस प्रकृतिस्थानउदीरणामें सर्वप्रथम स्थानसमुत्कीर्तनाका ऋधिकार है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* एक प्रकृतिका प्रवेशक जीव है।

 ७३. यथा—अन्यतर वेद श्रीर श्रन्यतर संज्वलनके उदयसे सपकश्रेणि या उपशमश्रेणि पर चढ़े हुए जीवके वेदकी प्रथम स्थितिके एक आविलमात्र शेष रहने पर वेदकी उदीरणा होना रुक जाता है, इसलिए वहाँसे लेकर यह जीव एक संज्वलन प्रकृतिका प्रवेशक होता है।

* दो प्रकृतियोंका प्रवेशक जीव है।

§ ७४. यथा—उपशम श्रौर ज्ञपकश्रेणिमें श्रनिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे लेकर एक समय अधिक आविलमात्र वेदकी प्रथम स्थिति शेष रहने तक दो प्रकृतियोंका उदीरक होता है, क्योंकि वहाँ पर जन्य प्रकार सम्भव नहीं है।

🛞 तिषहं पयडीणं पवेसगो णत्य ।

§ ७४. कुदो पुन्वुत्तदोपयडीणमुविर अपुन्वकरणपविद्वम्मि इस्सरिद-अरिद-सोगाणमएणदरजुगलस्स श्रकमप्पवेसरोण तिरागमुदीरगद्वारास्साणुप्पत्तीदो ।

🛞 चउगहं पयडीणं पवेसगो।

६ ७६. श्रात्थि ति एत्थाहियारसंबंधी कायन्त्रो । तदो उनसम-खहयसम्माइद्वि-पमत्तापमत्तसंजदेसु श्रपुन्तकरणे च हस्सरदि-श्ररदिसोगाणमएणदरजुगलेण सह श्रयणदरवेद-संजलाणपयडीश्रो घेत्तृण चउण्हं पर्वसम्मस्स श्रत्थित्तं सिद्धं ।

🛞 एसो पाए णिरंतरमत्थि जाव दसएहं पयडीणं पवेसगो।

§ ७७. चउएहं पवेसगमादिं काद्ण जाव दसण्हं पयडीणं पवेसगो ति ताव एदेसिं ठाणाणं पवेसगो णिरंतरमित्य ति सुत्तत्थसंबंधो । एतो उविर णित्थ मोहणीयस्स, उक्कस्सेणुदीरिजमाणपयडीणं दससंखाणइक मादो । एवं सम्रकित्तिदाण- मुदीरणाहाणाणमेसा संदिही १,२,४,५,६,७,८,९०।

एवमोघेण सम्रुक्तित्तणा गया।

* तीन प्रकृतियोंका प्रवेशक जीव नहीं है।

९ ७५. क्योंकि पूर्वोक्त दो प्रकृतियोंके ऊपर अपूर्वकरणमें प्रवेश करते समय हास्य-रित और अरित-शोक इनमेंसे अन्यतर युगलके युगपत् प्रवेश करनेपर तीन प्रकृतिकस्थानकी उत्पत्ति नहीं होती है।

* चार प्रकृतियोंका प्रवेशक जीव है।

§ ७६. यहाँ पर 'ऋस्ति' इस पदका ऋधिकारवश सम्बन्ध कर लेना चाहिए। तद्नुसार उपशमसम्यग्दृष्टि और ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत श्रीर श्रप्रमत्तसंयत तथा अपूर्वकरण जीवके हास्य-रित और श्रप्रति-शोक इन दो युगलोंमेंसे श्रन्यतर युगलके साथ श्रन्यतर एक वेद और श्रन्यतर एक संज्वलन प्रकृतिको लेकर चार प्रकृतियोंका प्रवेशकरूपसे श्रस्तित्व सिद्ध होता है।

* इससे आगे दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके प्राप्त होने तक इन स्थानोंका प्रवेशक जीव निरन्तर है।

५ ७७. चार प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवसे लेकर दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके प्राप्त होने तक इन स्थानोंका प्रवेशक जीव है इस प्रकार यह सूत्रार्थसम्बन्ध है। इसके ऊपर मोहनीय कर्मके उदीरणास्थान नहीं हैं, क्योंकि उत्कृष्टक्रपसे उदीरणाको प्राप्त होनेवाली प्रकृतियाँ दस संख्याको उल्लंघन नहीं करती हैं। इसप्रकार समुत्कीर्तना अनुयोगद्वारके आश्रयसे कहे गये उदीरणास्थानोंकी यह संदृष्टि हैं—१, २, ४, ६, ७, ८, ६, १०।

इस प्रकार जोघसे समुत्कीर्तना समाप्त हुई।

६ ७८. संपित आदेसेण मणुसितए श्रोधभंगो । ऐरइएस श्रिट्थ दस्पर्हं
एवण्हं श्रद्धार्हं सत्तण्हं छण्हं प्रवेसगा १०,९,८,७,६,। एवं सन्वर्णरइय० देवा
भवणादि जाव णवगेवजा ति । एवं तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खितिए । णविर पंचएहं
पि पवसगा श्रित्थ १ । पंचिदियतिरिक्खश्रपज्ञत्त-मणुस०श्रप्प० अत्थि दसएहं
णवरहमद्वर्ण्हं पवे० १०,९,८ । अगुहिसादि जाव सन्वद्वा ति श्रित्थ णवण्हमद्वण्हं
सत्तण्हं छएहं पवसगा ९,८,७,६ । एवं जाव० ।

६ ७९. एवं द्वाणसम्रुक्तित्तर्या समाणिय संपहि एदेसु द्वाग्रोसु पयडिसम्रुक्तित्तर्या कुणमाणो सुत्तपबंधमृत्तरं भणइ—

🛞 एदेसु हाणेसु पयडिणिहेसो कायव्वो भवदि।

- े ८०. एदेसु अणंतरणिहिट्ठउदीरणाट्टाणेसु काओ पयडीओ घेतृण कदमं द्वाणग्रुप्पञ्जदि ति जाणावणद्वमेत्थ पयडिणिहेसो कायच्वो, अण्णहा तिव्वसय-सम्मण्णाणाणुष्पत्तीदो ।
- % एयपयिं प्रवेसेदि सिया कोइसंजलएं वा सिया माण्संजलएं वा सिया मायासंजलएं वा सिया लोभसंजलएं वा।
 - ५ ८१. एदस्सत्थो वृच्चदे अत्थि एकिस्से पयडीए प्रवेसगो ति सम्रुकित्तिदं।

§ ७६. इसप्रकार स्थानसमुत्कीर्तनाको समाप्त करके श्रव इन स्थानोंमें प्रकृतियोंकी समु-क्तीर्तना करते हुए श्रागेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं —

* इन स्थानोंमें प्रकृतियोंका निर्देश करना योग्य है।

§ ८०. पूर्वमें कहे गये इन उदीरणाध्यानोंमें किन प्रकृतियोंको लेकर कौनसा स्थान उत्पन्न होता है यह जतलानेके लिए यहाँ पर प्रकृतियोंका निर्देश करना चाहिए, अन्यथा तिद्वषयक सम्यक्कान नहीं उत्पन्न होता।

* एक प्रकृतिका प्रवेश करनेवाला जीव कर्दाचित् कोधसंज्वलनको, कदाचित् मानसंज्वलनको, कदाचित् मायासंज्वलनको और कदाचित् लोभसंज्वलनको प्रविष्ट करता है।

§ ८१. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—एक प्रकृतिका प्रवेशक जीव है यह पहले समु-

६ ०८. श्रव श्रादेश प्ररूपणा करते हैं। उसकी श्रपेत्ता मनुष्यित्रकमें श्रोघके समान मंग है। नारिक्योंमें दस, नी, श्राठ, सात श्रीर छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव हैं—१०, ६, ८, ७, ६। इस प्रकार सब नारकी, सामान्य देव, श्रीर भवनवासियोंसे लेकर नी प्रवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार सामान्य तिर्यक्र श्रीर पश्चेन्द्रिय तिर्यक्रित्रिकमें भी जानना श्राहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें पाँच प्रकृतियोंके भी प्रवेशक जीव हैं १। पश्चेन्द्रिय तिर्यक्र श्रपर्याप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्त कोंमें दस, नी श्रीर श्राठ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव हैं—१०, ६, ८। श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें नी, श्राठ, सात श्रीर छह प्रकृतियोंके मवेशक जीव हैं—९, ८, ७, ६। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

तत्थेगपयिं पवेसमाणो कदमं पयिं पवेसेदि ति आसंकिय 'सिया कोहसंजलएं वा' हचादि वृत्तं । कोहोदएण सेढिमारूढस्स वेदपढमिट्टदीए आवित्यं पविद्वाए तदो पहुिं कोधसंजलएमेकं चेव पवेसेदि तेएव कोहपढमिट्टदीए आवित्यं पवेसिदाए तदो प्रदुं माएसंजलएं पवेसेदि । तस्सेव माणपढमिट्टदीए आवित्यपविद्वाए तदो पहुिं माएसंजलएं पवेसेदि । तदो मायासंजलणपढमिट्टदीए आवित्यपविद्वाए तदो पहुिं लोभसंजलणस्सेव पवेसगो होह । अहवा अप्पप्पणो उदएए चिंददस्स वेदपढमिट्टदीए आवित्यपविद्वाए कोहसंजलणादीएं पवेसगो होदि ति वत्तव्यं । एत्थ सव्वत्थ 'सिया' सहो एयंतावहारएपिडसेहफलो । 'वा' सहो 'च' वियप्पवाच्यो ति घेत्तव्यं । एवमेदे चत्तािर भंगा एयपयिंदपवेसगस्स होइ ति उवसंहारवक्षमाह—

🛞 एवं चत्तारि भंगा।

§ ≒२. सुगमं।

🛞 दोगहं पयडीणं पवेसगस्स बारस भंगा।

५८३. कुदो ? तिएहं वेदाणमेकोकसंजलणेण सह श्रक्खपरावत्तेण तेत्तियमेत्त-भंगुप्पत्तीए णिव्वाहमुवलंभादो । तं कधं ? सिया पुरिसवेदं कोहसंजलणं च पवेसेदि ।

त्कीर्तना श्रनुयोगद्वारमें कह श्राये हैं सो उस विषयमें एक प्रकृतिका प्रवेश करनेवाला जीव किस प्रकृतिका प्रवेशक होता है ऐसी श्राशंका करके 'सिया कोहसंजलएं वा' इत्यादि वचन कहा है। कोधके उदयसे श्रेणि पर चढ़ें हुए जीवके वेदकी प्रथम स्थितिके उदयाविलके भीतर प्रवेश करने पर वहाँसे लेकर वह जीव एक कोध संज्वलनको ही उदीरणामें प्रवंश कराता है। उसी जीवके द्वारा कोधकी प्रथम स्थितिके उदयाविलमें प्रवेशित करने पर वहाँसे लेकर वह जीव मानसंज्वलनको उदीरणारूपसे प्रवेश कराता है। इसके बाद मायासंज्वलनको उदीरणारूपसे प्रवेश कराता है। इसके बाद मायासंज्वलनको प्रथम स्थितिके उदयाविलमें प्रवेश करने पर वहांसे लेकर मायासंज्वलनको उदीरणारूपसे प्रवेश कराता है। इसके बाद मायासंज्वलनकी प्रथम स्थितिके उदयाविलमें प्रविष्ठ होने पर उससे श्रागे एकमात्र लोभका प्रवेशक होता है। श्रथबा श्रपने श्रपने उदयसे चढ़े हुए जीवके वेदकी प्रथम स्थितिके उदयाविलमें प्रविष्ठ होने पर कोधसंज्वलन श्रादिका प्रवेशक होता है ऐसा कहना चाहिए। यहां पर सर्वत्र 'सिया' शब्दका फल एकान्तरूप श्रवधारणका निषेध करना है श्रीर 'वा' शब्द 'च' रूप विकल्पका वाचक है ऐसा प्रहण करना चाहिए। इसप्रकार ये चार भंग एक प्रकृतिके प्रवेशकके होते हैं इसप्रकार इस श्रथके सूचक उपसंहार वाक्यको कहते हैं—

* इसमकार चार भंग होते हैं।

§ दर. यह सूत्र सुगम है।

* दो प्रकृतियोंके प्रवेशकके बारह भंग होते हैं।

६ ८३. क्योंकि तीन वेदोंका एक एक संज्वलनके साथ अञ्चपरावर्तन होकर उतने भंग निर्वाधरूपसे उपलब्ध होते हैं। यथा—कदाचित पुरुषवेद और क्रोधसंज्वलनको प्रवेशित करता सिया पुरिस० माणसं० च पर्वे० । सिया पुरिस० मायासंज्ञ० च पर्वे० । सिया पुरिस० लोइसंज्ञ० च पर्वे० । एवं पुरिसवेदेण चत्तारि भंगा । एवमित्थि-णवुंसयवेदेहिं मि पादेकं चत्तारि भंगा उच्चारिय घेत्तच्या । तदो दोण्हं पयडीगां पर्वेसगागां बारस भंगा ति सिद्धं १२ ।

🛞 चउरहं पयडीएं पवेसगस्स चदुवीसं भंगा।

🛞 पंचरहं पयडीणं पवेसगस्सचत्तारि चउवीसं भंगा।

६ ८४. तं जहा-हस्सरिद-ऋरिदसोगाणं दोएहं जुगलाणं चउएहं संजलणाणं

है। कदाचित् पुरुषवेद और मानसंज्वलनको प्रवेशित करता है। कदाचित पुरुषवेद और माया-संज्वलनको प्रवेशित करता है तथा कदाचित् पुरुषवेद और लोभसंज्वलनको प्रवेशित करता है। इसप्रकार पुरुषवेदके साथ चार भंग प्राप्त होते हैं। इसीप्रकार स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके साथ भी प्रत्येकके चार भंगोंका उचारण कर प्रहण करना चाहिए। इसलिए दो प्रकृतियोंके प्रवेशकोंके बारह १२ भंग होते हैं यह सिद्ध हुआ।

* चार प्रकृतियोंके प्रवेशकके चीबीस भंग होते हैं।

६ ८४. क्योंकि हास्य-रित श्रीर श्ररित-शोक इस संज्ञावाले दो युगलोंके तीन वेद श्रीर चार संज्वलनके साथ संयोग करने पर उतने भंगोंकी उत्पत्ति देखी जाती है। यथा—कदाचित् हास्य-रित, पुरुपवेद श्रीर क्रांधसंज्वलनको प्रवेशित करता है। कदाचित् हास्य-रित, पुरुपवेद श्रीर काधसंज्वलनको प्रवेशित करता है। कदाचित् हास्य-रित, पुरुपवेद श्रीर मायासंज्वलनको प्रवेशित करता है। कदाचित् हास्य-रित, पुरुपवेद श्रीर मायासंज्वलनको प्रवेशित करता है। इस प्रकार हास्य श्रीर रितका पुरुपवेदके साथ चार संज्वलनोंमें संचार करने पर चार भंग होते हैं। इसीप्रकार खीवेद श्रीर नपुंसकवेदके श्राश्रयसे भी प्रत्येकके चार भंगोंकी उद्यारणा करनी चाहिए। इसलिए हास्य-रितकी श्रपेक्षा बारह भंग होते हैं। तथा इसीप्रकार श्ररित-शोककी श्रपेक्षा बारह १२ भंग उत्पन्न होते हैं। इसप्रकार चार प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके चौबीस २४ भंगोंकी उत्पत्ति सिद्ध हुई।

* पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके चार चौबीस मंग होते हैं।

६ ८४. यथा-- हास्य-रति और अरति-शोक इन दो युगलोंका, चार संज्वलनोंका, तीन

तिएहं वेदाणं भय-दुगुंछाणं च जहाकमं पत्थारं कादृणेत्थ भएण सह एका चउवीस-भंगाणं सलागा १ । दुगुंछाए सह अएणा २ । अण्णेगा भय-दुगुंछाहि विणा सम्मत्तोदयावलंबणेण ३ । एवं संजदेसु तिण्णि चउवीसभंगा लब्भंति । पुणो खइगसम्माइट्टिम्मि उवसमसम्माइट्टिम्मि वा संजदासंजदिम्म भय-दुगुंछाहि विणा पचक्लाणकसायप्पवेसणेण अएणेगा चउवीसभंगसलागा लब्भइ ४ । एवमेदे चत्तारि चदुवीस भंगा पंचएहं पवेसगस्स लद्धा भवंति । एत्थ सन्वभंगसमासो एत्तिश्रो होइ ९६ ।

🛞 ब्रुग्हं पयडीणं पवेसगस्स सत्त चन्नीस भंगा।

इन्ह. तं जहा—उवसमसम्माइहिस्स खइयसम्माइहिस्स वा संजदस्स भय-दुगुंछाहि सह एगा चउवीस भंगसलागा १ । संजदस्सेव वेदयसम्माइहिस्स भएण विणा दुगुंछाए सह विदिया २ । तस्सेव दुगुंछाए विणा भएण सह तदिया ३ । एवं संजदमस्सिऊण तिण्ण चउवीसभंगा लद्धा । पुणो उवसमसम्माइहिस्स खइय-सम्माइहिस्स वा संजदासंजदस्स दुगुंछाए विणा पचक्खाणकसाएण सह भयं वेदयमाणस्स चउत्थी चउवीसभंगसलागा ४ । तस्सेव भएण विणा पचक्खाण-दुगुंछाहिं सह पंचमी ४ । वेदगसम्माइहिसंजदासंजदस्स भय-दुगुंछोदयविरहियस्स छहो चउवीसभंगवियण्पो ६ । उवसंतदंसणमोहणीयस्स खीणदंसणमोहस्स वा असंजद-

वेदोंका तथा भय श्रीर जुगुष्साका क्रमसे प्रस्तार करके यहाँ पर भयके साथ चौबीस भंगोंकी एक शलाका १, जुगुष्साके साथ उससे भिन्न दूसरी २ तथा भय श्रीर जुगुष्साके बिना सम्यक्त्वप्रकृतिके उदयका श्रवलम्बन लेकर उन दोनोंसे भिन्न एक ३ इस प्रकार संयत जीवोंमें तीन चौबीस भंग प्राप्त होते हैं। पुनः चायिकसम्यग्दष्टि या उपशमसम्यग्दिष्ट संयतासंयत जीवके भय श्रीर जुगुष्सा के बिना प्रत्याख्यानावरण कषायके प्रवेश करनेसे श्रन्य एक चौबीस भंगरूप शलाका प्राप्त होती है ४। इस प्रकार पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके चार चौबीस भंग प्राप्त होते हैं। यहाँ पर सब भंगोंका योग इतना होता है--९६।

* छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके सात चौबीस भंग होते हैं।

६ द६. यथा--उपशमसम्यग्दिष्ट या ज्ञायिकसम्यग्दिष्ट संयत जीवके भय श्रीर जुगुप्साके साथ एक चौबीस भंगशालाका होती हैं -१। वेदकसम्यग्दिष्ट संयत जीवके ही भयके बिना जुगुप्साके साथ दूसरी चौबीस भंगशालाका होती हैं २। उसी संयत जीवके जुगुप्साके बिना भयके साथ तीसरी चौबीस भंगशालाका होती हैं ३। इस प्रकार संयत जीवका श्राभय कर तीन चौबीस भंग प्राप्त हुए। पुनः उपशमसम्यग्दिष्ट या चायिकसम्यग्दिष्ट संयतासंयत जीवके जुगुप्साके बिना प्रत्याख्यानावरण कषायके साथ भयका वेदन करते हुए चौथी चौबीस भंगशालाका होती है ४। उसी जीवके भयके बिना प्रत्याख्यानावरण श्रीर जुगुप्साके साथ पाँचवी चौबीस भंगशालाका होती है - १। भय श्रीर जुगुप्साके उदयसे रहित वेदकसम्यग्दिष्ट संयतासंयत जीवके अंगे चौबीस भंगशालाका होती है -१। भय श्रीर जुगुप्साके उदयसे रहित वेदकसम्यग्दिष्ट संयतासंयत जीवके अंगे चौबीस भंगशालाका होती है -१। भय श्रीर जुगुप्साके उदयसे रहित वेदकसम्यग्दिष्ट संयतासंयत जीवके

सम्मा इद्विस्स भय-दुगुंछाहिं विणा अपश्वक्खाणपवेसेण सत्तमो चउवीसभंगपयारो ७ । एवमेदे सत्त चेव चउवीस भंगा लब्भंति । एत्थ सव्वभंगसमासो अद्वसद्विसदमेत्तो १६८ ।

🕾 सत्तरहं पयडीएं पवेसगस्स दस चउवोस भंगा।

इत्थ. तं जहा—संजदस्स वेदगसमत्त-चदुसंजल्ण-तिण्णिवेद-दोजुगल-भय-दुगुंद्धात्रों अस्सिऊण पढमो चउवीसभंगपयारो १। उवसमसम्माइद्विस्स खइयसम्माइद्विस्स वा संजदासंजदस्स पचक्खाण-भय-दुगुंद्धाहि सह बिदियो २। संजदासंजदस्सेव वेदगसम्मत्तेण भएण च तिदयो ३। भएण विणा दुगुंद्धाए सह चउत्थो ४। पुणो खीणोवसंतदंसणमोहणीयस्स असंजदसम्माइद्विस्स भय-अपचक्खाणोहि सह पंचमो ४। तस्सेव भएण विणा दुगुंद्धाए सह बट्टो ६। तस्सेव अक्खीणोवसंतदंसणमोहस्स भय-दुगुंद्धाहि विणा वेदगसम्मत्तोदएण सत्तमो ७। सम्मामिच्द्धाइद्विस्स भय-दुगुंद्धाहि विणा सम्मामिच्द्रतेण सह अद्वमो ८। सासणसम्माइद्विम्म भय-दुगुंद्धाहि विणा अ्रणंताणुवंधिपवेसेण णवमो ९। मिच्द्याइद्विस्स अ्रणंताणुवंधि-भय-दुगुंद्धाहि विणा संज्ञपढमाविल्याए बट्टमाणस्स दसमो १०। एवं दस चउवीसभंगा सत्तपयिद्वाण-पवेसगस्म लब्भंति। एत्थ सन्वभंगसमासो चालीसुत्तरिवसदमेत्तो २४०।

मोहका त्तय किया है ऐसे असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके भय श्रीर जुगुप्साके विना अप्रत्याख्याना-वरणके प्रवेशसे सातवॉ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है—७। इसप्रकार ये सात ही चौबीस भंग प्राप्त होते हैं। यहाँ पर सब भंगोंका योग एकसौ अरसठमात्र है—१६८।

* सात प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके दस चौबीस भंग होते हैं।

§ ८७. यथा -संयत जीवके वेदकसम्बक्त्व, चार संज्वलन, तीन वेद, दो युगल, भय श्रीर जुगुप्साके त्राश्रयसे पहला चौबीस भंगांका प्रकार होता है—१। उपशमसम्यग्दृष्टि या चायिकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवके प्रत्याख्यानावरण, भय श्रीर जुगुप्साके साथ दूसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है-२। संयतासंयत जीवके ही वेदकसम्यक्त्व श्रीर भयके साथ तीसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है-३। भयके बिना जुगुत्साके साथ चौथा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है-४। पुनः जिसने दर्शनमोहनीयका चय या उपराम किया है ऐसे ऋ संयतसम्य-ग्दृष्टि जीवके भय त्रीर त्रप्रत्याख्यानावरणके साथ पाँचवां चौबीस भंगोंका प्रकार होता है १। उसीके भयके बिना जुगुप्साके साथ छठा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ६। जिसने दर्शन-मोहनीयका त्त्य या उपशम नहीं किया है ऐसे उसी जीवके भय श्रीर जुगुप्साके विना वेदक-सम्यक्त्व (सम्यक्त्व प्रकृति) के उदयसे सातवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है। सम्यग्मिध्या-दृष्टि जीवके भय श्रीर जुगुन्साके बिना सम्यग्मिध्यात्वके साथ श्राठवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ८। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवके भय श्रीर जुगुप्साके बिना श्रनन्तानुबन्धीका प्रवेश होनेसे नौवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है है। अनन्तानुबन्धी, भय और जुगुप्साके विना श्रनन्तानुबन्धीसे संयुक्त प्रथम श्रावित्तमें विद्यमान मिध्यादृष्टि जीवके दसवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है। इस प्रकार सात प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके दस चौबीस भंग प्राप्त होते हैं। यहाँ पर सब भंगोंका जोड़ दोसी चालीस २४० होता है।

🛞 श्रहण्हं पयड़ीणं पवेसगस्स एकारस चडवीस भंगा।

§ ८८. तं जहा—संजदासंजदस्स वेदगसम्मत्त-पचक्खाण-संजलण-वेद-दोजुगल-भय-दुगुंछाहि पढमो चउवीसमंगुप्पादो १। उवसंत-खीणदंसणमोहणीयस्स असंजद-सम्माइहिस्स अपचवखाणकसाएण सह तात्रो वेव सम्मत्त विरहिदात्रो घेत्र्ण विदियो २। तस्सेव वेदयसम्माइहिस्स दुगुंछाए विणा भएण सह तिदयो ३। भएण विणा दुर्गुछाए सह चउत्थो ४। सम्मामिच्छाइहिम्म दुगुंछाए विणा सम्मामि०-भएहिं सह पंचमो ४। तस्सेव भएण विणा दुगुंछाए विणा भयमुदीरेमाणस्स अर्णताणुबंधिपवेसेण सत्तमो ७। तस्सेव भएण विणा दुगुंछाए विणा भयमुदीरेमाणस्स अर्णताणुबंधिपवेसेण सत्तमो ७। तस्सेव भएण विणा दुगुंछं वेदेमाणस्स अट्टमो ८। मिच्छाइहिस्स संजुत्तपढमाविष्ठ्याए भएण सह मिच्छत्तं वेदेमाणस्स अट्टमो ८। भएण विणा दुगुंछाए सह मिच्छत्तमुदीरे-माणस्स दसमो १०। भय-दुगुंछाहि विणा अर्णताणुबंधिणा सह मिच्छत्तं वेदेमाणस्स एकारसमे ११। एवमद्दगुं छाहि विणा अर्णताणुबंधिणा सह मिच्छत्तं वेदेमाणस्स एकारसमे ११। एवमद्दगुं छाहि विणा अर्णताणुबंधिणा सह मिच्छत्तं वेदेमाणस्स एकारसमे ११। एवमद्दगुं छाहि विणा अर्णताणुबंधिणा सह मिच्छत्तं वेदेमाणस्स एकारसमे ११। एवमद्दगुं छाहि विणा अर्णताणुबंधिणा सह मिच्छत्तं वेदेमाणस्स एकारसमे देहिं चउवीस भंगा लब्भंति। एत्थ सच्वभंगसमासो चउसिट्ट-विसदमेत्तो २६४।

🛞 एवरहं पयडीएं पवेसगस्स छ चदुवीस भंगा।

* श्राट प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके ग्यारह चौबीस भंग होते हैं।

६ ८८. यथा - संयतासंयत जीवके वेदकसम्यक्त्व, प्रत्याख्यानावरण कषाय, संज्वलन कपाय, वेद, दो युगल, भय श्रीर जुगुप्साके द्वारा प्रथम चीबीस भंगींका प्रकार उत्पन्न होता है १। जिसने दर्शनमोहनीयका चय श्रीर उपशम किया है ऐसे श्रसंयतसम्यग्दष्टि जीवके श्चप्रत्याख्यानावरण कषायके साथ सम्यक्त्वप्रकृतिके विना उन्हीं पूर्वोक्त प्रकृतियोंको प्रहण करके दूसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता हैं २। वेदकसम्यग्दृष्टि उसी जीवके जुगुप्साके विना भयके साथ तीसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ३। भयके विना जुगुप्साके साथ चौथा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ४। सम्यग्मिश्यादृष्टि जीवके जुगुप्साके विना सम्यग्मिश्यात्व श्रीर भयके साथ पाँचवां चौबीस भंगोका प्रकार होता है १। उसीके भयके विना जुगुत्साके साथ छठा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ६। जुगुप्साके विना भयकी उदीरणा करनेवाले सासादन-सम्यग्दृष्टि जीवके अनन्तानुबन्धीका प्रवेश होनेसे सातवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ७। भयके विना जुगुप्साका वेदन करनेवाले उसी जीवके आठवॉ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है द। संयक्त प्रथम त्रावितमें भयके साथ मिध्यात्वका वेदन करनेवाले मिध्यादृष्टि जीवके नौवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ९। भयके विना जुगुप्साके साथ मिध्यात्वकी उदीरणा करनेवाले जीवके दसवां चौबीस भंगोंका प्रकार होता है १०। भय श्रौर जुगुप्साके विना श्रनन्तानुबन्धीके साथ मिथ्यात्वका वेदन करनेवाले जीवके ग्यारहवां चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ११। इस प्रकार श्राठ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके ग्यारह प्रकारके चौबीस भंग प्राप्त होते हैं। यहां सब भंगोंका जोड़ दो सी चौसठ २६४ होता है।

* नौ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके छह चौबीस मंग होते हैं।

इत्. तं कथं ? असंजदस्स वेदगसम्माइद्विस्स वेदगसम्मत्त-पश्चक्खाणापश्चक्खाण-संजलग्ध-वेदण्यादरज्जगल-भय-दुगुं बाओ पवसेमाग्यस्स पढमो चउनीसभंगुप्पत्ति वियप्पो १ । सम्मामिच्छाइद्विस्स समत्तेण विणा सम्मामिच्छत्त-भय-दुगुं छाहि विदियो २ । सासणसम्माइद्विम्मि सम्मामिच्छात्तेण विणा अग्रांतागुवंधिणा सह पुव्विछपयडीओ घेतृग्य तदियो ३ । मिच्छाइद्विस्स संजुत्तपढमाविलयाए मिच्छतेण सह भय-दुगुं छा-वेदयस्स चउत्थो ४ । तस्सेनाग्यंतागु०वेदमाणस्स भएण विणा दुगुं छाए सह पंचमो ४ । दुगुं छाए विणा भएग्य सह छट्टो ६ । एवमेदे छचदुवीसभंगा ग्यवग्हं पवेसगस्स लब्भंति । एत्थ सन्वभंगसमासो चउवेतालसदमेत्तो १४४ ।

🛞 दसग्हं पयडीणं पवेसगस्स एकचदुवीस भंगा।

🛚 ९०. तं जहा-- मिच्छत्त-श्रणंताणु०-पचक्खाणापचक्खाण-संजलण-वेददो-

जुगल-भय-दुगुं छात्रो एवं ठिवय १११ अक्खसंचारं काद्ण चउवीसभंगाण-४<u>४४४</u> १

मुचारणा कायव्वा । एवं पयडिसमुक्तित्तणाए भंगपहृत्यणं कादृण संपहि वृत्ताणं भंगाण-

§ ६०. यथा—मिथ्यात्व, श्रनन्तानुबन्धी, प्रत्याख्यानावरण, श्रप्रत्याख्यानावरण, संज्व-

न २२ लन, वेद, दो युगलमें भ्रन्यतर युगल, भय श्रौर जुगुप्सा इस प्रकार १ १ १ स्थापित कर ४४४ ४

ब्यन्नसंचार करके चौबीस भंगोंकी उचारणा करनी चाहिए। इस प्रकार प्रकृति समुत्कीर्तनामें

द्रह. सो कैसे ? वेदक सम्यक्त्व, प्रत्याख्यानावरण, अप्रत्याख्यानावरण, संज्वलन, वेद, अन्यतर युगल, भय और जुगुप्साका प्रवेश करनेवाले जीवके प्रथम चौबीस भंगोंकी उत्पत्तिका विकल्प होता है ?। सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवके सम्यक्त्वके विना सम्यग्मिध्यात्व, भय और जुगुप्साके साथ दूसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है २। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवके सम्यग्मिध्यात्वके विना अनन्तानुबन्धिके साथ पूर्वोक्त प्रकृतियोंको प्रहृण कर तीसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ३। संयुक्त प्रथम आविलमें मिध्यात्वके साथ भय और जुगुप्साका वेदन करनेवाले जीवके चौथा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ४। अनन्तानुबन्धिका वेदन करनेवाले उसी जीवके भयके विना जुगुप्साके साथ पॉचवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है १। जुगुप्साके विना भयके साथ छठा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ६। इस प्रकार नौ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके छह प्रकारके चौबीस भंग प्राप्त होते है। यहाँ पर सब भङ्गोंका जोड़ एक सौ चवालीस १४४ है।

^{*} दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके एक चौबीस भंग होते हैं।

मुवसंहारगाहं परूवेमाणी इदमाह-

- 🟶 एदेसिं भंगाणं गाहा दसग्हमुदीरण्डाणमादिं कादृण ।
- - ॐ तं जहा।

§ ९२. सुगमं ।

एकगछक्केकारस दस सत्त चउक एकगं त्वेव। दोसु च बारस भंगा एकम्हि य होंति चत्तारि॥१॥

§ ९३. सुगमं चेदं, श्रणंतरादीदपवंधेण गयत्थत्तादो । णवरि एत्थ गाहासुत्त-पुन्वद्धे चउवीसं भंगा त्ति पयरणवसेणाहिसंबंधो कायन्त्रो । एदेसिं च भंगाणमप्पप्पणो उदीरणद्वाणपिडवद्वाणमेसो श्रंकविष्णासो १०, ९, ८, ७, ६, ४, ४, २, १, १, ६, ११, १०, ७, ४, १, १२, ४,

भंगोंका कथन करके श्रब उक्त भंगोंकी उपसंहार गाथाका कथन करते हुए यह कहते हैं-

- * दस प्रकृतियोंके उदीरणास्थानसे लेकर इन पूर्वीक भंगोंकी गाथा इस प्रकार है।
- ६९. यह सूत्र सुगम है। किन्तु इतनी विशेषता है कि 'दस प्रकृतियोंके उदीरणा-स्थानसे लेकर' यह वचन पश्चादानुपूर्वीसे गाथा कहेगी यह बतलानेके लिए श्राया है।
 - *** यथा---**
 - ६ ९२. यह सूत्र सुगम है।
- * दस प्रकृतिक स्थानके एक चीबीस, नौ प्रकृतिक स्थानके छह चौबीस, आठ प्रकृतिक स्थानके ग्यारह चौबीस, सात प्रकृतिक स्थानके दस चौबीस, छह प्रकृतिक स्थानके सात चौबीस, पाँच प्रकृतिक स्थानके चार चौबीस और चार प्रकृतिक स्थानके एक चौबीस तथा दो प्रकृतिक स्थानके बारह और एक प्रकृतिक स्थानके चार भंग होते हैं।
- § ६३. यह गाथासूत्र सुगम है, क्योंकि अनन्तर अतीत प्रबन्धके द्वारा इसका अर्थ कह दिया गया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इस गाथासूत्रके पूर्वार्धमें 'चौबीस भङ्ग' इस पदका प्रकरणवश सम्बन्ध कर लेना चाहिए। अपने अपने उदीरणस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाले इन भक्नोंका यह अंकविन्यास है—-
 - ९. ६ ८ ७ ६ ५ ४ २ ९ १ चौ० ६ चौ० ११ चौ० १० चौ० ४ चौ० १ चौ० १२ ४

एत्थ सन्वभंगसमासो एत्तियो होह ९७६। एवं पयडिसम्रुक्तित्तणाए समत्ताए द्वाण-सम्रुक्तित्तणा समत्ता।

६ ९४. एत्थ सादि-अणादि-धुव-म्रद्धुवाणुगमो ताव कायव्वो, तम्मि अपरूविदे सामित्तस्सावयाराभावादो । तं जहा—सादि-अणादि-धुव-अद्भुवाणुगमेण दुविहो णिदेसो श्रोघादेसभेएण । त्रोघेण सव्वपदाणि किं सादि० ४ । सादि-अद्भुवाणि । एवं जाव० ।

- 🛞 सामित्तं।
- § ९४. एत्तो सामित्तं वत्तइस्सामो ति पद्दण्णावक्तमेदं ।
- 🕸 सामित्तस्स साहण्डमिमात्रो दो सुत्तगाहात्रो ।
- § ९६. सुगमं ।
- क्क तं जहा।
- § ९७. सुगमं ।

सत्तादि दसुकस्सा मिच्छत्ते मिस्सए एउकस्सा । छादी एव उकसा अविरदसम्मे दु आदिस्से ॥२॥

यहाँ पर सब भङ्गोंका जोड़ इतना ९७६ होता है--२७ + १४४ + २६७ + २४० + १६८ + २६ + २४ + १२ + ४ = ९७६ ।

इस प्रकार प्रकृतिसमुरकीर्तनाके समाप्त होने पर स्थानसमुरकीर्तना समाप्त हुई।

३ ६४. यहाँ पर सर्व प्रथम सादि, अनादि, ध्रुव श्रोर अध्रुवानुगम करना चाहिए, क्योंकि इसकी प्ररूपणा किये विना स्वामित्व अनुयोगद्वारका अवतार नहीं हो सकता । यथा—सादि, श्रनादि, ध्रुव श्रोर अध्रुवानुगमकी अपेचा श्रोघ श्रोर आदेशके भेदसे निर्देश दो प्रकारका है । श्रोघसे सब पद क्या सादि हैं, अनादि हैं, ध्रुव है या अध्रुव हें ? सादि श्रोर अध्रुव हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशोषार्थ — पूर्वमें दस प्रकृतिकसे लेकर एक प्रकृतिक तक जितने पद बतलाय है उनमें प्रकृतियोंके परिवत्तनसे या अन्य कारणसे स्थायी कोई भी पद नहीं हैं, इसिलए इन्हें आधिसे भी सादि और अध्व कहा है। शेष कथन सुगम है।

- *** स्वामित्व**
- \S ९५. इससे श्रागे स्वामित्वको बतलाते हैं इस प्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है।
- * स्वामित्वकी सिद्धि करनेके लिए ये दो सूत्रगाथाएं हैं।
- § ९६· यह सूत्र सुगम है।
- * यथा---
- ६ ६७. यह सूत्र सुगम है।
- * सातसे लेकर दस तकके चार उदीरणास्थान मिध्यात्व गुणस्थानमें होते हैं, सातसे लेकर उत्कृष्टरूपसे नौ तकके तीन उदीरणा स्थान मिश्र गुणस्थानमें होते

पंचादि-श्रद्वणिहणा विरदाविरदे उदीरणट्ठाणा । एगादी तिगरहिदा सत्तुकस्सा च विरदेसु ॥३॥

९ ९८. एत्थ ताव पटमसुत्तगाहाए ऋत्थो वृच्चदे । तं कथं १ सत्त आदिं कादृण जाव दस ताव एदाणि चत्तारि उदीरणहाणाणि मिच्छाह्रिशुणहाणे होंति । तं जहा— मिच्छत्तमणंताणुवंधीणमेकदरमपचक्खाणाणमेकदरं पचक्खाणाणमेकदरं संजलणाणमेकदरं तिण्हं वेदाणमेकदरं दोण्हं जुगलाणमेकदरं भय-दुगुं छात्रो च घेतृण दसएह-सुदीरणहुाणं होइ १०। एत्थ भय-दुगुं छाणमण्णदरेण विणा णवण्हसुदीरणहुाणं होइ ९। दोहिं मि विणा श्रद्धण्हसुदीरणा ८। भय-दुगुं छाणंताणुवंधीहि विणा सत्तण्हसुदीरणहुाणं होइ ७। तदो एदेसिं मिच्छाइद्वी सामी होइ ति भावत्थो । 'मिस्सए णवुकस्सा' सत्तादिग्गहणमिहाणुवद्धदे, तेणेवं सुत्तत्थसंबंधो कायव्यो—मिस्सए सम्मा-मिच्छाइद्विगुणहुाणे सत्त आदिं कादृण जाव णव ताव एदाणि तिणिण उदीरणा-द्वाणाण लब्भंति ति । तं जहा—सम्मामिच्छत्तमपचक्खाणाणमेकदरं, पचक्खाणाण-मेकदरं, संजलणाणमेकदरं, तिण्हं वेदाणमेकदरं, दोण्हं जुगलाणमेकदरं, भय-दुगुं छाश्रो घेत्तण एवमेदाश्रो णव ९। एत्थ भय-दुगुं छाणमण्णदरेण विणा श्रद्ध ८। दोहिं मि विणा

हैं, इहसे लेकर उत्कृष्टरूपसे नी तकके चार उदीरणास्थान अविस्तसम्यग्दिष्ट गुणस्थानमें होते हैं, पाँचसे लेकर आठ तकके चार उदीरणास्थान विस्ताविस्त गुणस्थानमें होते हैं तथा तीनके सिवा एकसे लेकर उत्कृष्टरूपसे सात तकके उदीरणा-स्थान विस्त गुणस्थानोंमें होता है ॥२-३॥

१ ६८. यहाँ पर सर्वप्रथम पहली सूत्रगाथाका अर्थ कहते हैं। यथा—सातसे लेकर दस तकके ये चार उदीरणास्थान मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें होते हैं। यथा—मिथ्यात्व, अनन्तानु-बन्धियोमेसे कोई एक, अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कमेंसे कोई एक, संज्वलनचतुष्कमेंसे कोई एक, संज्वलनचतुष्कमेंसे कोई एक, संज्वलनचतुष्कमेंसे कोई एक, तीन वेदोमेंसे कोई एक, दा युगलोंमेंसे कोई एक युगल तथा भय और जुगुष्सा इनको लेकर दसप्रकृतिक १० उदीरणास्थान होता है। यहाँ पर भय और जुगुष्सामेंसे किसी एकके विना नी प्रकृतिक ६ उदीरणास्थान होता है। इन दोनोंके विना आठ प्रकृतिक ८ उदीरणास्थान होता है। तथा भय, जुगुष्सा और अनन्तानुबन्धिके विना सातप्रकृतिक ७ उदीरणास्थान होता है, इसलिए इनका मिथ्यादृष्टि जीव स्वामी है यह उक्त कथनका भावार्थ है। 'मिस्सए णुचुक्कस्सा' इस पदका ज्याख्यान करते समय 'सत्तादि' इस पदको प्रहण कर उसकी अनुवृत्ति करनी चाहिए! इसलिए सूत्रका अर्थके साथ इस प्रकार सम्बन्ध करना चाहिए—मिश्र अर्थान सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें सातसे लेकर नौ तक ये तीन उदीरणास्थान प्राप्त होते हैं। यथा —सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें सातसे लेकर नौ तक ये तीन उदीरणास्थान वरणचतुष्कमेसे कोई एक, संज्वलनचतुष्कमेंसे कोई एक, तीन वेदोंमेंसे कोई एक, दो युगलोंमेंसे कोई एक युगल तथा भय और जुगुस्सा इनको प्रहणकर इस प्रकार ये नौ ६ प्रकृतियाँ होती हैं। इनमें भय और जुगुस्सामेंसे किसी एकके विना आठ ८ प्रकृतियाँ होती हैं तथा दोनोंके ही विना

सत्त ७। एवमेदेनि द्वाणाणं सम्मामिच्छाइद्वी मामिश्रो होई। सासणसम्माइद्विम्म वि एदाणि तिरिण उदीरणद्वाणाणि होंति, सम्मामिच्छत्तेण विणा श्रणंताणुवंधीणमण्णदरेण सह तदुप्पत्तिदंसणादो। ण च एदिम्म सुत्तिम्म एसो श्रत्थो ण संगिहश्रो ति श्रासंकणिजं १ देसामासयभावेण सचिदत्तादो। 'छादी णव उक्कसा श्रविरदसम्मे दु श्रादिस्से' छ श्रादि कादृण जा उक्कस्सेण णव पयडीओ ति ताव एदाणि चत्तारि उदीरणद्वाणाणि श्रविरदसम्मे श्रसंजदसम्माइद्विम्म होंति ति श्रादिस्से णिहिस्से। तं कधं १ सम्मत्त-श्रपचक्खाण-पचक्खाण-संजलण-वेद-श्रणणदरज्ञगल-भय-दुगुंछा ति एवम्रकस्सेण णव पयडीओ असंजदसम्माइद्विम्म उदीरिज्ञमाणाओ होंति। एत्थ भय-दुगुंछाणं श्रण्णदरेण विणा श्रद्ध, दोहिं मि विणा सत्त, सम्मत्तेण विणा खीणोवसंतदंसणमोहणीयस्स जहरणेण छप्पयडीओ होंति। तदो एदेसिं द्वाणाणममंजदसम्माइद्वी सामिश्रो होदि। एवं पटमगाहाए श्रत्थपरूवणा समत्ता।

५९. संपिं विदियगाहाए ऋत्थो वृच्चदे—'पंचािद ऋदृणिहणा०' एवं वृत्ते पंच ऋािदं कादृण जावुकस्सेण ऋदृणिहणा ऋदृपजवसाणा ति एवमेदे चत्तािर उदी-रणद्राणािण विरदािवरदिम्म संजदासंजदगुणद्राणे होंति ति भणिदं होइ। तत्थ जहएऐण पंच पयडीऋो कदमाऋो ति भणिदे उत्रममसम्माइद्विस्स खइ्यसम्माइद्विस्स वा संजदामंजदस्स पच्चक्खाण-संजलण-वेदण्णदरज्ञगले ति एदाश्रो पंच उदीरण-

सात ७ प्रकृतियां होती हैं। इस प्रकार इन स्थानोका सम्यग्मिश्यादृष्टि स्वामी होता है। सासाद्रत्त सम्यदृष्टि गुण्स्थानमें भी ये तीन उदीरण्यास्थान होते हें, क्योंकि सम्यग्मिश्यात्व प्रकृतिके विना अनन्तानुबन्धोचतुष्कमेंसे किसी एक प्रकृतिके साथ इन स्थानोंकी उत्पत्ति देखी जाती है। इस सूत्रमें यह अर्थ संगृहीत नहीं है ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि देशामर्पक भावसे यह अर्थ सूचित होता है। 'छादी एउकस्सा अविरद्सम्मे दु आदिस्से' छहसे लेकर उत्कृष्ट रूपमे नौ प्रकृतियों तक ये चार उदीरण्यास्थान 'अविरद्सम्मे' अर्थात अविरत्सम्यग्दृष्टि गुण्स्थानमे होते है ऐसा निर्देश किया है। अब वे किस प्रकार होते है यह बतलाते हैं—सम्यक्त्व, अप्रत्याख्यानावरण्चतुष्कमेंसे कोई एक, प्रत्याख्यानावरण्चतुष्कमेंसे कोई एक, प्रत्याख्यानावरण्चतुष्कमेंसे कोई एक, प्रत्याख्यानावरण्चतुष्कमेंसे कोई एक, अन्यतर युगल तथा भय और जुगुष्सा इस प्रकार उत्कृष्ट रूपसे ये नौ प्रकृतियां असंयतसम्यग्दृष्टि गुण्स्थानमे उदीर्यमाण् होती हैं। यहां पर भय और जुगुष्सामेंसे किसी एकके विना आठ, दोनोंके बिना सात तथा उपशान्तदर्शनमोहनीय और चीण्दर्शनमोहनीय जीवके सम्यक्त्वके बिना जघन्यरूपसे छह प्रकृतियां उदीर्यमाण् होती हैं। इस प्रकार प्रथम गाथाकी अर्थप्रकृषण्या समाप्त हुई।

\$ ६६. श्रव दूसरी गाथाका श्रर्थ कहते हैं—'पंचादि श्रद्धिणहणा' ऐसा कहने पर पाँचसे लेकर उत्कृष्टरूपसे श्राठ पर्यन्त इस प्रकार ये चार उदीरणास्थान विरताविरत श्रर्थात् संयता-संयत गुण्स्थानमें होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उनमेंसे जघन्यरूपसे पाँच प्रकृतियाँ कौनसी हैं ऐसा कहनेपर उपशामसम्यग्दृष्टि या ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि संयतासंयतके प्रत्याख्यानावरण्च उक्तमेंसे कोई एक, संज्वलनचतुष्कमेंसे कोई एक, तीन वेदोंमेंसे कोई एक श्रीर दो युगलोंमें

पयडीत्रो होंति । एत्थ भय-दुगुंबाणमण्णदरे पवेसिदे छ होंति । दोसु वि पइहेसु सत्त भवंति । वेदगसम्माइडिम्मि सम्मत्ते पइहे श्रद्ध होंति । तदो एदेसिं चउएहमुदीरण-हाणाणं संजदासंजदो सामी होइ । 'एगादी तिगरहिदा' एदस्सत्थो—जहण्णदो एय-पयिडिमादिं कादृण जा उक्तस्सदो सत्त पयडीश्रो ति ताव एदाणि हाणाणि विरदेसु होंति। णविर तिगरहिदा कायच्या । कुदो ? तिएहमुदीरणहाणस्स श्रचंताभावेण पिडिसिद्ध-तादो । तदो एकिस्से दोएहं चदुएहं पंचण्हं छण्हं सत्तण्हं च उदीरणहाणाणं संजदा सामिणो होंति ति एसो सुत्तत्थसंगहो । तत्थाणियहिम्मि संजलणाणमेकदरं होदृणे-किस्से उदीरणहाणां लब्भइ । तस्सेव श्रण्णदरवेदेण सह दोिएण । श्रपुव्वकरण-पमत्ता-पमत्तसंजदेसु दोएहमएणदरजुगलेण सह चत्तारि, भएण सह पंच, दुगुंबाए सह छ । श्रक्सिणपदंसणमोहस्स पमत्तापमत्तसंजदस्स सम्मत्ते पिवहे सत्त होंति । संपिह एदासिं गाहाणं विहामणहमुचारणाणुगममेत्थ वत्तइस्मामो । तं जहा—

§ १००. सामित्ताणु० दुविहो णिद्देसो—श्रोघेण श्रादेसेण य । ओघेण दसएहमुदीर० कस्म ? श्रएणद० मिच्छाइट्टि०। एव श्रद्घ सत्त० उदीर० कस्स ? श्रणणद० सम्माइट्टिस्स मिच्छाइट्टि०। छ० पंच० चत्तारि० दोएणि० एकिस्से उदीर०

से कोई एक युगल इस प्रकार ये पाँच उदीरणा प्रकृतियां होती हैं। तथा इनमें भय और जगुप्सा में से किसी एक प्रकृतिका प्रवेश करने पर छह उदीरणा प्रकृतियां होती है श्रोर दोनों ही प्रकृतियोका प्रवेश करनेपर सात उदीरणा प्रकृतियां होती हैं। तथा वेदकसम्यग्दृष्टि जीवके सम्बन्त्व प्रकृतिका प्रवेश करने पर श्राठ उदीरणाप्रकृतियां होती है। इसलिए इन चार बहीरगास्थानोका संयतासंयत जीव स्वामी है। श्रव 'एगादी तिगरहिदा' इस पदका श्रर्थ कहते है — जघन्यरूपसे एक प्रकृतिसे लेकर उत्कृष्टरूपसे सात प्रकृतियो तक ये स्थान विरत जीवोके होते हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीनप्रकृतिक स्थानमें रहित करना चाहिए. क्योंकि तीन प्रकृतिक उदीरणास्थानका श्रात्यन्त श्राभाव होनेसे उसका निषेध किया है। इसलिए एकप्रकृतिक. दोप्रकृतिक, चारप्रकृतिक, पाचप्रकृतिक, छहप्रकृतिक श्रीर सातप्रकृतिक उदीरणास्थानाके संयत जीव स्वामी होते है इस प्रकार यह सूत्रार्थका संप्रह है। उनमेसे श्रनिवृत्ति गुणस्थानमे चार संज्वलनोंमेसे काई एककी उदीरणा होकर एकप्रकृतिक उदीरणास्थान प्राप्त होता है। उसी जीवके अन्यतर वेदके साथ दोप्रकृतिक उदीरणास्थान प्राप्त होता है। अपूर्वकरण, प्रमत्त श्रीर श्रप्रमत्तसंयत जीवोमे दो युगलोमे से किसी एकके साथ चार प्रकृतिक उदीरणास्थान प्राप्त होता है। भयके साथ पांचप्रकृतिक श्रीर जुगुप्साके साथ छहप्रकृतिक उदीरणास्थान प्राप्त होता है। तथा जिसने दर्शनमोहनीयका चय नहीं किया है ऐसे प्रमत्तसंयत श्रौर अप्रमत्तसंयत जीवके सम्यक्त प्रकृतिके प्रविष्ट होने पर सातप्रकृतिक उदीरणास्थान होता है। श्रव इन गाथाश्रोका विशेष व्याख्यान करनेके लिए यहां पर उचारणाका अनुगम करके बतलाते हैं। यथा --

[§] १००. स्वामित्वानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रौर श्रादेश । श्रोघसे दशप्रकृतिक उदीरणास्थान किसके होता है ^१ श्रन्यतर मिथ्यादृष्टि जीवके होता है । नौ, श्राठ श्रौर सातप्रकृतिक उदीरणास्थान किसके होता है १ श्रन्यतर सम्यग्दृष्टि श्रौर मिथ्यादृष्टिके होता

कस्स० १ श्राएणद० सम्माइ हिस्स । एवं मणुसतिए । श्रादेसेण ऐरइय० १०, ९, ८, ७, ६ श्रोघं । एवं सन्वरोरइय० देवा भवणादि जाव णवगेवजा त्ति । तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खितिए १०, ९, ८, ७, ६, ४ श्रोघं । पंचिं०तिरिक्खश्रपज्ञ०-मणुमश्रपज्ञ० १०, ९, ८ उदीर० कस्स १ श्राएणदरस्म । श्रणुद्दिसादि सन्वट्टा ति ९, ८, ७, ६ उदीर० कस्स १ अण्णद० । एवं जाव० ।

- 🕸 एदासु दोसु गाहासु विहासिदासु सामित्तं समत्तं भवदि ।
- ६ १०१. सुगमं।
- **%** एयजीवेण कालो ।
- १०२. सुगममेदमहियारमंभालणसुत्तं ।
- ॐ एिकस्से दोग्हं चदुग्हं पंचग्हं छुग्हं सत्तग्हं ऋदुग्हं णवग्हं दस्ग्हं प्यडीणं प्वेसगो केवचिरं कालादो होदि ?
- ६ १०३. सुगममेदेसिं द्वाणाणमुदीरगस्स जहएणुकस्सकालणिदेसावेक्खं पुच्छावकं ।
 - 🕸 जहण्णेण एयसमञ्रो ।

- # इन दो गाथात्रोंका व्याख्यान करने पर स्वाभित्व समाप्त होता है।
- § १०१. यह सूत्र सुगम है।
- * एक जीवकी अपेदा काल।
- १०२. ऋधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है।
- * एक, दो, चार, पाँच, छह, सात, आठ, नी और दस प्रकृतियोंके प्रवे-शकका कितना काल है ?
- े १०२. इन स्थानोंके उदीरक जीवके जघन्य श्रौर उत्कृष्ट कालके निर्देशकी श्रपेत्ता करनेवाला यह पुच्छावाक्य सुगम है।
 - * जघन्य काल एक समय है।

है। छह, पांच, चार, दो श्रोर एक प्रकृतिक उदीरणास्थान किसके होता है ? श्रन्यतर सम्यग्दृष्टिके होता है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। श्रादेशसे नारिकयोंमे १०, ९, ८, ७ श्रोर ६ प्रकृतिक स्थानोंका मंग श्राघके समान है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य देव, श्रोर भवन वासियोंसे लेकर नो प्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। सामान्य तिर्यञ्च श्रीर पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें १०, ६, ८, ७, ६ श्रोर ६ प्रकृतिक स्थानोंका मंग श्रोपके समान है। पश्चेन्द्रिय निर्यञ्च श्रपर्याप्त श्रोर मनुष्य श्रपर्याप्त कोमें १०, ६ श्रोर ८ प्रकृतिक स्थान किसके होता है ? श्रन्यतरके होता है। श्रनुदिशसं लेकर सवार्थसिद्धि तकके देवोंमे ९, ८, ७ श्रीर ६ प्रकृतिक उदीरणास्थान किसके होता है ? श्रन्यतरके होता है। इस प्रकार श्रनाहारकमार्गणा तक जानना चाहिए।

- § १०४. एकिस्से पवेसगस्स ताब उच्चदे । तं जहा—एको श्रण्णदरवेद-संजलणाणग्रदएण उनसमसेिंदिमारूढो वेदपढमिंद्रदीए श्रावित्यपविद्वाए एयसमयमेकिस्से पवेसगो
 जादो । बिदियसमए कालं कादृण देवेसुववण्णो । लढो एकिस्से पवेसगस्स जहण्णकालो एयसमयमेत्तो । श्रधवा श्रोदरमाणो उनसंतकसायो सुहुमसांपरायो होदि ति एगसमयमेकिस्से पवेसगो जादो । विदियसमए कालं कादृण देवेसुप्पण्णो, लढो
 एगसमश्रो ।
- § १०४. संपिह दोएहं पवेसग० उच्चदे । तं कथं १ उवसमसेढीए श्रिणियिट्ट-करणपटमसमए दोण्हं पवेसगो होऊण विदियसमए कालं किरिय देवेसुप्परणस्स लद्धो एयसमयमेत्तो दोण्हं पवेस० जहरणाकालो । अथवा ओदरमाणगो अणियिट्टिवेदमीक-ड्रिऊणेगसमयं दोएहं पवेसगो जादो, विदियसमए कालं कादृण देवेसुववण्णो, तस्स लद्धो एगसमुत्रो ।
- § १०६. संपिंद्ध चउण्हं पवेसग० उच्चदे—श्रोदरमाणगो उवसामगो श्रपुच्यकरण-भावेणोगममयं चउएहं पवेमगो होद्ण से काले कालगदो देवो जादो, सत्थाणे चेव वा भय-दुगुंछाणमुदीरगो जादो, लद्घो चउएहं पवेसगस्स जहरणकालो एयसमयमेत्तो। श्रथवा खीणोवमंतदंसणमोहणीयस्य संजदस्स पढमसमए भय-दुगुंछाहि विणा चउण्हं पवेसगत्तं दिद्व। श्रणंतग्समए च भय-दुगुंछासु पविद्वासु लद्धो विविक्खियपदस्स एय-
- § १०४. सर्व प्रथम एक प्रकृतिके प्रवेशकका जघन्य काल कहते हैं। यथा—कोई एक जीव अन्यतर वेद और अन्यतर संज्वलनके उदयसे उपशमश्रेणि पर चढ़ा। अनन्तर वेदकी प्रथम स्थितिके उदयाविलमें प्रविष्ट होनेपर एक समय तक एक प्रकृतिका प्रवेशक हो गया और दूसरे समयमे मरकर देवोमे उत्पन्न हुआ। उसके एक प्रकृतिके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ। अथवा उपशान्तकपाय जीव उतरते हुए सूइमसाम्यराय होकर एक समय तक एक प्रकृतिका प्रवेशक हुआ और दूसरे समयमे मर कर देवोमें उत्पन्न हुआ। उसके एक प्रकृतिके प्रवेशकका एक समय काल प्राप्त हो गया।
- § १०५. श्रब दो प्रकृतियोके प्रवेशकका काल कहते हैं। वह कैसे ^१ उपशमश्रेणिमें श्रिनवृत्तिकरणके प्रथम समयमे दो प्रकृतियोका प्रवेशक होकर श्रीर दूसरे समयमे मर कर देवोमे
 उत्पन्न हुए जीवके दो प्रकृतियोके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ। श्रथवा उपशमश्रेणिसे उत्तरनेवाला जीव श्रिनवृत्तिकरणमे वेदका श्रपकर्पण कर एक समय तक दो
 प्रकृतियोका प्रवेशक हुआ श्रार दृसरे समयमे मर कर देवोमे उत्पन्न हुआ। उसके दो प्रकृतियोके
 प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ।
- १ १०६ श्रव चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल कहते हैं—उपशमश्रेणिसे उतरने-वाला उपशामक जीव श्रप्र्वंकरणभावसे एक समय तक चार प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर तद-नन्तर समयमे मर कर देव हो गया। श्रथवा स्वस्थानमे ही भय श्रौर जुगुप्साका उदीरक हो गया। उसके चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समयमात्र प्राप्त हुआ। श्रथवा जिसने दर्शनमोहनीयका स्वय या उपशम किया है ऐसे संयत जीवके प्रथम समयमे भय श्रौर जुगुप्साके विना चार प्रकृतियोंका प्रवेशकपना दिखलाई दिया श्रौर तदनन्तर समयमे भय श्रौर

समयमेत्रो जहण्णकालो । एवं सेसाणं पि पदाणं जहण्णकालो ऋणुमग्गियन्वो, तत्थ सन्वत्थ पयडिपरावत्तीए गुणपरावत्तीए मरणेण च जहासंभवमेगसमयोवलंभस्स पडि-सेहाणुवलंभादो । संपहि एदेसिम्रुकस्सकालपहृत्रचरमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

🛞 उकस्सेणंतोमुहुत्तं।

- ्र १०७. तं कथं ? एकिस्से पवेसगस्स तात्र उचदे—इत्थि-णवुंसयवेदोदएण खनगसेढिमारूढस्स वेदपदमिट्टदीए आनित्यपिनिट्टाए एकिस्से पवेसगो होदि । तदो तान एकिस्से पवेसगो जान सुहुमसांपराइयस्स समयाहियानित्यचिरमसमयो ति । एसो च कालो अंतोसुहुत्तपमाणो ।
- १०८. संपिंह दोण्हं पर्वे० बुच्चदे—पुरिसर्वदोदएण सेंदिमारूढो ऋणियद्विकरण-पढमसमयप्पहुं दोण्हं पर्वेसगो होंतो गच्छइ जात्र पुरिसर्वेदपढमद्विदी ऋणावित्यपितृद्वा त्रिः, तत्तो परमेकिस्से पर्वेसगत्तदंसणादो । एसो च कालो [ऋंतोम्रहुत्तपमाणो] ।
- १०९. संपित् चदुएहं पवेसग० वृच्चदे—अपुव्यकरणपिवद्विम्म खीणोवसंत
 दंसणमोहणीयपमत्तापमत्तसंजदेसु च भय-दुगुंछाणमुद्रएण विणा अवद्वाणकालो सन्वुक्रस्सो चउण्हं पवेसगस्स उक्कस्सकालो होइ। सो वृण अंतोम्रहुत्तमेत्तो। एवं पंचएहं छण्हं

अस् उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है ।

- \$ १०७. वह कैसे ? सर्व प्रथम एक प्रकृतिके प्रवेशकका कहते हैं —स्त्रीवेद श्रीर नपुंसक-वेदके उदयसे त्तपकश्रेणि पर चढ़े हुए जीवके वेदकी प्रथम स्थितिके उदयाविलके भीतर प्रविष्ट होने पर वह एक प्रकृतिका प्रवेशक होता है। उसके बाद वह सूच्मसाम्परायके एक समय श्रापिक श्राविलके श्रान्तिम समयके शेष रहने तक एक प्रकृतिका प्रवेशक रहता है श्रीर यह काल श्रान्त्रभूहूर्तप्रमाण है।
- § १०८. श्रब दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका कहते हैं—पुरुषवेदके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा हुश्चा जीव श्रानिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे लेकर दो प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिके उदयाविलमें प्रविष्ट होनेके पूर्व तक दो प्रकृतियोंका प्रवेशक रहा, क्योंकि उसके बाद एक प्रकृतिका प्रवेशक देखा जाता है श्रीर यह काल श्रन्तर्मृहूर्तप्रमाण है।
- § १ ६. अब चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल कहते हैं—जो जीव श्रपृर्वकरणमें प्रविष्ट हुआ है ऐसे जीवके तथा जिन्होंने दर्शनमोहनीयका चय या उपशम किया है ऐसे प्रमत्तसंयत और श्रप्रमत्तसंयत जीवोंके भय और जुगुन्साके विना जो सर्वोत्कृष्ट श्रवस्थानकाल है वह चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल है जो कि श्रन्तर्मृहूर्तप्रमाण है। इसीप्रकार पाँच, छह,

जुगुष्साके प्रविष्ट हो जाने पर विवित्तित पदका जघन्य काल एक समयमात्र प्राप्त हो गया। इसी प्रकार शेष पदोंका भी जघन्य काल विचारकर जान लेना चाहिए, क्योंकि उन सब पदोंमें प्रकृतिके परावर्तन, गुणस्थानके परावर्तन श्रोर मरणके द्वारा यथासम्भव एक समय कालके उपलब्ध होनेमे प्रतिषेध नहीं है। श्रव इनके उत्कृष्ट कालका कथन करनेके लिए श्रागेका सूत्र श्राया है—

सत्तण्हं श्रद्धण्हं च पवेसगस्स उक्कस्सकालाणुगमो कायव्वो, भय-दुगुंछाणुदयकालं मोत्त्यण्यास्स एदेसिमुक्कस्सकालस्साणुवलंभादो । एवं चेव णवण्हं दसण्हं पि उक्कस्स-कालो श्रयणुगंतव्वो । एवरि भय-दुगुंछाणमण्यदरस्साणुदयकालो णवण्हं कायव्वो । दोण्हं पि उदयकालो दसण्हमणुगंतव्वो नि । एवमोघेण कालाणुगमो समत्तो । श्रादेसेण मणुसतिए श्रोधभंगो । सेससव्वगईसु श्रप्पप्पणो पदाणं जह० एयसमन्त्रो, उक्क० श्रंतोम्र० । एवं जाव ० ।

- 🛞 एगजीवेण स्रंतरं।
- § ११०. एतो एगजीवविसयमंतरं वत्तइस्सामी ति ऋहियारपरामरसवक्तमेदं।
- 🕸 एकिस्से दोग्हं चउण्हं पयड़ीणं पवेसगंतरं केवचिरं कालादो होदि ।
- § १११. सुगमं
- 🛞 जहरणेण श्रंतोमृहुत्तं।
- § ११२. तं जहा—एकिस्से ताव उच्चदे—सुहुमसांपगइयो एकिस्से पवेमगो लोहसंजलणपढमद्विदीए श्रावित्यपविद्वाए श्रपवेसगो होदृणंतिरदो तदो उवसंतद्धं बोलाविय परिवदमाणश्रो सुहुमसांपराइयपढमसमए एकिस्से पवेसगो जादो। लद्ध-मेकिस्से पवेसगस्स जहएणंतरमंतोस्रहुत्तमेत्तं। एवं दोण्हं पवेसगस्स वि वत्तव्वं।

सात श्रीर श्राठ प्रकृतियों के प्रवेशक के उत्कृष्ट कालका अनुगम करना चाहिए, क्यों कि भय श्रीर जुगुष्साके उदयकालको छोड़कर अन्यके इनका उत्कृष्ट काल नहीं उपलब्ध होता। तथा इसी-प्रकार नी श्रीर दस प्रकृतियों के प्रवेशकका उत्कृष्ट काल जान जेना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि भय श्रीर जुगुष्सामें अन्यतरका जो अनुद्यकाल है वह नी प्रकृतियों के प्रवेशकका उत्कृष्ट काल करना चाहिए श्रीर दोनो प्रकृतियों का जा उदय काल है वह दस प्रकृतियों के प्रवेशकका जानना चाहिए। इसप्रकार श्रोधसे कालानुगम समाप्त हुआ। श्रादेशसे मनुष्यित्रकमें श्रोधके सामान भंग है। शेष सब मार्गणाश्रोमे श्रपने-श्रपने पदीका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मूहर्त है। इसीप्रकार श्रानाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

*** एक जीवकी अपेक्षा अन्तर ।**

९ ११०. त्रागे एक जीव विषयक श्रन्तरका बतलाते हैं। इसप्रकार श्रधिकारका परामर्श करनेवाला यह वचन हैं।

* एक, दो और चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल कितना है ?

९ १११. यह सूत्र सुगम है।

अज्ञानिय अन्तरकाल अन्तर्महूर्त है।

११२. यथा—सर्वप्रथम एक प्रकृतिका अन्तर कहते हैं—एक प्रकृतिका प्रवेशक एक सून्त्मसाम्परायिक जीव लोभसंज्वलनकी प्रथम स्थितिके उदयाविलमें प्रविष्ट होने पर उसका अपवेशक होकर अन्तर किया। उस वाद उपशान्तकषाय गुणस्थानके कालको विता कर गिरते समय वह पुनः सून्त्मसाम्परायके प्रथम समयमे एक प्रकृतिका प्रवेशक हो गया। इसप्रकार एक प्रकृतिके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो गया। इसीप्रकार दो प्रकृतियोंके

णविर एकिस्से प्रवेसगकालो अपवेसगकालो च तदंतरं होंद्ण पुणो श्रोदरमाणेण जिम्म वेदो ओकिहिदो तिम्म अंतरसमत्ती होदि । एवं चउएहं प्रवेसगस्स वि । णविर दोएहं प्रवेसगकालो एकिस्से प्रवेसगकालो अपवेसगकालो च तदंतरं होद्ण पुणो श्रोदरमाणापुव्वकरणपटमसमए भय-दुगुं आश्रो अणुदीरेमाणस्स प्रयदंतरपिरसमत्ती होदि चि वत्तव्वं । अथवा खीणोवसंतदंसणमोहपमत्तापमत्तापुव्यकरणाणमण्णदरगुराहाणे भय-दुगुं आहि विणा चत्तारि उदीरेमाणस्स भय-दुगुं आण्यमण्णदरप्रवेसेणंतरिदस्स पुणो तदुदयवोच्छेदेण लद्धमंतरं कायव्वं ।

🛞 उक्कस्सेण उवब्हर्याग्गलपरियदं।

- ९ १२३. क्ट्रो १ ऋद्भपोग्गलपिरयद्वादिममए पढममम्मत्तं घेत्तृण सञ्जलहुमुवसमसेढिमारुहिय हेट्ठा श्रोदरमाणो श्रप्पप्पणो द्वाणे श्रादिं कादृणंतिरय देस्रणद्वपोग्गलपरियद्वमेत्तकालं परिभिमय थोवावसेसे संमारे पुणो वि सम्मन्तमुप्पाइय खवगसेढिमारोहणेण पडिलद्धतब्भाविम्म तदुवलद्वीदो ।
 - ॐ पंचगहं छण्हं सत्तण्हं पयडोणं पवेसगंतरं केवचिरं कालादो होइ ?११४. सुगमं ।

प्रवेशकका भी जघन्य श्रन्तर कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि एक प्रकृतिके प्रवेशकका काल और श्रप्रवेशकका काल उसका श्रन्तर होकर पुनः उतरते हुए जहाँ वेदका श्रपकर्षण करता है वहाँ जाकर उसके श्रन्तरकी समाप्ति होती है। इसीप्रकार चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका भी जघन्य श्रन्तर कहना चाहिए। किन्तु इतनी विश्वपता है कि दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल एक प्रकृतिके प्रवेशकका काल श्रोर श्रप्रवेशकका काल उसका श्रन्तर होकर पुन उतरते हुए श्रपूर्वकरणके प्रथम समयमें भय श्रोर जुगुप्साकी उदीरणा नहीं करनेवाले जीवके प्रकृत पढ़के श्रन्तरकी परिसमाप्ति होती है ऐसा यहाँ कहना चाहिए। श्रथवा जिसने दर्शनमाहनीयका त्त्रय या उपशम किया है ऐसे जीवके प्रमत्तसंयत, श्रप्रमत्तसंयत श्रोर श्रपूर्वकरण गुणस्थानोमेसे किसी एक गुणस्थानमे भय श्रोर जुगुप्साके विना चार प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके भय भौर जुगुप्सामेसे किसी एक प्रकृतिके प्रवेश द्वारा श्रन्तर कराकर पुनः उन दोनो प्रकृतियोंकी उद्यन्वसृत्विहत्तिके द्वारा श्रन्तरको समाप्तकर उसका श्रन्तर प्राप्त करना चाहिए।

उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ ११३, क्योंकि ऋर्घपुद्रलपरिवर्तनकालके प्रथम समयमें प्रथम सम्यक्त्वको प्रहण् कर और ऋतिशीघ उपशमश्रेणिपर आरोहणकर नीचे उत्तरते हुण् श्रपने-श्रपने स्थानमे उक्त पदोका प्रारम्भ कर तथा उसके बाद उनका अन्तरकर कुछ कम ऋर्घपुद्रलपरिवर्तन कालतक परिश्रमण् कर संसारमें रहनेका कुछ काल शेष रहने पर फिर भी सम्यक्त्वको उत्पन्न कर चपकश्रेणि पर आरोहण् करनेसे उस उस पदके प्राप्त होनेपर उक्त पदोका अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है।

पाँच, छह त्रीर सात प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल कितना है ? § ११४. यह सूत्र सुगम है।

* जहवर्णेण एयसमञ्चो ।

§ ११४. पंचएहं पवेसगस्स ताव बुचदे । तं जहा—खइयसम्माइट्ठी उत्रसम-सम्माइट्ठी वा संजदो भएण सह पंच उदीरेमाणो ट्विदो, तस्स भयकालो एगसमञ्रो अत्थि ति दुगुंछाए पवेसगो जादो । तत्थ छएहमुदीरणट्ठाणेणेकसमयमंतिरय विदिय-समए भयवोच्छेदेण पुणो वि पंचएहं पवेसगो जादो । लद्धमंतरं जहण्णदो एयसमयमेत्तं । अधवा एमो चेव पंचमे पवेसगो संजदो भयवोच्छेदेणेगसमयं चउण्हं पवेसगो होदूर्णंतिरय पुणो विदियसमए दुगुंछापवेसेण पंचएहं पवेसगो जादो । लद्धमेगसमयमेत्तं जहण्णंतरं ।

§ ११६. संपिं छण्हं पवे० वुच्चदे—छण्हमुदीरगो होद्ण द्विदवेदगसम्माइद्वी संजदस्स भयवोच्छदेणेगसमयमंतिरदस्स पुणो वि से काले दुगुंछोदएण परिणदस्स लद्धमंतरं होइ । अधवा तस्सेव छप्पवेसगस्स भयकालो एगसमयो अत्थि त्ति दुगुंछा-गमेणंतिरदस्स से काले भयवोच्छदेण लद्धमंतरं कायव्वं । उवसम-खइयसम्माइद्वि-संजदासंजदस्स वि एवं चेव दोहि पयारेहि जहण्णंतरमेदं वत्तव्वं ।

§ ११७. संपहि सत्तण्हं पवेसग० उच्चदे—वेदगसम्माइद्विसंजदासंजदस्स ताव

* जघन्य अन्तर एक समय है।

- ं १११ सर्बप्रथम पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल कहते हैं। यथा—चायिकसम्यग्दृष्टि या उपशमसम्यग्दृष्टि जो संयत जीव भयके साथ पाँच प्रकृतियोंकी उदीरणा करता
 हुआ स्थित है उसके भयकी उदीरणाका एक समय काल शेष रहा कि वह जुगुप्साका प्रवेशक
 हो गया। वहाँ छह प्रकृतिक उदीरणास्थानके द्वारा एक समय तक उसका अन्तर करके दूसरे
 समयमें भयकी उदयव्युच्छित्तिके द्वारा फिरसे पाँच प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार
 पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समयमात्र प्राप्त हो गया। अथवा यही पाँच
 प्रकृतियोंका प्रवेशक संयत जीव भयकी उदयव्युच्छित्तिद्वारा एक समय तक चार प्रकृतियोंका
 प्रवेशक होकर उस द्वारा उसका अन्तर करके पुनः दूसरे समयमें जुगुप्साके प्रवेशद्वारा पाँच
 प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय
 प्राप्त हो गया।
- ११६. श्रव छह प्रकृतियोंके प्रवेशकका श्रन्तरकाल कहते हैं—छह प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जिस वेदकसम्यग्टिष्ट संयत जीवने भयकी व्युच्छित्त कर एक समयके लिए उसका श्रन्तर किया, उसके फिरसे तदनन्तर समयमें जुगुप्साक उदयसे परिणत होनेपर छह प्रकृतियोंके प्रवेशकका एक समय जघन्य श्रन्तर प्राप्त होता है। श्रथवा छह प्रकृतियोंके प्रवेशक उसी जीवके भयका एक समय काल शेष है कि उस जीवने जुगुप्साके प्रवेशद्वारा उसका श्रन्तर किया तथा तदनन्तर समयमें भयकी उदयव्युच्छित्त द्वारा वह पुनः छह प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार भी इसका एक समय जघन्य श्रन्तर प्राप्त करना चाहिए। उपशमसम्यग्दिष्ट या ज्ञायिकसम्यग्दिष्ट संयतासंयत जीवके भी इसीप्रकार दो प्रकारसे इस पदका यह जघन्य श्रन्तर कहना चाहिए।
 - ६ ११७. श्रब सात प्रकृतियोंके प्रवेशकका श्रन्तरकाल कहते हैं--वेदकसम्यग्दृष्टि संयता-

छएहं भिएदिवहाणेण पयद्जहएणंतराणुगमो कायव्वो । श्रधवा खीणोवसंतदंसण-मोहणीयस्स श्रसंजदसम्माइहिस्स सत्तण्हं जहएहंतरं भय-दुगुंछाश्रो श्रस्सिऊण पुव्वुत्तेणेव विहाणेणाणुगंतव्वं ।

🛞 उक्तरसेण उवड्ढपोग्गलपरियदं।

- ्र ११८. कुदो ? श्रद्धपोग्गलपरियद्वादिसमए पढमसम्मत्तग्गहरणपुच्चं तिण्हमेदेसिं ठाणागां जहासंभवमप्पणो विसए उक्तस्संतराविरोहेणादिं काद्गांतरिय मिच्छत्तं गंतूण किंचृणमद्भपोग्गलपरियद्वं परियद्विदृण थोव।वसेसे संसारे पुणो वि सम्मत्तपिंडलंभेण पिंडवण्णतब्भाविम्मि तदुवलंभादो ।
 - 🛞 श्रहरुहं णवरुहं पयडीणं पवेसगंतरं केवचिरं कालादो होदि।
 - § ११९. सुगमं
 - 🕸 जहण्णेण एयसमञ्जो।
- ६ १२०. तं कथं ? असंजदो वेदगसम्माइद्वी अद्रुण्हं पवेसगो भयकालो एगममयो अत्थि त्ति दुगुंझोदएण परिणदो तत्थेगसमयमंतरिय पुणो वि तदणंतरसमए भयवोच्छेदेणद्रुण्हं पवेसगो जादो । लद्धमंतरं । अधवा एसो चेव भयवोच्छेदेणेगसमयं सत्तपवेमगो होदृणंतरिय से काले दुगुंझोदएण लद्धमंतरं करेदि त्ति वन्च्वं । एवं

संयत जीवके जिमप्रकार छह प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य श्रन्तर कहा है उसीप्रकार प्रकृत पदके जघन्य श्रन्तरका श्रनुगम करना चाहिए। श्रथवा जिसने दर्शनमोहनीय कर्मका चय या उपशम किया है ऐसे श्रसंयतसम्यग्दृष्टि जीवके सात प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य श्रन्तर भय श्रोर जुगुप्साका श्राश्रयकर पूर्वोक्त विधिसे ही जानना चाहिए।

उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

^{\$} ११८. क्योंकि श्रधंपुद्रलपरिवर्तनश्रमाण कालके प्रथम समयमें प्रथम सम्यक्त्वके प्रह्मा-पूर्वक इन तीन स्थानांका यथासम्भव श्रपने विषयमें उत्कृष्ट श्रन्तरके श्रविरोधरूपसे प्रारम्भ करके श्रीर श्रन्तर करके श्रनन्तर मिध्यात्वमे जाकर कुछ कम श्रधंपुद्रलपरिवर्तन कालतक परिवर्तन करके संसारके स्ताक शेष रहने पर पुनः सम्यक्त्वकी प्राप्तिके साथ उन स्थानोंके प्राप्त होने पर उनका श्रन्तर उपलब्ध होता है।

^{*} त्राठ श्रीर नो प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तर कितना है।

६ ११६. यह सूत्र सुगम है।

^{*} जघन्य अन्तर एक समय है।

^{\$} १२०. वह कैसे ? कोई एक आठ प्रकृतियोंका प्रवेशक असंयत वेदकसम्यग्दृष्टि जीव भयकी उदीरणामें एक समय काल बचा है कि वह जुगुप्साके उदयसे परिण्त होगया और वहाँ एक समय तक उसका अन्तर करके फिरसे तदन्तर समयमें भयकी उदयन्युच्छिति करके आठ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इसप्रकार आठ प्रकृतियोंके प्रवेशकका एक समय अन्तर प्राप्त हुआ। अथवा यह जीव भयकी उदयन्युच्छिति करके एक समय तक सात प्रकृतियोंका

चेव सम्मामि०-सासणसम्माइद्वीसु वि श्रद्वणहं जहण्णांतरं जाणिय जोजेयव्वं । संपहि णवएहं मिच्छाइद्विम्हि एवं चेव भय-दुगुंछावलंबर्णण जहण्णांतरमेदमणुगंतव्वं ।

🛞 उक्तस्सेण पुच्चकोडी देसूणा।

१२१. तं जहा—एको मणुस्सो वेदगसम्माइद्वी गन्भादिश्रद्ववस्साणग्रुविर श्रद्वण्हमादिं काद्ण एवपवेसगो होदृणंतिरदो। तदो विसेहिं पूरिय संजमं घेत्रण पुन्वकोडिं सन्वमंतिरय कमेण कालं कादृण देवेसुववण्णो तस्स श्रंतोग्रुद्धत्ते बोलीणे भय-दृगुंछाणमण्णदरग्रुदीरमाणस्स लद्धमंतरं होइ। एवमंतोग्रुद्धत्तन्महियअद्ववस्सेहिं ऊणिया पुन्वकोडी श्रद्वण्दं पवे० उक्कस्मंतरं होइ। संपिह एावण्टं पवेसगस्स भण्णमाणे श्रद्वावीमसंतकम्मियमिच्छाइद्विस्स पुन्वकोडाउश्रसम्मुच्छिमतिरिक्खेसुप्पज्ञिय छिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तयदभावेण विस्संतस्स तत्थेव एावण्हमादिं कादृणंतिरदस्स सन्वविसुद्धीए पिडवण्णसम्मत्तमहिदमंजमामंजमस्स देस्एणुन्वकोडिमंतिरिय भवावमाणे देवेसुप्पण्णस्स अंतोग्रुद्धते गदे लद्धमंतरं होइ ति वत्तन्त्वं।

अ दसग्हं पयडीणं पवेगस्स त्रंतरं केविचरं कालादो होदि ?

प्रवेशक होकर श्रीर उसका श्रन्तर करके श्रनन्तर समयमे जुगुष्साके उदयसे श्रन्तरको प्राप्त करता है ऐमा कहना चाहिए। इसीप्रकार सम्यग्मिध्यादृष्टि श्रीर सासादनसम्यग्दृष्टि जीवामें भी श्राठ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य श्रन्तर जानकर उसकी योजना करनी चाहिए। तथा नौ प्रकृतियोंके प्रवेशकका मिध्यादृष्टि गुगास्थानमे इसीप्रकार भय श्रोर जुगुष्साके श्रवलम्बनसे यह जघन्य श्रन्तर जान लेना चाहिए।

अ उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है।

६ १२१. यथा—एक मनुष्य वेदकसम्यग्दृष्टि जीवने गर्भसे लेकर आठ वर्षके बाद आठ प्रकृतियोंकी उदीरणाका प्रारम्भ करके आनन्तर नो प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर उसका अन्तर किया। अनन्तर विशुद्धिको पृर्ण करके और मंयमको प्रहृण कर पूरे पूर्वकोटि कालका अन्तर देकर क्रमसे वह मरा और देव हो गया। फिर उसके अन्तर्मृहृत्तं काल जाने पर भय और जुगुष्सा इनमेंसे किसी एककी उदीरणा करने पर आठ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तर प्राप्त हो जाता है। इसप्रकार अन्तर्मृहृत् अधिक आठ वर्ष कम एक पूर्वकोटिप्रमाण आठ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर होता है। अब नो प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर कहने पर जो अद्वाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला मिध्यादृष्टि जीव पूर्वकोटिकी आयुवाले सम्मूर्च्छम तिर्धक्रोमें उत्पन्न हुआ और जिसने छह पर्याप्तयोसे पर्याप्त होकर उसक्ष्यसे विश्वाम किया। पुनः वहीं पर नो प्रकृतियोंके प्रवेशका प्रारम्भ करके अन्तर किया। फिर सर्वविशुद्धिके साथ मम्यक्त्वसिंहत संयमासंयमको प्राप्त कर कुछ कम एक पूर्वकोटिकालका अन्तर देकर भवके अन्तमें देवोमें उत्पन्न हुआ। उसके वहाँ पर अन्तर्मृहर्त काल जाने पर उक्त पदका अन्तर प्राप्त हो जाता है ऐसा यहाँ पर कहना चाहिए।

* दस प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तग्काल कितना है ?

६ १२२. सुगममेदं पुच्छासुत्तं । जहण्णेण्यांतोसुहृत्तं ।

१२३. कुदो ? दमएहमुदीरगस्म भयवोच्छेदेण सव्वजहण्णमंतोम्रहुत्तमण ण्यदपदेगांतिरदस्स तद्वलंभादो ।

🖇 उक्कस्सेण बेळावहिसागरावमाणि सादिरेयाणि।

- § १२४. तं जहा एको मिच्छाइट्टी दमण्हं पवेमगो ऋणप्पिदपदेणंतोम्रहुत्त-मंतरिय तदो सम्मत्तं घेत्तृण वेछावट्टिमागरोवमाणि परिभमिय पुणो मिच्छत्तं गंतूणं-तोम्रहुत्तेण दसएहं पवेसगो जादो । तस्स लद्धमंतरं होइ । एवमोघेण सन्वेसिम्रदीरणा-ट्टाणाणमंतरपरूवणा कया ।
- ह १२४. संपिह आदेसपरूवणहमुचारणाणुगममेत्थ वत्तइस्यामो । तं जहा— अंतराणुगमेण दुविहो णिहेसो—श्रोघेण आदेसेण य । श्रोघेण दसएहमुदीर० जह० अंतोमु०, उक्त० वेद्याविहसागरोवमाणि देखणाणि । एव० अद्व० जह० एयसमश्रो, उक्त० पुन्वकोडी देखणा। सन्त-द्य-पंच० जह० एयसमश्रो, उक्त० उवहृपोग्गलपियट्टं। चदुएहं दोण्हमेकिस्से उदीर० जह० अंतोमु०, उक्त० उवहृपोग्गलपियट्टं।

६१२६. अदिसेण ऐरइय० दम० लएइं जह० त्रांतीमुहूनं, सत्त०ं जह०

९ १२२. यह पृच्छासृत्र सुगम है।

- * जघन्य अन्तर अन्तर्गृहर्त है।
- ५ १२३. क्योंकि जो दम प्रकृतियोका उदीरक जीव भय की व्युच्छित्तिके साथ सबसे जवन्य अन्तर्भुहर्त कालतक अनिर्पत पदके द्वारा उसका अन्तर करता है उसके उक्त पदका उक्त अन्तरकाल उपलब्ध होता है।
 - अ उत्कृष्ट अन्तर माधिक दो ह्रवामठ सागरप्रमाण है।
- § १२४. यथा—किसी एक दस प्रकृतियोंके प्रवेशक मिथ्यादृष्टि जीवने स्नन्पित पदके द्वारा स्नन्तर्मुहर्त कालतक उसका स्नन्तर किया। फिर सम्यक्त्वका प्रहृण कर स्नोर दो छत्यासठ सागर कालतक परिश्रमणकर पुनः मिथ्यात्वमे जाकर स्नन्तर्मुहर्तमें जो दस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया उसके उक्त कालप्रमाण उत्कृष्ट स्नन्तर प्राप्त होना है। इसप्रकार स्नोघसे सब उदीरणा-स्थानोंके स्नन्तरकी प्रसूपणा की।
- § १२५. श्रब श्रादेशका कथन करनेके लिए यहाँ पर उच्चारणाका श्रनुगम करके बतलाते हैं। यथा—श्रान्तरानुगमकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है —श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसं दस प्रश्वित्यों के उदीरकका जघन्य श्रान्तर श्रान्तर श्रान्त है श्रोर उत्कृष्ट श्रान्तर कुछ कम दो छथासठ सागर है। नौ श्रोर श्राठ प्रश्वित्योंके प्रवेशकका जघन्य श्रान्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रान्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। सान, छह श्रोर पाँच प्रश्वित्योंके उदीरकका जघन्य श्रान्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रान्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रान्तर उपाधंपुटलपरिवर्तनप्रमाण है। चार, दो श्रोर एक प्रश्विके उदीरकका जघन्य श्रान्तर श्रान्तर्भहर्न है श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तर उपाधंपुटलपरिवर्तनप्रमाण है।
 - ५ १२६ श्रादेशसे नारिकयोमे दस श्रीर छह प्रकृतियोंके उदीरकका जवन्य श्रान्तर

एयस०, उक्क० सन्वेमिं तेत्तीसं सागरोवमाणि देख्णाणि । णव० ऋद्व० जह० एयस०, उक्क० ऋंतोमु० । एवं सन्वणेरइय० । णवरि सगद्विदी देख्णा ।

१२७. तिरिक्लेसु दसएहं जह० त्रंतोसु०, उक्त० तिण्णि पिलदोबमाणि देस्रणाणि । एव० जह० एयम०, उक्त० पुन्वकोडी देस्रणा । अट्ट० जह० एयस०,

श्रन्तर्मुहूर्त है, सात प्रकृतियोके उदीरकका जघन्य श्रन्तर एक समय हे श्रौर सबका उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। नो श्रोर श्राठ प्रकृतियोके उदीरकका जघन्य श्रन्तर एक समय हे श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त हे। इसीप्रकार सब नारिकयोमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रपनी श्रपनी स्थित कहनी चाहिए।

विशेषार्थ - स्रोवसे दस, नौ, स्राठ स्रोर सात प्रकृतियोंके उदीरकका जो जघन्य स्रन्तर-काल र्याटत करके बतला आर्थ हैं उसी प्रकार यहाँ पर भी वह घटित कर लेना चाहिए। उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है, इसिलए यहाँ पर उसका श्रलगसे खुलासा नहीं किया है। रह गया मात्र छह प्रकृतियोंके प्रवेशकके जघन्य अन्तर कालका खुलासा, सो जा उपशमसम्यग्दृष्टि या ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि जीव भय श्रोर जुगुप्साका श्रनुदीरक होकर छह प्रकृतियोका उदीरक होता है वह भय त्र्यौर जुपुप्ताकी उदीरणा द्वारा इसका अन्तर करके पुन कमसे कम अन्त-र्मुहर्तके बाद ही उनका अनुदीरक होकर इस स्थानको प्राप्त कर सकता है। यही कारण है कि नारिकयोमे छह प्रकृतियोके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहत कहा है। यह तो सब पदोके जघन्य अन्तरकालका विचार है। उत्कृष्ट अन्तरकालका खुलासा इस प्रकार है- जो नारकी भवके प्रारम्भमे श्रीर श्रान्तमे उस प्रकृतियोका उदीरक होकर मध्यमे कुछ कम तेतीस सागर कालतक सम्यादृष्टि हो दस प्रकृतियोका ऋनुदीरक बना रहता है उसके दस प्रकृतियोके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर प्राप्त होनेसे तत्प्रमाण कहा है तथा जो नारकी जीव भवके प्रारम्भमे और अन्तमे सम्यग्दृष्टि होकर सात और छह प्रकृतियोका उदीरक होता है श्रौर मध्यमे कुछ कम तेनीस सागर काल तक मिथ्यादृष्टि बना रहता है उसके छह श्रौर सात प्रकृतियोके उदीरकका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर प्राप्त होनेसे तत्प्रमाण कहा है। श्रव रहा नी श्रीर श्राठ प्रकृतियोके उर्जारकके उत्कृष्ट श्रन्तरकालका विचार मा इनका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मृहर्तसे अधिक नहीं प्राप्त हो सकता, क्योंकि जो मिध्यादृष्टि या वेदकसम्य-ग्दृष्टि नारकी है उसके आठ और नौ प्रकृतियों के उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं प्राप्त होता श्रीर जो उपशमसम्यग्दृष्टि हैं उसका उसके साथ रहने ना काल ही अन्तर्मुहूर्त है, इसिलए नारिकयोमे नौ त्र्योर श्राठ प्रकृतियोके उदीरकका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रन्तर्भुहूर्त कहा है। यह स्त्रोघ प्ररूपगा है जो सातर्वे नरकमे स्त्रविकल बन जाती है, इसलिए इस प्ररू-पणाको तो सातवें नरममे इसी प्रकार जानना चाहिए। मात्र श्रन्य नरकोमे जघन्य श्रन्तर तो श्रोघ प्ररूपणाके समान प्राप्त होनेमे कोई बाधा नहीं हैं। हाँ दस, सात श्रौर छह प्रकृतियोके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर श्रोधके समान नहीं बनता। सो उसका कारण केवल उस उस नरककी भवस्थिति है जिसकी सूचना मूलमे की ही है।

६ १२७. तिर्यक्चोमे दस प्रकृतियोके उदीरकका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्गुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तीन पल्य है। नौ प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्बर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। श्राठ प्रकृतियोके उदीरकका जघन्य श्रन्तर एक समय उक्कः अंतोमुः । सत्तः अएहं जहः एयसः, पंचः जहः अंतोमुः, उक्कः सन्वेसि-मुबहृपोग्गलपरियट्टं ।

ु १२८. पंचिंदियतिरिक्खितए दस० एाव० श्रद्ध० तिरिक्खोघ । सत्त० छ० जह० एयम०, उक्क० तिण्णि पत्तिदो० पुन्वकोडिपुघत्तेणब्भिहियाणि । पंच० जह-ण्युक्क० श्रंतोमु० ।

है ऋोर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त है । सात ऋार छह प्रकृतियोके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है, पाँच प्रकृतियोके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है श्रोर सबका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्रलपरिवर्तनप्रमाण है ।

विशेषार्थ — तिर्यञ्जोमे सम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पत्य प्राप्त होनेसे इनमे दस प्रकृतियोके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर उक्त काल प्रमाण कहा है। इनमे संयमासंयमका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटि होनेसे नो प्रकृकियोके उदीरकरा उत्कृष्ट श्रन्तरकाल उक्त कालप्रमाण कहा है, म्यांकि सयमामंयम जीवके नौ प्रकृतियोकी उदीरणा सम्भव नहीं है। किन्तु तिर्यब्चोमे त्राठ प्रकृतिर्याकी उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तर श्रन्तर्मृहर्तसे श्रधिक नहीं बन सकता यह स्पष्ट ही है, इसलिए इनमें उक्त प्रकृतियोक उदीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मृहर्त कहा है। यह सम्भव है कि काई तिर्यञ्च उपार्घ पुद्रलपग्विर्नन कालके प्रारम्भमं श्रीर श्रन्नमं सान, छह श्रीर पॉच प्रकृतियोकी उदीरणा कर श्रीर मध्यके कालंग मिध्यादृष्टि बना रहकर इनका अनुदीरक रहे यह भी सम्भव है, इसलिए इनके तीन स्थानाके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम उपार्थ पुरूल परिवर्तन प्रमाण कहा है। यह। पर दस त्रादि अन्य सब स्थानोके उदीरकका जो जघन्य अन्तर बतलाया हैं वह त्रोघके समान होनेसे उसका त्रोघप्ररूपणामे खुलासा कर ही श्राये है, इसलिए इसे वहाँसे जान लेना चाहिए। मात्र तिर्येक्चोमे पाँच प्रकृतियोका उदीरक ऐसा उपशमसम्यग्दृष्टि संयमासंयम-गुणस्थानवाला जीव ही हो सकता है जो भय त्रीर जुगुप्साकी उदीरणा नहीं कर रहा है। चूँकि इस जीवको भय या जुगुप्साका उदीरक होकर तदनन्तर पुनः पॉच प्रकृतियोका उदीरक होने के लिए कमसे कम श्रन्तर्मुहूर्त काल लगता है। यही कारण है कि यहाँ पर पाँच प्रकृतियोके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त कहा है।

§ १२८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकमं दस, नो श्रीर श्राठ प्रकृतियोके उदीरकका भंग सामान्य तिर्यञ्चोके समान है। सात श्रीर छह प्रकृतियोके उदीरकका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व श्रियिक तीन पत्य है। पाँच प्रकृतियोके उदीरकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ — पञ्चेद्रिय तिर्यञ्चित्रिककी उत्कृष्ट कायस्थित पूर्वकोटिष्टथक्त्व ऋषिक तीन पत्य बतलाई है, इसिलये यहाँ पर सात ऋौर छह प्रकृतियों के उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण बन जानेसे वह तत्प्रमाण कहा है। तथा उक्त तीन प्रकारके तिर्यञ्चामे अपनी अपनी पर्यायके रहते हुए पाँच प्रकृतियों के उदीरकका अन्तर उपशमसम्यक्त्व सहित संयमा-संयमके कालको ध्यानमें रखकर प्राप्त किया जा सकता है और उक्त तीनो प्रकारके तिर्यञ्चोंमेसे किसी एक तिर्यञ्चकी कायस्थितिके भीतर दो बार उपशमसम्यक्त्वका प्राप्त होना सम्भव नहीं है, इसिलिए यहाँ पर उक्त तिर्यञ्चोंमे पाँच प्रकृतियों के उदीरकका जयन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त्त कहा है। शेष कथन सुगम है।

१२२. पंचि०तिरिक्खअपञ्ज०-मणुसत्रपञ्ज० दस० ब्रह० जह० उक०
 ब्रांतोग्र०। णव० जह० एयस०, उक० त्रांतोग्र०।

ई १३०. मणुस्सितिए दसण्हं जह० त्रांतोम्र०, उक्क० तिथिण पिलदो० देख्णाणि । णव० त्राहु० जह० एयम०, उक्क० पुन्वकोडी देख्णा । सत्त० छ० जह० एयस०, उक्क० तिथिण पिलदो० पुन्वकोडिपुधत्तेसान्मिहियासि । पंच० जह० एयस०, उक्क० पुन्वकोडिपुध० । चदुगहं दोएहमेकिस्से० जह० त्रांतोम्र०, उक्क० पुन्वकोडिपुध० ।

् १२६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तक श्रोर मनुष्य अपर्याप्तक जीवोमे दस श्रीर श्राठ प्रकृतियोके उदीरक जीवका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्न हैं। नो प्रकृतियोंके उदीरक जीवका जघन्य श्रन्तर एक समय हैं श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्न है।

विशेषार्थ—दस प्रकृतियोंके उदीरक उक्त जीवोंको उनके अनुदीरक होकर पुनः उदीरक होनेमें अन्तर्मृहर्त काल लगता है। यहां यही नियम आठ प्रकृतियोंके उदीरकोंके विषयमें भी जान लेना चाहिए, इसांलए तो इन दोनो प्रकारके जीवोम दस और आठ प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहर्त कहा है। पर नो प्रकृतियोंके उदीरकोंके लिए ऐसी बान नहीं है, क्योंकि भयके साथ जो नो प्रकृतियोंकी उदीरणा कर रहा है उसके भयकी उदयव्युच्छित्ति होने पर एक समयके अन्तरसे जुगुण्साकी उदीरणा होने लगे यह सम्भव है, इसलिए तो यहाँ पर नो प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय कहा है और भयके साथ नो प्रकृतियोंका उदीरक उक्त जीव उसकी उदयव्युच्छित्ति करके अन्तर्मृहर्तके बाद जुगुण्साका उदीरक हो यह भी सम्भव है, इसलिए नो प्रकृतियोंक उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहर्तक कहा है।

६ १३०. मनुष्यत्रिकमं दस प्रकृतियोके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है आरे उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। नो और आठ प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। सात और छह प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। पाँच प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व-प्रमाण है। चार, दो और एक प्रकृतिके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है।

विशेषार्थ—दस श्रादि प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य श्रन्तर जिस प्रकार श्रोघमें घटित करके बतला आये हैं उसीप्रकार यहाँ पर घटित कर लेना चाहिए। मात्र उत्कृष्ट श्रन्तर मनुष्य-त्रिककी कायिस्थिति श्रोर श्रन्य विशेषताश्रोंको ध्यानमें रख कर घटित करना चाहिए। यथा—दस प्रकृतियोका उदीरक मिध्यादृष्टि ही होता हैं, इसलिए इन प्रकृतियोके उदीरकका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य ही प्राप्त होगा, क्योंकि जिसने उत्तम भोगभूमिके प्रारम्भ श्रोर श्रन्तमें दस प्रकृतियोंकी उदीरणा की श्रोर मध्य में सम्यग्दृष्टि रह कर इनका श्रनुदीरक रहा उसके यह श्रन्तरकाल बन जाता है। युक्तिसे विचार करने पर इससे श्रिक श्रन्तरकाल नहीं बनता, क्योंकि कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि मनुष्यका छोड़ कर श्रन्य वेदकसम्यग्दृष्टि मनुष्यका मर कर मनुष्योंमें उत्पन्न होना सम्भव नहीं है श्रोर श्रन्यत्र मिध्यादृष्टि रहते हुए इस पदका उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मूहर्त ही प्राप्त होता है। नौ श्रोर श्राठ प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ

§ १३१. देवेसु दस० छ० जह० श्रंतोमु०, सत्त० जह० एयस०, उक० सन्वेसि-मेकत्तीससागरो० देस्रणाणि । एाव० श्रद्ध० जह० एयस०, उक० श्रंतोमु० । एवं भवणादि जाव णवगेवजा ति । एावरि सगद्दिदी देस्रणा । श्रणुदिसादि सन्वद्घा ति एाव० छ० जहएणुक० श्रंतोमु० । श्रद्ध० सत्त० जह० एगस०, उक० श्रंतोमु० । एवं जाव० ।

🛞 एाएाजीवेहि भंगविचयो।

कम एक पूर्वकोटि स्रोवप्ररूपणामें घटित करके बतलाया ही हैं। उसीप्रकार यहाँ पर भी घटित कर लेना चाहिए। स्रन्य विशेषता नहीं होनेसे स्रलगसे खुलासा नहीं किया। सात स्रोर छह प्रकृतियोंका उदीरक कोई उपशमसम्यग्दिष्ट मनुष्य मिण्यात्वमे गया स्रोर पूर्वकोटिप्रथक्त्व स्रधिक तीन पल्य काल तक वह उसके साथ रहा। फिर श्रन्तमे उसने उपशमसम्यक्त्वपूर्वक इन पदोंको पुनः प्राप्त किया यह सम्भव है, इसलिए यहाँ पर इन दो पदोके उदीरकका उत्कृष्ट धन्तर पूर्वकोटिप्रथक्त्व स्रधिक तीन पल्य कहा है। पाँच प्रकृतियोंका उदीरक संयमासंयमी या संयमी ही होता है, स्रोर मनुष्य पर्यायके रहते हुए संयमासंयम या संयमका उत्कृष्ट स्रन्तर पूर्वकोटिप्रथक्त्वसे स्रधिक नहीं प्राप्त होता। यही कारण है कि पाँच प्रकृतियोंक उदीरकका उत्कृष्ट स्रन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। पर इननी विशेषता है कि संयमासंयममे उत्कृष्ट स्रन्तरके लिए प्रथम बार उपशम सम्यग्दर्शनके साथ संयमासंयम प्रहण कराना चाहिए स्रोर दूसरी बार स्रायिक सम्यक्त्वके साथ संयमासंयम प्रहण कराना चाहिए। चार, दो स्रोर एक प्रकृतिके उदीरकका उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्वकोटिप्रथक्त्वप्रमाण है यह म्पष्ट ही है।

११३१. देवाम दस त्रार छह प्रकृतियांके उदीरकका जघन्य त्रान्तर त्रान्तर्गृहर्त है। सात प्रकृतियांक उदीरकका जघन्य त्रान्तर एक समय है और सब पदीका उत्कृष्ट त्रान्तर कुछ कम इकतीस सागर है। नो त्रीर त्राठ प्रकृतियांक उदीरकका जघन्य त्रान्तर एक समय है त्रीर उत्कृष्ट त्रान्तर त्रान्तर प्रम्तरर्गृहर्त है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर नो प्रवेयकतकके देवोंमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम त्रापनी त्रपती स्थित कहनी चाहिए। त्रानुद्रिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमे नो और छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवका जघन्य और उत्कृष्ट त्रान्तर त्रान्तर्गृहर्त है। त्राठ त्रीर सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवका जघन्य त्रान्तर एक समय है त्रीर उत्कृष्ट त्रान्तर त्रान्तर त्रान्तर त्रान्तर है। इसीप्रकार त्रानाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ— सामान्य देवोंमें सामान्य नारिकयोंके समान अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिए। मात्र देवोमें मिध्यादृष्टि जीव नोवें प्रैवेयक तक ही पाये जाते हैं श्रोर नोवें प्रैवेयक के देवकी उत्कृष्ट आयु इकतीस सागर हैं। इसिलए यहाँ पर कुछ कम तेतीस सागरके स्थानमें कुछ कम इकतीस सागर कहा हैं। इसिलकार नो ग्रेवेयक तकके देवोंमें यह अन्तरकाल बन जाता है, इसिलए उसे सामान्य देवोंके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र इनमें दस, सात और छह प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर अपनी अपनी स्थितिप्रमाण ही प्राप्त होगा, इसिलए इस विशेपताकी अलगसे सूचना की है। नो अनुिदशादिमें सम्यग्हिए ही होते हे, इसिलए उनमें यह जानकर वहाँ सम्भव पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर कहा है। सुगम होनेसे उसका खुलासा नहीं किया है।

नाना जीवोंकी ऋषेता भंगविचय ।

- ६ १३२. ऋहियारसंभालगापरमेदं सुत्तं ।
- अस्वजीवा दसएहं एवएहमडएहं सत्तएहं छुण्हं पंचएहं चढुण्हं एियमा प्वेसगा।
- ६ १२३. एदेमिं ठाणाण पवेसगा णाणाजीवा णियमा ऋत्थि; ण तेसिं पवाही वोच्छिजदि ति बुत्तं होइ ।
 - क्षदांग्हमेकिस्से पवेसगा भजियव्या।
 - § १३४. कि कारणं ? उवसम-खबगसेढिपडिबद्धाणमदेसिं णिरंतरभावाणुवलंभादो ।

एवमोघेण भंगविचयो समत्तो ।

- ६ १३४. आदेसेण णेरइय० सच्बद्घाणाणि णियमा अतिथ । एवं पढमाए । विदियादि जाब मत्तमा त्ति दम० णव० अद्घ० सत्त० णियमा अतिथ; मिया एदे च अएहमुदीरगो च । मिया एदे च अण्हमुदीरगा च ३ । तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खितय-दम० णव० अद्घ० सत्त० छ० णिय० अतिथ, सिया एदे च पंचउदीरगो च । मिया एदे च पंचउदीरगो च । मिया एदे च पंचउदीरगा च ३ । प्रचि०तिरि०अपअ० १०,९,८ णिय० अतिथ । मण्सतिए ओघं । मण्मअपअ० सच्बद्घाणाणि भयणिआणि । मंगा बच्बीस २६ ।
 - ५ १३२. यह सूत्र श्रधिकारकी सम्हाल करनवाला है।
- * दस, नौ, त्राठ, सात, छह, पाँच श्रौर चार प्रकृतियोंके प्रवेशक मब जीव नियमसे हैं।
- ५ १३३. इन स्थानंके प्रवेशक नाना जीव नियमसे हैं । उनके प्रवाहका व्युच्छंद नहीं होता यह उक्त कथनका नात्पर्य हैं ।
 - अ दो श्रीर एक प्रकृतिके प्रवेशक जीव भजनीय हैं।
- १३४. क्योंकि उपशमश्रेणि श्रोर चपकश्रेणिसे सम्बन्ध रखनेवालं इन जीवोका निरन्तर सद्भाव नहीं पाया जाता ।

इस प्रकार श्रोघसे भंगविचय समाप्त हुशा।

(१३५. त्रादेशसे नारिकयोमे सब स्थान नियमसे हैं। इसी प्रकार पहली पृथिवीमे जानना चाहिए। दूसरीसे लेकर सातवा तकके नारिकयोमे दस, नो, त्राठ त्रोर सात प्रकृतियोके प्रवेशक जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये हैं त्रोर छह प्रकृतियोका उदीरक एक जीव हैं। कदाचित् ये हैं त्रोर छह प्रकृतियोका उदीरक एक जीव हैं। कदाचित् ये हैं त्रोर छह प्रकृतियोके उदीरक नाना जीव हें ३। तिर्ध्यक्त त्रीर पक्ष्मित्त्रय तिर्ध्यक्त्रवित्रक से दस, नो, त्राठ, सात त्रोर छह प्रकृतियोके उदीरक जीव नियमसे हैं १। कदाचित् ये हैं त्रोर पाँच प्रकृतियोका उदीरक एक जीव है २। कदाचित् ये हैं त्रोर पाँच प्रकृतियोको उदीरक जीव नियमसे हैं। मनुष्य त्रप्याप्तकोमे सब स्थान भजनीय हैं। भग छब्बीस

देवाणं सारयभंगो । एवं सोहम्मादि जाव स्वानेवज्ञा त्ति । भवस्य०-वाणवें०-जोदिसि० विदियपुढविभंगो । ऋसुदिसादि सन्बद्घा त्ति स्वव० ऋद्व० सत्त० छ० सिय० ऋत्थि । एवं जाव० ।

\$ १३६. एत्थुदेसे सुगमत्तादो चुण्णिसुत्तयारेणापरूविदाणं भागाभाग-परिमाण-स्वेत्त-फोसणाणमुचारणावलेन परूवणं कस्सामो । तं जहा—भागाभागाणु० दुविही णि०—स्रोघे० स्रादेसे० । स्रोघेण स्रदृण्हमुदीर० सन्वजीवाणं केवडि० १ संखेजा भागा । दम० णव० उदी० संखे०भागो । ७, ६, ४, ४, २, १ उदीर० सन्वजी० केव० १ स्रणंतिमभागो ।

६ १३७. श्रादे ० ऐरइय० श्रष्ट० मंखेजा भागा । दम० एव० संखे०भागो । सेमममंखे०भागो । एव सन्वरोर० पंचि०तिरि०तिय० देवा भवणादि जाव सहस्सार ति । तिरिक्खेसु दम० एव० श्रष्ट० सत्त० छ० पंच० श्रोघं । पंचि०तिरि०श्रपज्ञ० मणुमश्रपज्ञ० दम० एव० श्रष्ट० श्रोघं । मणुसेसु द्म० एव० मंखे०भागो । अड० संखेजा भागा । सेमममंखे०भागो । एवं मणुमपज्ञ०-मणुमिणीसु । णवि संखेज कायव्वं । श्राणदादि णवगेवज्ञा ति दम० णव० श्रष्ट० छ० मखे०भागो । मत्त०

२६ है। देवोम नारिकयों के समान भंग है। इसी प्रकार सी उर्म कल्पसे लेकर नो प्रेवेयक तकके देवोम जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर खोर उपितियों देवोमे दूसरी पृथिवीके समान भंग है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोमे नो, आठ, सात खार छह प्रकृतियों के प्रवशक जीव नियमसे है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

[§] १३६. यहाँ पर सुगम होनेसे चूर्गिसत्रकारके द्वारा नहीं कहे गये भागाभाग, परिमाण, चेत्र ख्रोर स्पर्शनका उच्चारणाके बलमे कथन करते हैं। यथा—भागाभागानुगमकी श्र्यपेत्ता निर्देश दा प्रकारका है—श्रोय श्रोर खादेश। श्रोयसे त्राठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं। संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। दम श्रोर नो प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातवे भागप्रमाण हैं। सात, छह, पाँच, चार, दो श्रोर एक प्रकृतिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं।

^{\$} १२७. श्रादेशसे नारिकयोमे श्राठ प्रकृतियोके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। दस श्रीर नो प्रकृतियोके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण है। शेष प्रकृतियोके उदीरक जीव स्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी, पञ्चित्र्य तिर्यञ्चित्रक. देव श्रीर भवन-वासियोसे लेकर सहस्रार कल्प नकके देवोमे जानना चाहिए। तिर्यञ्चोमे दस, नी, श्राठ, सात, छह और पाँच प्रकृतियोके उदीरकोका भंग श्रोघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपयाप्त श्रीर मनुष्य श्रपयाप्तकोंमे दस, नी श्रीर श्राठ प्रकृतियोके उदीरकोका भंग श्रोघके समान है। मनुष्योमे दस श्रीर नी प्रकृतियोके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण है। श्राठ प्रकृतियोके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष प्रकृतियोके उदीरक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसी प्रकार मनुष्य पर्योप्त श्रीर मनुष्यिनियोमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता हैं। कि श्रसंख्यातके स्थानमे संख्यात करना चाहिए। श्रानत कल्पसे लेकर नी प्रैवेयक तकके देवोमें दस, नी, श्राठ श्रीर छह प्रकृतियोके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। सात

संखेजा भागा । एवमणुहिसादि सन्वट्ठा ति । एवरि दस० एतिथ । एवं जाव० ।

१३८. परिमाणाणु० दुविहो णि०— य्योघे० यादेसे०। त्रोघे० दस० णव० यह० उदीर० केतिया ? अणंता । सत्त० छ० पंच० के० ? असंखेजा । चउएहं दोण्हमेबिसे उदी० के० ? संखेजा । आदेसेण णेरइय० सन्वपदा केतिया ? असंखेजा । एवं सन्वणेरइय-सन्वपंचिदियतिरिक्ख-मणुमश्रपञ्च० देवा भवणादि जाव अवराइदा ति । तिरिक्खेस मन्वपदाणमोघं । मणुसेस दस० णव० अह० के० ? असंखेजा । सेसं० के० ? संखे० । मणुसपञ्च०-मणुमिणी०-सन्वहदेवा मन्वपदा० केति० ? संखेजा । एवं जाव० ।

४१३९. खेत्राणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे०। श्रोघेण दस० णव० श्रद्घ० मन्त्रलोगे । सेमं लोग० श्रमंखे०मागे । एवं तिग्विखेसु । सेममग्गणासु सन्द्रपदा लोग० श्रमंखे०भागे । एवं जाव० ।

प्रकृतियोके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है। इसी प्रकार ऋनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए। मात्र इनमें दम प्रकृतियोके उदीरक जीव नहीं हैं। इसी प्रकार ऋनाहारक मार्गगा तक जानना चाहिए।

११६८. पिरमाणानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। श्रोघसे दस, नो श्रोर श्राठ प्रकृतियों उदीरक जीव कितने हैं श्रि श्रान्त हैं। सात, छह और पॉच प्रकृतियों के उदीरक जीव कितने हैं श्रि श्रान्यात हैं। चार, दो और एक प्रकृतिके उदीरक जीव कितने हैं श्रि श्रान्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पब्चेन्द्रिय तिर्धेक्च, मनुष्य अपर्यात, सामान्य देव तथा भवनवासियों से लेकर अपराजित तकके देवों में जानना चाहिए। तिर्थेक्चों सब पदोंका भंग श्रोघके समान हैं। मनुष्यां देस, नो और श्राठ प्रकृतियों के उदीरक जीव कितने हैं श्रि शंप पदों के उदीरक जोव कितने हैं शिंच्यात हैं। सेप पदों के उदीरक जोव कितने हैं शिंच्यात हैं। मनुष्य पर्यान्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थि सिद्धिके देवों से सब पदों के उदीरक जीव कितने हैं शिंच्यात हैं। इसी प्रकार श्रानाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

् १३६. चेत्रानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—स्त्रोघ स्रोर स्रादेश। स्रोघसे दम, नो स्रोर स्राठ प्रकृतियांक उदीरक जीवोका चेत्र सब लोकप्रमाण है। रोप प्रकृतियोंक उदीरक जीवोका चेत्र जांकके स्रसंख्या वें भागप्रमाण है। इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमे जानना चाहिए। रोप मार्गणास्रोमें सब पदोंके उदीरक जीवोका चेत्र लोकके स्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार स्रानहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विश्रापार्थ—दस, नौ श्रोर श्राठ प्रकृतियोके उदीरक जीव एकेन्द्रिय भी होते हैं, इसलिए इनका सब लोक सेत्र बन जाता है। परन्तु रोप प्रकृतियोके उदीरक जीव प्रायः संझी पञ्चेन्द्रिय जीव ही होने हैं श्रोर उनका वर्तमान निवास लोकके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण हैं, इसलिए इन पर्दोंके उदीरक जीवोंका सेत्र उक्तप्रमाण कहा है। सामान्य तिर्यक्कोंमे यह श्रोधप्ररूपणा श्रपने पदानुसार श्रविकल बन जाती है, इसलिए उनमें सम्भव पदोंका सेत्र श्रोधके समान जाननेकी

§ १४०. पोसणाणु० दुविहो णि०—ग्रोघेण आदेसे० । ग्रोघेण दस० णव० अहु० सन्वलोगो । सत्त० लोग० श्रसंखे०भागो श्रटु-बारहचोद्दस० । [छण्णं लोगस्स श्रसंखे० श्रटुचोद्दस०] । सेसं लोग० श्रसंखे०भागो ।

१४१. श्रादेसेण ऐरइय० दस० एव० श्रष्ट० लोग० श्रसंखे०भागी छ-चोइस०। सत्त० लोग० श्रसंखे०भागो पंचचोइस०। छ०उदीर० लोग० श्रसंखे०-भागो। एवं विदियादि सत्तमा ति। एवरि सगपोसएं। श्रएएं च सत्तमाए सत्त०-उदीर० लोग० श्रसंखे०भागो। पढमाए खेतं।

सूचना की है। गतिसम्बन्धी शेष मार्गणात्रोंका त्रेत्र ही लांकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए उनमें सब पदोंका त्रेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। आगेकी मार्गणात्रोंमें इसीप्रकार त्रेत्र जान लेना चाहिए।

१४० स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है — श्रोघ श्रौर श्रादेश। श्रोघसे दस, नौ श्रौर श्राठ प्रकृतियोंके उदीरकोने सब लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सात प्रकृतियोंके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका श्रौर त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम श्राठ श्रौर बारह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रौर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ —दस, नौ स्रोर स्राठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव एकेन्द्रिय जीव भी होते हैं, इसलिए इन पदोंके उदीरक जीवोंका स्पर्शन सब लोकप्रमाण बतलाया है। सात प्रकृतियोंके उदीरकोंमे देवों स्रोर सासादन गुणस्थानवाले जीवोकी मुख्यता है स्रोर इनका स्पर्शन लोकके स्रसंख्यातवों भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम स्राठ श्रीर बारह भागप्रमाण है, इसलिए इस पदकी स्रपेत्ता यह स्पर्शन बतलाया है। शेष पदोंकी स्रपेत्ता मृलमें जो स्पर्शन बतलाया है वह सुगम है, इसलिए उसका स्रलगसे खुलासा नहीं किया है।

\$ १४५. श्रादेशसे नारिकयोंमें दस, नौ श्रीर श्राठ प्रकृतियोंके उदीरक जीवोने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम पांच भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। तथा छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी कार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवीतकके नारिकयोंमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रपना श्रपना स्पर्शन कहना चाहिए। तथा इतनी विशेषता श्रीर है कि सातवीं पृथिवीमें सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। पहली पृथिवीमें स्पर्शन चेत्रके समान है।

विशेषार्थ — दस, नौ श्रौर श्राठ प्रकृतियोंकी उदीरणा सभी मिध्मादृष्टि नारकी जीबोंके सम्भव है श्रीर सामान्यसे नारिकयोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण श्रौर अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण है। यही कारण है कि यहाँ पर उक्त तीन पदवाले जीबोंका यह स्पर्शन बतलाया है। सास प्रकृतिक उदीरणास्थानकी

§ १४२. तिरिक्खेसु दस० एाव० अट्ठ० मञ्चलोगो । सत्त० लोग० असंखे०-भागो सत्त० । [अएएं] लोग० असंखे०भागो अचोद० । पंच० लोग० असंखे०-भागो । पंचि०तिरिक्खितए दस० णव० अट्ठ० लोग० असंखे०भागो सञ्चलोगो वा । सेसं तिरिक्खभंगो । पंचि०तिरिक्खअपअ०-मणुसअपअ० दस० णव० अट्ठ० लोग० असंखे०भागो सञ्चलोगो वा । मणुसलिए दस० णव० अट्ठ० सत्त० पंचिदियतिरिक्ख-भंगो । सेसं लोग० असंखे०भागो ।

प्राप्ति सासादनगुणस्थानमें सम्भव है श्रोर सामान्यसे सासादन सम्यग्दृष्टि नारिकयोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर श्रतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम पाँच भागप्रमाण है। इसीसे यहाँ पर सात प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले नारिकयोंका स्पर्शन उक्त त्रेत्रप्रमाण कहा है। छह प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले नारिकयोंका उपशमसम्यग्दृष्टि होते हैं या चायिक सम्यग्दृष्टि होते हैं श्रीर ऐसे नारिकयोंका स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है। यही कारण है कि इस स्थानवाले नारिकयोंका स्पर्शन उक्त त्रेत्रप्रमाण कहा है। श्रंप कथन सुगम है। मात्र सातवीं पृथिवीके नारकी मिध्यात्व गुणस्थानके साथ ही मरण करते हैं, इसिलिए इनमें सात प्रकृतियोंके उदीरक नारिकयोंका स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

९ १४२. तिर्यव्चोंमें दस, नौ श्रौर श्राठ प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रौर त्रसनालींके चौदह भागोमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रौर त्रसनालींके चौदह भागोमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पाच प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पञ्चित्र्य तिर्यव्चित्रकमें दस, नो श्रीर श्राठ प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रौर सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेप भंग सामान्य तिर्यव्चोंके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्च श्रपर्याप्त श्रौर मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें दस, नो श्रौर श्राठ प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रौर सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यित्रकमें दस, नो, श्राठ श्रोर सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका स्पर्शन पञ्चेद्रिय तिर्यक्कोंके समान है श्रौर शेप पदवाले जीवोंका स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है।

विशेषार्थ — एकेन्द्रियादि श्रधिकतर तिर्यञ्च दस, नौ श्रौर श्राठ प्रकृतियोंकी उदीरणा करते हैं श्रौर इनका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण है, इसलिए दस, नौ श्रौर श्राठ प्रकृतियोंके उदीरक तिर्यक्रोका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण कहा है। सासादन तिर्यञ्च ऊपर सात राजु चेत्रका स्पर्शन करते हैं, इसलिए तिर्यक्रोंमें सात प्रकृतियोंके उदीरकोंका स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण कहा है। संयतासंयत तिर्यक्रोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातं भागप्रमाण श्रौर श्रतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण है। यहीं कारण हैं कि यहां पर छह प्रकृतियोंके उदीरक तिर्यक्र्व उपशमसम्यग्दृष्टि विस्ताविस्त होते हैं श्रौर इनका स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातं अत्राप्त मागप्रमाण होनेसे यह उक्त प्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ १४३. देवेसु दस० एव० अड्ड० सत्त० लोग० असंखे०भागो अड्ड-णव-चोइस० । [इएएं लोग० असंखे० अड्डचोइस० ।] एवं सोहम्मीसाण० । भवए०-वाणवें०-जोदिमि० दस० एव० अड्ड० सत्त० लोग० असंखे०भागो अद्धुडा वा अड्ड-णवचोइम० देसएा । इउदीर० लोग० असंखे०भागो अद्रुडा वा अड्डचोइस० । सणकुमारादि जाव सहस्तारे ति दम० णव० अड्ड० सत्त० छ० लोग० असंखे०भागो अड्डचोइ० । आणदादि अचुदा ति मन्वडाएाएए लोग० असंखे०भागो अचोइस० । उवरि खेतं । एवं जाव० ।

- 🛞 णाणाजीवेहि कालो।
- § १४४. सुगममेदमहियारसंभालगासुत्तं ।
 - 🕸 एकिस्से दोषहं पवेसगा केविचरं कालादो होति ?
- § १४४. सुगमं।
 - 🕸 जहण्णेण एयसमञ्रो ।

§ १४३. देवोंमें दस, नी, श्राठ श्रौर सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ श्रौर कुछ कम नो भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रौर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सौवर्म श्रौर ऐशान कल्पमें जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर श्रोर ज्योतिपी देवोंमें दस, नो, श्राठ श्रौर सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम साढ़े तीन, कुछ कम श्राठ श्रौर कुछ कम नो भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें माग, त्रसनालाक चौदह भागोंमेंसे कुछ कम साढ़े तीन श्रोर कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें दस, नो, श्राठ, सात श्रौर छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रोर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानत कल्पसे लेकर श्रच्युत कल्प तकके देवोंमे सब स्थानोंक उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रोर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रान कल्पसे लेकर श्रच्युत कल्प तकके देवोंमे सब स्थानोंक उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रोर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रान पर्शन चेत्रके समान है। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — देवोमें जहां जो स्पशन बतलाया है उस ध्यानमे रखकर स्पर्शन ले त्राना चाहिए।

- श्रमाना जीवांकी अपेक्षा काल ।
- § १४४. श्रिधकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम हैं।
- * एक और दो प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवोंका कितना काल हैं ?
- § १४५. यह सूत्र सुगम है।
- अ जघन्य काल एक समय है ।

े १४६. तं जहा— सत्तद्ध जणा बहुगा वा श्राणयद्विउवसामगा एकसमयमेकिस्से पवेसगा होद्ण विदियसमए कालं करिय पजायंतरम्रुवगया, लद्धो एकिस्से पवेसगारणं जहरायोगेयसमञ्जो। एवं दोण्हं पवेसगारणं पि वत्तव्वं, विसेसाभावादो।

🕸 उक्कस्सेण श्रंतोमुद्धत्तं।

 १४७. कुदो ? संखेजनारमणुसंघिद्यनाहाणम्रवसामग-खनगाणमेक-दोपयडि-पवेसगपज्ञायपरिणदाणम्रकस्सानद्राणकालस्स तप्पमाणत्तदंसणादो ।

🛞 सेसाणं पयडीणं पवेसगा सन्वन्दा ।

\$ १४८. सुगममेदं। एवमोघो समत्तो। मणुसतिए एवं चेव । आदेसेण ऐरइय० सन्वपदा० सन्वद्धा। एवं सन्वरोरइय०। एवति बिदियादि सत्तमा ति छ०-उदीर० जह० एयसम्झो, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो। तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खित्य० सन्वद्धा। णविर पंच जह० एयस०, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो। पंचिं०तिरिक्खअपञ्च० सन्वपदा सन्वद्धा। मणुसऋपञ्च० सन्वद्घाणाणि जह० एयस०, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो। पंचिं०तिरिक्खऋपञ्च० सन्वपदा सन्वद्धा। मणुसऋपञ्च० सन्वद्धाणाणि जह० एयस०, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो। देवाणं णारयभंगो। एवं सोहम्मादि जाव एवगेवजा ति। भवए०-वाणवें०-जोदिस० विदियपुदिवभंगो। अस्एदिसादि सन्वद्धा ति

१४६. यथा—सात आठ अथवा बहुत अनिवृत्ति उपशामक जीव एक समय तक एक प्रकृतिके प्रवेशक होकर दूसरे समयमें मरकर दूसरी पर्यायको प्राप्त हो गये। इस प्रकार एक प्रकृतिके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ। इसी प्रकार दो प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका भी जघन्य काल एक समय कहना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं हैं।

. * उत्कृष्ट काल अन्तर्महर्त है।

§ १४७. क्योंकि जिन्होंने संख्यात बार प्रवाहको मिलाया है ऐसे एक और दो प्रकृतियोकी प्रवेशक पर्यायसे परिगात हुए उपशामक और चपक जीवोंका अवस्थानकाल तस्प्रभागा देखा जाता है।

श्रं श्रंप प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका काल सर्वदा है ।

५ १४८. यह सूत्र सुगम है। इसप्रकार श्रोघप्ररूपणा समाप्त हुई। मनुष्यित्रकमे इसीप्रकार जानना चाहिए। श्रादेशसे नारिकयोंमे सब पदवाले जीवोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सब नारिकयोंमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दूसरीसे लेकर सातवी तकके नारिकयोंमे छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यानवें भागप्रमाण है। सामान्य तिर्यञ्जा श्रोर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्जितकमे सब पदोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पाँच प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्ज धापयीप्रकोंमे सब पदोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमे सब पदोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमे सब पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। देवोमें नारिकयोंके समान भंग है। इसीप्रकार सौधर्म कल्पसे लेकर नौ श्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। भवनवामी, व्यन्तर श्रोर ज्योतियी देवोमे दृसरी पृथिवींके समान भंग है। श्रनुदिशसे

सव्बद्घाणाणि सव्बद्धा । एवं जाव० ।

- 🛞 पाषाजीवेहि अंतरं।
- **१४९. सुगममेदमहियारपरामरसवक्षं ।**
 - अ एकिस्से दोण्हं पवेसगंतरं केवचिरं कालादो होदि ?
- § १५०. सुगमं ।
- 🛞 जहरूषेण एयसमञ्जो ।
- १४१. एगसमयमंतरिद्ववाहाणमेदेसिमणंतरसमए पुणो वि संभवे विष्पिडसेहाभावादो ।
 - 🛞 उक्कस्सेण छुम्मासा ।
- § १४२. किं कारणं ? खवगसेढिसमारोहणविरहकालस्स उक्कस्सेण तप्पमाण-चोवलंमादो ।
 - 🛞 सेसाएं पयडीएं पवेसगाएं एत्थि ऋंतरं।
- ह १४३. सुगमं । एवमोघो समत्तो । मणुसतिए एवं चेव । खवरि मणुसिखीसु लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वेदा है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषाथं — द्वितीयादि पृथिवियांमें छह प्रकृतियोंक उदीरक जीव उपशम सम्यग्दृष्टि ही हो सकते हैं और उपशम सम्यग्दृष्टियोंका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसिलए इन पृथिवियोंमें छह प्रकृतियोंके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। तथा जघन्य काल एक समय प्रकृति परिवर्तनकी अपेचा प्राप्त होता है। तिर्यचोंमें पाँच प्रकृतियोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातकों भागप्रमाण इसीप्रकार घटित कर लेना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

- नाना जीवोंकी श्रपेत्ता श्रन्तरकाल ।
- ९ १४ . श्रिषकारका परामर्श करनेवाला यह वाक्य सुगम है।
- # एक और दो प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवोंका अन्तरकाल कितना है ?
- ६ १५०. यह सूत्र सुगम है।
- अ जघन्य अन्तर एक समय है।
- ६ १४१. क्योंकि प्रवाहका एक समयक लिए अन्तर देकर प्राप्त हुए इन जीवोंका अनन्तर समयमें फिरसे सम्भव होनेमें कोई निषेध नहीं है।
 - * उत्कृष्ट श्रन्तर छह महीना है।
- े १४२. क्योंकि चपकश्रेणिके श्रारोहणका विरहकाल उत्क्रष्टरूपसे तत्प्रमाण उपलब्ध होता है।
 - * शेष प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवोंका अन्तरकाल नहीं हैं।
 - ९ १५३. यह सूत्र सुगम है। इस प्रकार श्रोघपरूपणा समाप्त हुई। मनुष्यत्रिकमे इसी

दोण्हमेकिस्से च जह० एयस०, उक० वासपुधत्तं ।

§ १४४. त्रादेसेण छेरइयसव्बद्घाणाणं एत्थि त्रंतरं। एवं सव्वछेरइय०। णविर विदियादि सत्तमा ति छ० जह० एयस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। तिरिक्ख-पंचि०-तिरिक्खितय० सव्बद्घाणाणं एत्थि श्रंतरं। एविर पंच०उदीर० जह० एयसमञ्जो, उक्क० चोद्दम रादिंदियाणि। पंचि०तिरि०त्रपञ्ज० सव्बद्घाणाणं णित्थ श्रंतरं। मणुसत्रपञ्ज० सव्बद्घाणा० जह० एयम०, उक्क० पितदो० श्रसंखे०भागो। देवाणं एत्यभंगो। एवं सोहम्मादि एविगेवञ्जा ति। भवण०-वाण०-जोदिसि० विदियपुढवि-भंगो। श्रणुद्दिमादि जाव सव्बद्घा ति सव्बद्धाणाणं एत्थि श्रंतरं। एवं जाव०।

- 🕸 सर्षिणयासो ।
- § १४४. एत्तो सिएएयामो कायव्वो त्ति अहियारमंभालणवकमेदं ।
- 🕾 एकिस्से पवेसगो दोण्हमपवेसगो।

प्रकार है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोमें दो श्रीर एक प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षप्रथक्त है।

१ १५४. खादेशसं नारिकयोंमें सब स्थानोंका अन्तरकाल नहीं हैं। इसी प्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषना है कि दूसरीसे लेकर सानवीं पृथिवी तकके नारिकयोंमें छह प्रकृतियोंके प्रवेशकांका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है। सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तियेश्चित्रिकमें सब स्थानोंका अन्तरकाल नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पांच प्रकृतियोंके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चौदह दिन-रात है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब स्थानोंका अन्तरकाल नहीं है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब स्थानोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। देवोंमें नारिकयोंके समान भंग हैं। इसीप्रकार सौधमें कल्पसे लेकर नो प्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। भवनवासी, ज्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्ध तकके देवोंमें सब स्थानोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—मनुष्यिनयोंमें चपकश्रेणिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्ष प्रयक्तव प्रमाण हैं, इसीसं इनमें एक और दो प्रकृतियोंके उदीरकोका उक्त कालप्रमाण अन्तरकाल कहा है। उपशामसम्यक्तव और उपशामसम्यक्त्वके साथ संयमासंयम ये सान्तर मार्गणाणे हैं। इनका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर क्रमशः सात और चौदह दिन-रात है। यहां कारण है कि यहा पर दितीयादि पृथिवियोके नारिकयोमें छह प्रकृतियोके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात कहा है। तथा सामान्य तिर्यक्कोंमें और पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्किकमें पांच प्रकृतियोंके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर सात है।

- **ः सन्निक**प् ।
- § १४४. त्रागे सन्निकर्प करना चाहिए इस प्रकार त्र्यधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह वाक्य हैं।
 - * जो एक प्रकृतिका प्रवेशक है वह दो प्रकृतियोंका अप्रवेशक है।

§ १५६. कुदो १ परोप्परिवरुद्धसहावत्तादो । चउण्हं पंचण्हं छण्हं सत्तण्हं श्रहण्हं णवण्हं दसण्हं च श्रपवेसगो त्ति एदमत्थदो लब्भदे, एिकस्से पवेसगस्स सेसासेस-हाणारामपवेमयभावस्म देमामासयभावेरोदस्स पयञ्जादो ।

🕸 एवं सेसाएं।

- ११५७. सुगमं । उच्चारणाहिष्याएण पुण सण्णियासो णत्थि, तत्थ सत्तार-सण्हमेवाणित्रोगद्वाराणं पद्भवणादो ।
 - ९ १४८ भावो सन्वत्थ त्रोदहन्रो भावो ।
 - **ॐ ऋष्पाबहु**ऋं।
 - § १४९. एतो अप्पाबहुअमहिकयं दट्टवामिदि भणिदं होइ ।
 - **% सन्वत्थोवा एकिस्से पवेसगा**।
- - 🛞 दोगहं पवेसगा संखेउजगुणा।
- १६१. कुटो १ श्रणियद्विपटमममयप्पहृिं तद्द्वाए संखेजेसु भागेसु मंचिद-ख खबगोवमामगजीवाणिमहावलंबणाटो ।

🛞 चउएहं पयडीएं पवेसगा संखेजगुणा।

* इसी प्रकार शेष स्थानींके विषयमें जानना चाहिए ।

- ६ १५७. यह सूत्र सुगम है। किन्तु उचारणाके श्रमिप्रायसे सन्निकर्प श्रधिकार नहीं है, क्योंकि उसमें सत्रह अनुयोगद्वारोंकी ही प्ररूपणा की है।
 - § १५८. भाव सर्वत्र श्रौद्यिक है।
 - *** अल्पबहु**त्व ।
 - ६ १५६. ऋागे ऋल्पबहुत्व ऋधिकृतरूपसे जानना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।
 - एक प्रकृतिके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं।
- § १६०. क्योंकि सूच्मसाम्परायके कालमें श्रीर श्रनिवृत्तिकरणके संख्यातवें भागप्रमाण कालमें सिद्धित हुए त्तपक श्रीर उपशामक जीवोंका यहाँ पर प्रहण किया है।
 - अ उनसे दो प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुरा हैं।
- १६१. क्योंकि श्रानिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे लेकर उसके कालके संख्यात बहुभाग प्रमाण कालमें सिक्कित हुए त्तपक और उपशामक जीवोंका यहां पर महण किया है।
 - * उनसे चार प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुरो हैं।

^{\$} १५ - क्योंकि ये परस्पर विरुद्ध स्वभाववाले हैं। जो एक प्रकृतिका प्रवेशक है वह चार, पाँच, छह, सात, आठ, नो और दम प्रकृतियोंका श्रप्रवेशक है यह पूर्वीक्त कथनसे ही फलित हो जाता है, क्योंकि जो एक प्रकृतिका प्रवेशक है वह शेष समस्त स्थानोंका श्रप्रवेशक है इस प्रकार देशामर्पक भावसे इस अर्थको सूचित करनेमें इस सूत्रकी प्रवृत्ति हुई है।

१६२. किं कारणं ? उत्रमम-खइयसम्माइहिस्स पमत्तापमत्तसंजदाणमपुञ्वकरणखनगीत्रसामगाणं च भय-द्गुंछोदयितरहिटाणमेत्थ गहणादो ।

🛞 पंचण्हं पयडीणं पवेसगा ऋसंखेळगुणा ।

६ १६२. कुदो ? उवसम-खइयसम्माइद्विसंजदासंजदरासिस्स संखेजाणं भागाण-मेत्य पहाणभावेणावलंबियचादो ।

🛞 छएहं पयड़ोणं पवेसगा श्रसंबेज्जगुणा ।

§ १६४. कुदो ? वेदगसम्माइद्विसंजदासंजदाणं संखेज्जेहिं भागेहिं सह उवसम-खइयसम्माइद्विश्रसंजदरामिस्म संखेजाणं भागाणिमह पहाणभावदंसणादो । ऐदमिसद्धं, भय-दृगुंद्राणुद्यकालमाहप्पावलंबणेण सिद्धसह्वचादो ।

🛞 सत्तफ्हं पयडीणं पवेसगा असंखेजगुणा।

१६५. कुदों ? खइयसम्माइद्वीणं संखेजिदिभागेण सह वेदगसम्माइद्वित्रसंजद-गिसिस्स संखेजाणं भागाणिमह पहाणत्तदंसणादो ।

🛞 दसरहं पयडीणं पवेसगा त्रणंतगुणा।

§ १६६. कुदो ? मिच्छाइद्विरासिस्स संखेजदिभागपमाणतादो ।

🛞 णुवरहं पयडोणं पर्वसगा संखेजगुणा।

६ १६२. क्योंकि भय श्रोर जुगुप्साके उदयसे रहित जो उपशमसम्यग्दृष्टि श्रोर ज्ञायिक सम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत श्रोर श्रप्रमत्तसंयत जीव है तथा श्रपृर्वकरण उपशामक श्रोर ज्ञपक जीव हैं उनका यहाँ पर प्रहण् किया है।

* उनसे पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव त्रसंख्यातगुरो हैं।

११६३. क्योंकि उपशामसन्यग्दृष्टि श्रोर ज्ञायिक सम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवराशिके संख्यात बहुभागप्रमाण जीव राशिका यहां प्रधानभावसे त्रवलम्बन तिया है।

* उनसे छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं !

५ १६४. क्योंकि वेदकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवोंके संख्यात बहुभागके साथ उपशम सम्यग्दृष्टि श्रीर ज्ञायिक सम्यग्दृष्टि श्रसंयत जीवराशिके संख्यात बहुभागकी प्रधानता यहां पर देखी जाती है। श्रीर यह श्रसिद्ध भी नहीं है, क्योंकि भय श्रीर जुगुष्साके श्रनुदय कालके माहात्म्यका श्रवलम्बन लेनेसे यह सिद्धस्वरूप है।

अनसे सात प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव त्र्यसंख्यातगुर्णे हैं।

§ १६४. क्योंकि चायिकसम्यग्दृष्टियोंके संख्यातवें भागके साथ वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत-राशिके संख्यात बहुभागप्रमाण जीवोंकी यहां पर प्रधानता देखी जाती है।

- * उनसे दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव अनन्तगुरो हैं।
- ६ १६६. क्योंकि ये मिध्यादृष्टि राशिके संख्यात में भागप्रमागा हैं।
- * उनसे नौ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुरो हैं।

१६७. कुदो १ भय-दुगुंछ।एां दोग्रहं पि सम्रुदिदाणमुदयकालादो ऋण्णद्रविरिहद-कालस्स संखेअगुणत्तोवएसादो ।

🛞 श्रदृण्हं पयडोणं पवेसगा संस्रेजगुणा।

- १६८. किं कारणं ? अएणदरिवरहकालादो दोण्हं पि विरिहिदकालस्स संखेजगुणत्तावलंबणादो । ऐदमिनद्धं, एदम्हादो चेत्र सुत्तादो सिद्धसरूत्रत्तादो । एवमोघेण
 अप्पाबहुगाणुगमो समत्तो ।
 - ६ १६८. संपहि आदेसपरूवणद्वमुवरिमं पवधमाह---
 - 🕸 णिरयगदीए सन्वत्थोवा छुग्हं पयडीणं पवेसगा।
- ः १७०. किं कारणं १ उत्रसम-खइयसम्माइद्विजीवार्णं पत्तिदीवमासंखेजकभाग-पमाखार्णामिह म्गह्यादो ।
 - 🛞 सत्तएहं पयडीएं पवेसगा श्रसंखेजगुणा ।
 - ६ १७१. कुदो ? वेदयसम्माइहिरासिस्य पहाणभावेगोत्थ विविक्षयत्तादो ।
 - 🛞 दसरहं पयडीएं पर्वसगा असंखेजगणा।
 - ६ १७२. किं कारणं ? भय-द्गुब्रोदयसहिदमिन्बाइद्विरासिस्स विवक्खियत्तादो ।
 - 🛞 णवरहं पयडीणं पवेसमा संखेजगुणा ।

* उनसे त्राठ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव मंख्यातगुरो हैं।

१६८. क्योंकि अन्यतर विरिहत कालसे दोनोंके ही उद्यसे रहित काल संख्यातगुणा
 है ऐसा अवलम्बन किया गया है। आरे यह असिद्ध नहीं है, क्योंकि इसी सूत्रसे वह
 सिद्धस्वरूप है।

इस प्रकार त्र्योघसे त्राल्पबहुत्वानुगम समाप्त हुन्त्रा।

- ६ १६६. श्रव श्रादेशका कथन करनेके लिए श्रागेका प्रवन्ध कहते हैं-
- * नरकगतिमें छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं।
- ५ १७०. क्योंकि पल्यके ऋसंख्यानवें भागप्रमाण उपशमसम्यग्दृष्टि श्रीर ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंका यहां पर ब्रह्म किया है।
 - * उनसे सात प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव त्रसंख्यातगुरा हैं।
 - § १७१. क्योंकि वेदकसम्यग्दृष्टि जीवराशि प्रधानभावसे यहां पर विवित्तत है।
 - * उनसे दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं।
- § १७२. क्योंकि भय श्रौर जुगुप्साके उदयवाली मिध्यादृष्टि जीवराशि यहां पर विवित्तित है।
 - * उनसे नी प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं।

१६७. क्योंकि भय श्रौर जुगुप्सा इन दोनोके मिले हुए उदयकालसे श्रन्यतर विरहित
काल संख्यातगुणा है ऐसा उपदेश है।

§ १७३. कुदो ? भय-दुगुंछाणमएणदरोदयविरहिदकालम्मि दोण्हमुदयकालादो संखेजगुणम्मि संचिदत्तादो ।

🛞 श्रदृष्हं पयडीणं पवेसगा संखेजगणा।

१७४. कुदो ? अण्णदरिवरिहदकालादो संखेजगुणिम्म दोण्हं विरिहिदकालिम्म संचिदत्तादो । एवं णिरत्रोघो समत्तो । एवं सन्वर्णरहय-देवा भवणादि जाव सहस्सारा ति । तिरिक्लेसु सन्वर्ण्योवा पंच० उदीर० । छ० उदीर० असंखे०गुणा । सत्त० उदीर० असंखे०गुणा । दस० उदीर० अर्णतगुणा । णव०उदीर० संखे०गुणा । युद्द० उदीर० संखे०गुणा । एवं पंचि०तिरिक्लितिए । णविर दस० उदी० असंखे०गुणा । पंचि०तिरिक्लितिए । णविर दस० उदी० संखेजगुणा । पंचि०तिरिक्लितिए । णविर दस० उदी० । णव० उदी० संखेजगुणा । युद्द० उदी० संखे०गुणा । मणुसेसु सन्वर्ण्योवा एिक्सि उदी० । दोगहमुदी० संखेजगुणा । चदुण्हं संखे०गुणा । पंचण्हं संखे०गुणा । छ० उदी० संखे०गुणा । सत्त० उदी० संखे०गुणा । दस० उदी० असंखे०गुणा । णव० उदी० संखे०गुणा । अट० उदी० संखे०गुणा । एवं मणुसपञ्च०-मणुमिणी० । एविर संखे०गुणा कायव्वं । आणदादि जाव एविर्मवञ्चा त्ति सव्वत्थो० दस० उदीर० । छ० उदी० संखे०गुणा

५ १८३. क्योंकि दोनोके उदयकालसे संख्यातगुर्णे भय श्रौर जुगुप्सामेंसे किसी एकके उदयसे रहित कालमें उक्त जीवोंका सञ्चय हुआ है।

* उनसे ब्राठ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यात्मुखे हैं।

६ १७४. क्योंकि अन्यतरके उदयसं रहित कालसे दोनोंके उदयसं रहित संख्यातगरों कालमें उक्त जीवोका सञ्चय हुन्ना हैं। इसप्रकार सामान्यसे नार्राकयोमें 'ग्रल्पबहुत्व समाप्त हुन्ना। इसीप्रकार सब नारकी. सामान्य देव श्रौर भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमे जानना चाहिए। तिर्यक्कोंमं पाँच प्रकृतियोके उदीरक जीव सबसे स्ताक है। उनसे छह प्रकृतियोके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुर्णे हैं। उनसे सात प्रकृतियोंके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुर्णे हैं। उनसे दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव अनन्तगुर्ण है। उनसे नी प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुर्ण है । उनसे स्राठ प्रकृतियोके उदीरक जीव संख्यातरारो हैं । इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्त इतनी विशेषता है कि इनमें दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुरो हैं। पक्केन्द्रिय तिर्युक्त अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव सबसे स्तोक है। उनसे नौ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुर्ण हैं। उनसे आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुर्णे हैं। मनुष्योंमें एक प्रकृतिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे दो प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यतागुर्णे हैं। उनसे चार प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगर्णे हैं। उनसे पाँच प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगु हैं। उनसे छह प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगु हैं। उनसे सात प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगु हैं। उनसे दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुर्णे हैं। उनसे नौ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुर्णे हैं। उनसे श्राठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुर्गे हैं। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त श्रौर मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यात्गुरोके स्थानमें संख्यात्गुरा। करना चाहिए। श्रानत कल्पसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमे दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे छह गुणा। णव० उदी० संखे०गुणा। श्रद्ध० उदी० संखेजगुणा। सत्त० उदी० संखे०-गुणा। एवमणुदिसादि मञ्त्रद्धा ति। णवरि दस० उदीरणा णत्थि। एवं जाव०।

एवमप्पाबहुए समत्ते पयिङ्गाणउदीरणाए सत्तारस अणिश्रोगदाराणि समत्ताणि ।

🕸 एत्तो भुजगारपवेसगो ।

१९५. एत्तो उत्रिक्षित्वा प्रविद्वाणउदीरसाए भुजगारपवेसगो कायव्वो ति
वत्तव्वं पहरस्सावकमेदं—

🛞 तत्थ अद्रुपदं कायव्वं।

१७६. तिम्म अजगारपवंसगपरूवणाए पुन्तमेव ताव अट्ठपदपरूवणा कायन्वं, अगणाहा अजगारादिपदिवसेसिविसयणिएणयाणुष्पत्तीदो । तं जहा—अणंतरादिकंत-समए थोवयरपयिष्ठपवेसादो एण्डि बहुद्रियात्रो पयडीओ पवेसेदि ति एसो अजगारपवंसगो । अणंतरविद्वंतसमए बहुद्रपयिष्ठिपवेसादो एण्डि थोवयरपयडीओ पवेसेदि ति एसो अप्रांतरविद्वंतसमए एण्डि च तित्तयाओ चेव पयडीओ पवेसेदि ति एसो अवट्टिद्रपवेसगो । अणंतरिवद्वंतसमए एण्डि च तित्तयाओ चेव पयडीओ पवेसेदि ति एसो अवट्टिद्रपवेसगो । अणंतरिवद्विकंतसमए अपवेसगो होद्रण एण्डि पवेसेदि ति एस अवत्तव्वयवेसगो । एवमद्रपद्रपरूवणा गया ।

प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुर्गो हैं। उनसे नौ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुर्गे हैं। उनसे श्राट प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुर्गे हैं। उनसे सात प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुर्गे हैं। इसीप्रकार श्रनुदिशसे लेकर सर्वोर्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें इस प्रकृतियोंके उदीरक जीव नहीं हैं। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गेगा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार ऋल्पबहुत्वके समाप्त होने पर प्रकृतिस्थानउदीरणामें सत्रह ऋनुयोगद्वार समाप्त हुए।

* आगे अजगारप्रवेशकका अधिकार है।

ः १७४. इससे स्रागे प्रकृतिस्थान उदीरणामें भुजगारप्रवेशक करना चाहिए इस प्रकार यह प्रतिज्ञावचन कहने योग्य हैं।

* उसके विषयमें ऋर्थपद करना चाहिए।

§ १७६. उस भुजगारप्रवेशकप्ररूपणामें सर्वप्रथम अर्थपदकी प्ररूपणा करनी चाहिए, अन्यथा भुजगार आदि पद्विशेषिषयक निर्णय नहीं हो सकता । यथा—अनन्तर श्रितकान्त समयमें हुए स्ताकतर प्रकृतियोंके प्रवेशसे वर्तमान समयमें बहुतर प्रकृतियोंको प्रवेश कराता है यह भुजगारप्रवेशक है । अनन्तर अतिकान्त समयमें हुए बहुतर प्रकृतियोंको प्रवेशसे वर्तमान समयमें स्तोकतर प्रकृतियोंको प्रवेश कराता है यह अल्पतरप्रवेशक है । अनन्तर अतिकान्त समयमें और वर्तमान समयमें उतनी ही प्रकृतियोंको प्रवेश कराता है यह अवस्थितप्रवेशक है । अनन्तर अतिकान्त समयमें अप्रवेशक होकर वर्तमान सययमें प्रवेश कराता है यह अवक्वत्यप्रवेशक है । इस प्रकार अर्थपद प्रसूपणा समाप्त हुई ।

१७७. संपित एत्थ तेरस अशियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति—समुक्तित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति । तत्थ ताव ममुक्तित्तणां वत्त्रइस्सामो । तं जहा—समुक्तित्तणाणु० दुविहो णिदेमो—अोघेण आदेसेण य । श्रोघेण अत्थि मुज०-अप्प०-अवद्वि०-अवत्त०- उदीर० । एवं मणुमतिए । आदेसेण णेरइय० अत्थि मुज०-अप्प०-अवद्वि०उदीर० । एवं सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज०-सव्वदेवा ति । एवं जाव० । एव सुगम-तादो अप्पवण्णणीयत्तादो च समुक्तित्तणाणुगममुल्लंघिय सामित्तविहामणद्वमिदमाह—

% तदो सामित्तं।

§ १७८. सुगमं।

- 🛞 भुजगार-श्रप्पदर-श्रवद्विदपवेसगो को होइ ?
- ६ १७९. सुगमं।
- 🕸 भ्राएएदरो ।
- १ १८०. मिच्छाइड्डी सम्माइड्डी वा सामित्री होदि ति भणिदं होइ ।
- 🕸 श्रवत्तव्वपवेसगां का होइ।

१८१. सुगममेदं पुच्छ।वक्तं ।

🛞 श्ररणदरो उवसामणादो परिवदमाणगा।

१९७७. श्रब यहा पर समुत्र्कार्तनासं लेकर श्रल्पबहुत्व तक तरह श्रनुयोगद्वार ज्ञातव्य है। उनमेसे मर्व प्रथम समुत्र्कार्तनाका बतलाते हैं। यथा—समुत्र्कार्तनानुगमकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका हैं—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे मुजगार, श्रल्पतर, श्रवस्थित श्रोर श्रवक्तव्यपदके उदीरक जीव है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। श्रादेशसे नारिक्योमें मुजगार, श्रल्पतर श्रोर श्रवस्थितपदके उदीरक जीव है। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यक्क, मनुष्य श्रप्याप्त श्रोर सब देवामे जानना चाहिए। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। इस प्रकार सुगम होतेसे श्रोर श्रल्प वर्णनीय होनेसे समुत्र्कार्तनानुगमका उल्लंघन कर स्वामित्वका व्याख्यान करनेके लिए श्रागेका सूत्र कहत हैं—

अ उसके बाद स्वामित्वका अधिकार है ।

६ १७८. यह सूत्र सुगम है।

अज्ञाग, अल्पतर स्रोर स्रवस्थितपदका प्रवेशक कौन जीव है ? १७८. यह सूत्र सुगम है।

- * अन्यतर उक्त पदोंका प्रवेशक है।
- १९८०. मिथ्यादृष्टि श्रीर सम्यग्दृष्टि जीव स्वामी है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।
- * अवक्तव्यपदका प्रवेशक कौन जीव हैं ?
- § १८१ यह पृच्छावाक्य सुगम है।
- * उपशमनासे गिरनेवाला अन्यतर जीव अवक्तव्यपदका प्रवेशक है।

§ १८२. सन्तोवसमं काद्ण परिवदमाणगो पढमसमयसुहुमसांपराइयो पढम-समयदेवो वा अवत्तन्त्रपवेसगो होइ ति भणिदं होइ । एवमोघो ममत्तो । एवं मणुस-तिए । णवरि अवत्तन्त्र०पवे० पढमसमयदेवो ति ण वत्तन्त्रं । आदेसेण खोरइय० ओघं । णवरि अवत्त० खिथ । एवं सन्त्रखोर० सन्त्रतिरिक्ख-सन्त्रदेवा ति । खबरि पंचि०तिरिक्खअपज०-मणुसअपज०-अखुिहमादि सन्त्रहा ति अज०-अप्प-अविदृ० कस्स ? अण्णदरस्स । एवं जाव० ।

🕸 एगजीवेण कालो।

१८३. मामित्तारांतरमेगजीवविसयो कालो विहासियव्यो ति भिरादं होइ । तस्य द्विहो णिद्देयो — ओवादेसभेदेण । तत्थोघपरूवणद्वमाह—

अ भुजगारपंवसगां केवचिरं कालादो होदि ?

- े १८४. सुगमं ।
- 🕸 जहण्णेण एयसमञ्रो ।
- १८४. तं कथं ? मत्तण्हं पवेसगो होद्ण द्विदो सम्माइद्वी मिच्छाइद्वी वा भय-दुगुंछाणमण्णदरं पवेसिय अजगारपवेसगो जादो । पुणो बिदियसमए तत्तियं चे उदीरे-माणस्स तस्म लद्धो एयसमयमेचा अजगारपवेसगजहण्णकालो । एवमण्णत्थ वि जहासंभवमेयसमयो अणुगंतच्यो ।
- \$ १८२. सर्वापशम करके गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती सूच्मसाम्परायिक जीव श्रथवा प्रथम समयवर्ती देव श्रवक्तव्यपदका प्रवेशक है यह उक्त कथनका नान्पर्य है। इस प्रकार श्रावनक्षणणा समाप्त हुई। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इननी विशेषता है कि इनमें श्रवक्तव्यपदका प्रवेशक प्रथम समयवर्ती देव है यह नहीं कहना चाहिए। श्रादेशसे नारिकयोमें श्रोवके समान मंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें श्रवक्तव्यपद नहीं है। इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यक्ष श्रोर सब देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पक्षेत्रिय तिर्यक्रच श्रपर्याप्त, मनुष्य श्रपर्याप्त श्रोर श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें भुजगार, श्रव्यतर श्रोर श्रवस्थितपद किसके होते हैं श्रवन्यतरके होते हैं। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।
 - श्रष्टक जीवकी अपेद्या काल।
- ६ १८३. स्वामित्वके बाद एक जीवविषयक कालका व्याख्यान करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उसका श्रोप श्रोर श्रादेशके भेदसे दो प्रकारका निर्देश है। उनमेस श्राघका कथन करनेके लिए कहते हैं—
 - अञ्चनगारप्रवेशकका कितना काल है ?
 - § १८४. यह सूत्र सुगम है।
 - अ जघन्य काल एक समय है।
- १८५. वह कैसे १ सात प्रकृतियों का प्रवेशक होकर स्थित कोई एक मिश्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टि जीव भय श्रीर जुगु समें किसी एकका प्रवेश करा कर भुजगारप्रवेशक हो गया। पुनः दूसरे समयमे उतनी प्रकृतियोंकी ही उद्दीरणा करनेवाले उसके भुजगारप्रवेशकका जघन्य काल क समय प्राप्त हुआ। इसीप्रकार श्रम्यत्र भी यथासम्भव एक समय काल जान लेना चाहिए।

🛞 उकस्सेण चत्तारि समया।

१८६. तं जहा— उवसमसम्माइद्विणो पमससंजदा संजदासंजदा असंजदसम्माइद्विणो च जहाकमं चसारि पंच छ पयडीओ उदीरेमाणा द्विदा। पुणो तेसु
उवसमसम्मन्धकालो एयसमयमेशो श्रित्थ ति सासणगुणं पिडवण्णेसु एको भुजगारसमश्रो लद्भो। से काले मिच्छतं पिडवण्णेसु विदिश्रो भुजगारसम्ब्रो लब्भदे। से
काले भये पवेसिदे तिदयो भुजगारसमयो। तद्णंतरममण् दुगुं छाण् पवेसिदाण्
चउत्थो भुजगारसमयो ति एवमुक्ससेण चत्तारि समया भुजगारपवेसगस्स रुद्धाः
भवंति। अथवा अोदरमाणगो अण्णियद्विउवसामगो अण्णदरसंजलणमुदीरेमाणो
पुरिसवेदमोकडिय एयसमयं भुजगारपवेसगो जादो। तद्णंतरसमण् कालं काद्णः
देवेसुप्पण्णपढमममण् विदियो भुजगारसमयो। पुणो तसो अणांतरसमण् भयमुदीरेमाणस्स तिदयो भुजगारसमयो। से काले दुगुं छोदण्ण परिणदस्स चउत्थो भुजगारसमयो सि एवं चत्तारि समया।

- अ अप्पदरपवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?
- ५ १८७. सुगममेदं पुच्छावकः ।
- 🕸 जहएऐए एयसमञ्रो।

१८८. कुदो ? एयसमयमप्पयरं कादण तदणंत्रसमए भुजगारमवहिदं वा गदम्स तद्वलंभादो ।

* उत्कृष्ट काल चार समय है ।

§ १८६. यथा—उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत, संयतासंयत श्रोर श्रसंयतसम्यग्दृष्टि जीब कमसे चार, पाँच श्रोर छह प्रकृतियोंकी उदीरणा करने हुए स्थित हैं। पुनः उपशमसम्यक्त्वका काल एक समयमात्र शेप है कि उनके सासादन गुणस्थानका प्राप्त होनेपर एक भुजगारसमय प्राप्त हुआ। तदनन्तर समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त होनेपर दूसग भुजगार समय प्राप्त होता है। तदनन्तर समयमें भयके प्रवेश कराने पर तीसरा भुजगार समय प्राप्त होता है। इस प्रकार भुजगार प्रमयमें जुगुष्साके प्रवेश कराने पर चौथा भुजगार समय प्राप्त होता है। इस प्रकार भुजगार प्रवेशकके उत्कृष्टरूपसे चार समय प्राप्त होते है। श्रथवा उतरनेवाला तथा अन्यतर संज्वलनकी उदीरणा करनेवाला श्रम्यतर श्रीनवृत्तिउपशामक जीव पुरुपवेदका श्रपकर्षण करके एक समय तक भुजगार प्रवेशक हो गया। पुनः तदनन्तर समयमें मरकर देवोंमें उपन्न होनेके प्रथम समयमें दूसरा भुजगारसमय प्राप्त हुआ। पुनः उसके बाद श्रमन्तर समयमें अथकी उदीरणा करनेवाले उसके तीसरा भुजगारसमय प्राप्त हुआ। इस प्रकार भुजगारप्रवेशकके चार समय प्राप्त हुए।

- अल्पतरप्रवेशकका कितना काल है ?
- ६ १८७. यह पृच्छावाक्य सुगम है ।
- » जघन्य काल एक समय है।

६ १८८. क्योंकि एक समय तक श्रल्पतरपद करके तदनन्तर समयमे भुजगार या श्रवस्थितपदको प्राप्त हुए जीवके उक्त काल उपलब्ध होता है।

🛞 उद्मस्सेण तिषिण समया।

§ १८९. तं जहा—मिच्छाइहिस्स दस पयडीक्रो उदीरेमाणस्स भयवोच्छेदेण णवण्हमुदीरणा होद्गोको अप्पद्रसमयो । से काले दुगुं छोदयवोच्छेदेगाट्टं होदृण बिदियो अप्पय्रसमयो । तदणंतरसमए सम्मत्तं पिडवण्यास्स मिच्छनाणंताणुबंधि-बोच्छेदेण तिदयो अप्पद्रसमयो चि । एवं अप्पद्रपवेसगस्स उक्तस्सकालो तिसमयमेचो । एवं चेवासंजदमम्माइहिस्स संजमासंजमं पिडवज्जमाणस्स संजदासंजदस्स वा संजमं पिडवज्जमाणस्य तियमयमेच्यदरुक्तस्सकालप्रक्रवणा कायव्वा ।

अविद्वपवेसगो केवचिरं कालादो होदि?

🖇 १९०. सुगमं ।

🛞 जहरणेण एगसमञ्रो।

§ १९१. तं कथं ? ए।वपयडीस्रो पवेसमाए।स्स दुगुं छागमेएोयसमयं भुजगार-पज्जाएण परिएमिय से काले तिचयमेचीए।विद्वदस्स तदर्णतरसमए भयवोच्छेदेण-प्यदरपज्जायमुवनयस्य लद्धो एयसमयमेची अवद्विदजइण्णकालो । एवमण्णत्थ वि वचव्वं ।

🛞 उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

* उत्कृष्ट काल तीन समय है।

१८०. यथा—दस प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले मिथ्यादृष्टि जीवके भयकी व्युच्छित्ति हो जानेसे नौकी उदीरणा होकर एक अल्पतर समय प्राप्त हुआ। तदनन्तर समयमें जुगुप्साकी उदयव्युच्छित्ति हो जानेसे आठ प्रकृतियोंकी उदीरणा होकर दूसरा अल्पतर समय प्राप्त हुआ। तदनन्तर समयमें अगुप्त हुआ। तदनन्तर समयमें सम्यक्तको प्राप्त हुए उसके मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीकी व्युच्छित्ति हो जानेसे तीसरा अल्पतर समय प्राप्त हुआ। इसप्रकार अल्पतरप्रवेशकका उत्कृष्ट काल तीन समय होता है। इसीप्रकार संयमासंयमको प्राप्त होनेवाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके तथा संयमको प्राप्त होनेवाले संयतसम्यग्दृष्टि जीवके तथा संयमको प्राप्त होनेवाले समयमात्र उत्कृष्ट कालकी प्रकृत्यणा करनी चाहिए।

* अवस्थितप्रवेशकका कितना काल है ?

🌣 १५०. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल एक समय है।

* उत्कृष्ट काल अन्तमु हूर्त है।

६ १६२. तं जहा—दमपयडीस्रो उदीरेभाणस्स भय-दुगुं झाणम्रुद्यवीच्छेदेण-प्यदरं काद्णावद्विदस्स जाव पुणो भय-दुगुंझाणमणुद्यो ताव झंतोम्रहुरामेचो अवद्विद-पवेसगस्य उक्तस्सकारो होइ।

- 😩 श्रवत्तव्वपवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?
- ६ १९३. सुगमं।
- 🛞 जहरणुक्तस्सेण एयसमयो ।
- ः १९४. कुदो ? सब्बोबसामणादो परिवदिदपढमसमयं मोतूरणण्णात्थ तद्शंभ-वादा । एवमोघेरा कालाणुगमो समन्तो ।
- - अ अवक्तव्यप्रवेशकका कितना काल है ?
 - ६ १६३. यह सूत्र सुगम है।
 - अ जघन्य और उत्कृष्ट काल एक ममय है।
- ५ १५४. क्योंकि सर्वोपशामनासे गिरते हुए प्रथम समयको छोड़कर चान्यत्र चावकत्व्याद चासन्भव है ।

इस प्रकार श्रांघमे कालानुगम सभाष्त हुआ।

- १९५. इसी प्रकार मनुष्यितिकमे जानना चाहिए। श्रादेशसे नारिकयोमें भुजगार, श्राह्मतर श्रोर श्रवस्थितप्रवेशकका काल श्रांघक समान है। इसी प्रकार सब नारिकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय निर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव श्रोर भवनवासियोसे लेकर नो मैवेयक तकके देवोंमे जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय विर्यञ्च अपर्याप्त श्रोर मनुष्य श्रप्याप्तकोंमे भुजगार प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल दो समय है। इसी प्रकार श्राह्मतरप्रवेशकका काल है। श्रवस्थितप्रवेशकका काल श्रोधके समान है। श्रवह्शिसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें भुजगार श्रीर श्रह्मपतरप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल तीन समय है। श्रवस्थितप्रवेशकका काल श्रोधके समान है। इसी प्रकार श्रामाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।
- विशेषार्थ —मनुष्यत्रिकमें प्रथमादि सर्वोपशामना तकके सब गुणस्थान सम्भव हैं, इसलिए उनमें श्रोघप्ररूपणा श्रविकल बन जानेसे वह श्रोघके समान जाननेकी सूचना की है। परन्तु सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्ज, पञ्जेन्द्रिय तिर्यञ्जित्रक, सामान्य देव श्रीर भवन-

- 🛞 एयजीवेण स्रंतरं।
- **९ १९६. सुगममेदमहियारपगमरसवकं** ।
- 🛞 भुजगार-अप्पदर-अवहिदपदेसगंतरं केवचिरं कालादो होदि ?
- § १९७. सुगमं।
- 🛞 जहण्णेण एयसमञ्रो।

ई १६ म. तं जहा—भुजगारस्स ताव उचदे। एको श्रोद्रमाणउवसामगो संजलणमुद्रिमाणो पुरिसवेदमोकड्डिय भुजगारपवेसगो जादो। तदो से काले तिचय-मेतेणावद्विदो होदूर्णंतिरिदो। तदणंतरसमए कालं कादूण देवेसुप्परणो भुजगारपवेसगो जादो। लढमंतरं। हेद्विमगुणद्वाणेसु वि लब्भदे। तं कधं १ भय-दुगुंद्वाविरहिद्मप्पप्पणो उदीरणाट्ठाणमुदीरेमाणो श्रणणदरगुणट्ठाणजीवो भयागमेणोगसमयं भुजगारं काद्-

वासियोंसे लेकर नौ मैवयक तकके देवोंमें सर्वोपशामनाकी प्राप्ति सम्भव नहीं होनेसे उनमें तीन परोंकी अपेचा कालका निर्देश किया। ये तीन पर पक्ष्येन्द्रिय तिर्याक्ष्य अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धिके देवोंमें भी सम्भव हैं। परन्तु पक्ष्येन्द्रिय तिर्याक्ष्य अपर्याप्त और अनुदश्य अपर्याप्तकोंमें एक मिथ्यात्व गुएस्थान होनेसे वहाँ भुजगार और अल्पतर प्रवेशकका उत्कृष्ट काल दो समय ही बनता है तथा अनुदिशादिकमें जो उपशमसम्यग्दृष्टि और कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि उत्पन्न होता है उसके यह काल तीन समय भी बन जाता है। उपशमसम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमे सम्यक्त श्रृहितकी, दृसरे समयमे भयकी और तीसरे समयमे जुगुप्साको उदीरणा करानेसे भुजगार प्रवेशकका तीन समय उत्कृष्ट काल बन जाता है। तथा कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें सम्यक्त प्रकृतिको, दृसरे समयमे भयको और तीसरे समयमें जुगुप्साको अनुदीरणारूपसे परिणत करने पर अल्पतर प्रवेशकका तीन समय उत्कृष्ट काल बन जाता है। शेष कथन सुगम है।

- *** एक जीवकी अपेद्या अन्तर** ।
- ६ १८६. ऋधिकारका परामर्श करनेवाला यह वाक्य सुगम है।
- * भुजगार, अल्पतर और अवस्थितप्रवेशकका अन्तरकाल कितना है ?
- ६ १६७. यह सूत्र सुगम है।
- * जघन्य अन्तरकाल एक समय है।
- १ १८८. यथा—सर्वप्रथम भुजगारका कहते हैं, संज्वलनकी उदीरणा करनेवाला उतरता हुआ एक उपशामक जीव पुरुपवेदका अपकर्पण करके भुजगारप्रवेशक हुआ। इसके बाद तदनन्तर समयमें उतनी ही प्रकृतियोंकी उदीरणाके साथ अवस्थितप्रवेशक होकर उसने भुजगारपदका अन्तर किया। पुनः तदनन्तर समयमें मरकर और देवोमे उत्पन्न होकर वह भुजगारप्रवेशक हो गया। इसप्रकार भुजगारप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो गया। यह अन्तर नीचेके गुणस्थानोंमें भी प्राप्त होता है।

शंका-वह कैमे ?

समाधान—भय और जुगुष्साकी उदीरणासे रहित अपने उदीरणास्थानकी उदीरणा करनेवाला अन्यतर गुणस्थानवर्ती जीव भयके आगमन द्वारा एक समय तक भुजगारपद १२ णगांतरसमए तत्तियमेत्तावद्वाग्रेगांतरिदो, से काले दुगुं छोदएण परिणदो, पुणो वि भुजगारपवेसगो जादो । लद्धमंतरं होइ ।

१९९. संपि श्रप्प०पवे० उच्चदे । तं जहा — भय-दुगुं छाहि सह श्रप्पिदग्रदीरणट्टाणग्रदीरेमाणस्स श्रण्णदरगुणट्टाणजीवस्स भयवोच्छेदेणेगसमयमप्पदरपज्जएण
परिणदस्म तदणंतरसम् तिन्यमेचेणंतरं होद्ण से काले दुगुं छोदयवोच्छेदेण श्रप्पदरभावग्रुवगयस्स लद्धमंतरं होइ । श्रध्या मिच्छाइद्विणा सम्मचे गहिदे तप्पढमसमयम्मि
मिच्छत्ताणंताणुवंधिवोच्छेदेणप्पदरं काद्णाणंतरसमए तिचयमेचेणावद्विदस्स एगसमयमंतरं होद्ण तिदयसमयम्मि भय-दुगुं छाणमण्णदरवोच्छेदेणुभयवोच्छेदेण वा लद्धमंतरं
होइ । एवमसंजदसम्माइद्विणा संजमासंजमे गहिदे संजदासंजदेण वा संजमे गहिदे
श्रप्पदरस्स एगसमयमेच जहण्णंतरोवलं मो वत्तव्यो । संपिह श्रवद्वि०पवे० जहण्णंतरं
उच्चदे । तं जहा —सत्त वा श्रद्व वा पयडीश्रो पवेसेमाणगस्स भयागमेणेगसमयं
भुजगारेणंतरं होद्ण तद्विश्मममयम्मि तित्तियमेचेणावद्विदस्स लद्धमंतरं होइ ।
एवमप्पदरेण वि श्रविदस्म जहण्णंतरं साहेयव्वं ।

🕸 उक्तस्सेण त्रांतोमुहुत्तं।

करके पुनः तदनन्तर समयमे उतनी ही प्रकृतियोकी उदीरणारूप श्रवस्थित पद द्वारा भुजगार-पदको श्रन्तरित करके तदनन्तर समयमे जुगुष्साके उदयह्रपसे परिणत होकर पुनः भुजगार-प्रवेशक हो गया । इसप्रकार भुजगारप्रवेशकका एक समय जघन्य श्रन्तर प्राप्त होता है ।

५ १८्ट. श्रब श्रल्पतरप्रवेशकका कहते हैं । यथा ─भय श्रौर जुगुप्साके साथ विवित्तत उदीरणास्थानकी उदीरणा करनेवाला अन्यतर गुणस्थानवाला जो जीव भयकी उदयब्युच्छित्ति द्वारा एक समय तक श्रल्पतर पर्यायसे परिएात हुआ, पुनः तदनन्तर समयमे उतनी ही प्रकृतियोकी उदीरणा द्वारा श्रल्पतर पदका श्रन्तर करके तदनन्तर समयमे जुगुप्ताकी उदय-व्यक्तिञ्चत्ति द्वारा श्रात्पतरपदको प्राप्त हुआ, उसके श्राल्पतरपदका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है। त्र्यथवा जो मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वको ग्रहणकर उसके प्रथम समयमे मिथ्यात्व श्रीर अनन्तानुबन्धीकी उदयव्युन्छित्ति द्वारा श्रल्पतरपदको करता है, पुनः तदनन्तर समयमे उतनी ही प्रकृतियो भी उदीरणा द्वारा अल्पतरपदका अन्तर करता है और तीसरे समयमे भय श्रीर जुगुप्सामेसे किसी एक प्रकृतिकी उद्यव्युच्छित्ति द्वारा या दोनोंकी उदयव्युच्छित्तिद्वारा श्रत्पतरपद करता है उसके श्रत्पतरपदका जघन्य श्रन्तर एक समय प्राप्त होता है। इसीप्रकार श्रसंयतसम्यग्दृष्टिके द्वारा संयमासंयमके प्रहृण करने पर या संयतासंयतके द्वारा संयमके प्रहृण करने पर श्रल्पतरपदका जघन्य श्रन्तर एक समयमात्र श्रप्त होता है ऐसा कथन करना चाहिए। श्रव श्रवस्थितप्रवेशकका जघन्य श्रन्तर कहते हैं। यथा सात या श्राठ प्रकृतियोंका प्रवेश करनेवाला जो जीव भयके त्र्यागमन द्वारा एक समय तक भुजगारपद करता हुत्रा उस द्वारा श्रवस्थित पदका श्रन्तर करके पुनः तदनन्तर समयमे उतनी प्रकृतियोके उदय द्वारा श्रवस्थित पद करता है उसके श्रवस्थितपदका जघन्य श्रन्तर एक समय प्राप्त होता है। इसी प्रकार अल्पतरपदका आश्रय लेकर भी अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर साध लेना चाहिए।

उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्ग्रहत है।

६ २००. तत्थ ताब भुज०पवे० वृच्चदे । तं जहा—एको संजदासंजदो पंचउदीरेमाणगो असंजमं षिडवण्णो, पटमसमए भुजगारस्सादिं काद्ग्णंतरिदो । सन्वुकस्समंतोमुहुत्तमन्त्रिय भय-दुगुंबोदयवसेण पुणो वि भुजगारपवेसगो जादो । लद्धमंतरं होइ । श्रहवा एको उवसमसम्माइट्ठी पमनापमत्तसंजदो चदुएहमुदीरगो भय-दुगुंबागमेण भुजगारस्सादि कादृण पुणो सत्थाणे चेव श्रंतोमुहुत्तमविविक्खय-पञाएणंतरिदो उवसमसेहिमारुहिय सन्वोवसमं कादृणोदरमाणगो लोभसंजलणमुदीरेदृण हेट्ठा णिवदिय जम्मि इत्थिवदमुदीरेमाणगो भुजगारपवेसगो जादो तम्मि लद्धमंतरं होइ।

२०१. संपित म्रप्पदर०पवेस० वुचदे—णव व। दस वा पयडी यो उदीरेमाणस्स भय-दुगुं छ। दयवोच्छे देणप्पदरपञ्जायपरिणदस्साणंतरसमण् अंतरं होदू णंतो मुहुनेण भय-दुगुं छ। उदयमागदासु पुणो वि अंतो मुहुनमंतरिदस्स तदुदयवोच्छे दसमकालमप्पदर-भावेण लाइमंतरं हो इ। म्रधवा उवसमसे दिमारु हिय इत्थिवेदो दयवोच्छे देणप्पदरस्सादिं कादू णंति रिय उवि चिटय हे हु। श्रोदिरणस्स भय-दुगुं छ। णमुदीरणा होदू णंती मुहुनेण जत्थ तदुदयवोच्छे दो जादो तत्थ लाइमंतरं कायव्वं।

१२०२. संपिंह अविद्विद्यवे० उच्चदे—उवसामगो लोहसंजलणमुदीरेमाणो अविद्विस्सादि काद्णाणुदीरगो होद्णांतोमुहुत्तमंतरिय पुणो स्रोदरमाणो सुहुमसांपरायो

§ २००. उसमें सर्वप्रथम भुजगारप्रवेशकका कहते हैं। यथा—पाँच प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले एक संयतासंयत जीवने असंयमको प्राप्त होकर प्रथम समयमें भुजगारपदका आरम्भकर उसका अन्तर किया। पुनः सबसे उत्कृष्ट अन्तर्मृहृतं काल तक रहकर अन्तमें भय श्रीर जुगुप्साके उद्य द्वारा फिरसे जो भुजगारप्रवेशक हो गया उसके भुजगारपदका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहृतं प्राप्त होता है। अथवा चार प्रकृतियोकी उदीरणा करनेवाला एक उपशमसभ्यग्दृष्टि प्रमत्त और अप्रमत्तसंयत जीव भय और जुगुप्साके आगमन द्वारा भुजगारपदका प्रारम्भ करके पुनः स्वस्थानमे ही अन्तर्मृहृतं कालतक अविवक्तिन पर्यायके द्वारा उसका अन्तर करके उपशम्भ श्रेणि पर चढ़ा और वहाँ सर्वापशम करके उत्तरने हुए लोभसंज्वलनकी उदीरणा करके तथा नीचे गिरकर जहाँ जाकर स्त्रीवेदकी उदीरणा करता हुआ भुजगारप्रवेशक हुआ वहाँ उस जीवके भुजगारपदका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है।

\$ २०१. श्रब श्रत्पतरप्रवेशकका कहते हैं—नौ या दस प्रकृतियोकी उदीरणा करनेवाला कोई एक जीव भय और जुगुप्साकी उदयञ्युच्छिचिद्वारा श्रत्मतर पर्यायसे परिणत हुआ। पुनः श्रनन्तर समयमें उसका श्रन्तर होकर श्रन्तर्मुहूर्त कालके बाद भय और जुगुप्साके उदयमें श्राने पर फिरसे श्रन्तर्मुहूर्त काल तक उसका श्रन्तर किया। फिर उन दोनों प्रकृतियोंकी उदय-उपुच्छितिके कालमे ही श्रत्मतर पर्यायसे परिणत हुआ। उसके श्रत्मतरपदका उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। श्रथवा उपशमश्रेण पर चढ़कर श्रीवेदकी उदयञ्युच्छित्ति द्वारा श्रत्मतरपदका प्रारम्भकर और श्रविवित्तित पदद्वारा उसका श्रन्तर कर उत्पर चढ़ा। फिर नीचे उत्तरते हुए उसके भय श्रीर जुगुप्साकी उदीरणा होकर श्रन्तर्मुहूर्त काल बाद जहाँ उन दोनोंकी उदयञ्युच्छित्ति होती है वहाँ श्रत्मतर पदका प्राप्त हुआ। उत्कृष्ट श्रन्तर करना चाहिए।

§ २०२. श्रव श्रवस्थितप्रवेशकका कहते हैं — लोभसंज्वलनकी उदीरणा करनेवाला उपशामक जीव श्रवस्थित पदका प्रारम्भ करके बादमे उसका श्रमुदीरक होकर श्रम्तर्मुहूर्त काल णणंतरसमए तत्तियमेत्तावद्वाणेणंतरिदो, से काले दुगुंछोदएण परिणदो, पुणो वि भुजगारपवेसगो जादो । लद्धमंतरं होइ ।

१९९. संपिं श्रप्प०पवे० उच्चदे । तं जहा — भय-दुगुं छाहि सह श्रप्पिदमुदीरणहाणमुदीरेमाणस्स श्रण्णदरगुणहाणजीवस्स भयवोच्छेदेणेगसमयमप्पदरपज्जएण
परिणद्स्स तदणंतरसमए तिचयमेचेणंतरं होदृण से काले दुगुं छोदयवोच्छेदेण श्रप्पदरभावमुवगयस्स लद्धमंतरं होइ । श्रध्या मिच्छाइहिणा सम्मचे गहिदे तप्पढमसमयम्मि
मिच्छत्ताणंताणुवंधिवोच्छेदेणप्पदरं कादृणाणंतरसमए तिचयमेचेणाविहृदस्स एगसमयमंतरं होदृण तिदयसमयम्मि भय-दुगुं छाणमण्णदरवोच्छेदेणुभयवोच्छेदेण वा लद्धमंतरं
होइ । एवमसंजदसम्माइहिणा संजमासंजमे गहिदे संजदासंजदेण वा संजमे गहिदे
श्रप्पदरस्स एगसमयमेच जहण्णंतरोवलंभो वत्तव्यो । संपिंह श्रविहु०पवे० जहण्णंतरं
उच्चदे । तं जहा —सत्त वा श्रद्ध वा पयडीश्रो पवेसेमाणगस्स भयागमेणेगसमयं
भुजगारेणंतरं होदृण तदुविसममयम्मि तिचयमेचेणाविहृदस्स लद्धमंतरं होइ ।
एवमप्पदरेण वि श्रविहृदस्स जहण्णंतरं साहेयव्यं ।

🛞 उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

करके पुनः तदनन्तर समयमें उतनी ही प्रकृतियोंकी उदीरणारूप अवस्थित पद द्वारा भुजगार-पदको अन्तरित करके तदनन्तर समयमें जुगुष्साके उदयरूपसे परिणत होकर पुनः भुजगार-प्रवेशक हो गया । इसप्रकार भुजगारप्रवेशकका एक समय जघन्य अन्तर प्राप्त होता है ।

१८८. श्रव श्रल्पतरप्रवेशकका कहते हैं। यथा—भय श्रोर जुगुप्साके साथ विवित्तत उदीरगास्थानकी उदीरगा करनेवाला अन्यतर गुगास्थानवाला जो जीव भयकी उद्यव्युच्छित्ति द्वारा एक समय तक श्राल्पतर पर्यायसे परिएात हुआ, पुनः तदनन्तर समयमें उतनी ही प्रकृतियोंकी उदीरणा द्वारा श्रल्पतर पदका श्रन्तर करके तदनन्तर समयमें जुगुष्साकी उदय-व्युच्छित्ति द्वारा श्राल्पतरपदको प्राप्त हुआ, उसके श्राल्पतरपदका जधन्य श्रान्तर एक समय त्राप्त होता है। त्राथवा जो मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वको प्रहण्कर उसके प्रथम समयमें मिथ्यात्व श्रीर त्रनन्तानुबन्धीकी उदयब्युच्छित्ति द्वारा त्र्यल्पतरपदको करता है, पुनः तदनन्तर समयमें उतनी ही प्रकृतियो की उदीरणा द्वारा अल्पतरपदका अन्तर करता है और तीसरे समयमें भय श्रीर जुगुप्सामेंसे किसी एक प्रकृतिकी उद्यव्युच्छिति द्वारा या दोनोंकी उद्यव्युच्छितिद्वारा अल्पतरपद करता है उसके अल्पतरपदका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है। इसीप्रकार श्रसंयतसम्यग्दृष्टिके द्वारा संयमासंयमके प्रहृण करने पर या संयतासंयतके द्वारा संयमके प्रहृण करने पर ऋल्पनरपद्का जघन्य ऋन्तर एक समयमात्र श्राप्त होता है ऐसा कथन करना चाहिए। श्रव श्रवस्थितप्रवेशकका जघन्य श्रन्तर कहते हैं। यथा सात या श्राठ प्रकृतियोंका प्रवेश करनेवाला जो जीव भयके आगमन द्वारा एक समय तक भुजगारपद करता हुआ उस द्वारा श्रवस्थित पदका श्रन्तर करके पुनः तद्नन्तर समयमें उतनी प्रकृतियोंके उदय द्वारा श्रवस्थित पद करता है उसके अवस्थितपदका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है। इसी प्रकार अन्पतरपदका आश्रय लेकर भी श्रवस्थितप्रवेशकका जघन्य श्रन्तर साध लेना चाहिए।

* उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहर्त है।

६२००. तत्थ ताब भुज०पवे० वृच्चदे। तं जहा—एको संजदासंजदो पंचउदीरेमाणगो असंजमं षिडवण्णो, पटमसमए भुजगारस्सादिं काद्णंतरिदो। सन्वुकस्समंतोमुहुत्तमन्त्र्य भय-दुगुंबोदयवसेण पुणो वि भुजगारपवेसगो जादो। सन्वुकस्समंतोमुहुत्तमन्त्र्य भय-दुगुंबोदयवसेण पुणो वि भुजगारपवेसगो जादो। सन्बुकस्समंतोमुहुत्तमन्त्र्य एको उवसमसम्माइट्ठी पमनापमत्तसंजदो चदुणहमुदीरगो भय-दुगुद्धागमेण भुजगारस्सादि काद्ण पुणो सन्धाणे चेव त्र्यंतोमुहुत्तमविविक्खय-पजाएणंतरिदो उवसमसेटिमारुहिय सन्वीवसमं काद्णोदरमाणगो लोभसंजलणमुदीरेदृण हेट्ठा णिवदिय जिम्म इत्थिवदमुदीरेमाणगो भुजगारपवेसगो जादो तिम्म सद्धमंतरं होइ।

६ २०१. संपि श्रप्पदर०पवेस० वृच्चदे—णव व। दस वा पयडी श्रो उदीरेमाणस्स भय-दुगुंबोदयवोच्छेदेणप्पदरपञ्जायपरिणदस्साणंतरसमए श्रंतरं होद्गांतो मुहुनेण भय-दुगुंबासु उदयमागदासु पुणो वि श्रंतो मुहुन्तमंतरिदस्स तदुदयवोच्छेदसमकालमप्पदर-भावेण लद्धमंतरं होइ। श्रधवा उवसमसेढिमारु हिय इत्थिवेदोदयवोच्छेदेणप्पदरस्सादिं काद्गांतिरय उवरि चिढिय हेट्टा श्रोदिरणस्स भय-दुगुंछ।णमुदीरणा होद्गांतो मुहुन्तेण जत्थ तदुदयवोच्छेदो जादो तत्थ लद्धमंतरं कायव्वं।

§ २००. उसमें सर्वप्रथम भुजगारप्रवेशकका कहते हैं। यथा—पाँच प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले एक संयतासंयत जीवने असंयमको प्राप्त होकर प्रथम समयमें भुजगारपदका आरम्भकर उसका अन्तर किया। पुनः सबसे उत्कृष्ट अन्तर्भृहर्त काल तक रहकर अन्तमें भय और जुगुप्साके उद्य द्वारा फिरसे जो भुजगारप्रवेशक हो गया उसके भुजगारपदका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त प्राप्त होता है। अथवा चार प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाला एक उपशमसभ्यग्दृष्टि प्रमत्त और अप्रमत्तसंयत जीव भय और जुगुप्साके आगमन द्वारा भुजगारपदका प्रारम्भ करके पुनः स्वस्थानमें ही अन्तर्भृहर्त कालतक अविविद्यत पर्यायके द्वारा उसका अन्तर करके उपशम्भ अणि पर चढ़ा और वहाँ सर्वोपशम करके उतरते हुए लोभसंज्वलनकी उदीरणा करके तथा नीचे गिरकर जहाँ जाकर स्वीवेदकी उदीरणा करता हुआ भुजगारप्रवेशक हुआ वहाँ उस जीवके भुजगारपदका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है।

६ २०१. श्रब श्राल्पतरप्रवेशकका कहते हैं—नौ या दस प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाला कोई एक जीव भय और जुगुप्साकी उदयव्युच्छिचिद्वारा श्राल्पतर पर्यायसे परिण्त हुआ। पुनः श्रनन्तर समयमें उसका श्रन्तर होकर श्रन्तर्मुहूर्त कालके बाद भय श्रीर जुगुप्साके उदयमें श्राने पर फिरसे श्रन्तर्मुहूर्त काल तक उसका श्रन्तर किया। फिर उन दोनों प्रकृतियोंकी उदय-उयुच्छित्तिके कालमे ही श्राल्पतर पर्यायसे परिण्त हुआ। उसके श्राल्पतरपदका उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। श्रथवा उपशमश्रीण पर चढ़कर खीवेदकी उदयव्युच्छित्ति द्वारा श्रन्तरपदका प्रारम्भकर श्रीर श्रविविद्तित पद्दारा उसका श्रन्तर कर उपर चढ़ा। फिर नीचे उत्तरते हुए उसके भय और जुगुप्साकी उदीरणा होकर श्रन्तर्मुहूर्त काल बाद जहाँ उन दोनोंकी उदयव्युच्छित्ति होती है वहाँ श्रल्पतर पदका प्राप्त हुआ। उत्कृष्ट श्रन्तर करना चाहिए।

§ २०२. वास ब्रावस्थितप्रवेशकका कहते हैं —लोभसंज्वलनकी उदीरणा करनेवाला उपशामक जीव श्रवस्थित पदका प्रारम्भ करके बादमे उसका श्रनुदीरक होकर श्रन्तर्भुहर्त काल होदृण बिदियसमए कालं कादृण देवेसुप्पज्जिय जहाकममण्णेसु दोसु समएसु भय-दुगुं बास्रो उदीरिय तदो स्रवद्विदपवेस नो जादो, लद्धमंतरं होंइ।

अवत्तव्वपवेसगंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ २०३. सुगमं ।

🛞 जहण्णेण त्रंतोमुहुत्तं ।

🛞 उक्कस्सेण उवहुपोग्गलपरियष्टं।

§ २०४. तं कथं ? अद्वपोग्गलपियट्टपढमममए सम्मत्तमुप्पाइय सव्वलहुमुवसम-सेढिसमारोहरापुग्स्सरपिडवादेणादिं कादृणंतिरदो किंचूणमद्धपोग्गलपियट्टं परियट्टिदृण थोवावसेसे संमारे पुणो वि मव्वविसुद्धो होदृण उवसमसेढिमारूढो पिडवादपढमसमए लद्धमंतरं करेदि त्ति वत्तव्वं। एवमोघपरूवणा समत्ता।

तक अवस्थितपदका अन्तर करके पुनः उतरता हुआ सूर्मसाम्परायिक होकर तथा दूसरे समयमें मरकर और देवोमें उत्पन्न होकर कमसे अन्य दो समयोंमें भय और जुगुष्साकी उदीरणा करके अनन्तर अवस्थितप्रवेशक हो गया। इसप्रकार अवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हो जाता है।

अवक्तव्यप्रवेशकका अन्तरकाल कितना है ?

६ २०३. यह सूत्र सुगम है।

अज्ञानिय अन्तर अन्तर्मुहुर्त है।

§ २०४. यथा - उपशमश्रेणिपर आरोह्ण कर के नथा सर्वोपशामनासे गिरनेके प्रथम समयमे अवक्तव्यपदका प्रारम्भ करके पुनः नीचे गिरकर उसका अन्तर किया। पुनः सबसे लघु अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा उपशमश्रेणिपर आरोह्ण करके सूच्मसाम्परायकी अन्तिम आविलके प्रथम समयमे अप्रवेशकभावको प्राप्त होकर और वहीं पर मरकर जो देवोंमें उत्पन्न हुआ वह वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें अवक्तव्यप्रवेशकसम्बन्धी अन्तरको प्राप्त करता है, क्योंकि प्रकारान्तरसे जघन्य अन्तरको उत्पत्त वहीं हो सकती।

* उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है ।

समाधान—अर्घपुद्रल परिवर्तनके प्रथम समयमें सम्यक्त्वको उत्पन्न करके अतिशोध उपशमश्रीणपर आरोहण पूर्वक गिरते समय अवक्तव्यपदका प्रारम्भ करके जो उसका अन्तर करता है। पुनः कुछ कम अर्धपुद्रलपरिवर्तन काल नक परिश्रमणकर संसारमें रहनेका थोड़ा काल शप रह जाने पर फिरसे जा सर्व विशुद्ध होकर उपशमश्रीण पर आरोहण करता है वह गिरनेके प्रथम समयमे उसका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करता है ऐसा यहाँ कहना चाहिए।

इस प्रकार श्रोघप्ररूपणा समाप्त हुई।

२०६. श्रादेसेण ऐरइय० भुज०-श्रप्प० जह० एयसमश्रो, उक्क० श्रंतोग्रु०। अविहि० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया। एवं सव्यिणिरय-तिरिक्ख-पंचिदिय-तिरिक्खितिय-देवा भवणादि जाव एयगेवज्ञा ति। पंचि०तिरि०श्रपञ्ज०-मणुमश्रपञ्ज० भुज०-श्रप्प० श्रोघं। श्रविह० जह० एयस०, उक्क० वेसमया। मणुसतिए भुज०-श्रप्प०-श्रविह० श्रोघं। श्रवत्त० जह० श्रंतोग्र०, उक्क० पुव्वकोडिप्रधन। श्रणुहिसादि सव्वद्वा ति भुज०-श्रप्प० श्रोघं। श्रविह० जह० एयसमश्रो, उक्क० तिणिण समया। एवं जाव०।

श्वाणाजीवेहि भंगविचयादित्र्याणयोगदाराणि अप्पायदुत्रवज्ञाणि
 कायव्वाणि ।

े २०७. णाणाजीवेहि भंगविचय-भागाभाग-परिमाण-खेर्च-पोसण-कालंतर-भाव-मंण्णिदाणमणियोगदाराणमेदेण सुरोण समप्पिदाणमुच्चारणावलेण परूवणमिह वर्चाइस्सामो । तं जहा—

१२०६. आदेशसे नारिकयोम भुजगार और अल्पतरप्रवशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भूहूर्त है। अविध्यतप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। इसी प्रकार सव नारिकी, सामान्य तिर्यक्ष, पर्ञ्चोन्द्रिय तिर्यक्ष्वित्रक, सामान्य देव और भवनवासियोसे लेकर नो प्रेवेयक तकके देवोमे जानना चाहिए। पंचेन्द्रिय निर्यक्ष अपर्याप्त और मनुष्य अपयोप्तकोमे मुजगार और अल्पतरप्रवशकका अन्तरकाल अधिके समान ह। अवस्थितप्रवणकका जयन्य अन्तर एक समय हे आर उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। मनुष्यित्रकमे भुजगार, अल्पतर और अवस्थितप्रवेशकका अन्तरकाल अधिके समान है। अवक्तव्यत्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्भूहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि-प्रथक्तवप्रमाण है। अनुष्वशसे लेकर सवार्थसिद्धितकके द्वोमे भुजगार और अल्पतर प्रवेशकका अन्तरकाल अधिके समान है। अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर प्रवेशकका

तिश्रीषार्थ — मनुष्यत्रिकको छोड़कर अन्य सब गतियोमे और उनके अवान्तर भेदोमें जहाँ जो भुजगारपदका उत्कृष्टः काल बतलाया है वही वहा अवस्थिनप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तरकात जानना चाहिए। मनुष्यत्रिकका कमंभूमिमे रहनेका उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्व प्रमाण है। यह सम्भव है कि कोई जीव पूर्वकोटिपृथक्त्व कालके प्रारम्भमे और अन्तमे अवक्तव्यपद करे और मध्यमे उसका अन्तरकाल रहा आवे। इसीस इनमे अवक्तव्यप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण कहा है। तथा अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अतिशीघ दो बार उपशमश्रीण पर चढ़ाकर ले आना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

* श्ररुपबहुत्वके सिवा नाना जीवोंकी श्रपेक्षा भंगविचय आदि श्रनुयोगद्वार करने चाहिए।

१२०७. इस सूत्रके द्वारा मुख्यभावको प्राप्त हुए नाना जीवोंकी श्रपेत्ता भंगिबचय, भागाभाग, परिमाण, त्तेत्र, स्पर्शन, काल, श्रन्तर श्रोर भाव संज्ञावाले श्रनुयागद्वारांकी प्ररूपणा उच्चारणाके बलसे यहाँ पर बतलाते हैं। यथा—नाना जीवोका श्राश्रय लेकर भंगविचयानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोष श्रोर श्रादेश। श्रोषसे भुजगार, श्रन्पतर श्रोर

६ २०८. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिहेसी—श्रोषेण श्रादेसेण य। श्रोषेण श्रुज०-अप्प०-अविद्वि उदीर० णिय० श्रित्थ, सिया एदे च श्रवचवत्रो च, सिया एदे च श्रवचवत्रा च। भंगा तिण्णि ३। श्रादेसेण णेरइय० श्रवद्वि० णियमा अत्थि, सेसपदा भयणिजा। भंगा ९। एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिदियतिरिक्ख-सव्वमणुस०-सव्वदेवा चि। णवरि मणुस०अप्जज० सव्वपदा भयणिजा। भंगा २६। मणुसतिए भंगा २७। तिरिक्खेसु श्रुज०-अप्विद्वि० णिय०। एवं जाव०।

६२०९. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ग्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण भ्रुज०-त्रप्प० मन्वजी० केव० १ त्रसंखे०भागो । श्रवद्वि० असंखेज्जा भागा । श्रवस्र०

श्रवस्थित पदके उदीरक जीव नियमसे हैं। कदाचित ये नाना जीव है श्रीर एक श्रवक्तव्यपदका उदीरक जीव है। कदाचित् ये नाना जीव हैं श्रीर श्रवक्तव्यपदके उदीरक जीव नाना हैं। भंग तीन हें ३। श्रादेशसे नारिकयोमे श्रवस्थितपदके उदीरक जीव नियमसे हैं। शेषपद भजनीय है। भंग ५ हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पब्चेन्द्रिय तिर्यक्क, सब मनुष्य श्रीर सक देवोंमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य श्रप्याप्तकोंमें सब पद भजनीय है। भंग २६ है। मनुष्यत्रिकमें भंग २७ है। तियञ्चोमे भुजगार, श्रव्णतर श्रीर श्रवस्थितपदके उदीरक जीव नियमसे है। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

त्रिश्रेषार्थ—सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्थव्य श्रीर सब देवोमें एक ध्रुव पद है श्रीर दो श्रम्भुव पद हैं, इसलिए एक जीव श्रीर नाना जीवोकी श्रपेत्ता इन पदोके ध्रुव मंग सिंहत नो भंग होते हैं। मनुष्य श्रपयाप्तकोमं तीन श्रभुव पद है, इसलिए इनके एक श्रीर नाना जीवोंकी श्रपेत्ता छव्यीस भंग होते हैं। मनुष्यित्रकमे एक ध्रुव पद श्रीर तीन श्रभुव पद हैं, इसलिए इनमें ध्रुव भंगके साथ एक श्रीर नाना जीवोंकी श्रपेत्ता सत्ताईस भंग होते हैं।

\$ २०८ भागाभागानुगमको श्रपेता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रौर श्रादेश। श्रोघसे मुजगार श्रौर श्रल्पतरपदके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं । श्रासंख्यातवें भागप्रमाण हैं । श्रवस्थितपदके उदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । तथा श्रवक्तव्य पदके उदीरक जीव श्रनन्तवें भागप्रमाण हैं । श्रादेशसे नारिकयोंमें श्राघके समान भंग हैं । किन्तु श्रवक्तव्यपदके उदीरक जीव नहीं हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यंव्य, मनुष्य श्रपर्याप्त, सामान्य देव श्रौर भवनवासियोंसे लेकर श्रपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्योमें भुजगार, श्रव्यतर श्रौर श्रवक्तव्यपदके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं । श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं । श्रवस्थितपदके उदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त श्रौर मनुष्यिनयोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यातके स्थानमे संख्यात करना चाहिए । इसी प्रकार सर्वर्थसिद्धिमे जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें श्रवक्तव्यपदके उदीरक जीव नहीं हैं । इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ २०६. परिमाणानुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है—सोध और स्रादेश। ओघसे भुजगार, श्रत्यतर और श्रवस्थितपदके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। श्रवक्तव्यपदके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसी प्रकार तिर्यव्योमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी भ्रागंतभागो । श्रादेसेण पोरइय० श्रोघं । णवरि अवन्त० णित्थ । एवं सन्त्रपोरइय०-सन्वतिरिक्ख-मणुसश्रपज्ज०-देवा भवणादि जाव श्रवराजिदा नि । मणुसेसु भ्रज०-श्रप्य०-श्रवन्त० सन्वजी० केविडि० १ श्रसंखे०भागो । श्रवद्वि० श्रसंखेजा भागा । एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी० । णवरि संखेजं कायन्वं । एवं चेव सन्वद्वे । णवरि श्रवन्त०उदीर० णित्थ । एवं जाव० ।

ः २११. खेतागु० दुविहो णि० - - श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण श्रुज० - श्रप० - विशेषता है कि इनमें श्रवक्तव्यपदेके उदीरक जीव नहीं हैं। श्रादेशसे नारिकयांमें भुजगार, श्राह्म श्रीर श्रवस्थितपदके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रसंख्यात है। इसी प्रकार सब नारिका, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्थव्य, मनुष्य श्रपयाप्त, सामान्य देव श्रीर भवनवासियोंसे लेकर श्रपराजित तक देवोमे जानना चाहिए। मनुष्योंमे भुजगार, श्राह्म श्रीर श्रवस्थित पदके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रसंख्यात है। श्रवक्त व्यपदके उदीरक जीव जितने हैं ? संख्यात है। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी श्रीर सर्वार्थिसिद्धके देवोंमे सब पदाके उदीरक जीव संख्यात है। इसी प्रकार श्रामन्द्राह्म मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २१०. त्रेत्रानुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है—स्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे मुजगार, श्रात्पतर श्रीर श्रवस्थितपदके उदीरक जीवोंका कितना त्रेत्र हैं ? सर्व लोक त्रेत्र हैं । श्रवक्तव्यपदके उदीरक जीवोंका लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण त्रेत्र हैं । इसी प्रकार तिर्यव्योंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता हैं कि इनमें श्रवक्तव्यपदके उदीरक जीव नहीं है । शेष मार्गणाश्रोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका त्रेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ — मुजगार आदि तीन पद एकेन्द्रिय श्रादि जीवोंमें भी होते हैं श्रीर उनका चेत्र सर्व लोक है, इसलिए यहाँ पर द्योघसे इन तीन पदोंके उदीरक जीवोंका चेत्र सर्व लोक कहा है। परन्तु श्रवक्तव्य पद उपशमश्रेणिसे गिरते समय ही होता है और ऐसे ज वोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए श्रोघसे श्रवक्तव्य पदके उदीरक जीवोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। यह व्यवस्था सामान्य तिर्धे क्रोंमें बन जाती है, इसलिए सम्भव पदोंका भंग श्रोघके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र तिर्धे क्रोंमें उपशमश्रेणिकी प्राप्ति सम्भव नहीं है, इसलिए इनमें श्रवक्तव्यपद सम्भव न होनेसे उसका निपेध किया है। गतिमार्गणाके शेष भेदोंका चेत्र ही लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इनमें सम्भव सह पदोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

६२११. स्पर्शनानुगमकी ऋषेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—स्त्रोध और खादेश। स्रोधसे भुजगार, ऋल्पतर श्रीर खबस्थितपदके उदीरक जीवोंने कितने त्रेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्व अबट्टि० केबिड खेते ? मञ्जलोगे । अबत्त०उदीर० लोग० स्रसंखे०भागे । एवं तिरिक्षा० । एवि अबत्त० एत्थि । सेमगइमग्गणासु सन्त्रपदा० लोग० असंखे०भागे । एवं जाव० ।

े २१२. पोसणाणु० दुविहो णि०—ग्रोघेण ग्रादेसे० । त्रोघेण भुज०ग्राविठ केव० पोमिदं ? सव्वलोगो । अवत्त० केव० पोसिदं ? लोग०
ग्रासेव०भागो । एवं तिरिक्खा० । एवरि अवत्त० एत्थि । त्रादेसेण ऐरइयसव्वपदेहिं लोग० असंखे०भागो छ चोइस० देस्रणा । एवं विदियादि सत्तमा ति । णवरि
सगपोभएं । पढमाए खेतं । सव्वपंचिदियतिरिक्ख-मणुसग्राविक भृज - अप्प०-अविठि०
लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । एवं मणुसतिए । एवरि अवत्त० लोग०
ग्रासंखे०भागो । देवेसु सव्वपद० लोग० असंखे०भागो अहु एविचोइस० । भवणादि जाव
सव्वद्वा त्ति सव्वपदाएं सगपोमएं कायव्वं । एवं जाव० ।

लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पदके उदीरक जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है? लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार तिर्धिश्लोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें श्रवक्तव्यपद नहीं है। श्रादेशसे नारिक्योंमें सब पद्दोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रोर त्रस्तालीके चोदह भागोमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार दमरी प्रथिवीसे लेकर छटी प्रथिवी तकके नारिक्योंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली प्रथिवीमें चेत्रके समान भंग है। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्धिश्च श्रोर अवस्थितपदके उदीरक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार मनुष्यित्रकमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें श्रवक्तव्यपदके उदीरक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार मनुष्यित्रकमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें श्रवक्तव्यपदके उदीरक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। देवोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण श्रोर त्रसनालीके चोद इभागोंमेंसे कुष्ठ कम श्राठ श्रोर नो भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। स्वावािसेयोंसे लेकर सर्वार्थिपिद्ध तकके देवोंमें श्रपना श्रपना स्पर्शन करना चाहिए। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

त्रिश्रापार्थ — स्रोघसे स्रोर स्रादेशसे गितमार्गणाके सब मदोंमं जहाँ जो म्पर्शन है वह वहाँ मुजगार, श्रल्पतर स्रोर स्रवस्थित पदके उदीरकोंका हाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। मात्र स्रवक्तव्यपदके उदीरकोंका स्पर्शन लोकके स्रासंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। कारणका निर्देश हम पूर्वमें कर स्राये हैं, इसलिए खांघसे खौर मनुष्यित्रकमें इस पदके उदीरकोंका स्पर्शन लोकके स्रसंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

१२१२. कालानुगमकी खपेता निर्देश दो प्रकारका है—स्रोध श्रीर श्रादेश। स्रोधसे मुजगार, श्रान्पतर श्रीर श्रावस्थितपदके उदीरक जीवोंका कितना काल है ? सर्वदा है। श्रावक्तव्य-पदके उदीरक जीवोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इसीप्रकार तिर्ण होंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें श्रावक्तव्यपद नहीं है।

§ २१३. कालाणुगमेण दुविहो णि० — ऋोघेण ऋादेसे०। ऋोघेण ऋज०-ऋप्प०-ऋवद्वि० केविचरं? सम्बद्धा। ऋवत्त० जह० एगसमग्रो, उक्क० संखेखा समया। एवं तिरिक्खा०। णवरि श्रवत्त० णित्थ।

१२१४. आदेसेण ऐरइय० भुज०-अष० जह० एयस०, उक० श्राविक० श्रसंखे०भागो । श्रविद्वि सन्बद्धा । एवं सन्बिणेरइय०-सन्वपीचिदयितिरिक्ख-देवा भवणादि जाव श्रवराजिदा ति ।

१२१४. आदेशसे नारिकयोंमें भुजगार और श्रव्यतर पदके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रावितके असंख्यातवें भागप्रमाण है। श्रवस्थितपदके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सब नारकी, सब पख्रेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य देव श्रीर भवनवासियोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ — पहले नारिकयों में एक जीवकी अपेता भुजगारपदके उदीरकों का जघन्य कान एक समय और उत्कृष्ट काल चार समय तथा अल्पतरपदके उदीरकों का जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय बनला आये हैं। इसी तथ्यको ध्यानमें रखकर यहाँ पर नाना जीवों की अपेता भुजगार और अल्पतरपदके उदीरकों का जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है, क्यों कि अनेक नारकी जीव भी उक्त दोनों पद एक समय तक करके दूसरे समयमें न करें यह भी सम्भव है और नारिकयों की संख्या असंख्यात होने से लगातार असंख्यात जीव भी कमसे यदि उक्त दोनों पद करें तो भी सब कालका योग आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है। पहले एक जीवकी अपेता अवस्थित पदके उदीरकों का जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्भुहूर्त बतला आये हैं, इसलिए यहाँ पर नाना जीवों की अपेता इस पदके उदीरकों का सब काल बन जाने से वह उक्त प्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

\$ २१५. मनुष्यों में नारिकयों के समान भङ्ग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रवक्तव्य पदके उदीरकोंका भंग श्रोघके समान है। मनुष्य पर्याप्त श्रीर मनुष्यिनियों में भुजगार, श्रल्पतर श्रीर श्रवक्तव्यपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है धीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्रविथतपदके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सर्वार्थिसिद्धिमें जानना शाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें श्रवक्तव्यपद नहीं है। मनुष्य श्रप्याप्तकों में भुजगार श्रीर श्रव्यतर-पदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविक श्रसंख्यातवें भाग-प्रमाण है। श्रवस्थितपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके

विशेषार्थ — अवक्तव्यपदकी उदीरणा उपशमश्रेणिसे उतरते समय ही होती है। और उपशमश्रेणि पर आरोहणका काल कमसे कम एक समय और लगातार संख्यात समय है, इसलिए अवक्तव्यपदका जघन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है।

भागो । एवं जाव० ।

§ २१६. त्रांतराणु० दुविहो णि०—न्त्रोघे० त्रादेसे० । त्रोघेण भुज०-त्रप्प०-त्रविद्वि णित्थ त्रांतरं । त्रवत्त० जह० एयसमञ्रो, उक्त० वासषुधत्तं । एवं तिरि-क्लेसु । णवरि अवत्त० एात्थि । त्रादेसेएा एोरइय० भुज०-त्रप्प० जह० एयस०, उक्त० त्रांतोसु० । त्रविद्वि एात्थि त्रांतरं । एवं सन्वणेरइय-सन्वपंचिदियतिरिक्ख-सन्वदेवा त्ति । मणुसतिए एगारयभंगो । णवरि अवत्त० त्रोघं । मणुसत्रपञ्ज० भुज०-त्रप्प०-त्रवद्वि० जह० एयस०, उक्क० पिलदो० त्रसंखे०भागो । एवं जाव० ।

§ २१७. भावो सव्वत्थ स्रोदइओ भावो । एवमेदेसिमुच्चारणावलेण परूवणं कादृण संपहि अप्पावहुत्रपरूवणद्वमुत्तरं पर्वधमोदारइस्सामो—

असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—मनुष्य पर्याप्त श्रीर मनुष्यिनियोंकी संख्या संख्यात है, इसलिए इनमें मुजगार, श्रालपतर श्रीर श्रवक्तव्यपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। मनुष्य श्राप्योप्त यह सान्तर मार्गणा है श्रीर इनकी संख्या श्रारंख्यात है, इसलिए इनमें भुजगार श्रीर श्रालपतर पदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल श्रावलिके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण तथा श्रावन्थितपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेप वथन सुगम है।

§ २१६. श्रन्तरानुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोध श्रीर श्रादेश। श्रोधसे मुजगार, श्रल्पतर श्रोर श्रवस्थितपदके उदीरकोका श्रन्तरकाल नहीं है। श्रवत्त व्यपटके उदीरकोका ज्ञयन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षप्रथक्त्वप्रनाग है। इसीप्रकार सामान्य तिर्यश्चोंमं जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषना है कि इनमें श्रवक्तव्यपद नहीं है। श्रादेशसे नारिक्योमें मुजगार श्रीर श्रत्पतरपदके उदीरकोंका ज्ञयन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर श्रव्यक्ति है। श्रविष्ठतार सब नारकी, सब पश्चेन्द्रिय तिर्यश्च श्रीर सब देशोंमे जानना चाहिए। मनुष्यितकमं नारिक्योंके समान मंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें श्रवक्तव्यपदके उदीरकोंका भंग श्रीधके समान है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मुजगार, श्रत्पतर श्रीर श्रवस्थितपदके उदीरकोंका ज्ञयन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पत्यके असंख्यातर्वे भागप्रमाण है। इसीप्रकार श्रनहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विश्रोषार्थ — श्रोघप्ररूपणामें श्रौर मनुष्यत्रिकमें श्रवत्तः व्यवदके उदीरकोंका जघन्य श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर उपशामकोंके जघन्य श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तरको ध्यानमें रखकर कहा है। सब नारकी, सब पश्लोन्द्रिय तिर्यश्च श्रौर सब देवोंमें भुजगार श्रौर श्रल्पतरपद कमसे कम एक समयके श्रन्तरसे श्रौर श्रिषकसे श्रिषक श्रन्तर्भुहूर्तके श्रन्तरसे तियमसे होते हैं। इसीसे इनमें इन पहोंके उदीरकोंका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्भुहूर्त कहा है। मनुष्य श्रप्याप्त यह सान्तर मार्गणा है। इसका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीसे इसमें सब पदोंके उदीरकोंका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर एक श्रम्य श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

५ २१७. भाव सर्वत्र ऋौद्यिक है। इसप्रकार इनका उद्यारणाके बलसे कथन करके स्त्रब

🛞 अप्पाबहुअं ।

§ २१८. सुगममेदमिहयारपरामरसवक्कं ।

- 🛞 सन्वत्थोवा अवत्तन्वपवेसगा।
- २१९. कि कारणं ? उत्रसमसेढीए सन्त्रीयसमं कादृण परिवदमाणजीवेसु चेत्र तद्ववलंभादो ।
 - 🛞 भुजगारपवेसगा श्रणंतगुणा।

२२०. किं कारणं ? दुसमयसचिदेइंदियजीवाणमेत्थ पहाणभावेणावलंबणादो ।

- 🛞 ऋष्पदरपवेसगा विसेसाहिया।
- २२१. किं कारणं ? मिच्छत्तं पिडवज्जमाणसम्माइद्वीणं समत्तं पिडवज्जमाण-मिच्छाइद्वीणं च जहाकमं भुजगारप्यद्रपरिणदाणं सत्थाणमिच्छाइद्वीणं च सञ्बत्थ भुजगारप्यद्रपवेमगाण समाणत्त संते वि सम्मत्तमुप्याण्माणाणादियमिच्छाइद्वीहि सह दंसण-चारित्तमोहक्खवयजीवाणं भुजगारेण विणा श्रप्यद्रमेव कुणमाणाणमेत्थाहि-यत्तदंसणादो ।
 - 🛞 अषद्विदपवेसगा असंखेळगुणा ।
 - § २२२. किं कारणं ? त्रांतोमुहुत्तसंचिदेइंदियरापिस्स पहाणत्तादो ।

एवमोघो समत्रो ।

श्राल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए श्रागेका प्रबन्ध लिखते हैं-

- अल्पबहुत्वका अधिकार है।
- ६ २१८. श्रिधिकारका परामर्श करानेवाला यह वचन सुगम है।
- * अवक्तव्यप्रवेशक जीव सबसे स्तीक हैं।
- ६२१८. क्योंकि उपशमश्रेणिमे सर्वोपशम करके गिरनेवाले जीवोमे ही यह पद पाया जाता है।
 - अनसे अजगारप्रवेशक जीव अनन्तगुणे हैं।
- § २२०. क्योंकि दो समयके भीतर सिद्धत हुए एकेन्द्रिय जीवोका यहाँ पर प्रधानभावसे श्रवलम्बन लिया है।
 - * उनसे अल्पतरप्रवेशक जीव विशेष अधिक है।
- § २२१ क्योंकि क्रमसे भुजगार घोर श्रल्पतरपदसे परिग्रत हुए मिध्यात्वको प्राप्त होने-वाले सम्यग्दष्टि घोर सम्यक्वका प्राप्त होनेवाले मिध्यादृष्टि तथा भुजगार घोर श्रल्पतरपदमे प्रवेश करनेवाले स्वस्थान मिध्यादृष्टि जीव यद्यपि सर्वत्र समान हैं तो भी सम्यक्वको उत्पन्न करनेवाले श्रनादि मिध्यादृष्टि जीवोंके साथ भुजगारके बिना केवल श्रल्पतरपदको ही प्राप्त ऐसे दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनिय कर्मकी चपगा करनेवाले जीवोंकी यहाँ पर श्रिष्ठकता देखी जाती है।
 - अनसे अवस्थितप्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं।
 - ६ २२२. क्योंकि अन्तर्भुहूर्तके भीतर सिञ्चत हुई एकेन्द्रिय जीवराशिकी प्रधानता है। इस प्रकार श्रोघप्ररूपणा समाप्त हुई।

२२३. श्रांदेसेण गोरइय० सन्वत्थोवा भुज पवे०। श्रप्प० विसेसा०। श्रविष्ठ० श्रसंखे०गुणा । एवं मन्वणेरइय०-तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव श्रवराजिदा ति । पंचिं०तिरिक्खश्रपज्ज० सन्वत्थोवा भ्रज०-श्रप्प०-पवे०। श्रविष्ठ० श्रसंखेज्जगुणा । मणुसेसु सन्वत्थोवा श्रवत्त०उदीर० । भ्रज० श्रसंखे०गुणा । श्रप्प० विसेमा०। श्रविष्ठि० श्रसंखे०गुणा । एवं मणुमपज्ज०-मणुमिणी० । एवरि संखेजजगुणा कायन्वा । एवं सन्वहे । एवरि श्रवत्त० उदीर० एत्थि । एवं जाव० ।

एवं भुजगारी समत्ती ।

🛞 पदणिक्खेव-वड्डीय्रो कादव्वाय्रो ।

६ २२४. एदेण मुत्तेण ममप्पियाणं पदणिक्खेव-वड्ढीणमुच्चारणावलंबणेण परूवणं कस्सामो । तं जहा—पदणिक्खेवे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणिश्रोगदाराणि—समुक्तित्तणा मामित्तमप्पावहुए ति । समुक्तित्तणा दुविहा— जहण्णा उक्कस्सा
च । उक्कस्से पयद । दुविहो णि०—श्रोघे० श्रादेसे० । श्रोघेण श्रात्थि उक्क०
वड्डी उक्क० हाणी उक्क० श्रवद्वाणं । एवं चदुसु गदीसु । एव जाव० । एवं जहण्णयं पि णेद्व्वं ।

§ २-३ श्रादेशमे नारिकयोमे भुजगारप्रवेशक जीव सबसे स्तोक है। उनसे श्रल्पतरप्रवेशक जीव विशेष अधिक है। उनसे श्रविध्यतप्रवेशक जीव श्रसंख्यातगुणे है। इसीप्रकार
सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिक, सामान्य देव द्यौर भवनवासियोसे लेकर
श्रपराजित तकके देवोमे जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्त श्रोर मनुष्य श्रप्याप्त
जीवोंमे भुजगार श्रोर श्रल्पतरप्रवेशक जीव सबसे स्तोक है। उनसे श्रविध्यतप्रवेशक जीव
श्रसंख्यातगुणे है। मनुष्योमे श्रवक्तव्यउदीरक जीव सबसे स्तोक है। उनसे भुजगारउदीरक
जीव श्रसंख्यातगुणे है। उनसे श्रल्पतरउदीरक जीव विशेष श्रिषक है। उनसे श्रविधतउदीरक
जीव श्रसंख्यातगुणे है। इमीप्रकार मनुष्य पर्याप्त श्रोर मनुष्यिनयोमे जानना चाहिए। किन्तु
इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यातगुणेके स्थानमे मंख्यातगुणे करने चाहिए। इमीप्रकार सर्वार्थसिद्धिमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें श्रवक्तव्यउदीरक जीव नहीं है।
इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चहिए।

इसप्रकार भुजगार समाप्त हुआ।

अपदिनिचेप श्रीर वृद्धि करनी चाहिए।

५२२४. इस सूत्रके आश्रयसे मुख्यताको प्राप्त हुए पदिनत्तेप और वृद्धिका उच्चारणाके अवलम्बन द्वारा प्ररूपण करते हैं। यथा—पदिनत्तेपका प्रकरण हैं। उसमे ये तीन अनुयागद्वार हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। समुत्कीर्तना दो प्रकारकी हैं—जधन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका हैं—आंघ और आदेश। आंघसे उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान है। इसीप्रकार चारो गतियोंमें जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। इसीप्रकार जघन्य भी ले जाना चाहिए।

§ २२५. सामित्तं दुहिहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—-श्रोघे० श्रादेसे० । श्रोघेण उक्क० वड्ढी कस्स ? श्रण्णद्रस्स जो एगमुदीरेमाणो मदो देवो जादो तदो श्रद्ध उदीरेदि तस्स उक्क० वड्ढी । तस्सेव से काले उक्कस्समवद्धाणं । उक्क० हाणी कस्स ? श्रण्णद० जो णव उदीरेमाणो संजमं पिडवण्णो तदो चत्तारि उदीरेदि तस्स उक्कस्सिया हाणी ।

२२६. आदेसेण ऐरइय० उक्क० वही कस्स ? श्राणद० व उदीरेमाणो जो दस उदीरेदि तस्म उक्क० वही । तस्सेव से काले उक्क० अवद्वाणं । उक्क० हाणी कस्स ? श्राण्यद० जो णव उदीरेमाणो व उदीरेदि तस्स उक्क० हाणी । एवं सब्व- ऐरइय०-देवा० जाव० णवगेवजा ति । तिरिक्ख-पंचिं०तिरिक्खतिए उक्क० वही कस्स ? श्राण्यद० जो पंच उदीरेमाणो दस उदीरेदि तस्स उक्क० वही । तस्सेव से काले उक्कस्समवद्वाणं । उक्क० हाणी कस्स ? श्राण्यद० एव उदीरे० पंच उदीरेदि तस्स उक्क० हाणी । पंचिदियतिरिक्खश्रपज्ज०-मणुसश्रपज्ज० उक्क० वही कस्स ? श्राण्यद० श्रद्ध उदीरे० दम उदीरेदि तस्स उक्क० हाणी । उक्क० हाणी कस्स ? श्राण्यद० दस उदीरे० श्रद्ध उदीरेदि तस्स उक्क० हाणी । एगदरत्थ अवद्वाणं ।

ः २२७. मणुसतिए उक्त० बह्ही कस्स ? अण्णद० जो चत्तारि उदीरे० दस

५२४ स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य श्रीर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है —श्रोघ श्रीर श्रादंश । श्रोघसे उत्कृष्ट वृद्धि किमके होती है ? एक प्रकृतिकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्थतर जीव मरकर देव हुआ श्रीर श्राठ प्रकृतियोंकी उदीरणा करने लगा उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है । उसीक तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट श्रवस्थान होना है । उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? नौ प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्थतर जीव संयमको प्राप्त हो चार प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाला होती है ।

्र २२६. श्रादेशसे नारिकयोमें उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती हैं। छहकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्यतर जीव दसकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती हैं। उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट श्रवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं? नौकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्यतर जीव छहकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य देव श्रीर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। सामान्य तिर्यश्च श्रीर पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रकमें उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती हैं? पाँचकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्यतर जीव दमकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती हैं। उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट श्रवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं? नौकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्यतर जीव पाँचकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती हैं। पश्चेन्द्रिय निर्यश्च श्रपर्याप्त श्रोर मनुष्य श्रपर्याप्त जीवोंमें उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती हैं? श्राठकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्यतर जीव दसकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती हैं। उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं? दसकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्यतर जीव श्राठकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती हैं। उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं? दसकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्यतर जीव श्राठकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती हैं। किसी एक जगह उत्कृष्ट श्रवस्थान होता हैं।

५ २२७. मनुष्यत्रिकमें उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती हैं ? चारकी उदीरणा करनेवाला जो

उदीरेदि तस्स उक विश्वी । तस्सेव से काले उक व्यवहार्ण । उक हाणी कस्स ? अण्णद ण्य उदीरे चत्तारि उदीरेदि तस्म उक हाणी । अणुहिसादि सम्बद्धा त्ति उक बही कस्स ? अण्णद जो छ उदीरे ण्य उदीरेदि तस्स उक वही । उक हाणी कस्स ? अण्णद ण्य उदीरे इ उदीरेदि तस्म उक हाणी । एगदरस्थमबट्टाणं । एवं जाय ।

६२२८. जहएएो पयदं । दृतिहो णि० — श्रोघे० श्रादेसे० । श्रोघेए जह० वड्ढी कस्म ? श्रण्णद० एव उदीरे० दम उदीरेदि तस्म जह० वड्ढी । जह० हाएरी कस्म ? श्रएएद० दस उदीरे० एव उदीरेदि तस्म जह० हाएरी । एगदग्न्थ श्रवद्वाएं । एवं चद्सु गदीसु । पवि सए इसि।दि सन्बद्घा ति जह० वड्ढी कस्स० ? श्रण्णद० श्रद्घ उदीरे० एव उदीरेदि तस्म जह० वड्डी । जह० हाणी कस्म ? श्रण्णद० एव उदीरे० श्रद्घ उदीरेदि तस्म जह० हाणी । एगदरन्थ श्रवद्वाएं । एवं जाव० ।

२२९. ऋष्पात्रहुश्चं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—
श्रोघे० आदेसे० । श्रोघेण सन्तरथोवा उक्क० हाणी । वट्टी अवद्वाणं च दो वि सरिसाणि विसेसा० । एनं चदुसु गदीसु । एवि पंचि०िरिक्खऋपज०-मणुसऋपज०श्वन्यतर जीव दसकी उदीरणा करता है उसक उत्कृष्ट बृद्धि होती हैं । उसीके तदनन्तर
समयमे उत्कृष्ट अवस्थान होता है । उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं । नौकी उदीरणा करनेवाला
जो अन्यतर जीव चारकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती हैं । अनुदिशसे लेकर
सर्वार्थीसिद्धि तकके देवोमे उत्कृष्ट बृद्धि किसके होती हैं । उत्कृष्ट हानि किसके
होती हैं । नौकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव छहकी उदीरणा करनेवाला जो
अन्यतर जाव नौकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव छहकी उदीरणा करता है उसके
उत्कृष्ट हानि होती है । किसी एक जगह उत्कृष्ट अवस्थान होता है । इसीप्रकार अनाहारक
मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ २२८. जघन्यका प्रकरण हैं। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ और श्रादेश। श्रोघसे जघन्य दृद्धि किसके होती हैं ? नौकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्यतर जीव दसकी उदीरणा करना है उसके जघन्य दृद्धि होती हैं। जघन्य हानि किसके होती हैं १ दसकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्यतर जीव नौकी उदीरणा करना हैं उसके जघन्य हानि होती हैं। किसी एक जगह जघन्य श्रवस्थान होता हैं। इसीप्रकार चारो गितयोमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता हैं कि श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जघन्य दृद्धि किसके होती हैं ? श्राठकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्यतर जीव नौकी उदीरणा करना है उसके जघन्य दृद्धि होती हैं। जघन्य हानि किसके होती हैं ? नौकी उदीरणा करनेवाला जो श्रन्यतर जीव श्राठकी उदीरणा करना है उसके जघन्य दृद्धि होती हैं। इसीप्रकार श्रवस्थान होती हैं। किसी एक जगह जघन्य श्रवस्थान होता हैं। इसीप्रकार श्रवाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

१२२८. श्रल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य श्रीर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोप श्रीर श्रादेश । श्रोघसे उत्कृष्ट हाति सबसे स्नोक है। उत्कृष्ट वृद्धि श्रीर श्रवस्थान दोनों समान होकर विशेष श्रीयक हैं। इसीप्रकार चारों गतियामे जानना

त्र्रणुद्दिसादि सन्बद्घा ति उक्त वड्ढी हागी श्रवट्ठागं च तिण्णि वि सरिसाणि। एवं जाव ।

§ २३०. जह० पयदं । दुविहो णि०—श्रोघे० त्रादेसे० । श्रोघेण जह० वही हाणी श्रवट्ठाणं च तिरिण वि सरिसाणि । एवं चदुसु गदीसु । एवं जाव० ।

एवं पद्गिक्खेवो समत्तो ।

६ २३१. बह्विउदीरणाए तत्थ इमाणि तेरम त्राणयोगद्दाराणि—समुक्तिणण जाव श्रप्पाबहुए ति । समुक्तिणणणु० दुविहो णि० — श्रोघे० त्रादेसे० । श्रोघेण श्रात्थ संखेजमागवह्वी द्वाणी संखेजगुणवह्वी द्वाणी श्रवद्वि० श्रवत्त० । एवं मणुस-तिए । श्रादेसेण गोरः य० श्रात्थ संखेजभागवह्वि-द्वाणि-श्रवद्वा० । एयं मन्त्रणेग्द्य०-पंचितिरि०श्रपज्ञ०-मणुसश्रपज्ञ०-मन्त्रदेवा ति । तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खतियम्मि श्रात्थ संखे०भागवह्वी-द्वाणी मंखे०गुणवह्वी हाणी श्रवद्वाणै० । एवं जाव ० ।

\$ २३२. सामित्ताणु० दुविहो णि०—श्रोघे० श्रादेसे०। श्रोघेण संखे०भाग-वट्टी हाणी संखे०गुणवट्टी श्रवहा० कस्स १ श्रण्णद० सम्माइ० मिच्छाइ०। संखे०-गुणहाणी कस्स १ श्रण्णद० सम्माइ०। श्रवत्त० भ्रुजगारभंगो। एवं मणुसतिए। चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्त, मनुष्य श्रपर्याप्त श्रौर श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोमें उत्कृष्ट वृद्धि, हानि श्रौर श्रवस्थान तीनों ही समान है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

्र २२०. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे जघन्य वृद्धि, हानि श्रोर श्रवस्थान तीनों ही समान हैं। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार पदनिचेप समाप्त हुआ।

१२३१. वृद्धि उदीरणाका प्रकरण है। उसमें ममुत्कीर्तनासे लेकर श्रल्पबहुत्व तक ये तेरह श्रनुयोगद्वार है। समुत्कीर्तनानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश हो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्राघसे संख्यातमागवृद्धि, संख्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमागविद्यातमा

े २३२ स्वामित्वानुगमकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि,, संख्यातगुणवृद्धि श्रीर श्रवस्थान किसके होते हैं ? श्रन्यतर सम्यग्दृष्टि श्रीर मिथ्यादृष्टिके होते हैं। संख्यातगुणहानि किसके होती हैं ? श्रन्यतर सम्यग्दृष्टिके होती हैं। श्रवक्तव्य उदीरणाका भंग भुजगारके समान है। इसी प्रकार मनुष्य-

१ भा॰ प्रतो गुरावड्ढी हारगी स्रवट्टारा० इति पाठः।

सन्वणिरय०-पंचिदियतिरिक्खश्चपञ्ज०-मणुसश्चपञ्ज०-सन्वदेवा ति भुजगारभंगो । तिरि०-पंचि०तिरिक्खतिए भुजगारभंगो । एविरि संखेजगुणवह्नी कस्म ? श्चरएएद० मिच्छाइष्टि० । एवं जाव० ।

§ २३३. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। श्रोघेण संखे०भागवड्ढी जह० एयस०। उक० चत्तारि समया। संखे०भागहाणी जह० एयस०, उक० तिणिण समया। श्रवद्वि० जह० एयस०, उकक० श्रंतोप्त०। संखे०गुणवड्ढी जह० एयस०, उक० वे समया। संखे०गुणहाणि-अवत्त० जहण्णुक० एयसमञ्रो। एवं मणुसतिए। णवरि संखे०गुणवड्ढि० जहण्णु० एयस०। सन्त्रणेरइय०—पंचितिरि०-अपज०-मणुसश्रपज० सन्त्रदेवा ति भुजगारभंगो। तिरिक्ख-पंचि०तिरिक्खतिए भुजगारभंगो। णवरि संखे०गुणवड्ढि० जहण्णु० एयसमञ्रो। एवं जाव०।

त्रिकमें जानना चाहिए। सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यश्च श्रपर्याप्त, मनुष्य श्रपर्याप्त श्रोर सब देवोंमें भुजगारके समान भंग है। सामान्य तिर्यश्च श्रोर पञ्चेन्द्रिय निर्यश्चित्रिकमें भुजगारके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि किसके होती है ? श्चन्यतर मिध्यादृष्टिके होती है। इसी प्रकार श्चनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

५२३३. कालानुगमकी अपेचा निर्देश दे। प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघमे संख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल चार समय है। संख्यात भागहानिका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल तीन समय है। श्रावस्थित उदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रान्तर्मृहूर्त है। संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल दो समय है। संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है । इसीप्रकार मनुष्यित श्रोर श्रावक्तव्यवदीरणाका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। इसीप्रकार मनुष्यित कानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। सब नारकी, पश्चेन्त्रिय तिर्यव्य श्रार पञ्चेद्रिय तिर्यव्य श्रीर सब देवोंमें मुजगारके समान भंग है। सामान्य तिर्यव्य श्रीर पञ्चेद्रिय तिर्यव्य श्रीर अगारके समान भंग हे। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। इसीप्रकार श्रानाहारक कार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — पहले भुजगारानुगममें भुजगार उदीरणाका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल चार समय, श्रहगतरउदीरणाका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल तीन समय तथा श्रवस्थितपदका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुं हूर्न घटित करके बतला श्राये हैं। वही यहाँपर कमसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि श्रीर श्रवस्थितउदीरणा का जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल जान लेना चाहिए। जो उपशामक उतरते समय श्रन्यतम संज्वलनकी उदीरणा करता हुश्रा मर कर देव होने पर श्राठकी उदीरणा करने लगता है उसके संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है श्रीर जो उपशामक उतरते समय श्रन्यतम संज्वलनकी उदीरणा करता हुश्रा श्रन्यतम वेदके साथ दोकी उदीरणा करता है श्रीर तदनन्तर समयमें मरकर देव होनेपर श्राठकी उदीरणा करने लगता है उसके संख्यात गुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त होता है। यही कारण है कि यहाँ पर संख्यात गुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल दो समय कहा है। जो मिध्यादृष्टि जीव नौ की

१२३४. श्रंतराणु० दृविहो णिद्देसो—श्रोघेण श्रादेसे० । श्रोघेण संखे०भाग-विद्व-हाणि-श्रवद्वि०-श्रवत्त० उदीर० भुजगारभंगो । संखेजगुणविद्व-हाणी० जह० एग० श्रंतो०, उक्त० उवहुपोगगल० । सव्यणेर०-पंचि०तिरिक्खश्रप०-मणुसश्रप०-सव्यदेवा त्ति भुजगारभंगो । तिरिक्ख-पंचि०तिरिक्खतिए भुज०भंगो । णविर तिरिक्खेसु संखेजगुणविद्वि० जह० पित्ति श्रुचे०भागो, उक्त० उवहुपोगगलपरियद्वं । पंचिदियतिरिक्खितए संखेजगुणविद्वी० णित्थि श्रंतगं । मणुसतिए भुज०भंगो । णविर संखे०गुणविद्व-हाणि-श्रवत्त० जह० श्रंतोमु०, उक्त० पुठवकोडिपुवनं । एवं जाव० ।

उर्दारणा करना हुआ अनन्तर समयमें संयत होकर चारकी उदीरणा करने लगता है इसके संख्यानगुणहानिका काल एक समय प्राप्त होनेसे यहाँ इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। जो किसी भी प्रकृतिकी उदीरणा नहीं करनेवाला उपशान्तमोह जीव गिर कर दसवें गुणस्थानमें एककी उदीरणा करने लगता है उसके अवक्तव्य उदीरणाका काल एक समय मात्र प्राप्त होनेसे इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। मनुष्यित्रकमें यह श्रोघ- प्रकृषणा वन जाती है, इसलिए उनमें श्रोघके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र संख्यातगुण वृद्धि उदीरणाका उत्कृष्ट काल श्रोघप्रकृषणामें दो गतियोंकी अपेत्ता घटिन करके बनलाया गया है जो मनुष्यित्रकमें सम्भव नहीं है, इसलिए इनमें उक्त पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। पञ्चित्रिय निर्यञ्चित्रकमें पांचकी उदीरणा करनेवाला जो संयतासंयत जीव मिध्यात्वमें जाकर दसकी उदीरणा करने लगता है उसके संख्यातगुणवृद्धिका काल मात्र एक समय प्राप्त होनेसे यहां पर इन तीनों प्रकारके तिर्यञ्चोंमें इस पदका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। शेष कथन भुजगार उदीरणाके समान होनेसे उसे दृष्टिपथमें लाकर यहां घटित कर लेना चाहिए। पुनकक्त दोषके भयसे यहां पर हमने उसका अलगसे निर्देश नहीं किया है।

ह २३४. श्रन्तरानुगमकी श्रपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्यउदीरणाका भंग भुजगारउदीरणा के समान है। सख्यानगुणवृद्धि श्रीर संख्यातगुणहानिका जघन्य श्रन्तर क्रमसे एक समय श्रीर श्रन्तमुंहूर्त है तथा दोनोंका उत्कृष्ट श्रन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। सब नारकी, पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपयाप्त, मनुष्य श्रपयाप्त श्रीर सब देवोमें भुजगारउदीरणाके समान भंग है। सामान्य तिर्यञ्च श्रीर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रकमें भुजगारउदीरणाके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सामान्य तिर्यञ्चोंमें संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य श्रन्तर पत्यके श्रसंख्यातवे भागप्रमाण है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर द्यार्घ पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रकमें संख्यातगुणवृद्धिका श्रन्तरकाल नहीं हं। मनुष्यित्रकमें भुजगारउदीरणाके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धिका श्रीर श्रवक्तव्य उदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तमुंहर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्व-कोटिप्रथक्तवप्रमाण है। इसीप्रकार श्रनाहारक यार्गणातक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — जो उपशान्तमोह जीव गिरते समय एककी उदीरणा करता हुआ अनन्तर समयमें दोकी उदीरणा एक समयके अन्तरसे मरकर देवोमें उत्पन्न हो आठकी उदीरणा करने लगता है उसके संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय बन जाता है। तथा जो मिथ्या-

इ २३५. णाणाजीविहि भंगविचयाणु० दुविहो णिदेसो—ओघेण आदेसेण य ।

 अोघेण संखे०भागविह-हाणि-अविह० णिय० अत्थि, सेसपदाणि भयणिजाणि ।

 भंगा २७ । आदेसेण णेरहय० अविह० णिय० अत्थि, सेसपदा भयणिजा । भंगा ९ ।

 एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिदियतिरिक्ख-मणुसतिय-सव्वदेवा ति । णविर भंगविसेसो

 जाणियव्वो । तिरिक्खेस संखे०भागविही हाणी अविह० णिय० अत्थि, सिया एदे

च संखे०गुणविहुउदीरगो च, सिया एदे च संखेजगुणविहुउदीरगा च ३ । मणुस-

दृष्टि जीव नौकी उदीरणा करता हुआ संयत हो चारकी उदीरणा करके संख्यातगुणहानि करता हैं। पुन: वह अन्तर्मुहर्त बाद मिथ्यात्वमे जाकर और अन्तर्मुहर्तके भीतर संयत हो नौकी उदीरणाके बाद चारकी उदीरणा करने लगता है उसके संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्महर्त बन जाता है। यही कारण है कि यहाँ पर आधसे संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय और संख्यात गणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्महर्त कहा है। संख्यातगण-हानिका यह जबन्य अन्तर दो बार उपशमश्रेशिपर उदानेसे भी प्राप्त किया जा सकता है। यथा कोई उपशासक अपूर्वकरण जीव चारकी उदीरणा करता हुआ। श्रातिवृत्तिकरण हो दोकी उदीरणा द्वारा संख्यातगुणहानि करता है। पुनः वह अन्तर्भहर्तक भीतर संवेदभागमें दोकी उदीरणा करता हुआ अवंदभागमे नपुंसकवेदकी उद्यव्यन्छित्तिकर एककी उदीरणा द्वारा संख्यात-गुगाहानि करता है उसके संख्यात्गुगाहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्महर्त प्राप्त होता है। पर्वमे दिये गये उदाहरणकी अपेचा इस दूसरे प्रकारमें अन्तर कालका समय कम है, इसिलए यहाँ इसकी प्रधानता है। पिछला उदाहरण केवल अन्तरका प्रकार बतलानेके लिए दिया है। इन दोनों पदांका उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पदल परिवर्तन प्रमास है यह स्पष्ट ही है। सामान्य तिर्यक्कोंमें पाँचकी उदीरणा करनेवाला जो जीव दसकी उदीरणा करता है वह उपशमसम्यग्दृष्टि संयता-संयतसे च्युत होकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ जीव ही हो सकता है। श्रीर ऐसे जीवकी यह अवस्था पनः कमसे कम पल्यका असंख्यातवाँ भाग काल जाने पर और अधिकसे अधिक उपार्धपुद्रलपरिवर्तन प्रमाण काल जानेपर ही प्राप्त हो सकती है, इसलिए यहाँपर उक्त जीवोंमे संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पद्रल परिवर्तनप्रमाण बतलाया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकको कर्मभूभिकी अपेत्ता उत्कृष्ट कार्यास्थिति पूर्वकोटिपथक्त्वप्रमाण ही है, ऋतः इनमें दो बार संख्यातगुणवृद्धिका प्राप्त होना सम्भव न होनेसे इनमें उक्त पदके अन्तरकालका निषेध किया है। मनुष्यत्रिकमें अन्तर्महर्तके भ्रान्तरसे दो बार उपशामश्रेणिपर चढना श्रीर उतरना सम्भव है तथा पूर्वकाटिपृथक्तक भन्तर से भी यह सम्भव है इसलिए इनमें संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

१२३५. नाना जीवोंकी श्रापेता भंगविचयानुगमका श्राश्रय लेकर निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश । श्रोघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि श्रीर श्रादेशतपदके उदीरक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। भंग २७ होते हैं। श्रादेशसे नारिकयोंमें श्रावस्थितपदके उदीरक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। भंग नौ होते हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पक्षेन्द्रिय तिर्यक्क, मनुष्यत्रिक श्रीर सब देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि भंगविशेष जानने चाहिए। तिर्यक्कोंमें संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि श्रीर श्रवस्थितपदके उदीरक जीव नियमसे हैं। कदाचित ये हैं श्रीर एक संख्यातगुणवृद्धिका उदीरक

श्रवज्ञ वस्वपदा भयिएजा । भंगा २६ । एवं जाव ।

§ २३६. भागाभागाणु० दुविहो णि०-स्रोघे० स्रादेसे० । स्रोघेण संखे०भाग-विष्टु-हाणि० सन्वजी० केव० ? स्रसंखे०भागो । स्रविद्धि० स्रसंखेजा भागा । सेसमएंत-भंगो । एवं तिरिक्खा० । स्रादेसेण एोग्इय० स्रविद्धि० स्रमंखेजा भागा । सेसमसंखे०-भागो । एवं मन्वएोरइय०-सन्वपंचि०तिरिक्ख-मणुम-मणुमस्रपज्ञ०-देवा जाव स्रव-राजिदा ति । मणुसपज्ञ०-मणुमिणी-सन्वट्टदेवा० स्रविद्धि० संखेजा भागा । सेसपदा संखे०भागो । एवं जाव० ।

२३७. परिमाणाणु० दुविहो णि०-त्रोघेण त्रादेसेण । त्रोघेण संखे०भागविह-हाणि अविद्वि० केत्तिया ? अणंता । संखे०गुणविह्व के० ? असंखेजा । संखे०गुणहाणि-अवत्त० के० ? मंखेजा । आदेसेण मध्यणेग्ह्य०-पंचिदियति स्वित्रपञ्ज०-मणुमअपज०-मध्यदेवा अजगारभंगो । तिरिक्खेसु सध्यपदा श्रोघं । पंचि०तिरिक्खितिए सब्यपदा केत्तिया ? असंखेजा । मणुसेसु मंखे०भागविह्व-हाणि-अविद्वि० केत्ति० ? असंखेजा ।

है। कदाचित् यं हैं ऋौर नाना संख्यातगुण्यृद्धिके उदीरक है। मनुष्य ऋपर्याप्तकोमें सब पद भजनीय है। भंग २६ होत है। इसी प्रकार ऋनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — पञ्चेन्द्रिय तिर्याञ्चित्रिकमें तीन पद भजनीय है, इसलिए ध्रुव भंगक साथ २७ भंग होते हैं। तथा मनुष्यित्रिकमे पाँच पद भजनीय ह, इसलिए ध्रुव भंगक साथ २४३ भंग होते हैं। शेष कथन स्पष्ट ही है।

१२३६. मागाभागानुगमकी ऋषेचा निर्देश दो प्रकारका है—ऋषेघ ऋषेद श्रादेश। श्रोघसे संख्यातभागवृद्धि ऋषेर संख्यातभागवृत्ति उदारक जीव सब जीवोक कितने भागप्रमाण है ? ऋसंक्यातवें भागप्रमाण हैं। अवस्थितपदंक उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण है। तथा शेष पदोके उदीरक जीव अनन्तवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार तिर्यक्रामे जानना चाहिए। आदेशसे नारिकयोमे अवस्थित पदंक उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण है। शेष पदोके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्रम, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और अपराजित विमानतकके देवोमे जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यमी और सर्वार्थिसिद्धिके देवोमे अवस्थितपदंके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

^{\$}२३७. परिमाणानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—भोघ और आदेश। श्रोघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि अपेक्ष श्रोद श्रादेश प्रविध्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि अपेक्ष अपेक्ष श्रादेश प्रविध्यात हैं। संख्यातगुणवृद्धिके उदीरक जीव कितने हैं श्री अपेक्ष आदेशसे सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्या श्री संख्यात है। आदेशसे सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्या अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें भुजगारके समान भंग है। तिर्यव्योंमें सब पदोंके उदीरकोका भंग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्रविक्रकें सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं श्री आसंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागद्दानि और अवस्थित पदके उदीरक

संखे० समया । एवं जाव० ।

१२४१. अंतराणु० दुविहो णि०—श्रोषेण आदेसेण य । श्रोषेण संखेजभाग-विहु-हा - अविद्वि णित्थ अंतरं । संखे०गुणविह्वि जह० एयस०, उक्क० चोहस रादिंदियाणि । संखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक्क० पण्णारम रादिंदियाणि । अवत्त० जह० एयम०, उक्क० वामपुधत्तं । आदेसेण मन्वणेग्इय-पंचि०तिरि० अपज०मणुस-अपज०-मन्वदेवा ति भुज०भंगो । तिरिक्ख-पचि०तिरिक्खितिय० भुजगारभंगो । णविर संखेजगुणविह्वी० श्रोषं । मणुस३ भुज०भंगो । णविर संखे०गुणविह्व-हाणि-अवत्त० श्रोषं । एवं जाव० ।

जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें त्रावितके त्र्रसंख्यातवें भागके स्थानमें संख्यात समय करना चाहिए। इसी प्रकार त्र्यनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—सामान्यसे श्रानना जीव संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि श्रोर श्रव-स्थितपदकी उदीरणा करते हैं, इसलिए श्रोघसे इनका काल सर्वदा बन जानेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। संख्यातगुणवृद्धि श्राधिकसे श्राधिक श्रासंख्यात जीव करते हैं, इसलिए इस पदकी श्रपेचा जघन्य काल एक समय श्रोर उन्कृष्ट काल श्राविलके श्रासंख्यातव भागप्रमाण प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है। संख्यातगुणहानि श्रोर श्रवक्तव्यपदकी उदीरणा श्राधिकसे श्राधिक संख्यात जीव करते हैं, इसलिए इनकी श्रपंचा जघन्य काल एक समय श्रोर उन्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। यह सामान्य न्याय है इसी प्रकार गतिमार्गणाके सब भेदों में उनका परिमाण श्रीर पद जानकर काल घटित कर लेना चाहिए। मात्र श्रवस्थित पदका उन्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त होनेसे उसका काल सर्वत्र सर्वदा बन जाता है इतना विशेष जानना चाहिए।

\$ २४१. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दा प्रकारका है— आंघ ओर आदेश। श्रोघसे सख्यातमागवृद्धि, संख्यातमागहानि और अवस्थितपदके उदीरकोका अन्तरकाल नहीं है। संख्यातगुणवृद्धिक उदीरकोका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चौदह दिन रात है। संख्यातगुणवृद्धिक उदीरकोका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पन्द्रह दिन-रात है। अवक्तव्यपदके उदीरकोका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पन्द्रह दिन-रात है। अवक्तव्यपदके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्ष पृथक्तव है। आदेशसे सब नारकी, पब्चेन्द्रिय तिर्यक्ष अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोमे मुजगार उदीरणांके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें संख्यातगुणवृद्धिके उदीरकोंका अन्तर श्रोघके समान है। मनुष्यित्रकमें मुजगार उदीरणांके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें संख्यातगुणवृद्धिके उदीरकोंका अन्तरकाल औघके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—उपशम सम्यक्त्वके साथ जो संयतासंयत भिण्यात्वमे श्रात है उनका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर चौदह दिन-रात है, क्योंकि श्रायके श्रनुसार हानि होती है। श्रीर ऐसे जीवोंके संख्यातगुण्यृद्धि उदीरणा सम्भव है, इसलिए यहाँ संख्यातगुण्यृद्धि उदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर चौदह दिन-रात कहा है। तथा जो मिण्यादृद्धि उपशम सम्यक्त्वक साथ संयमका स्वीकार करते हैं उनका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रम्त करते हैं उनका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पन्द्रह दिन-रात होता है श्रीर ऐसे जावोंके संख्यातगुण्हानि उदीरणा

६ २४२. भावाणुगमेण मन्त्रत्थ स्रोदइस्रो भावो ।

६ २४३. अप्पाबहुआणु० दुविहो णि०— ओघे० आदेसे० । ओघेण सन्तत्थोवा अवत्त्र उदीर० । संखे०गुणहाणिउदीर० संखे०गुणा । संखे०गुणविष्ठ उदी० असंखे०गुणा । संखे०भागविष्ठ उदीर० अणंतगुणा । संखे०भागहाणिउदीर० विसेसाहिया । अवदि ०उदी० असंखे०गुणा । आदेसेण ऐरहय० सन्तत्थोवा मंखे०भागविष्ठ उदीर० । संखे०भागहा०उदीर० विसेसा० । अवदि ०उदीर० असंखे०गुणा । एवं मन्त्र ऐरहय० सन्तदेवा ति । एवरि मन्त्र हे मंखेअगुणं कायव्वं । तिरिक्षेत्र सन्तत्थोवा मंखे०गुण-विष्ठ उदीर० । संखे०भागविष्ठ उदी० आणंतगुणा । हाणि० विसेसा० । अवद्वि० असंखे०गुणा । एवं पंचि०तिरिक्खतिए । णवरि जिम्म अणंतगुणा तिम्म असंखे०गुणा । पंचि०तिरि०अपअ०-मणुमअपज० सन्तत्थोवा संखे०भागविष्ठ हाणि० दो वि मरिसा । अवद्वि० उदीर० असंखे०गुणा । मणुसेसु सन्तत्थोवा अवत्त०उदी० । संखे०गुणहाणि-उदीर० मखे०गुणा । मंखेअगुणविष्ठ उदी० संखे०गुणा । संखे०भागविष्ठ उदीर० असंखे०गुणा । हाणिउदी० विसेसा० । अवद्वि० उदी० असंखे०गुणा । एवं मणुसपज०-

होती है, इसिलए यहाँ पर संख्यातगुणहानि उदारणावा जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पन्द्रह दिन-रान कहा है। शप कथन सुगम है, क्योंकि उसका अनेक बार रपष्टीकरण कर आये हैं।

८ २४२. भाव सर्वत्र झोदियक होता है।

६ २४३. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दा प्रकारका है--आंघ आरे आदेश। श्रोघसे श्रवक्तव्यउदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे सख्यातगुणहानिउदीरक जीव सख्यातगुणे है। उनसे संख्यातगुणवृद्धिउदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे है। उनसे संख्यातभागवृद्धि उदीरक जीव श्रनन्तगुरो है उनसे सख्यातभागहानिउदीरक जीव विशेष श्रधिक है। उनसे श्रवस्थित उदीरक जीव श्ररांख्यातगुर्गे हैं। श्रादेशसे नारिकयोमे संख्यातभागवृद्धिउदीरक जीव सबसे स्तांक है । उनसे सरूयातभागहानिउद्दिक जीव विशेष श्रविक है । उनसे श्रविक उद्दीरक जीव श्रसंख्यात<u>म्</u>मो हैं। इक्षी प्रकार सब नारकी श्रीर सब देवोमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमे श्रसंख्यातगुरोके स्थानमे गख्यातगुरो करने चाहिए। तिर्यक्रोमे संख्यातगुणवृद्धि उदीरक जीव सबसे स्तांक है। उनसे संख्यातभागवृद्धि उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे संख्यातभागहानिउदीरक जीव विशेष श्रधिक है। उनस श्रवस्थित उदीरक जी**व** श्रसंख्यात्रागे है। इसी प्रकार पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकमे जानना चाहिए। किन्तु जहाँ पर श्रनन्तग्रा कहे हैं वहाँ श्रसंख्यातगुणे करने चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्तकोमं संख्यातभामवृद्धि श्रौर संख्यातभागहानिके उदीरक दोनो प्रकारके जीव समान हैं। उनसे श्रवस्थित उदीरक जीव श्रसंख्यातगुरो हैं। मनुष्योमे श्रवक्तव्यउदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यातगुणहानिउदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यातगुणवृद्धिउदीरक जीव संख्यातगुर्णे हैं। उनसे संख्यातभागवृद्धि उदीरक जीव श्रसंख्यातगुर्णे हैं। उनसे सख्यातभाग-हानि उदीरक जीव विशेष अधिक है। उनसे अवस्थित उदीरक जीव असंख्यातगुरो है। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त श्रीर मनुष्यिनियोमे जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें मणुसिणी० । एविरि संखेजगुर्या कायन्त्रं । एवं जाव० ।
एवं वड्ढी समत्ता । एवं पयिडद्वार्णउदीरणा ममत्ता ।
तदो 'कदि त्रावित्यं पवेसेदिं' ति पदं समत्तं ।
एवं पयिडिउदीरणा समत्ता ।

🛞 कदि च पविसंति कस्स त्रावितयं ति ।

इ २४४. श्रहियारसंभालणसुत्तमेदं। एतो उविर 'किद च पविसंति कस्स श्रावित्यमिदि विदियो गाहासुत्तावयवो विहासियव्वो त्ति पयद्वतादो। णविर एदिम्म सुत्तावयवे पयि इप्ते पार्ट पद्वे प्राव्यक्षे प्रविद्यां प्राप्त प्रविद्यां । सो वृण पयि उपत्रे प्रविद्यां प्रविद्यां उत्तरपयि प्रविद्यां च द्वित्रहों — एगेगुत्तरपयि उपत्रे प्रविद्यां प्रविद्यां च द्वित्रहों — एगेगुत्तरपयि उपत्रे प्रविद्यां प्रविद्यां प्रविद्यां च सुनमो ति एगेह सुत्ते विहासिदो । तदो प्रविद्यां पार्देकं च उव्वीतमाणि श्रोगद्दार्रहं तेसिमेत्थ विहासा जाणिय कायव्वा । तदो प्रविद्यां प्रविद्यां प्रविद्यां प्रविद्यां प्रविद्यां श्राप्त स्वाप्त श्रीण्योगद्दाराणि — समुक्तित्तणा सादि० श्रणादि० जाव श्रप्तां कुत्ति भुज० पदिण० विहीशों च ।

२४४. तत्थ समुक्तित्तणा दुविहा—ठाणसमुक्तित्तणा पयडिममुक्तित्तणा चेदि । असंख्यातगुगोके गथानमें सक्यातगुगो करने चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार वृद्धि समाप्त हुई । इसप्रकार प्रकृतिस्थान उदीरणा समाप्त हुई । इसिलिए 'कदि स्थाविलयं पवेसेदि' इस पदका व्याख्यान समाप्त हुस्रा । इसप्रकार प्रकृतिउदीरणा समाप्त हुई ।

किस जीवके कितनी प्रकृतियाँ उदयावितमें प्रवेश करती हैं।

्रश्यः अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र है। अब पूर्वोक्त कथनके आगे गाथा मत्रका 'किंद च पिवसंति कस्स आविलयं' यह दूसरा पद प्रकृतमें प्रवृत्त होनेसे व्याख्यान करने योग्य है। इतनी विशेषता है कि इस सूत्रपदमें प्रकृतिप्रवेश अनुयोगद्वार प्रतिवद्ध है, क्योंकि उदय और अनुद्यरूपसे उदयाविलमें प्रवेश करनेवाली प्रकृतिमात्रका यहाँ अधिकार है। वह प्रकृतिप्रवेश दो प्रकारका है—सूलप्रकृतिप्रवेश और उत्तर प्रकृतिप्रवेश। उत्तर प्रकृतिप्रवेश दो प्रकारका है—एकैक उत्तरप्रकृतिप्रवेश और प्रकृतिस्थानप्रवेश। उनमें मूलप्रकृतिप्रवेश और एकैक उत्तरप्रकृतिप्रवेश सुगम हैं, इसलिए इस सूत्रमें उनका व्याख्यान नहीं किया। इसलिए अलग अलग वौबीस अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर यहां पर उनका व्याख्यान जानकर कर लेना चाहिए। अत्र प्रकृतिस्थानप्रवेश प्रकृत है। उसमें समुरकृतिना, सादि, और अनादिसे लेकर अल्पबहुत्व तक ये सत्रह अनुयोगद्वार तथा मुजगार, पदिनचेप और वृद्धि ये तीन अनुयोगद्वार हैं।

§ २४४. उनमें समुत्कीतेना दो प्रकारको है—स्थानसमुत्कीर्तना श्रौर प्रकृतिसमुत्कीर्तना।

मंपहि तदुभयपरूषणाडुमुवरिमसुत्तेणावमरो कीरदे-

🛞 एत्थ पुव्वं गमणिजा ठाणसमुक्तित्तणा पयिष्ठिणिहेसो च।

% ताणि एकदो भणिस्संति ।

§ २४७. सुगमं ।

अद्वावीसं पयडीओ उदयाविलयं पविसंति ।

§ २४८. श्रद्धावीस-पयिडसमुदायप्पयमेगं पयिडिट्ठाणमुद्यावित्यं पविसमाण-मित्थि ति समुकित्तिदं हो इ। एत्थ पयिडिणिहेसी जह वि मुत्तकंठं ए परूविदो तो वि तिण्णहेसी कश्रो चेवे ति दट्टव्वो; श्रद्धावीससंखाणिहेसेणेव मोहपयडीणं णामिणिहे-सस्स जाणाविदत्तादो ।

% सत्तावीसं पयद्रीश्रो उदयावितयं पविसंति सम्मत्ते उव्वेल्लिदे ।

§ २४९. श्रद्धावीससंतकम्मियमिच्छाइद्विणा पुव्वृत्तद्वाणादो सम्मत्ते उव्वेक्षिदे श्रव इन दोनोंका कथन करनेके लिए श्रागेके सुत्रद्वारा श्रवसर करते हैं—

अ यहाँ पर सर्व प्रथम स्थानसमुत्कीर्तना अप्रौर प्रकृतिनिर्देश ज्ञातच्य है।

§ २४६. यहां पर स्रर्थात् इस प्रकृतिस्थानप्रदेश स्रानुस्रोगद्वारमें 'पुठ्वं' स्रर्थात् प्रथम ही स्थानसमुत्कीर्तना स्रोर प्रकृतिनिर्देश 'गमणिजा' स्रर्थात् स्रानुमार्गण् करने योग्य है। उनमेंसे स्थाइसप्रकृतिक स्थानसे लेकर स्रोघ स्रोर स्रादेशसं इतने प्रकृतिस्थान उद्याविलमें प्रविशमान है ऐसी प्रकृपणा करना स्थानसमुत्कीर्तना है। तथा इन प्रकृतियोंको प्रहृण् कर यह प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है ऐसी प्रकृपणा करना प्रकृतिनिर्देश है। इन दोनोंका एक प्रवन्धके द्वारा कथन करेंगे ऐसा झान करानेके लिए स्थागेका प्रतिज्ञावाक्य करते हैं—

* उन दोनोंको एक साथ कहेंगे।

§ २४७. यह सूत्र सुगम है।

*** अब्रहाईस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं।**

§ २४८. घटाईस प्रकृतिसमुदायका एक प्रकृतिस्थान उदयाविलमें प्रविशमान है यह इस सृत्र द्वारा कहा गया है। इस सृत्रमें यद्यपि मुक्तकएठ होकर प्रकृतियोंका निर्देश नहीं किया गया है तो भी उनका निर्देश किया ही है ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि घटाईस संख्याका निर्देश करनेसे ही मोहनीयकी प्रकृतियोंका नामनिर्देश जता दिया है।

* सम्यक्वकी उद्देलना करने पर सत्ताईस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं। १२४८. श्रष्टाईस सत्कर्मिक मिध्यादृष्टिके द्वारा पूर्वोक्त स्थानमेंसे सम्यक्त्वकी उद्देलना १४

सत्तावीसपयिडसमुदायष्पयमएएां पवेसद्वाणमुष्पञ्जदि त्ति समुक्तितिदं होइ । एत्थ वि विदेरेगमुहेण पयिडिणिहेसी कश्रो ति दहुन्वो ।

अ इव्वीसं पयडीश्रो उदयावित्यं पविसंति सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु
 उव्वेल्खिदेसु ।

२५०. पुन्नुत्त श्रद्धावीसपवेसद्वाणादो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु जहाकममुन्वेिहिदेसु छन्वीसाए पवेसद्वाणग्रुप्पजदि ति भणिदं हो । ए केवलग्रुन्वेिहिद्सम्मत्तसम्मामिच्छत्तस्सेव, किंतु श्रणादियमिच्छाइद्विणो वि छन्वीसाए पवेसद्वाणमित्य ति
घेत्तव्यं । अद्वावीस-सत्तावीसाणमण्णदरसंतकम्मियमिच्छाइद्विणा वा उवसमसम्मत्ताहिग्रुहेणांतगं कादृण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमावित्यमेत्तपढमद्विदीए गिहदाए छन्वीयपवेसद्वाणमुवल्या । उवसमसम्माइद्विणा पणुवीसपवेसगेण मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमण्णदरं श्रोकड्विदे मासणसम्माइद्विणा वा मिच्छत्ते पिदवण्णे एयसमयं
छन्वीसाए पवेसद्वाणग्रुवल्या । णवित्र सुत्ते सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेमु उव्विह्निदेसु ति
णिहेसो उदाहरणमेत्तो, तेणोदेसिं पि पयाराण संगहो कायच्यो ।

🛞 पणुवीसं पयडीश्रो उदयावितयं पविसंति दंसणितयं मोत्तृण ।

३ २ ४ १ . कमाय-णोकसायपयडीणं उदयावित्यपवेसस्स कत्थ वि समुवलंभादो ।

करने पर सत्ताईस प्रकृतिसमुदायात्मक अन्य प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है ऐसा इस स्त्रद्वारा कहा गया है। यहाँ पर भी व्यतिरेकमुखसे प्रकृतिनिर्देश किया है ऐसा जानना चाहिए।

* सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्निध्यात्वकी उद्वेलना करने पर छन्त्रीम प्रकृतियाँ
 उदयावलिमें प्रवेश करती हैं।

६२५०. पूर्वोक्त श्रष्टाईस प्रकृतिक प्रवेशस्थानमेंसे सम्यक्त श्रोर सम्यग्निध्यात्वकी क्रमसे उद्देलना कर देने पर छव्बीस प्रकृतिक प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य हैं। जिसने सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्निध्यात्वकी उद्देलना की है केवल ऐसे जीवके ही नहीं किन्तु श्रमादि मिध्यादृष्टिके भी छव्बीसप्रकृतिक प्रवेशस्थान होता है ऐसा यहाँ महण करना चाहिए। श्रथवा श्रद्धाईसप्रकृतिक श्रोर सत्ताईसप्रकृतिक इनमेंसे श्रम्यतर सत्कर्मवाले उपरामसम्यक्तिक श्रीमसुख हुए मिध्यादृष्टिके द्वारा श्रम्तरकरण करके सम्यक्त श्रोर सम्यग्निध्यात्वकी श्राविल प्रभाण प्रथम स्थितिके गला देने पर छव्बीसप्रकृतिक प्रवेशस्थान प्राप्त होता है। पन्त्वीस प्रकृतियोंके प्रवेशक उपशमसम्यग्दृष्टि द्वारा मिध्यात्व सम्यक्त श्रौर सम्यग्मध्यात्व इनमेंसे किसी एक प्रकृतिका श्रपकर्षण करने पर श्रथवा सासादनसम्यग्दृष्टिके मिध्यात्वको प्राप्त होने पर एक समय तक छव्बीस प्रकृतिक प्रवेशस्थान उपलब्ध होता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सूत्रमें 'सम्यक्त्व श्रौर सम्यग्मध्यात्वकी उद्देलना करने पर' यह वचन उदाहरणमात्र है, इसिलए इन प्रकृरोंका भी संग्रह करना चाहिए।

* दर्शनमोहनीयत्रिकको छोड़कर पचीस प्रकृतियाँ उदयावित्रमें प्रवेश
 करती हैं।

§ २४१, क्योंकि कषाय और नोकपायोंकी प्रकृतियोंका उदयावितमें प्रवेश कहीं पर भी

तं कस्स होइ ति श्रासंकाए उत्तरसुत्तमाह-

क्ष ऋण्ताणुबंधीणमविसंजुत्तस्स उवसंतदंसणमोहणीयस्स ।

ह २४२. कि कारणं ? उवसंतदंसणमोहणीयम्मि दंसणितयं मोत्तृण पणुवीस-चिरत्तमोहपयडीणमुदयावित्तयपवेसस्स णिप्पडिवंधमुवलंभादो । एत्थाणंताणुवंधीण-मिवसंज्ञत्तस्से ति विसेसणं विसंजोइदाणंताणुवंधिचउक्किम्म पणुवीसपवेसद्वाणासंभव-पद्प्पायणफलं; उवसमसम्माइद्विणा अ्राणंताणुवंधीसु विसंजोइदेसु इगिवीसपवेसद्वाणु-प्यत्तिदंसणादो ।

% एत्थि अए**पस्स** कस्स वि।

६ २५३. एत्तो अरणस्स कस्स वि एदं पवेसट्टाएं णित्थ । कुदो ? अविसंजोइदाएं-ताणुबंधिचउक्रमुवसमसम्माइट्टि मोत्तृणएणत्थ पणुवीसपवेसट्टाणासंभवादो ।

🛞 चडवीसं पयडीश्रो उदयावितयं पविसंति श्रणताण्यवंधिणो वज्ञ ।

ः २५४. चउवीयसंतकम्मियवेदयसम्माइड्डि-सम्मामिच्छाइड्डीसु तदुवलंभादो । विसंजोयणापुव्वसंजोगपढमसमए वद्दमाणिमच्छाइड्डिम्मि वि एदस्स पवेसद्वाणस्स संभवो दद्वव्वो ।

🛞 तेवीसं पयडोत्रो उदयावितयं पविशंति मिच्छुत्तं खिवदे।

उपलब्य होता है। वह स्थान किसके होता है ऐसी आशंका होनेपर आगेका सूत्र कहत है-

* यह स्थान जिसने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना नहीं की है किन्तु दर्शनमोहनीयका उपशम किया है ऐसे उपशमसम्यग्दृष्टिके होता है।

्र५२ क्योंकि जिसने दर्शनमोहनीयकी उपशमना की हैं ऐसे जीवके तीन दर्शनमाहनीयको छोड़कर चारित्रमोहनीयकी पच्चीस प्रकृतियोंका उदयाविलमें प्रवेश विना क्रकाबदके उपलब्ध होता हैं। यहाँ पर 'जिसने अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना नहों की हैं' यह विशेषण जिसने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना की है उसके पच्चीस प्रकृतिक प्रवेश-स्थान श्रासम्भव हैं यह निष्कर्ष फिलत करनेके लिए दिया है, क्योंकि उपशासस्यग्दृष्टिके द्वारा श्रानन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना कर देने पर इकीस प्रकृतिक प्रवेशस्थानकी उत्पत्ति देखी जाती है।

अयह स्थान अन्य किसीके नहीं होता ।

ह २५३. उक्त जीवको छो**ड्**कर श्रन्य किसी जीवके यह प्रवेशस्थान नहीं होता, क्योंकि जिसने श्रनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना नहीं की है ऐसे उपशमसम्यग्दृष्टिको छोड़कर श्रन्यत्र पचर्चासप्रकृतिक प्रवेशस्थान श्रसम्भव है।

* अनन्तानुवन्धियोंको छोड़कर चौबीस प्रकृतियाँ उदयावितमें प्रवेश करती हैं।

् २५४. क्योंकि चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले वेदकसम्यग्द्य स्रीर सम्यग्निश्यादृष्टि जीवांके यह स्थान उपलब्ध होता है। विसंयोजनापूर्वक संयोगके प्रथम समयमे विद्यमान मिथ्यादृष्टि जीवके भी इस प्रवेशस्थानकी सम्भावना जाननी चाहिए।

* मिथ्यात्वका चय होनेपर तेईस प्रकृतियाँ उदयावितमें प्रवेश करती हैं।

२४४. तेणेव चउवीसपवेसगेण वेदगसम्माइहिणा दंसणमोहक्खवणाए अब्धु-हिय मिच्छत्ते खिवदे इगिवीसकसाय-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि ति एदाओ तेवीमं पयडीओ उदयावित्यं पविसंतिः तत्थ पयारंतरासंभवादो ।

श्रिवासं पयडीश्रो उदयावितयं पविसंति सम्मामिच्छ्ने ग्वविदे । १२६६ तेणेव तेत्रीसपवेसगेण तत्तो श्रंतोम्रहुत्तं गंतूण मम्मामिच्छत्ते खिवदे सम्मत्तेण सह एकवीसचिरत्तमोहपयडीणमुदयावित्तयपवेसस्म सुव्वत्तमुवलंभादो । एमो एको पयारो सुत्तयारेण णिहिट्ठो ति पयारंतरेण वि एदस्स मंभविवसयो श्रणुमिग्गियव्यो, श्रणंताणुवंधिणो विसंजोइय इगिवीमपवेसयभावेणाविद्वदस्स उवसमसम्माइद्विस्म मिच्छत्त-वेदयसम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-मासणसम्मत्ताणमण्णदरगुणपडिवत्तिपढमसमए पयदद्वाणसंभवाणयमदंसणादो ।

२५५. चोबीस प्रकृतियोके प्रवेशक उसी वेदकसम्यग्दृष्टिके द्वारा दर्शनगाहनीयकी चपणाकं लिए उद्यत होकर मिथ्यात्वका चय कर देनेपर इक्कीस कपाय, सम्यक्त और सम्यग्मिथ्यात्व ये तेबीस प्रकृतियाँ उदयाविलमे प्रवेश करती है, क्योंकि वहाँ पर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है।

* सम्यग्निथ्यात्वका चय होने पर वाईम प्रकृतियाँ उदयावितमें प्रवेश
 करती हैं।

१२५६. तईम प्रकृतियोक प्रवेशक उसी जीवक द्वारा वहाँसे अन्तर्मुहृत विताकर सम्य-रिमध्यात्वका चय करने पर सम्यक्त्वके साथ चारित्रमोहनीयकी इक्कीस प्रकृतियोका उदयाविलमें प्रवेश सुब्यक्त उपलब्ध होता है। सूत्रकारने यह एक प्रकार निर्देष्ट किया है, इसलिए प्रकारान्तर से भी २२ प्रकृतियोका विषयभूत स्थान सम्भव हे यह जान लेना चाहिए, क्योंकि अनन्तानु-वन्धियोकी विमयोजना कर इक्कीस प्रकृतियोके प्रवेशकभावस अवस्थित उपशमसम्यव्हिष्ट जीवक मिध्यात्व, वेदकसम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व और सासादनसम्यक्त्व इनमेसे किसी एक गुणरथान को प्राप्त होनेके प्रथम समयमें प्रकृत स्थानके सम्भव होनेका नियम देखा जाता है।

विशेषार्थ — जिस उपशमसम्यग्दृष्टिने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विरायोजना की है वह जब भिध्यात्वप्रकृतिकी अपकर्षण द्वारा उदीरणा करके मिध्यात्वभावका अनुभव करता ह तब उसके प्रथम समयमे अनन्तानुबन्धीचतुष्कका बन्ध भी होता है और अप्रत्याख्यानावरण आदि कप दृश्यको अनन्तानुबन्धीक्षपंस संक्रमित कर उसका उद्याविलके बाहर निचंप भी करता है । किन्तु उस समय अनन्तानुबन्धीचतुष्कका उदयाविलमें प्रवेश नहीं होता, इसिलण ऐसा मिध्याद्रष्टि जीव प्रथम समयमे बाईस प्रकृतियोका ही उद्याविलमें प्रवेशक होता है, क्योंकि उस समय उसके चारित्रमोहनीयकी इक्षीस और एक मिध्यात्व ऐसी बाईस प्रकृतियोका प्रधेश देखा जाता है। यही उपशमसम्यग्दृष्टि जीव यदि वदकसम्यक्त्वका प्राप्त होता है तो उसके प्रथम समयमे चारित्रमोहनीयकी इक्षीस और एक सम्यक्त्व इसप्रकार बाईस प्रकृतियोका उद्याविलमें प्रवेश देखा जाता है। यही जीव यदि सम्यग्मिध्यात्व इसप्रकार बाईस प्रकृतियोका उद्याविलमें प्रवेश देखा जाता है। यही जीव यदि सम्यग्मिध्यात्व इसप्रकार बाईस प्रकृतियोका उद्याविलमें प्रवेश देखा जाता है। यही जीव यदि सम्यग्मिध्यात्व इसप्रकार बाईस प्रकृतियोका उद्याविलमें प्रवेश देखा जाता है। यही जीव यदि सासादनगुग्रस्थानको प्राप्त होता है तो उसके प्रथम समयमे अनन्तानुवन्धीचतुष्ककी किसी एक प्रकृतिके साथ चारित्रमोहनीयकी बाईस प्रकृतियोका उदयाना उदयान्तानुवन्धीचतुष्ककी किसी एक प्रकृतिके साथ चारित्रमोहनीयकी बाईस प्रकृतियोका उदयान उद्यान्तानुवन्धीचतुष्ककी किसी एक प्रकृतिके साथ चारित्रमोहनीयकी बाईस प्रकृतियोका उदयान

🛞 एकवीसं पयडीच्चो उदयावितयं पविसंति दंसणमोहणीए खविदे ।

ः २४७. पुन्तुत्तवावीसपवे तयदंसणमोहक्खवएण सम्मत्ते खविदे इगिवीसचरित्त-मोहपयडीएां चेव तत्थ पवेसदंसणादो । एत्थ वि विसंजोइदाएांताणुवंधिचउक्तम्रवसम-सम्माइद्विमस्सिऊण पयारंतरेण वि पयदद्वाणसंभवो समत्थणिक्रो ।

🛞 एदाणि हाणाणि श्रसंजदपात्रोग्गाणि ।

११८८. एदाणि अगंतरणिहिद्वाणि अद्वावीसादिपवेसद्वाणाणि असंजदपाओगाणि, असंजदपिबद्धाणि त्ति वृत्तं होइ । ण एत्थासंजदाणं चेव पाओग्गाणि असंजदपाओग्गाणि त्ति अवहारणं कायव्वं, सत्तावीसवज्ञाणमेदेसिं संजदेसु वि संभवीवलंभादो ।
किंतु एत्तो उविरमाणमेयंतमंजदपाओग्गत्तपदंसणद्वमेदेसिमसंजदपाओग्गत्तं पर्कविदं ।
ण च उवसमसेदीए कालं कादृण देवेसुप्परणपदमसमए केसिं चि वि द्वाणाणस्रविरमाणमसंजदपाओग्गत्तसंभवमिसदृण पचवद्वाणं काथव्वं, तेसिं सुत्ते विवक्खाभावादो,

विलमे प्रवेश देखा जाता है, क्योंकि जिस समय ऐसा जीव सासादनसम्यम्हिष्ट हुन्ना है उस समय त्रान्तानुबन्धांचतुष्कमेसे जिस प्रकृतिकी उदीरणा हुई है उसके सिवा शेष तीन प्रकृतियों का संक्रम होकर उदयाबालके बाहर ही निचंप होता है। इसप्रकार सुत्रोक्त प्रकारके सिवा अन्य कितने प्रकारसे बाईस प्रकृतिक प्रवेशस्थान सम्मव है इसका विचार किया।

इर्शनमोहमीयके चय होने पर इकीस प्रकृतियाँ उदयावितमें प्रवेश करती हैं।

६२४७. प्रवेक्तिबाईस प्रकृतियोंके प्रवेशक दर्शनमोहनीयके चपक जीवके द्वारा सम्यक्वका चय कर देने पर चारित्रमोहनीयकी इक्कीस प्रकृतियोंका ही वहाँ प्रवेश देखा जाता है। यहाँ पर भी जिसने व्यनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना की है ऐसे उपशमसम्यग्दृष्टिका व्याश्रय लेकर प्रकारान्तरसे भी प्रकृत स्थानकी सम्भावनाका समर्थन करना चाहिए ।

विश्रोपार्थ — सूत्रमे जो इकीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका प्रकार बतलाया है वह तो स्पष्ट ही है। दूसरा प्रकार यह सम्मव है कि जो उपशमसम्यग्द्रष्टि जीव अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर लेता है उसक दर्शनमोहनीयकी तीन और अनन्तानुबन्धीचतुष्क इन सात प्रकृतियोंके किवाय इकीस प्रकृतियोंका उदयाविलमें प्रवेश देखा जाता है। यदाप यहाँ प्रकृतियोंके प्रवेशकी अपचा कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि चायिकसम्यग्द्रष्टिके जिन इकीस प्रकृतियोंका उदयाविलमें प्रवेश होता है उन्हीं प्रकृतियोंका उदयाविलमें प्रवेश होता है उन्हीं प्रकृतियोंका उदयाविलमें प्रवेश होता है उन्हीं प्रकृतियोंका दुसे प्रकारान्तर कहा है।

* ये स्थान ऋसंयतप्रायोग्य हैं।

§ २५८. जो ये अहाईस प्रकृतिक आदि प्रवंशस्थान पूर्वमें कहे हैं वे असंयतप्रायोग्य है। व असंयतोसे सम्बन्ध रखते हैं यह उक्त कथनका ताद्यर्थ है। परन्तु यहाँ पर असंयतप्रायोग्य पदका अर्थ असंयतों के ही योग्य हैं ऐसा अवधारणपरक नहीं करना चाहिए, क्यों कि सत्ताईस प्रकृतिक प्रवंशस्थानको छोड़कर शेप स्थान संयतों में भी सम्भवस्थ्यसे उपलब्ध होते हैं। किन्तु इससे आगे के प्रवंशस्थान एकान्तसे संयतों के योग्य ही होते हैं यह दिखलानके लिए पूर्वीक्त स्थानों को असंयतों के योग्य कहा है। उपशासश्रीणिमें मरकर देवों में उत्पन्न हुए जीवों के प्रथम समयमें आगे के कितने ही स्थान असंयतों के योग्य सम्भव हैं, अतः इसका आश्रय लेकर वे भी

केण वि णएण तेसि पि संजदपाद्योग्गत्तदंसणादो च । एवमसंजदपाद्योग्गाणं द्वाणाण-मेत्थेव वोच्छेदं कादृण मंपिह मंजदपाद्योग्गाणमेत्तो परूवणां कुणमाणो प्ररूणावक्कमुत्तरं भणइ—

🛞 एत्तो उवसामगपात्रोग्गाणि ताणि भणिस्सामा ।

- ं २४९. एत्तो उत्रिरं मंत्रदपाश्चोरगाणं द्वाणाणं परूत्रणे कीरमाणे तत्थ ताव उवसामगपाश्चोरगाणि जाणि पर्वसद्वाणाणि ताणि भणिस्मामो त्ति पर्एणावक्रमेदं, उत्रसामग-खनगपाओरगत्तेण दुविदा विद्वताणं तेसिं जुगत्रं त्रोत्तमर्मत्तीए कमावलंबणादो ।
- ॐ उवसामणादो परिवदंतण तिविहा लोहो स्रोकिइदो । तत्थ लाभसंजलणमुदए दिण्णं, दुविहो लोहो उदयाविलयबाहिरे णिकिन्वसो । ताथे एका पयडी पविसदि ।
- ६ २६०. उवसमसेटीए सञ्जोवसमं कादृण तत्तो परिवदमाणएण मुहुमसांपराइय-पटमसमयम्मि जाघे तिविहो लोहो विदियद्विदीदो स्रोकड्डिय जहारिहं णिसित्तो ताघे एका पयडी पविमदि, तत्थ लोभसंजलणस्स एकस्सेव उदयाविलयन्मंतरपवेसदंसणादो।
 - 🛞 सं काले निष्ण पयडीश्रो पविसंति।
 - ं २६१. पुन्तमुद्यात्रलियवाहिरे णिसित्तस्स दृतिहस्स लोहस्स तद्णंतरसमए

श्चसंयतंके योग्य है ऐसा निश्चय नहीं करना चाहिए, क्योंकि उन स्थानोकी सूत्रमें विवत्ता नहीं की हे श्चीर किसी नयकी अपेत्ता वे भी संयतोंके योग्य दंखे जाते हैं। इसप्रकार असंयतोंके योग्य स्थानोका यही पर विच्छेद करके अब संयतोंके योग्य प्रवेशस्थानोंका आगे व्याख्यान करते हुए आगेका प्रतिज्ञावाक्य कहते हैं—

- * आगे उपशामकोंके योग्य जो प्रवेशस्थान हैं उनका कथन करेंगे।
- § २५६. इससे आगे संयतोंके योग्य म्थानोंका कथन करते हुए उसमें सर्व प्रथम उप-शामकोंके योग्य जो प्रवेशस्थान हैं उनका कथन करेंगे इसप्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य हैं, क्योंकि उपशामक और खपकोंके योग्यरूपसे दो भागोंमें बटे हुए उन प्रवेशग्थानोंकी एक साथ कहनेकी शक्ति न होनेसे यहाँ पर क्रमका अवलम्बन लिया है।
- * उपशामनासे गिरते हुए जीवने तीन प्रकारके लोभका श्रपकर्पण किया। उनमेंसे लोभमंज्यलनको उदयमें दिया श्रीर दो प्रकारके लोभका उदयाविक बाहर निक्षेप किया। तब एक प्रकृति प्रवेश करती है।
- ः २६०. उपशमश्रेणीमें सर्वोशम करके वहांसे गिरनेवाले जीवने सूच्मसाम्परायके प्रथम समयमे जब सीन प्रकारके लोभका द्वितीय स्थितिमेंसे अपकर्षणकर यथायोग्य निज्ञेप किया तब एक प्रकृति प्रवेश करती हैं, क्योंकि वहां पर एक लोभसंज्वलनका ही उद्याविलमें प्रवेश देखा जाता है।
 - * तदनन्तर तीन प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।
 - ६२६१. क्योंकि पूर्व समयमें उदयावलिकं वाहर निचित्र हुए दो प्रकारके लोमका तद

उदयावित्यब्भंतरपवेसेण तिण्हं पर्वसम्स परिष्फुडमुवलंभादो ।

गा० ६२]

% तदो श्रंतोमुहुत्तेण तिविहा माया श्रोकिंड्डिया। तत्य मायासंजलण-मुदए दिग्णं, दुविहमाया उदयाविलयबाहिरे णिक्लिसा। ताघे चत्तारि पयडोश्रो पविसंति।

- क्ष से काले छुप्पयङोत्र्या पित्रसंति ।
- क्ष तदो श्रंतोमुहुत्तेण तिविहो माणो श्रोकिहुदो । तस्थ माणसंजलण-मुदए दिएएं, दुविहो माणो उदयाविलयबाहिरे णिकिम्बत्तो । ताघे सत्त पयडीश्रो पविसंति ।
 - **% से काले एव पयर्डाश्रो पविसंति**।
- क्ष तदो अंतोमुहुत्तेण तिविहां कोहो ओकड्डिदो। तत्थ कोहसंजलण-मुदए दिग्णं, दुविहो कोहो उदयाविलयबाहिरे णिकिग्वत्तो। ताघे दस पयडोश्रो पविसंति।
 - क्ष से काले बारस पयडीश्रो पविस्ति।
- क्ष तदो अंतामहुत्तेण पुरिसवेद-छुएणोकसायवेदणीयाणि आंकड्डि-दाणि। तत्थ पुरिसवेदा उदए दिएणो, छुण्णोकसायवेदणीयाणि उदया-

- * तदनन्तर अन्तर्महूर्त बाद तीन प्रकारकी मायाका अपकर्षण किया । उनमेंसे मायासंज्वलनको उदयमें दिया और दो प्रकारकी मायाका उदयावितके बाहर निक्षेप किया । तब चार प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।
 - अत्तदनन्तर समयमें छह प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।
- * तदनन्तर अन्तर्भुहर्त बाद तीन प्रकारके मानका अपकर्पण किया । उनमेंसे मानसंज्वलनको उदयमें दिया और दो प्रकारके मानका उदयाविलके बाहर निक्षेप किया । तब सात प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।
 - तदनन्तर समयमें नौ प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।
- * तदनन्तर अन्तर्ग्रहूर्त बाद तीन प्रकारके क्रोधोंका अपकर्षण किया । उनमेंसे क्रोधसंज्यलनको उदयमें दिया और दो प्रकारके क्रोधोंका उदयावलिके बाहर निक्षेप किया । तब दस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।
 - * तदनन्तर समयमें बारह प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।
- * तदनन्तर अन्तर्भृहर्त बाद पुरुषवेद और इह नोकषाय वेदनीयका अपकर्षण किया । उनमेंसे पुरुषवेदको उदयमें दिया और इह नोकषायवेदनीयका उदयावितके

नन्तर समयमे उदयार्वालकं भीनर प्रवेश हो जानेसे तीन प्रकृतियोंका प्रवेश स्पष्टकापमे उपलब्ध होता है।

विलयबाहिरे णिक्खिलाणि । ताथे तरस पयडीश्रा पविसंति ।

- 🙊 से काले एगुणवीसं पयडीत्री पविसंति।
- १६२. एदाणि सुत्तािण सुगमािण ।
- % तदो श्रंतोमुद्दुत्तेण इत्थिवेदमोकड्डिऊण उदयावितयबाहिरे
 णिक्षित्ववित्र ।
- १ २६३. कुदो १ पुरिसवेदोदएण चिंदनादो । ण च मोदएण विणा उद्यादि णिक्लेवसंभवो; विष्पिंडसेहादो ।
 - **% से काले वीसं पयडी** श्री पविसंति।
- ३ २६४. कुदो ? उदयावित्यवाहिरे णिक्खित्तस्स इत्थिवेदम्म ताधे उदयावित-यब्भंतरपवेसदंसणादो ।
 - 🛞 नाव जाव श्रंतरं ए विणस्सदि त्ति ।
- अत्रंतरे विणासिज्ञमाणे णवुंसयवेदमाकिङ्गृतृण उदयाविलयबिह्रं णिक्गिवविद्।
 - 🛞 से काले एकावीसं पयडीओ पविसंति।
- बाहर निश्लेष किया । तब तेरह प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।
 - अत्तदनन्तर समयमें उन्नीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।
 - ६२६२. ये सूत्र सुगम हैं।
- * तदनन्तर अन्तर्महूर्त बाद स्त्रीवेदका अपकर्पण करके उदयावितके बाहर निक्षेप करता है।
- ्र २६३, क्योंकि यह पुरुषवेदके उदयसे चढ़ा है स्त्रोर स्वोदयके विना उदय समयसे लेकर नित्तेष होना सम्भव नहीं है, क्योंकि इसका निषध **है**।
 - * तदनन्तर समयमें बीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।
- ९ २६४. क्योंकि उदयाविलके बाहर निक्तिप्त हुए श्लीवेदका तब उदयाविलके भीतर प्रवेश देखा जाता है।
 - * यह स्थान तब तक रहता है अब तक अन्तरका नाश नहीं होता।
- § २६५. इससे आगे जब तक अन्तरका नाश नहीं होता तब तक इस प्रवेशस्थानको अवस्थित जानना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।
- * अन्तरका नाश करने पर नपुंसकवेदको अपकर्षित कर उदयावितके बाहर निक्षेप करता है।
 - तदनन्तर समयमें इकीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

- ः २६६. णवुंसयवेदे स्रोकड्डिदे तकाले चेवांतरविणासो होइ । तद्रांतरसमए णवुंसयवेदेण सह एकवीमं पयडीस्रो उदयाविलयं पविमंति त्ति भणिदं होइ ।
- % एत्तो एए जइ स्वीणदंसणमोहणोयो एदाश्रा एकवीसं पयडीश्रो पविसंति जाव श्रक्यवग-श्रणुवसामगो ताव।
- २६७. एत्थ जइ खीणदंसणमोहणीयो ति वयणमक्खीणदंसणमोहणीयम्मि विणडंतरम्मि अंतोम्रहुत्तादो उविर पयारंतरसंभवपदुप्पायणट्टं। अक्खवगाणुवसामगिविसेसणं खवगोवसामगपञ्जाएण परिणदम्मि तिम्म पुणो वि अंतरकरणादिवसेण इगिवीसपवेसद्वाणविणासो होइ ति जाणावणट्टं। तदो उवसामणादो परिविद्दो खइय-सम्माइट्टी हेट्टा णिवदिय पमत्तापमत्तसंजद-संजदासंजद-असंजदसम्माइट्टिगुणट्टाणेसु जेत्तियं कालमिगिवीसपवेसट्टाणमिवणट्टं होदृण पुणो खवगोवसम्सेढिमारोहणे विणस्सदि ति एसो एदस्स भावत्थो। संपिह उवसंतदंसणमोहणीय-मिस्सऊण एत्तो हेट्टा अण्णाणि वि पवेसट्टाणाणि समुप्पञ्जंति ति जाणावेदुमुत्तरसुत्त-पवंधमाह—

🛞 एदस्स चेव कसायोवसामणादा परिवदमाणयस्स ।

१२६८. एदस्स चेव कसायोवसामणादो परिवदमाणयस्स उवसंतदंसणमोहणीयस्स किं चि णाणत्तमित्य तिमदाणि वत्तइस्सामो ति एवं पदसंवंधो कायव्वो । अइ

१२६६. नपुंसकवेदका श्रपकर्पण होने पर उसी समय श्रन्तरका विनाश होता है। पुनः तदनन्तर समयमें नपुंसकवेदके साथ इकीस प्रकृतियाँ उदयाविलिमें प्रवेश करती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* इसके आगे यदि वह जीणदर्शनमोहनीय है तो ये इकीस प्रकृतियाँ तब तक प्रवेश करती हैं जब तक वह अज्ञपक और अनुपशामक रहता है।

इ २६७. यहाँ पर श्रवीणदर्शनमोहनीयके श्रन्तरका नाश होने पर श्रन्तर्मुहूर्तके बाद प्रकारान्तर सम्भव है इस बातका कथन करनेके लिए 'यदि चीणदर्शनमोहनीय है' यह वचन दिया है। चपक और उपशामक पर्यायसे परिणत उस जीवके फिर भी श्रन्तरकरण श्रादिके वशसे इकीस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान नष्ट होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए 'श्रच्यक श्रमुपशामक' विशेषण दिया है। इसलिए उपशामनासे गिरा हुश्रा चायिकसम्यग्दृष्टि जीव नीचे गिर कर प्रमत्तसंयत, श्रप्रमत्तसंयत, संयतासंयत श्रोर श्रसंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानोंमें जितने काल रहता है उतने कालत क इकीस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान नष्ट न होकर पुनः चपक-श्रेणि श्रीर उपशामभेणि पर श्रारोहण करने पर नष्ट होता है यह इस सूत्रका भावार्थ है। श्रव उपशान्तदर्शनमोहनीय जीवका श्राश्रय कर इससे नीचे श्रन्य भी प्रवेशस्थान उत्पन्न होते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए श्रागेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* कषायोंकी उपशामनासे गिरनेवाले इसी जीवके ।

१ २६८. जिसने दर्शनमोहनीयका उपशामना की है ऐसे कषायोंकी उपशामनासे गिरमेबाले
 इसी जीवके कुछ विभिन्नता है उसे इस समय बतलावेंगे इसप्रकार इस विधिसे पदसम्बन्ध

वि एत्थ उवसंतदंसणमोहणीयस्से ति मुत्ते ण वृत्तं तो वि पाग्सिमियण्णाएण तदृव-लंभो दहन्त्रो ।

अ जाघे श्रंतरं विण्हं तत्तो पाए एकवीसं पयडीश्रो पविसंति जाव सम्मत्तमुर्वारेंतो सम्मत्तमुदए देदि, सम्मामिच्छत्तं मिच्छत्तं च श्राविषयबाहिरे णिक्खिवदि । ताघे बावीसं पयडीश्रो पावसंति ।

९६९. एतदुक्तं भवित — अंतरिवणासाणंतरमेव समुवलद्धसरूवस्स इगिवीसपवेसद्वाणस्य ताव अवद्वाणं होइ जाव उवसंतसम्मत्तकालचिरमसमयो ति । तत्तो
परमुवसमसम्मत्तद्धाक्खएण सम्मत्तमुदीरेमाणेण सम्भत्ते उद्ए दिएणे मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्तेसु च आवित्यबाहिरे णिक्खित्तेमु तकाले बावीसपवेसद्वाणमुप्पत्ती जायिद ति ।
ण केवलं सम्मत्तमुदीरेमाणस्य एम कमो, किंतु मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तं वा उदीरेमाणस्य वि एदेणेव कमेण वावीसपवेसद्वाणुप्पत्ती वत्तव्वा, सुत्तरसेदस्य देमामासयत्तादो ।

२७०. संपिंह तस्सेव विदियसमए अविविक्सियदोदंमणमोहपयिष्ठपवसेण चदुवीमपवमद्वाणुष्पत्ती होदि त्ति परूत्रगाहुमाह—

करना चाहिए।' यद्यपि यहाँ पर सूत्रमे 'उपशान्तदर्शनमोहनीयके' यह वचन नहीं कहा है तो भी परिशेषन्यायसे उसका सद्भाव जान लेना चाहिए।

* जब अन्तर विनष्ट हो जाता है, वहाँ से लेकर इकीम प्रकृतियाँ तब तक प्रवेश करती हैं जब तक मम्यक्त्वकी उदीरणा करके सम्यक्त्वकी उदयमें देता है और सम्यग्मिथ्यात्व तथा मिथ्पात्वको उदयावलिके वाहर निक्षेप करता है, तब वाईम प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

१२६८. तात्पर्य यह है कि श्रन्तरका विनाश होनेके बाद ही ससुपलव्धस्वरूप इक्कीस प्रकृतिक प्रवेशस्थानका तब तक अवस्थान रहता है जब तक उपशममन्यक्त्वके कालका श्रन्तिम समय प्राप्त होता है। श्रागे उपशमसम्यक्त्वके कालका नाश होनेसे राम्यक्त्वकी उदीरणा करते हुए सम्यवत्वको उद्यमें देनेपर तथा मिध्यात्व श्रोर सम्यग्मिध्यात्वका श्राविलके बाहर निक्षेप करने पर उस समय बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशस्थानकी उत्पत्ति होती है। केवल सम्यक्त्वकी उदीरणा करनेवालेका ही यह क्रम नहीं है किन्तु मिध्यात्व श्रोर सम्यग्मिध्यात्वकी उदीरणा करनेवालेके भी इसी क्रमसे बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशस्थानकी उत्पत्ति कहनी चाहिए, क्योंकि यह सुत्र देशामर्थक है।

विशेषार्थ — उपशामसम्यग्दृष्टि जीव अपने कालको समाप्त कर वेदकसम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि श्रीर सम्यग्मिथ्यादृष्टि इनमेंसे कोई भी हो सकता है। जब जो होगा तब उस गुण्स्थानके अनुरूप मिथ्यात्व श्रादि तीनमेंसे किसी एक प्रकृतिकी उदीरणा होगी श्रीर अन्य दोका उद्याविलके बाहर नित्तेप होगा। यहाँ दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंमेंसे सम्यक्त्वकी अपेत्ता यह कथन किया है।

् २,७०. अब उसी जीवके दूसरे समयमें अविविक्ति दर्शनमोहनीयकी दो प्रकृतियोंका प्रवेश होनेसे चौबीस प्रकृतियोंके प्रवेशस्थानकी उत्पित्त होती है इस बातका कथन करनेके लिए कहते हैं—

🛞 से काले चडवीसं पयडी श्रो पविसंति ।

- ६ २७१. सुगमं । जइ वि पुव्यमसंजदपात्रोग्गद्वारापरूवरणाए इगिवीम-त्रावीस-चउवीमपवेसद्वाराणां समुक्तिराणा कया तेरा उवसामगपडिवादसंबंधेरा पुणो वि पयारंतरेणेदेसिमुवण्णासो कन्नो त्ति रा पुरारुत्तदोमो ।
- अ जइ सो कसायउवसामणादो परिविद्यो दंसणमोहणोय उवसंतद्धाए अचिरमेसु समएसु आसाणं गच्छुइ तदो आसाणगमणादो से काले पणुवीसं प्रयुक्तिया प्रविसंति ।

२७२. एदस्स सुत्तस्मत्थो वृच्चदे—कमायोवसामणादो पिग्विदिद्स्म दंसण-मोहणीयउवसंतद्धा अंतोम्रहुत्ती सेमा अत्थि, तिस्से अविलयावसेसाए पहुर्ण्ड जाव तद्भाचिरमसमयो ति ताव मासणगुणेण पिग्णामेदुं मंभवो । तत्थ चिम्मम्प् मामणभावं परिणममाणस्म अण्णा परूवणा भविस्मदि ति त मोत्तृण दुचिरमादिहेद्विम-मम्पसु हेद्विममावं पिहविज्ञमाणस्म ताव पवेमद्वाणगवेसणमेदेण मुत्तेण कीरदे । तं जहा—कसायोवमामणादो पिश्विदिदो उवसंतदंसणमोहणीयो दंसणमोहउवमंतद्वाए दुचिरमादिहेद्विममम्पसु जइ आसाणं गच्छइ तदो तस्स सासणभावं पिहविण्णस्म पदमसम्प अर्णताणुबंधीणमण्णदरस्म पवेसेण बावीमपवसद्वाणं होइ । कुदो तत्थाणं-

अ तदनन्तर समयमें चोबीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं —

् २७४. यह सूत्र सुगम है। यद्यपि पहले ऋसंयत जीवोके याग्य स्थानांकी प्ररूपणा करते समय इक्कीस, बाईस ऋौर चौंबीस प्रकृतिक प्रवेशस्थानोंकी समुत्कीर्तना कर ऋाये है तो भी उपशामक जीवके प्रतिपातके सम्बन्धसे फिर प्रकारान्तरसे इनका उपन्यास किया है, इसलिए पुनकक्त दोप नहीं है।

* यदि वह कषायोंकी उपशामनासे गिरता हुआ दर्शनमोहनीयके उपशामना-कालके अचरम (चरम समयसे पूर्व) समयोंमें सासादन गुणस्थानको प्राप्त होता है तो उसके सामादन गुणस्थानमें जानके एक समय बाद पचीस प्रकृतियां प्रवेश करती हैं।

इपशामनाका काल अन्तमुहूर्त शेष बचता है। उसमेंसे जब छह आवित काल शप रहे वहाँसे लेकर उपशामना कालके अन्तिम समय तक सासादन गुण्रूपसे परिण्यमन करना सम्भव है। उसमेंसे अब छह आवित काल शप रहे वहाँसे लेकर उपशामना कालके अन्तिम समय तक सासादन गुण्रूपसे परिण्यमन करना सम्भव है। उसमेंसे अन्तिम समयमें सासादनभावको प्राप्त होनेवाले जीवकी अन्य प्ररूपणा होगी, इसलिए उस छोड़कर दिचरम आदि अवस्तन समयोंमे अधस्तन भावको प्राप्त होनेवाले जीवके सर्व प्रथम प्रवेशस्थानकी गवेपणा इस सूत्र द्वारा करने है। यथा—कपायोपशामनासं गिरता हुआ उपशान्त दर्शनमाहनीय जीव दर्शनमोहके उपशामनाके कालके अन्तर्गत दिवरम आदि अधस्तन समयोंमे यदि सासादनगुण्रस्थानको प्राप्त होता है तो सासादनभावको प्राप्त होनेवाले उसके प्रथम समयमे अनन्तानुबन्धियोमेसे किसी एक प्रकृतिका प्रवेश होनेसे बाईस प्रकृतियोका प्रवेशस्थान होता है।

तासुबंधीसमण्यदरपवेससियमो ? स्मासस्मुस्य तदुदयाविसामाविचादो । कधं पुन्तमसंतस्सास्यंतासुबंधिकसायत्स तत्थुदयसंभवो ? स्मा, परिस्मामपाहम्मेस सेसकसाय-दन्त्रस्स तकालमेव तदायारेस परिस्मामय उदयदंसणादो । तदो आसाणगमसादो से काल पसुवीसं पयडीओ पविसंति । कि कारणं ? उदयावितयब्गहरिश्चिदतिविहासं-तासुबंधीसं तम्मि समए उदयावित्यव्यक्तंत्रपवेसदंससादो ।

🛞 जाघे मिच्छुत्तमुदीरेदि ताघे छुर्व्बासं पयडीत्रां पविसति ।

६२७३. कमेरा तेरोव मिच्छत्ते उदीरिजमाणे मिच्छत्तेरा सह द्रव्वीसं पयडीणमुद्दयावित्यपवसस्स परिष्फुडमुवलंभादो । णविर पढमसमयमिच्छाइट्ठी मिच्छत्तमुदीरेमाणो दंसणितयमोकड्डिङण मिच्छत्तमुद्दादि रिणिक्खवदि । सम्मनसम्मामिच्छत्तारिए उद्यावित्यवाहिरे णिक्खिवदि ति चेत्तव्वं । अदो चेव से काले तेसिमुद्दयावित्यपनेसो अवस्संभावि ति पद्ष्पायणद्वमाह—

अत्रो से काले अद्वावीसं पयडीओ पविसंति ।

ः २७४. गयत्थमेदं सुत्तं । एवं ताव दुर्चाग्मादिसमएसु सासराभावं पडिवज-मारास्स जहाकमं वाबीस-पर्णुवीस-छन्वीस-अट्टावीसपवेसट्टाराणि होति ति सम्रुकित्तिय

शंका—वहाँ श्रनन्तानुबन्धियोकी किसी एक प्रकृतिके प्रवेशका नियम वयो है ? समाधान—नहीं, क्योंकि सासादनगुगा उसके उदयका अविनामावी है।

शंका — पूर्वमें सत्तासे रहित अनन्तानुबन्धीकपायका वहां पर उद्य कैसे सम्भव है ?
समाधान — नहीं, क्योंकि परिणामोंके माहात्म्यवश शेष कपायोंका द्रव्य उसी समय उस
कपसे परिणामकर उसका उदय देखा जाता है।

इसिलिए सासादनमें जानेके बाद श्रानन्तर समयमे पच्चीस प्रकृतियां प्रवेश करती है, क्योंकि उद्यावितके बाहर स्थित तीन प्रकारकी श्रानन्तानुबन्धियोंका उस समयमे उद्यावितके भीतर प्रवेश देखा जाता है।

* जिस समय मिथ्यात्वकी उदीरणा करता है उस समय छन्नीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

§ २७३. क्योंकि उसी जीवके द्वारा क्रमसे मिध्यात्वकी उदीरणा करने पर मिध्यात्वके साथ छठवीस प्रकृतियोका उदयाविलमे प्रवेश म्पष्ट उपलब्द होता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि प्रथम समयवर्ती मिध्यात्विष्ठ जीव मिध्यात्वकी उदीरणा करता हुआ तीन दर्शनमोहनीयका अपकर्षण कर मिध्यात्वका उदय समयसे लेकर निचेष करता है तथा सम्यक्त और सम्यम्मिध्यात्वका उदय समयसे लेकर निचेष करता है तथा सम्यक्त और इसी लिए तदनन्तर समयमें उनका उदयाविलमें प्रवेश अवश्यंभावी है इस बातका कथन करनेके लिए कहते हैं—

अ इसके बाद तदनन्तर समयमें अट्ठाईस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

१२७४. यह सूत्र गतार्थ हैं। इस प्रकार सर्व प्रथम द्विचरम ऋादि समयोमे सासादन-भावको प्राप्त होनेवाले जीवके क्रमसे बाईस, पर्च्चास, छुट्यीस श्रोर ऋहाईस प्रकृतियोंके प्रवेश संपहि दंसणमोहउत्रसंतद्धाचिरमसमए सामणगुणं पडिवजनाणस्म किचि ए।।ए।त्तमिथ त्ति तप्पदुप्पायणाडुमाह—

अबह सो कसायउवसामणादा परिविददा दंसणमोहणीयस्स उवसंतदाए चरिमसमए आसाणं गच्छुइ से काले मिच्छुनमांकदुमाणयस्स छुव्वीसं पयडीओ पविसति।

२७४. श्रह जह मो चैव कमायउवसामणादो पिरविद्दो उवसमसम्मित्द्धा-चिरमसमए सासणगुणं पिडविज्ञह तो तस्स तिम्म समए पुन्वेत्रेणेव कमेण वावीस-पवसद्घाणं होदूण से काले मिच्छत्तमोकड्डमाणस्म पणुवीमपवेमद्वाणमहोदूण मिच्छत्रेण सह तिण्हमणंताणुबंधीणमकमपवसेण छन्वीम पयडीश्रो उदयावित्यं पविसंति नि एसो एत्थतणो विसेसो।

अतदा से काले अद्वावासं पयडात्रा पविसंति ।

२७६. सुगममेदं ।

🛞 एदं वियप्पा कसायउवसामणादा परिवदम। एगादा ।

२७७. एदं अणंतर्राणिहिट्ठा वियण्पा कत्यायावत्यामाणादो परिवदमाणमिस्त्रकण परूबिटा त्ति पयदत्थोवसंहारवक्कमेदं । णवि अण्णे वि वियण्पा एत्थ संभवंति तेसि स्थान होतं है ऐसी समुत्कीर्तना करक अब दर्शनमोहके उपणान्तकालकं अन्तिम समयमे सासादन गुणको प्राप्त होनेवाल जीवकं कुन्न भेद हे इस वातका ज्ञान करानेकं लिए कहने है—

* यदि वह कपायोपशामनासं गिरता हुआ दर्शनमोहनीयके उपशामनके कालके अन्तिम समयमें सामादन गुणस्थानको प्राप्त होता है तो तदनन्तर समयमें मिथ्यात्व का अपकर्षण करनेवाले उसके छर्जास प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

्र०५ र्याट वहीं जीव कपायापशामनासे गिरता हुआ उपशमसम्यक्त्वके कालके अन्तिम समयमे सामादनगुराको प्राप्त होता है तो उसके उस समयमे प्रवीक्त क्रमसे ही बाईस प्रकृतियोका प्रवेशस्थान हो ≀र अनन्तर समयमे मिश्यात्वका अपकर्षरा करते हुए पच्चीस प्रकृतियोका प्रवशस्थान न होकर मिश्यात्वके साथ तीन अनन्तानुबन्धियोका युगपत् प्रवेश होनेके कार्रा छट्वीस प्रकृतियाँ उद्यावित्तमं प्रवेश करती है यह यहाँ पर विशेष हो।

* इसके बाद तदनन्तर समयमें अद्वाईस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।
२०६, यह सूत्र सुगम है।

विशेषार्थ-इस मिथ्यादृष्टि जीवक प्रथम समयमे सम्यक्त और सम्यग्निश्यात्वका अपकर्षण होकर उदयावितके बाहर नित्तेष होता है और दृसरे समयमे उन सहित श्रद्धाईस प्रकृतियाँ उदयावितमे प्रवश करती है यह इस सूत्रका भाव है।

* ये विकल्प कषायोपशामनासे गिरनेवाले जीवकी अपेक्षा होते हैं।

५२७७. ये पूर्वम कहे गये विकल्प कषायोपशामनासं गिरनेवाले जीवका श्राश्रय लकर कहे गये हैं इस प्रकार यह प्रकृत अथका उपसंहार वचन है। किन्तु इननी विशेषता है कि

परूवणं कस्सामो । तं जहा— उवसामणादो परिवदमाणागो तिविहं लोभमोकि डिय तिएहं प्रवस्तां होद्ण हिदो कालं काद्ण देवेसुप्परणो तस्म पढमममए पृरिसवेद हस्स-रदीओ धुवा होद्ण भय-दुगुछाहि मह अड्ड पयडोओ पिवसंति । तहा छप्पवेमगेण कालं काद्ण देवेसुप्पणपढमममए वद्दमाणएण पुट्यं व प्रिसवेद हस्स-रदि-भय-दुगुं छासु अक्षमेण प्रवोसिदासु एकारमपवेमद्वाणमुप्पछि । प्रणो स्वव प्रवोस्तरस्स काल किर्य देवेसुप्पणपढमममए असांतरिणहिंद्वपंचपयडीसु पिवद्वास प्रवेसद्वाणं होइ । तहा तिविहं कोहमोकि डियुण हिद्दबारसपवेमगेण कालं काद्ण देवेसुप्पणपढमसमए समए भय-दुगुं छाहि विशा हस्स-रदि-पुरिमवेदेसु प्रवेसिदेसु पण्णारम प्रवेमद्वाण होइ । तेयोव वारमपवेसने सह प्रवेसिदेसु मोलमपवेसद्वाणमुप्पछि । अध तेयोव वारमणहमुविर पुरिमवेद-हस्म-रदि-भय दुगुं-छा सि एदाओ पंच प्रयद्वीओ जुगवं प्रवेसिदाओं तो तस्स प्रवेसिक्स मत्तारमपवेसद्वाणं होइ । एवमेदाण अट्ठेकारस-चोहम-पएएणारस मोलस-मत्तारमपवेसद्वाणािण देवेसुप्पणपढमसमए चेव लब्भति । एदाशि च सत्त्यारेण ण प्रविदाणि, मत्थाणसमुक्किन्तणाए चेव सुने विवस्ख्यनादो ।

अ एत्तां खवगादो मिग्गयव्या कदि पवेसहाणाणि ति ।

यहा पर श्रान्य विकल्प भी सम्भव हैं, श्रातः उनका कथन करते हैं। यथा--उपशामनासं गिरन-वाला जो जीव तीन प्रकारके लोभका अपकर्पण करके तीनका प्रवशक हाकर स्थित है वह मरकर देवोम उत्पन्न हत्रा, उसके प्रथम समयमे पुरुपवेट, हास्य श्रीर रति ध्रुव होकर भय और जुगुमाक साथ आठ प्रकृतियाँ प्रवश करती है। तथा छट प्रकृतियोंके प्रवशके साथ मर र देवाम उत्पन्न हानेक प्रथम समयमे विद्यमान जीवके द्वारा पूर्ववत् पुरुपवेद, हास्य, रति, भय आर जुगुप्साका युगपत प्रवेश कराने पर ग्यारह प्रकृतियोका प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है। पुनः नौ प्रकृतियोके प्रवंशक जीवके मरकर देवोमे उत्पन्न होनेके प्रथम समयमे पूर्वमे कही गई पाँच प्रकृतियोका प्रवेश होने पर चौदह प्रकृतियोका प्रवेशस्थान होता है। तथा तीन प्रकारके क्रोधका भपकर्पण कर बारह प्रकृतियोंके प्रवेशक हुए जीवक द्वारा मरकर देवोमे उत्पन्न होनेपर भय श्रीर जगुष्साकं बिना हास्य, रित श्रीर पुरुपवेदका अवेश होनपर पन्द्रह प्रकृतियोका प्रवेश-स्थान हाता है। उसी बारह प्रकृतियांक प्रवेशक जीवके द्वारा मरकर देवोमे उत्पन्न होनेके प्रथम समयमे भय और जगुष्यामेसे किसी एकके साथ हास्य, रति श्रीर पुरुषवेदके प्रवेश करने पर मालह प्रकृतियोका प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है। ऋौर यदि उसी जीवने बारह प्रकृतियोक ऊपर पुरुषवेद, हास्य, रति, भय श्रीर जुगुप्सा इन पाँच प्रकृतियोका एकसाथ प्रवेश कराया तो उस प्रथम समयवर्ती देवके संप्रह प्रकृतियोका प्रवेशरथान होता है। इस प्रकार ये आठ, ग्यारह, चौदह, पन्द्रह, सालह श्रोर सत्रह प्रकृतियांके प्रवेशस्थान देवोमे उत्पन्न हानेके प्रथम समयमे ही प्राप्त होते हैं। किन्तू ये सूत्रकारने नहीं कहे है, क्योंकि सूत्रमें स्वस्थान समुत्र्कार्तनाकी ही विवत्ता गर्ही हैं।

* त्रागे त्तपकके आश्रयसे कितने प्रवेशस्थान होते हैं इसकी मागणा करनी चाहिए। § २७८. उवमानगपाओग्गपवेमद्वाणपरूवणाणंतरमेत्तो ग्ववगादो पवेमद्वाण-सम्रुक्कित्तणा अ्रणुमग्गियव्या कदि तत्थ पवेमद्वाणाणि होति ति जाणावणद्व—

% तं जहा।

अ दंसणमोहणोए खिवदे एक्कावीसं पयडीत्रो पविसंति ।

६ २७९. जइ वि एसो अत्थो पुट्यमसंजदपाओग्गद्वाणपुरूवणावसरे पुरूविदो तो वि ए। पुणरुत्तदोसो, पुट्युत्तस्सेवत्थस्साणुवादं कादृण एत्तो अपुट्यत्थपुरूवणं कस्मामो त्ति जाणावणद्वमेदस्य सुत्तस्यावयागदो ।

अडकसाएस खिवदेस तेरस पयडोत्रां पविसंति ।

§ २८०. पुन्चुत्तइगिवीसपवेसगेण खवगसेढिमारूढेण अणियद्विगुणद्वाणं पवि-मिय अद्वक्तमाएम खिवदेसु तत्तो प्यहुढि जाव अंतरकरणं ए समप्यइ ताव चदुसंज-लण-णवणोकसायसण्णिदाओं नेरस पयडीओं तस्स खवगस्म उदयावित्यं षविसंति ति समक्कित्तिदं होइ।

अ अंतरे कदे दो पयडीओ पविसंति ।

६ २८१. तं जहा— अंतरं करेमाणो पुरिसवेद-कोइसंजलणाणमंतोम्रहुत्तमेतिं पढमद्विदिं ठवेदि । सेमकसाय-णोकमायाणमुदयावित्यवज्जं सन्वमंतरमागाएदि । एवमंतरं करेमाणेण जाधे अंतरं समाणिदं ताधे पुरिसवेद-कोधसंजलणाणमंतोमुहुत्तमेत्ती

६ २८८. उपशामकके योग्य प्रवेशस्थानोकी प्रह्मपणा करनेके बाद आगे चपकक आश्रयसे वहाँ किनने प्रवेशस्थान होने हैं इसका झान करानेके लिए प्रवेशस्थान समुन्कीननाका विचार करना चाहिए।

* यथा---

* दर्शनमोहनीयका चय होनेपर इकीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

६२७६. यद्यपि यह अर्थ पहले असंयत प्रायोग्य स्थानोके कथनके समय कह आये है तो भी पुनकक्त दोप नहीं हैं, क्योंकि पूर्वाक्त अर्थका ही अनुवाद करके आगे अपूर्व अर्थका कथन करेंगे इस बातका ज्ञान करानेके लिए इस सुत्रका अवनार हुआ है।

* ग्राठ कषायोंका त्तय होनेपर तेरह प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

§२८०. त्तपकश्रेणि पर चढ़े हुए पूर्वोक्त इक्कीस प्रकृतियोके प्रवेशक जीवके द्वारा श्रानिवृत्तिगुण्स्थानमें प्रवेश करके श्राठ कपायोंका जय कर देने पर वहाँसे लेकर जब नक श्रान्तरकरण समाप्त नहीं होता है तब तक चार संज्वलन श्रीर नौ नोकपाय संज्ञावाली तरह प्रकृतियाँ उस त्तपकके उद्यावितमें प्रवेश करती हैं यह इस सूत्र द्वारा कहा गया है।

* अन्तर करनेपर दो प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

१२८१. यथा--श्चन्तर करनेवाला चपक जीव पुरुपवेद श्रीर कोधसंज्वलनकी श्रन्त-र्मुहर्तमात्र प्रथम स्थिति स्थापित करता है। शेष कपायों श्रीर नोकपायोंकी उदयावलिको छोड़ कर शेष सब स्थिति श्रन्तरको प्राप्त हो जाती है। इस प्रकार श्रन्तरको करनेवाला जब श्रन्तरको षडमिंड्रिश चिद्वदि, सेमाणमेकारमपयडीणमुद्यावित्यव्मंतरे समयूणावित्यमेनागोबुच्छा सेसा । पुणी तेसु अधिहदीए णिरवसेसं गालिदेसु ताधे दी चेव पयडीओ उदयावित्यं पविसंति, पुरिमवेद-कोहमंजलाणे मोन्णणणीमं पडमिंड्रिदीए असंभवादी ।

% पुरिसवेदे ग्वविदे एका पेयडी पविसदि।

§ २८२. तेणेव दोण्हं पवेमगेणा खबगेणा जहाकमं णवुंस-इत्थिवेदे खबिय तत्तो अंतोम्रहुतं गंतूणा पुरिसवेदपढमद्विदिचरिमसमण छण्णोकमाण्हिं मह पुरिसवेदिविगणमंतकम्मे खिवदे तदो पहुडि एका चेव पयडी पिवसदि, तत्थ कोहसंजलणं मोत्तृण अण्णोमं पढमद्विदीण अणुबलंभादो । णवरि पढमे द्विदीण सह पुरिसवेदिचिगण-मंतकम्मे खिवदे पुरिसवेदो खिवदो चेवे ति मुत्ते विविचखयं: विदियद्विदिममवद्विदणवक-वंधस्स पहाणत्ताभावादो । एमो अत्था उवरिमसुत्तेमु विविच्खाणेयव्यो ।

- 🛞 कोधे खविदे माणो पविसदि।
- 🕸 माणं म्वविदे माया पविसदि।
- **अ मायाए खविदाए लोभो पविसदि ।**
- 🕸 लाभे खविदे ऋपवेसगा ।
- § २८३. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि । णवरि कोहपढमद्विदीए अविलयमेत्त-

समाप्त करता है तब पुरुषवेद श्रीर क्रोधसंज्वलनकी अन्तर्मुहूर्त सात्र प्रथम रिथित स्थित रहती है, शेष स्थारह प्रकृतियोकी एक समय कम श्राविल भात्र गापुच्छा शेष रहती है। पुनः अधः-स्थितिक द्वारा उनका पूरी तरहस गला देनेपर तब दा प्रकृतिया ही उदयाविलमें प्रवेश करती है, क्योंकि पुरुषवेद श्रोर क्रोधसंज्वलनको छोड़कर अन्य प्रकृतियोकी प्रथम स्थिति वहाँ सम्भव नहीं है।

अ पुरुषवेदका चय होनेपर एक प्रकृति प्रवेश करती हैं।

§ २८२. दां प्रकृतियोंके प्रवेशक उसी च्रपक जीवक द्वारा क्रमसं नपुंसकवंद श्रोर स्त्रीवंदका च्य करकं उसके बाद अन्तर्मुहन जाकर पुरुपवेदकी प्रथम रिथितिके अन्तिम समयमें छह नोक्ष्यायोंके साथ पुरुपवेदके प्राचीन सत्कर्मका च्य कर देने पर उनके आगे एक प्रकृति ही अवेश करती है, क्योंकि वहाँ पर क यमंज्यनको छोड़कर अन्य प्रकृतियोंकी प्रयम स्थिति नहीं पाई जाती। किन्तु इतनी थिशेषना है कि प्रथम स्थितिके साथ पुरुपवेदके प्राचीन सत्कर्मका च्य होनेपर पुरुपवेदका च्य कर ही दिया यह सूत्रमें विविद्यत है, क्योंकि द्विताय स्थितिमें अवस्थित नवकबन्धकी प्रधानता नहीं है यह अर्थ आगेके सूत्रोंमें भी कदना चाहिए।

- क्रोधका चय करने पर मान प्रवेश करता है।
- # मानका चय करने पर माया प्रवेश करती है।
- # मायाका चय करने पर लोभ प्रवेश करता है ।
- ॐ लोभका चय करने पर अप्रवेशक होता है।
- ९ २८३. ये सूत्र सुगम हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि क्रोधसंज्जलनको प्रथम स्थिति

सेसाए माणसंजलणमोकिङ्घिय पढमिट्टिदिं करेदि । तत्थुच्छिद्घावित्यमेत्तकालं दोण्हं पवेसगो होद्ग्ण तदो एकिम्से पवेसगो होदि त्ति घेत्तव्यं । एवं सेससंजल्रणेसु वि वत्तव्यं । लोभे खिवदे पुण ण किंचि कम्मं पविसदि, विविक्षियमोहणीयकम्मस्म तत्तो परमसंभवादो । एवमेकिस्से पवेसद्घाणस्स चत्तारि भंगा । दोएहं पवेसगस्स पण्णारस भंगा । सेमाणं पि पवेमद्वाणाणं जहासंभवं भंगपमाणाणुगमो कायव्वो ।

एवमोघेण द्वाराममुक्तित्तरा। समत्ता

ह २८४. संपित एत्थेव णिण्णयजणणद्वमादेसपरूवणद्वमुचारसां वत्तइस्सामो । तं जहा—समुक्तित्तसासु० दुविही सि०—श्रोघे० आदेसे०। श्रोघेण अत्थि २८, २७, २६, २४, २४, २३, २२, २१, २०, १९, १३, १२, १०, ९, ७, ६, ४, ३, २, १ पवेसमो ति । एवं मसुसतिए। आदेसेण सोरइय० आत्थि २८, २७, २६, २४, २४, २२, २१ पवेस०। एवं सव्वणेरइय-तिश्क्ति-पंचिदियतिरिक्तितिय-देवा भवणादि जाव णवगेवज्ज्ञा ति । पंचिदियतिरिक्त्वआपज्ज०-मसुसअपज्ज० आत्थि २८, २७, २६ पवेसमा । असुदिसादि सव्बद्धा ति अत्थि २८, २४, २२, २१ पवेसमा । एवं जाव ।

स्रावित्मात्र शेप रहने पर मानसंज्वलनका स्रपकर्षण कर प्रथम स्थिति करता है। वहाँ पर उच्छिष्ठावित्मात्र काल तक दोनोका प्रवेशक होकर स्रान्तर एकका प्रवेशक होता है ऐसा यहाँ पर महण करना चाहिए। इसी प्रकार शेष संज्वलनोमे भी कहना चाहिए। परन्तु लोभका त्रय होने पर कोई कर्म प्रवेश नहीं करता, क्योंकि विवित्तित मोहकर्म उसके स्रागे नहीं है। इस प्रकार एक प्रकृतिक प्रवेशस्थानके चार भंग है। दो प्रकृतियोके प्रवेशस्थानके पन्द्रह भंग है। शेष प्रवेशस्थानके भी भंगोंके प्रभाणका स्रानुगम करना चाहिए।

इस प्रकार त्र्योवसे रथानसमुत्कीर्तना समाप्त हुई।

ु २८४. श्रव यहीं पर निर्ण्य उत्पन्न करनेके श्रामिप्रायसे श्रादेश प्ररूपणा करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं। यथा—समुत्कीर्तनानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है— श्रोप श्रोर श्रादेश। श्रोपसे २८, २७, २६, २४, २४, २३, २०, २१, २०, १८, १३, १२, १०, ६, ७, ६, ४, ३, २ श्रोर १ इन प्रकृतिस्थानोंके प्रवेशक जीव हैं। इसी प्रकार मनुष्यित्रकम जानना चाहिए। श्रादेशसे नारिकयोमे २८, २७, २६, २४, २४, २२ श्रोर २१ प्रकृतिस्थानोंके प्रवेशक जीव हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यव्य, पव्यवेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रक, सामान्य देव श्रोर भवनवासियोंसे लेकर नौ प्रवेशक तकके देवोंमे जानना चाहिए। पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपयीप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें २८, २७ श्रोर २६ प्रकृतिस्थानोंके प्रवेशक जीव हैं। श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोमे २८, २४, २२ श्रोर २१ प्रकृतिस्थानोंके प्रवेशक जीव हैं। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विश्लोषार्थ—कषायोपशामनासे च्युत होनेपर चूर्णिसूत्रोंमें जिन प्रवेशस्थानोका निर्देश किया है अन्य स्थानोंके साथ वे ही यहाँ आघपरूपणामें परिगणित किये गये हैं। कषायोपशामनासे च्युत हुए जीवकी अपेक्षा जो अन्य प्रकारसे ८, ११, १४, १६ और १७ प्रकृतिक प्रवेशस्थान जयधवला टीकामें बतलाये हैं उन्हें यहाँ परिगणित नहीं किया है। शेष कथन सुगम है।

§ २८४. सादि०-अणादि०-धुव०-अद्धुवाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण बच्चीसंपरे० किं सादि० ४ १ सादि० अणादि० धुव० अद्धुवा वा । सेस-द्वाणाणि सादि-अद्धुवाणि । आदेसेण सन्त्रगदीसु सन्वद्वाणाणि सादि-अद्धुवाणि । एवं जाव० ।

🛞 एवमणुमाणिय सामित्तं णेदव्वं ।

१२८६. एवमणंतरपरूविदं समुक्तित्ताणाणुगममणुमाणिय णिबंधणं कादूण सामित्तं णेद्व्वं । कुदो ? इमाणि द्वाणाणि असंजदपाश्चोग्गाणि इमाणि च संजद-पाश्चोग्गाणि, तत्थ वि असंजदपाश्चोग्गेसु इमाणि सम्माइद्विपाश्चोग्गाणि इमाणि च मिच्छाइद्विपाश्चोग्गाणि, संजदपाश्चोग्गेसु वि एदाणि उवमामगपाश्चोग्गाणि एदाणि च स्वगपाश्चोग्गाणि ति एवंविहिवसेसस्स समुक्तित्तणाए सवित्थग्मुवणिबद्धत्तादो । संपित्त एदेण सुत्तेण समप्पिदत्थस्स पह्नवणमुचारणावलेण वत्तइस्मामो । तं जहा—

१२८७. सामित्ताणु० दुविहो णि०—श्रोघे० श्रादेसे०। श्रोघेण २८, २६, २४, २२ पवेयद्वाणाणि कस्म १ श्रण्णद० सम्माइद्वि० मिच्छाइद्वि० सम्मामिच्छा-

§ २८४. सादि, अनादि, ध्रुव श्रीर श्रध्रुशनुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश । श्रोघसे २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव क्या सादि हैं, क्या श्रमादि है, क्या ध्रम हैं या क्या श्रध्रुव हैं ? सादि, श्रमादि, ध्रुव श्रीर भध्रुव हैं । शेप स्थान सादि श्रीर श्रध्रुव हैं । श्रादेशसे सब गतियोंमें सब रथान सादि श्रीर श्रध्रुव हैं । इसी प्रकार श्रमादारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — २६ प्रकृतिक प्रवेशस्थान जीवोंके अनादि कालसे तब तक पाया जाता है जब तक प्रथमोपराम सम्यक्त्वकी प्राप्ति नहीं होती, इसलिए तो यह अनादि है। उसके बाद पुनः इसकी प्राप्ति सम्यवत्वसे च्युत हुए मिध्याद्धिके सम्यक्त्व और सम्यिमध्यात्वकी उढ़ेलना होने पर ही होती है, इसलिए वह सादि है। तथा अभव्योंके वह ध्रुव है और भव्योंक अध्रुव है। इस प्रकार २६ प्रकृतिक प्रवेशस्थान सादि आदिके भेदसे चारो प्रकारका बन जाता है। किन्तु शेष स्थानोंकी प्राप्ति जीवोंके गुणस्थान प्रतिपन्न होनेके बाद ही बनती है, इसलिए वे सादि और अध्रुव हैं। गतिसम्बन्धी सब मार्गणाएँ कादाबित्क हैं, इसलिए उनमें सब स्थान सादि और अध्रुव हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

इस प्रकार अनुमान कर स्वामित्वको जान लेना चाहिए ।

० २८६. इस प्रकार पूर्वमें कही गई समुस्कीर्तनाको अनुमान कर अर्थात् उसे हेतु बनाकर स्वामित्वको जान लेना चाहिए, क्योंकि ये स्थान असंयतप्रायोग्य हैं और ये स्थान संयतप्रायोग्य हैं। उसमें भी असंयतप्रायोग्य स्थानोंमें ये सम्यग्दृष्टिप्रायोग्य हैं और ये मिध्यादृष्टिप्रायोग्य हैं। संयतप्रायोग्योंमें भी ये उपशामकप्रायोग्य हैं और ये चपकप्रायोग्य हैं इस प्रकारकी जो विशेषता है उसको विस्तारके साथ समुत्कीर्तनामें उपनिबद्ध कर दिया है। अब इस सूत्रके द्वारा सूचित होनेवाले अर्थका कथन उच्चारणाके बलसे करते हैं। यथा—

६ २८७. स्वामित्वानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—स्रोध और आदेश। आधिसे २८, २६, २४ और २२ प्रकृतिक प्रवेशस्थान किसके होते हैं ? स्रान्यतर सम्यग्द्रष्टि, मिध्याद्रष्टि

इंडि॰। एवरि बाबीसं सासणसम्माइंडिस्स वि अत्थि। २७ प्रवेस॰ कस्स १ अण्णद॰ मिन्छाइंडिस्स । २४ प्रवेस॰ कस्स १ अण्णद॰ सम्माइंडि॰ सासणसम्मा॰। तेवीस॰ इगिबीसप्पहुंडि जाव एकिस्से प्रवेस॰ कस्स १ अएणद॰ सम्माइंडि॰। एवं मणुस-तिए। आदेसेण ऐरइय॰ २८, २७, २६, २४, २४, २२, २१ ओघं। एवं मन्त्रऐरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव णवगेवजा ति। पंचिंदियतिरिक्खन्न०-मणुसअपज॰-अणुद्दिसादि सन्वद्वा ति सन्बद्वाणाणि कस्स १ अण्णद०। एवं जाव०।

🛞 एयजीवेण कालो ।

- २८८, अहियारसंभालणवक्तमेदं। तस्स दुविही णिइसी श्रीषादेसभेदेण। तत्थोधपरूवणद्रमाह—
- % एकिस्से दोगहं तिण्हं छुगहं णवण्हं बारसगहं तेरसण्हं एगुणवीसण्हं बासगहं पयडोणं पवेसगो केवचिरं कालादो होइ?
 - ् २८९. सुगमं ।
 - 🛞 जहरणेण एयसमभो ।
 - े २९०. तं जहा--एकिस्से पवे० ताव बुच्च दे । उवसमसेढीदो स्रोदरमाणगो

श्रीर सम्यग्मिश्यादृष्टिके हं ते हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि बाईसप्रकृतिक प्रवेशस्थान सासादनसम्यग्दृष्टिके भी होता है। २७ प्रकृतिक प्रवेशस्थान किसके होता है। श्रम्यतर मिश्यादृष्टिके होता है। २४ प्रकृतिक प्रवेशस्थान किसके होता है। श्रम्यतर सम्यग्दृष्टिश्रीर सासादनसम्यग्दृष्टिके होता है। २३ श्रीर २१ से लेकर १ प्रकृतिक प्रवेशस्थान तक सब स्थान किसके होते हैं। श्रमा प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। श्रादेशसे नारिकयोंमें २८, २७, २६, २४, २४, २२ श्रीर २१ प्रकृतिक प्रवेशस्थानोंका स्वामित्व श्राघके समान है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यक्क, पश्रमित्व तिर्यक्कि होते हैं। इसी प्रकार सव नारकी, सामान्य तिर्यक्क, पश्रमित्व विश्व श्रमान है। इसी प्रकार सव नारकी, सामान्य तिर्यक्कि, पश्रमित्व विश्व श्रमान है। इसी प्रकार सव नारकी, सामान्य तिर्यक्कि, पश्रमित्व विश्व श्रमान स्वामित्व श्रीर भननवासियोंसे लेकर नो प्रवेयकतकके देवोंमें जानना चाहिए। पश्रीन्द्रय तिर्यक्कि श्रमपर्याप्त, मनुष्य श्रमपर्याप्त श्रीर श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें यथासम्भव सब प्रवेशस्थान किसके होते हैं श्रम्यतरके हाते हैं। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

- * एक जीवकी अपेद्मा कालका अधिकार है।
- ९ २८८. श्रधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह वाक्य हैं। उसका निर्देश दो प्रकारका है--श्रोघ श्रोर श्रादेश। उनमेंसे श्रोघका कथन करनेके लिए कहते हैं—
- * एक, दो, तीन, छह, नौ, बारह, तेरह, उन्नीस श्रीर बीम प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवका कितना काल है।
 - ९ २८ £. यह सूत्र सुगम है।
 - * जघन्य काल एक समय है।
 - § २६०. यथा—सर्व प्रथम एक प्रकृतिके प्रवेशक का कहते हैं--उपशमश्रेणिसे उतरनेवाला

लोहसंजलणमोकड्डिय एगसमयमेकिस्से पवेसगो होद्ण से काले तिएहं पवसगो जादो । अथवा उवसमसेढिं चढमाणगो पुरिसवेदपढमिडिदिं गालिय एगसमयमेकिस्से पवेसगो होद्ण से काले कालं काद्ण देवेसुप्पण्णो, लद्धो एयसमयमेत्रो एकिस्से पवेसगस्स जहएएकालो ।

इ.२.१. संपित्त दोण्तं पवेस० वृच्चदे । तं कथं ? उत्रसमसेिंद चढमाणो अंतरकरणं समाणिय तदो समयुणाविलयमेत्तकालं बोलाविय दोण्तं पवे० आदो । से काले
कालगदो देवेसुप्पिज्ञिय पज्जायंतरं गदो लद्घो दोए्तं पवेम० जह० एयममयो । एवं
माण-माया-लोभेसु ओकड्डिदेसु वि पयदजहण्णकालमंभवो समयाविरोहेणाणुगंतव्वो ।

६ २९२. तिण्हं पवेस० वृच्चदं — तिविहं लोभमोकिड्डिय एयसमयं तिण्हं पवेमगो होद्ण से काले कालगदो देवेसुप्पिजय अग्रणं पवेमहाणं पिडवण्णो लद्धां एगसमय-मेचो तिण्हं पवेसगस्स जहण्णकालो । एवं द्वएहं पवेसगस्स वि जहण्णकालो परूवे-यच्चो । णवि तिविहं मायमोकिड्डिय एगसमयं द्वण्हं पवेसगो होद्ण कालगदो चि वच्चवं । एवं चेव णवण्हं वारसण्हं पि जहण्णकालपरूवणा कायच्चा । णवि जहाकमं तिविहं माणं तिविहं च कोहमोकट्टेऊण से काले कालगदो चि वच्चवं । एवं नेगमण्हं । णवि पुरिसवेदमोकिड्डिय एगसमयं तेरसपवेसगो होद्ण से काले एगूणवीसपवेसहाणं

जीव लोभसंज्वलनका श्रापकर्पण कर एक प्रकृतिका प्रवेशक हो तदनन्तर समयमे तीन प्रकृतियों का प्रवेशक हो गया। श्राथवा उपशमश्रीण पर चढ़नेवाला जीव पुरुपवेदकी प्रथम स्थितिको गलाकर एक समय तक एक प्रकृतिका प्रवेशक हो तदनन्तर समयमे मरकर देवोंमे उत्पन्न हुआ। इस प्रकार एक प्रकृतिके प्रवेशक जावन्य काल एक समयमात्र प्राप्त हुआ।

२६१. ऋष दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल कहते हैं। वह कैसे ? उपशामश्रीण पर चढ़नेवाला जीव अन्तरकरणको समाप्त कर अनन्तर एक समय कम एक आविल कालका विताकर दो प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। किर तदनन्तर समयम मरकर और देवोमे उत्पन्न हो पर्यायान्तर (स्थानान्तर) को प्राप्त हुआ। इस प्रकार दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हो गया। इसी प्रकार मान, माया और लोभका अपकर्षण करने पर भी प्रकृत जघन्य कालका सम्भव समयके अविरोधपूर्वक जान लेना चाहिए।

§ २६२. सब तीन प्रकृतियोंके प्रवेशकका कहते हैं—-तीन लोभोंका स्वपकर्षण कर एक समय तक तीन प्रकृतियोंका प्रवेशक हो तथा मर कर देवोमें उत्पन्न हो स्वन्य प्रवेशस्थानको प्राप्त हो गया। इस प्रकार तीन प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हो गया। इसी प्रकार छह प्रकृतियोंके प्रवेशकका भी जघन्य काल एक समय कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन प्रकारकी मायाका स्वपकर्षण कर एक समय तक छह प्रकृतियोंका प्रवेशक हो मरा ऐसा कहना चाहिए। तथा इसी प्रकार नी स्वीर बारह प्रकृतियोंके प्रवेशकके भी जघन्य कालका कथन करना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कमसे तीन प्रकारके मान स्रीर तीन प्रकारके क्रोधका स्वपकर्षण कर तदनन्तर समयमें मरा ऐसा कहना चाहिए। इसी प्रकार तरह प्रकृतियोंके प्रवेशकका भी जघन्य काल कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि समसे तीन प्रकारके स्वश्व प्रकृतियोंके प्रवेशकका भी जघन्य काल कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदका स्वपकर्षण कर एक समय तक तेरह प्रकृतियोंका प्रवेशक हो तदनन्तर समयमें उन्नीस प्रकृतियों

पडिनएणो ति वत्तव्वं । एगूणनीस-नीसपनेसगाएं पि अप्पणो पयडीओ ख्रोकड्डेऊण तकाले चेन कालं काद्ण देवेसुप्पण्णो ति वत्तव्वं ।

🛞 उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

२९३. तं जहा—एकिस्से पवे० ताव उच्चदे । इत्थिवेदलाहसंजलणाणमुद्रएण खवगसेढिं चिढदो श्रवगदवेदपढमसमयप्पहुिंड जाव सुहुमसांपगइयचिरमसमयो
ति ताव एकिस्से पवेसगो होइ । एसो एकिस्से पवसगस्स उकस्सकालो । दोएहं पवसगस्म वि खवगसेढीए चेव उक्कस्सकालो घेचच्चो, पुरिसवदोदएण खवगसेढिमारूढस्स
श्रंतरकरणं कादृण समऊणाविलयमेचकाले गदे तदो प्पहुिंड जाव पुरिसवदेपढमिट्टिदिचिरमसमयो ताव दोएहं पवसगचदंमणादो । तिण्हं पवसगस्य तिविहं लोभमोकिडिय
हेट्ठा श्रोदग्माणगो उवसामगो जाव तिविहं मार्य ए श्रोकडुिंद ताव एसो उक्कस्मकालो
घेचच्चो । एवं सेसाणं पि वचच्चं । णवि तेरमण्हं पवे० खवगसेढीए श्रद्धक्रमाएस
खिवदंस जाव श्रंतरकरणं कादृण दोएहं पवसगो ण होइ ताव एसो कालां घेचच्चो ।

अ चटुण्हं सत्तण्हं दसण्हं पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होइ ? १ २९४. सगमं ।

🕸 जहण्लुकस्सेण एयसमञ्रा।

के प्रवेशस्थानको प्राप्त हुआ ऐसा कहना चाहिए। उन्नीस आँग बीस श्रृकृतियोक प्रवेशकोके भी अपनी श्रपनी प्रकृतियोंका श्रपकर्षण कर उसी समय मरकर देवोंमें उत्पन्त हो गया ऐसा करना चाहिए।

उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहृत है ।

§ २६३. यथा—एक प्रकृतिकं प्रवंशकका सर्व प्रथम कहते हैं—जो जीव स्त्रीवंद श्रीर लोभसंज्वलनके उद्यसे चपकश्रेणिपर चढ़ा है वह श्रपगतवंदके प्रथम समयसे लेकर सूच्म-साम्यराय गुणस्थानके श्रान्तिम समय तक एक प्रकृतिका प्रवेशक होता है। यह एक प्रकृतिके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल है। दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका भी उत्कृष्ट काल चपकश्रेणिम प्राप्त करना चाहिए, क्योंकि पुरुषवंदके उद्यस चपकश्रेणिपर चढ़े हुए जीवके श्रम्तरकरण करके एक समय कम एक श्रावलि मात्र काल जाने पर वहाँसे लेकर पुरुपवंदकी प्रथम रिथितिक श्रान्तिम समय तक दो प्रकृतियोंका प्रवेश देखा जाता है। तीन प्रकारके लोभका श्रपकर्षण कर उत्तरता हुश्रा उपशामक जीव जब तक तीन प्रकारकी मायाका श्रपकर्षण नहीं करता तब तक तीन प्रकृतियोंके प्रवेशकका यह उत्कृष्ट काल होता है ऐसा प्रहृण करना चाहिए। इसी प्रकार श्राप प्रवेशस्थानोंका भी उत्कृष्ट काल कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि तेरह प्रकृतियोंके प्रवेशकके, चपकश्रेणिमें श्राठ कथायोंका चय कर जब तक श्रन्तरकरण कर दो प्रकृतियोंके प्रवेशकक नहीं होता तब तकका काल लेना चाहिए।

* चार, सात और दस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

§ २६४. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य त्र्यार उत्कृष्ट काल एक समय है।

- २९४. तं जहा—तिण्हं छण्हं णवण्हं पवेसगेण जहाकमं माय-माण कोह-संजल्लांस श्रोक हिदेस पयदद्वाणाण मेयसमयमेत्रो कालो होह, तत्तो उविरमसमण्सु जहाकमं छण्हं णवण्हं बारसण्हं चिणयमेण पवेसदंसणादो ।
- अ पंच-श्रद्ध-एकारस-चोइसादि जाव श्रद्धारसा ति एदाणि सुगण द्वाणाणि ।
- ६ २९६. कुदो १ पंचट्ठारसपवेसट्ठाणाणं मन्वत्य सन्वकालमणुवलंभादो । सेसाणं च सत्थाणिववक्खाए संभवाणुवलंभादो । तदो एदेसिं जहएणुकस्सकालपरिक्खा णात्थि चि एसो एत्थ भावत्थो ।
 - 🛞 एक्कवीसाए पयडीएं पवेसगी केवचिरं कालादो होदि ?
 - ६ २९७. सुगमं।
 - 🕸 जहएऐए श्रंतोमुहुत्तं ।
- ६ २९८. तं कथं ? चउनीसपनेसगेण नेदगसम्माइडिणा दंसणमोहणीयं खनिय इगिनीमपनेसगभानमुनगएण सन्त्रजहएणंतोमुहुत्तमेत्तकालेण खनणाए श्रब्भुडिय श्रद्ध-कमाएस खनिदेस णिरुद्धपनेसडाणिनणासेण तेरसपनेसडाणमुष्पज्जइ । श्रहना उनसम-सम्माइडिणो श्रणंताणुबंधिचउक्कं निसंजोइय सन्त्रजहण्णंतोमुहुत्तमेत्तकालिमिगिनीस-पनेसगमानेणिन्छय छानलियानसेसे सासणं पिडनिज्जय नानीसपनेसगत्तमुनगयस्स एमो
- २६५. यथा--तीन, छह श्रीर नौ प्रकृतियोके प्रवेशक जीवके द्वारा क्रमसे माया, मान श्रीर कोधसंज्ञलनोंके श्रपकर्षित करने पर उसके प्रकृत स्थानोंका एक समयमात्र जघन्य काल होता है, क्योंकि उनसे उपरिम समयोंमें क्रमसे छह, नी श्रीर बारह प्रकृतियोंका नियमसे प्रवेश देखा जाता है।
- अ पाँच, आठ, ग्यारह और चौदहसे लेकर अठाग्ह प्रकृतियों तकके ये शून्य-स्थान हैं।
- ५ २.६६. क्योंकि पाँच श्रौर श्राठारह प्रकृतियोंक प्रवेशस्थान सर्वत्र सर्वदा उपलब्य नहीं होते । तथा शेष स्थान स्वस्थान विवत्तामे सम्भव नहीं हैं । इसलिए इन स्थानोंके जघन्य श्रौर उत्कृष्ट कालकी परीत्ता नहीं है यह इस सूत्रका भावार्थ है ।
 - # इकीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?
 - ६ २६७. यह सूत्र सुगम है।
 - * जघन्य काल अन्तर्भृहर्त है।
- ५ २६८. वह केसे ? क्योंकि चौर्यास प्रकृतियोंका प्रवेशक कोई वेदकसम्यग्दृष्टि जीव दर्शनमोहनीयका चयकर इक्कांस प्रकृतियोंके प्रवेशकभावका प्राप्त हो सबसे जवन्य अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा चपणाके लिए उद्यत हो तथा आठ कषायोंका चयकर विवक्तित प्रवेशस्थानके विनाश द्वारा तेरहप्रकृतिक प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है। अथवा जो उपशमसम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर और सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक इक्कांस प्रकृतियोंके प्रवेशकभावसे रहकर छह आविल काल शेष रहने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त

जहण्णकालो वत्तव्वो ।

अ उक्तरसेण तेत्तीसं सागरीवमाणि सादिरेयाणि।

ः २९९. तं जहा—एको देवो ग्येरइश्चो वा चउवीससंतकम्मिश्चो पुन्तकोडा-उएसु मणुस्सेसु उववण्णो । गब्भादिश्रद्ववस्साणमंतोग्रद्धत्तव्मिदियाणमुवरि दंसण-मोहग्यीयं खविय एकवीसपवेसगो होदृण पुन्वकोडिं जीविय कालं कादृण तेत्तीस-सागरीविमएसु देवेसुवविजय तत्तो चुदो पुन्वकोडिं जीविय कालं कादृण तेत्तीस-सागरीविमएसु देवेसुवविजय तत्तो चुदो पुन्वकोडिं। उश्चमणुसेसुवविजय श्रंतोमुहुत्तसेसे मंसारे खवगसेढिमारूढो श्रद्धकसाए खितय तेरमण्हं पवेसगो जादो । एवमंतोमुहुत्त-व्महियश्रद्धवस्सेहिं परिहीणदोपुन्वकोडीहिं सादिरेयाणि तेतीसं सागरीवमाणि एकवीस-पवेसगस्स उक्षस्सकालो होइ।

श्वावीसाए पणुवीसाए पयडीणं पवेसगो केविचरं कालादो होदि ? § ३००. सगमं ।

🥸 जहरुषेण एयसमञ्रा ।

३०१. वावीसपवेसगम्म ताव उच्चदे । ऋणंताणुबंधि० विसंजोएदृ डिद-उवसमसम्माइद्वी इगिवीसपवेसगो सासणसम्मत्तं मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तं वेदग-मम्मत्ताणि वा पिडवण्णो, पढमसमए वार्धासपवेसगो होदृण पुणो विदियसमए जहा-कमं पणुवीसाए अट्ठावीसाए चदुवीसाए पवेसगो जादो, लद्धो बाबीसपवेसगस्स हो बाईस अकृतियांका प्रवेशक हो गया उसके यह जघन्य काल कहना चाहिए।

* उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है।

६२ ह. यथा—एक देव या नारकी चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला पूर्वकोटिकी आयु-वाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वह गर्भसे लेकर आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्तके बाद दर्शनमोहनीय का त्त्रय कर इक्कीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो तथा पूर्वकोटि काल तक जीवित रहकर मरा और तेनीस सागरकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हो पुनः वहाँसे च्युन हो तथा पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हो संसारमें रहनेका अन्तर्महूर्त काल शेप रहनेपर त्त्रपकश्रीण पर चढ़कर तथा आठ कषायोंका त्त्रय कर तेरह प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार सान्तर्मुहूर्त आठ वर्ष कम दो पूर्वकोटि अधिक तेतीस सागर प्रमाण इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल होता है।

* बाईम और पच्चीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

९ ३००. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल एक'समय है।

§ ३०१. सर्वप्रथम बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कहते हैं—श्रनन्तानुबन्धीचतुष्ककी बिसंयोजना कर इक्षीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो स्थित हुआ उपशमसम्यग्दष्टि जीव सासादन सम्यक्त्व, सिध्यात्व, सम्यग्मिध्यात्व या वेवकसम्यक्त्वको प्राप्त करके प्रथम समयमें बाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो फिर दूसरे समयमें क्रमसे पक्चीस, श्रद्धाईस श्रीर चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशक का जयन्य काल एक समय प्राप्त हुआ।

जहण्णकालो एयममयमेत्तो । संपिंह पणुवीसपवे० उच्चदे—विसंजोइदाणंताणुबंधि-चउक्केण उवसमयम्माइहिणा उवसमसम्भत्तद्धादुचरिमसमए सासणभावे पिडवएणे तस्म पढमसमए अर्णाताणुबंधीणमण्णद्रपवेसेण बाबीसपवेसहाणं होद्ण से काले उद्यावितयबाहिरहिद्सेमाणंताणुबंधितियस्म उद्यावित्यपवेसेण पणुवीसहाणं जादं। एवमेगसमयं पणुवीसपवेसहाणं होद्ण तदणंत्रसमए मिच्छत्तं पिडवण्णस्स छच्चीमं पवेसहाणुष्पत्तीए णिरुद्धं पवेसहाणं विराहं होइ।

🕸 उक्कस्सेण त्रांतोमुहुत्तं।

% तेवीसाए पयडीएं पवेसगी केवचिरं कालादी होदि ?

- ६ ३०३. सुगमं।
- 級 जहएणुक्तस्सेण श्रंतोमुद्भन्तं।
- ४ ३०४. तं जहा---सम्मामिच्छत्तक्षवणकालो सव्वी चेव तेवीसपवेसगकालो होइ।
- 🕸 चउवीसाए पयडोणं पवेसगी केवचिरं कालादी होदि ?

श्रव पच्चीम प्रकृतियों के प्रवेशकका कहते हैं—जिसने श्रनन्तानुबन्धीचतुष्किकी विमंयोजना की है ऐसा उपश्रासम्यग्रहिष्ट जीव उपश्रासस्यग्रहें कोल दिचरम समयमें सासादनभावको प्राप्त हुआ। उसके प्रथम समयमें श्रनन्तानुबन्धियोमेंसे किसी एक प्रकृतिका प्रवेश होनेसे बाईस प्रकृतियोका प्रवेशम्यान होकर तद्नन्तर समयमें उद्याविलके बाहर स्थित शेष श्रनन्तानुबन्धी-चतुष्कि उदयाविलमें प्रवेश करनेसे पच्चीस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान हो गया। इस प्रकार एक समय तक पच्चीस प्रकृतियों हा प्रवेशस्थान हो गया। इस प्रकार एक समय तक पच्चीस प्रकृतियों हा प्रवेशस्थान होकर तद्नन्तर समयमें मिध्यात्वको प्राप्त हुए उसके उद्योग प्रकृतियों के प्रवेशस्थानकी उत्पत्ति होनेसे विविक्ति प्रवेशस्थान विनष्ट होता है।

अ उन्कृष्ट काल अन्तर्महर्त है।

१३०२. यथा — सम्यग्मिथ्यात्वका चय करके जब तक सम्यक्त्वप्रकृतिका चय नहीं करता है तय तक बाईम प्रकृतियोंक प्रवेशक जा उत्कृष्ट काल अन्तर्महूर्त होता है। तथा जिसने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना नहीं की है ऐसे उपशमसम्यग्दृष्टिका सब काल प्रवीस प्रकृतियोंके प्रवेशकवा उत्कृष्ट काल होता है।

- * तेईम प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?
- s ३०३. यह सूत्र सुगम **है**।
- अ जघन्य त्रोर उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहर्त है ।
- § ३०४. यथा—सम्यग्मिथ्यात्वका सबका सब त्तपणाकाल तेईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल होता है।
 - * चौबीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

६३०४. सगमं।

🕸 जहरूषेण अंतोम्हत्तं।

६ ३०६. तं कथं ? अट्टावीससंतकम्मियवेदयसम्माइद्वी अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय चडवीसपवेसगो होद्ण तदो सन्त्रजहण्णांतोग्रहुनेण भिच्छत्तं गदो तस्स विदियसमए चउवीसपवेसद्राणं फिट्टिदणद्वावीसपवेसद्राणं जादं.लुद्धो पयदजहण्णकालो ।

अ उक्करसेण बेळावहिसागरोवमाणि देसणाणि ।

१ ३०७. तं जहा—एगो मिच्छाइद्वी उवसमसम्मत्तं घेत्तण तक्वाल्ब्मंतरे चेव चउवीमसंतकम्मित्रो जादो वेदगसम्मत्तं पहिवण्णविदियसमयप्पहुँ चिउवीसपवेसगो होदण बेळाबद्विसागरोबमाणि परिभमिय तदबसाखे दंसणमोहक्खवणाए अब्अद्विदो मिच्छत्तं खिवय तेवीसपवेसगी जादो । एवं समयाहियसम्मामिच्छत्त-सम्मत्तक्खवण-कालेएएणबेळाबद्विसागरीवममेत्ती पयदुकस्सकाली होदि । बेळाबद्वीणमवसारो मिच्छत्तं एर्प पयदकालो किण्ण परूविदो ? ण मिच्छत्तं गच्छमाणस्म मच्बजहण्णंतोम्रहत्तस्स वि सम्मामिच्छत्त-सम्मत्तक्खवणकालादो बहुत्तेण तहाकादुमसत्तीदो ।

अञ्चासाए पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३०८. सुगमं ।

§ ३०४. यह सूत्र सुगम है ।

ं २०६. वह कैसं ? क्योंकि ऋटाईस प्रकृतियोकी सत्तावाला जो वेदकसम्यग्टष्टि जीव श्रनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजनाकर चाबीस प्रकृतियोका प्रवेशक हो श्रनन्तर सबसे जघन्य श्चन्तर्मुहर्त कालके द्वारा मिध्यात्वमं गया उसके दूसरे समयमे चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान नष्ट होकर श्रद्धाईम प्रकृतियोका प्रवशस्थान उत्पन्न हो गया। इस प्रकार प्रकृत जघन्य काल

अ उत्कृष्ट काल कुछ कम दो छ्यासठ सागरापम है।

९ ३०७. यथा -- एक मिध्यादृष्टि जीव उपशमसम्यक्खको महरा कर उसके कालके भीतर ही चौबीस कर्मीकी सत्तावाला हो गया। पुनः वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करनेके द्वितीय समयसे लेकर चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो कुछ कम दो छ्यासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर उसके भन्तमे दर्शनमोहकी चपणाके लिए उद्यत हुआ श्रीर मिध्यात्वका चय कर तेईस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार एक समय अधिक सम्यग्निश्यात्व और सम्यक्त्वके सपणा कालसे कम दो छथासठ सागर कालप्रमाण प्रकृत उत्कृष्ट काल होता है।

शंका-दां छ्यासठ सागर कालके अन्तमे मिथ्यात्वमें ले जाकर प्रकृत कालका कथन क्यों नहीं किया ?

समाधान-नहीं, क्यांकि मिध्यात्वमें जानेत्राले जीवका सबसे अघन्य अन्तर्भुहुर्त काल भी सम्यग्मिथ्यात्व श्रीर सम्यक्त्वके चपणाकालसे बहुत होनेके कारण वैसा करनेमे अशक्ति है।

* ब्रब्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

६ ३०८ यह सूत्र सुगम है।

^{*} जघन्य काल अन्तर्महर्त है।

% तिरिए भंगा।

§ ३०९. कुदो ? अणादियअपज्जवसिदादीणं तिण्हं भंगाणमेत्थ णिव्वाह-मुहत्तंमादो ।

क्क तत्थ जो सो सादिक्रो सपज्जवसिदो तस्स जहण्णेण एयसमन्त्रो।

§ ३१०. कुदो ? श्रद्धावीससंतकम्मियउपसमसम्माइहिणा मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-वेदगसम्मत्ताणमएणदरगुणे पडिवण्णे सासणसम्माइहिणा वा मिच्छत्ते पडिवण्णे एगसमयं तदुवलंभसंभवादो ।

🛞 उक्तस्सेण उवहुपोग्गलपरियट्टं।

§ ३११. इदो १ अद्भयोग्गलपरियद्वादिसमए पढमसम्मत्तमुप्पाइय सन्वजह-एणंतोम्रहुत्तकालमन्छिय मिन्छत्तं गंतूण मन्त्रलहुं सम्मत्त-सम्मामिन्छत्ताणि उन्वेछिय अन्वीसपवेसगभावेणद्भयोग्गलपरियद्वं परिभमिय अंतोम्रहुत्तं सेसे संमारे सम्मत्तं पडिवण्णस्स देस्रणद्भयोग्गलपरियद्वमेत्तपयद्कस्सकालोवलंभादो ।

% सत्तवीसाए पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३१२. सुगमं ।

🛞 जहरणेण एयसमञ्रो ।

६ ३१३. तं जहा—सम्मत्तमुज्वेल्लमाणिमच्लाइही सम्मत्ताहिमुहो होदृण श्रंतरं करेमाणो श्रंतरदुचरिमफालीए सह सम्भत्तचरिमुब्वेल्लणफालि घत्तिय तकाले सम्मत्तस्स

* इस कोलके तीन भंग हैं।

§ ३०१. क्योंकि अनादि-अनन्त आदि तीन भंग यहाँ पर निर्वाधरूपसे उपलब्ध होते हैं।

* उनमें जो सादि-सान्त मंग है उसका जघन्य काल एक समय है।

\$ ३१०. क्योंकि श्रष्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशमसम्यग्दृष्टिके मिथ्यात्व, सम्यग्मिध्यात्व श्रीर वेदकसम्यक्त्व इनमेसे किसी एक गुएगस्थानका प्राप्त होने पर श्रथवा सासादन-सम्यग्दृष्टिके मिथ्यात्वको प्राप्त होने पर एक समय तक उक्त कालकी उपलब्धि होती है।

उत्कृष्ट काल उपार्थ पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है।

\$ २११. क्योंकि श्रर्ध पुद्रल परिवर्तन नामक कालके प्रथम समयमें प्रथम सम्यक्तको उत्पन्न कर श्रीर सबसे जधन्य श्रन्तमुंहूर्त कालतक रहकर, मिध्यात्वमे जाकर श्रांत लघुकालके भीतर सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिध्यात्वकी उद्देलना कर फिर छव्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशकभावसे कुछ कम श्रार्थपुद्रल परिवर्तन नामक कालतक परिश्रमण्डर संसारमें श्रन्तमुंहूर्त काल शेष रहनेपर सम्यक्त्वको प्राप्त हुए उसके कुछ कम श्रार्थपुद्रलपरिवर्तन प्रमाण उत्कृष्ट काल उपलब्ध होता है।

* सत्ताईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

§ ३१२. यह सूत्र सुगम है।

अज्ञानिय काल एक समय है।

§ ३१३. यथा—सम्यक्त्वकी उद्वेलना करनेवाला कोई मिध्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वके स्रामिसुख होकर स्रन्तर करता हुआ अन्तरकी द्विचरम फालिके साथ सम्यक्त्वकी चरम समयुणाविषयमेत्त द्विदीश्रो पिरसेसिय से काले मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणमंतरचरिम-फालि पादिय सम्मामिच्छत्तस्स वि समण्यूणाविषयमेत्त द्विदीश्रो द्विवय पुणो कमेण दोएहं पि समयुणाविषयमेत्त्रगोवुच्छे गालेमाणो पुन्वमेव सम्मत्त गोवुच्छाश्रो णिल्लेविय एगसमयं सत्तावीमपवेसगो जादो । तद्गांतरसमए सम्मामिच्छत्तगोवुच्छं पि णिल्लेविय छन्वीमपवेमगो होदि । एवमेसो एयसमयमेत्तो सत्तावीसपवेसगस्स जहण्णकालो लाह्यो होइ ।

🕸 उक्कस्सेण पितदोवमस्स श्रसंखेजदिभागो।

६ ३१४. कुदो ? सम्मत्तमुब्वेल्लिय सत्तात्रीसपवेसस्मादि कादृण पुणो जाव सम्मामिच्छत्तमुब्वेल्लेदि तात्र एदस्स कालस्स पिलदोत्रमासंखेळभागपमाणस्स पयदु- कस्सकालत्तेण विविक्खियत्तादो ।

🛞 श्रद्वावोसं पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

. ३१४. सुगमं ।

🛞 जहएणेण त्रांतोमुहुत्तं ।

३१६. तं जहा—मिन्छाइद्वी उत्रसमसम्मत्तं घेत्तूण वेदगभावं पिडविजिय ब्रद्वासीसपवेमस्सादिं कादृण पृष्णे। सन्वलहुम्णांताणुबंधिचउकं विसंजोह्य चउवीस-पवेसगो जादो, लद्धो पयदजहण्णकालो।

उद्वेतनाफालिका घातकर उस समय सम्यक्त्वकी एक समय कम आवितमात्र स्थितियोंको शेष राखकर तदनन्दर समयमें मिश्यात्व और सम्यग्मिश्यात्वके अन्तरकी अन्तिम फालिका पतन कर सम्यग्मिश्यात्वकी भी एक समय कम आवितमात्र स्थितियोंको स्थापितकर पुनः कमसे दोनोंकी ही एक प्रमय कम आवितमात्र गोपुच्छाओंको गलाता हुआ पहले ही सम्यक्त्वकी गोपुच्छाको गलाकर एक समय तक सत्ताईस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। तथा तदनन्तर समयमें सम्यग्मिश्यात्वकी गोपुच्छाको भी गलाकर छुद्धीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हुआ। इस प्रकार यह सत्ताईस प्रकृतियोंके प्रवेशक ज्ञान इस प्रकार यह सत्ताईस प्रकृतियोंके प्रवेशक ज्ञान इस प्रकार यह सत्ताईस प्रकृतियोंके प्रवेशक ज्ञान काल एक समय प्राप्त होता है।

अ उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

\$ २१४. क्योंकि सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर सत्ताईस प्रकृतियोंके प्रवेशका प्रारम्भ कर पुनः जब तक सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करता है तब तकका यह पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण काल प्रकृत उत्कृष्ट कालरूपसे विवक्ति है।

* श्रद्वाईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

१ ३१४. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल अन्तर्भृहूर्त है।

§ ३१६. यथा—कोई मिथ्याद्यष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वको प्रहण्कर पुनः वेदकभावको प्राप्त हो श्रद्धाईस प्रकृतियोंके प्रवेशका प्रारम्भ कर पुनः श्रति शीघ्र श्रनन्तानुबन्धी बतुष्ककी विसंयोजना कर चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। प्रकृत जधन्य काल प्राप्त हुआ।

उक्कस्सेण बेछावडिसागरावमाणि सादिरेयाणि। § ३१७. एत्थ तीहिं पिलदोवमस्मासंखेजभागेहिं सादिरेयत्तं दट्ठव्वं। एवमोघेण कालाणुगमो समत्तो।

६ ३१८. संपित एदेण सचिदादेमपरूवणहुमुचारणं वत्तइस्सामा । तं जहा— श्रादेसेण ऐग्इय० २८ २६ जह० एयसमञ्चो, उक्क० तेत्तीसं सागगेवमाणि संपु-एणाणि । २७ २४ २२ श्रोघं । २४ जह० श्रंतोम्रहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागगे० देख्रणाणि । २१ जह० श्रंतोमु०, उक्क० सागगेवमं देख्रणं । एवं सत्तसु पुढवीसु । णविर सगडिदी । विदियादि जाव सत्तमा ति २२ जहएणुक्क० एयस० । २१ जहरुणुक्क० श्रंतोमु० ।

अ उत्कृष्ट काल साधिक दो ख्यासठ सागरप्रमाण है । § ३१७. यहाँ पर तीन बार पल्यके श्रसंख्यातवें भागोंसे साधिकपना जानना चाहिए । इस प्रकार श्रोघसे कालानुगम समाप्त हुआ।

१३१८. श्रव इससे सृचित हुए श्रादंशका कथन करनेक लिए उच्चारणाको बतलाते हैं। यथा—श्रादंशसे नारिकयोमें २८ श्रीर २६ प्रकृतियोंक प्रवंशकका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पूरा ततीस सागर ह। २७, २४ और २२ प्रकृतियोंके प्रवंशकका काल श्रीघके समान है। २४ प्रकृतियोंके प्रवंशकका जघन्य काल खन्तर्मुहत है श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम ततीस सागर है। २१ प्रकृतियोंक प्रवंशकका जघन्य काल खन्तर्मुहत है श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंसे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रपनी श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। दूसरीसे लेकर सातवी तक प्रत्येक पृथिबीसे २२ प्रकृतियोंके प्रवंशकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट वाल एक समय है तथा २१ प्रकृतियोंके प्रवंशकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट वाल श्रम समय है तथा २१ प्रकृतियोंके प्रवंशकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट वाल एक समय है तथा २१ प्रकृतियोंके प्रवंशकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट वाल श्रम समय है तथा २१ प्रकृतियोंके प्रवंशकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट वाल श्रम समय है तथा २१ प्रकृतियोंके प्रवंशकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट वाल एक समय है तथा २१ प्रकृतियोंके प्रवंशकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट वाल एक समय है तथा २१ प्रकृतियोंके प्रवंशकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रम स्था स्थाप स्थाप

विशेषाथ — २८ प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवकी नरकमें उत्पन्न करावे। फिर श्रन्तमुंहूर्तमें उसे वेदकसम्यक्त्य प्रहाग करा कर श्रन्तमें अन्तमुंहूर्त काल रहने पर मिध्यात्वमें ले जावे। ऐसा करनेसे २८ प्रकृतियोंक प्रवेशकका उत्कृष्ट काल ततीम सागर बन जाता है। २८ प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवको नरकमें उत्पन्न करावे। किर श्रन्तमुंहूर्तमें वेदकसम्यक्त्व पूर्वक श्रन्तनानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करा कर जीवनके श्रन्तमें श्रन्तमुंहूर्त काल रहने पर मिध्यात्वमें ले जावे। ऐसा करनेसे २४ प्रकृतियोंक प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कुछ कम तिनीस सागर प्राप्त होता है। नरकमें उपशमसम्यक्त्वके साथ श्रन्तनानुबन्धीकी विसयोजना करानेसे इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल श्रन्तमुंहूर्त प्राप्त होता है। तथा चायिक सम्यग्दृष्टिको नरकमें उत्पन्न करानेसे इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर प्राप्त होता है। सामान्य नारिकयोंको श्रपेचा श्रप कालका खुलासा सुगम है। प्रथमादि नरकोंमें श्रन्य सब काल इसी प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कहा जो उत्कृष्ट स्थिति है उसे जान कर २८, २६ श्रोर २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कहा जो उत्कृष्ट स्थिति है उसे जान कर २८, २६ श्रोर २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कहा ना चाहिए। दूसरे २२ श्रोर २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका सामान्यसे नरकमें जो काल कहा है वह पहले नरकमें ही घटित होता है, इसलिए द्वितीयादि

§ ३१९. तिरिक्खेसु २८ जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पिलदो० सादिरेयाणि पिलदो० असंखे०भागेण । २७ २५ २२ अघि । २६ जह० एयस०, उक्क० अर्णतकालमसंखेजा पोग्गलपियद्वा । २४ जह० अंतोसु०, उक्क० तिण्णि पिलदो० देस्रणाणि । २१ जह० अंतोसु०, उक्क० तिण्णि पिलदो० पिंडवुण्णाणि । एवं पंचिदियतिरिक्खितिए । णविर २८ २६ जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पिलदो० पुन्वकोडिपुधत्तेणब्भिहियाणि । जोणिणि० २२ २१ विदियपुढिविभंगो । पंचि०- तिरि०अपज० – मणुसग्रपञ्ज० २८ २७ २६ जह० एयसमग्रो, उक्क० अंतोसु० ।

नरकोमे उसे श्रलगसे जान लेना चाहिए। जिमका निर्देश मूलमें किया ही है। बात यह है कि द्वितीयादि नरकोमे सम्यक्त्वकी चपणा सम्भव नहीं है, इसिलए वहाँ बाईस प्रकृतियोक प्रवेशकका जधन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय ही बनता है। तथा द्वितीयादि नरकोमे चायिकसम्यग्दृष्टिकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है, इसिलए वहाँ इक्कीस प्रकृतियोके प्रवेशकका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल श्रम्तर्सुहर्त ही बनता है।

े ३१६. तिर्यक्कों ने प्रकृतियों अवशकका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल पल्यका श्रसख्यातवाँ भाग श्रिषिक तीन पल्य हैं। २५, २५ श्रोर २२ प्रकृतियों के प्रवशकका काल श्रोघके समान हैं। २६ प्रकृतियों के प्रवेशक जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रमन्त काल है जो श्रसंख्यात पुरूलपरिवर्तनप्रमाग हैं। २४ प्रकृतियों के प्रवेशकका जघन्य काल श्रमनर्मुहृत है श्रोर उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है। २४ प्रकृतियों के प्रवेशकका जघन्य काल श्रमनर्मुहृत है श्रोर उत्कृष्ट काल पुर्व तीन पल्य है। इसी कार पश्चिन्द्रिय तियक्चित्रकमें जानना चाहिए। विन्तु इतना विश्व ना है कि इनमें २८ और २६ प्रकृतियों के प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्व कोटियुथकत्व श्रिव तान पल्य है। योनिनी तिर्यक्चोंमें २२ श्रीर २१ प्रकृतियों के प्रवेशकका काल दूमरी प्रथिवीं के समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्च श्रपर्याप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें २८, २७ श्रोर २६ प्रकृतियों के प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रम्मर्मुहृत है।

विशेषार्थ — तिर्यक्रोमे उपशमसम्यक्त्वपूर्वक सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिध्यात्वर्का सत्ता उत्यन्न करा र तथा तिर्यक्र पर्यायमे रखते हुए उक्त प्रकृत्तियोकी उद्धलनाद्वारा सत्ता नाश होने के पूर्व ही तीन पल्यकी श्रायुवाले तिर्यक्रोमे उत्वन्न करा कर नथा श्रातिशीन्न वेदकसम्यक्त्वको उत्पन्न कराकर उसके साथ जीवन भर रखनेसे २८ प्रकृतियोके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिष्ठ तीन पल्य बन जानेसे उक्त प्रमाण कहा है। तिर्यक्ष पर्यायमे रहनेका उत्कृष्ट काल श्रात्न काल हे श्रीर इतने काल तक वह जीव २६ प्रकृतियोका प्रवेशक बना रहे यह सम्भन्न है, इसलिए इनमे २६ प्रकृतियोके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल श्रान्त काल कहा है। श्रान्तानुबन्वीकी विसंयोजना कर वेदकसम्यक्त्वके साथ तिर्यक्ष पर्यायमे निरन्तर रहनेका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य ही बनना है, इसलिए इनमे २४ प्रकृतियोके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य कहा है। जो चायिकसम्यग्हिष्ट मनुष्य मरकर तिर्यक्ष्मोमे उत्पन्न होते हैं श्रीर उत्ताम भागभूमिमें एक जीवकी उत्कृष्ट आयु तीन पल्य है, इसलिए यहा २१ प्रकृतियोके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल तीन पल्य कहा है। सामान्य तिर्यक्ष्मोमे यह जो काल घटित करके बतलाया है वह पक्चेन्द्रिय तिर्यक्षत्रिकमे कुछ विशेषताको लिए हुए ही प्राप्त होता है। वह यह है कि पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षत्रिककी कायस्थित पृवं

- . ३२०. मणुसतिए २८ २७ २६ २४ २४ पंचिदियतिरिवखभंगो । २१ जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुन्वकोडितिभागेण सादिरेयाणि । सेसमोघं । णवि मणुसिणी० २१ जह० एयस०, उक्क० पुन्वकोडी देखणा ।
- ३२१. देवेसु २८ जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । २७ २४ २२
 ऋोघं । २६ जह० एयम०, उक्क० एकत्तीसं सागरो० । २४ २१ जह० त्रंतोसु०, उक्क०

कोटि पृथक्त अधिक तीन पल्य ही है, अतः इनमे २८ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल पूर्वकोटि पृथक्त आधिक तीन पल्य प्राप्त होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। तथा योनिनी तिर्थक्कों में न तो सम् करव प्रकृतिकी चपणा सम्भव है और न चायिक सम्प्रन्तिष्ट जीव ही मरकर उत्पन्न होते हैं, अतः इनमें २२ और २१ प्रकृतियों के प्रवेशकका काल दूसरी पृथिवीय समान घटित होनसे इमका मंग दूसरी पृथिवीके समान जाननेकी सूचना की है। यह सम्भव है कि सम्यक्तकी उद्वेलना करनेवाला कोई जीव जब उक्षकी उद्वेलनामें एक समय बाकी रहे तब वह पक्कोन्द्रिय तिर्यक्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकों में उत्पन्न हो। यह भी सम्भव है कि जब सम्यिम्थ्यात्वकी उद्वेलनामें एक समय श्रेप रहे तब वह उक्त जीवोमें उत्पन्न हो और यह भी सम्भव है कि जब सम्यिम्थ्यात्वकी उद्वेलनामें एक समय श्रेप रहे तब वह उक्त जीवोमें उत्पन्न हो और यह भी सम्भव है कि जब उक्त जीवोकी पर्यायमें एक समय बाकी रहे तभी सम्यिग्ध्यात्वकी उद्वेलना हो जावे। ऐसा करनेसे उक्त जीवोमें २८, २७ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय बन जानेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। तथा एक जीवकी अपेचा उक्त जीवोकी उत्कृष्ट स्थित अन्तर्मुहर्त है और इतने काल तक इनमें उक्त पद बने रहे इसमें कोई बाधा नहीं आती, इसिलए इनमें उक्त पदांका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त कहा है। शेप कथन स्पष्ट है, क्यों कि उसका खुलासा आघप्रकृष्णाके समय मूलमें ही कर दिया है, इसिलए वहाँ देखकर यहाँ उसकी संगति बिठा लेनी चाहिए।

् ३२० मनुष्यित्रकमें २८, २७, २६, २५ श्रोर २४ प्रकृतियोकं प्रवेशकका पञ्चेन्द्रिय-ित्रयंक्रोंकं समान भंग हैं। २१ प्रकृतियोकं प्रवेशकका जबन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पल्य है। शेष भंग श्रोघके समान हैं। किन्तु इतनी विशेषता हैं कि मनुष्यिनियोमें २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जबन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण हैं।

विशेषार्थ — जिस पूर्वकोटिकी आयुवाल मनुष्यंन त्रिभाग राष रहनं पर आयुबन्धकं बाद चायिक सम्यक्त उत्पन्न किया है और जो मरकर तीन पल्यकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ है उसके २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल प्राप्त होनेसे वह पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पल्य कहा है। तथा जो मनुष्य उपशम्श्रेणींसे उत्तरत समय २१ प्रकृतियों का प्रवेशक होकर और दूसरे समयमें मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है उस मनुष्यके २१ प्रकृतियों के प्रवेशकका जघन्य काल एक समय बन जानेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। यह तो हम पहले ही बतला आये है कि चायिक सम्यग्हिष्ट जीव मरकर मनुष्यिनियोंमें नहीं उत्पन्न होता। हाँ मनुष्यिनी चायिक सम्यक्त्वको उत्पन्न कर सकती है, आतः मनुष्यित्रकमेंसे शेप दोमें २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका पूर्वोक्त काल कहा है और मनुष्यिनीमें कुछ कम पूर्वकोटि कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३२१. देवोंमें २८ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है खोर उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। २७, २४ ख्रौर २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल छोघके समान है। २६ तेत्तीसं सागरो०। एवं भवणादि जाव णवनेत्रज्ञा ति । एवरि सगद्विदी । भवण०-वाएवं०-जोदिसि० २२ २१ विदियपुढविभंगो । अर्णुदिमादि सव्बद्घा ति २८ २४ २१ जह० अंतोमु०, उक्क० सगद्विदी०। २२ जह० एयस०, उक्क० अंतोमुदुत्तं । एवं जाव०।

🛞 त्रंतरमणुचिंतियृण णेदव्वं।

\$ २२२. एदेण स्चिद्त्थस्स परूवणस्चारणादो कस्सामो । तं जहा- ग्रंतराणु० दुविहो णि० — ग्रोघेण त्रादेसेण य । ग्रोघेण २८ २४ २४ २२ २० १९ १३ १२ १० ९७ ६ ४ ३ २ १ पवेसमंतरं जह० ग्रंतोस्०, उक्क० उबहुपोरगलपरियद्वं । २७ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल इकतीस सागर है । २४, श्रोर २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल श्रन्तर्मुहर्त है श्रोर उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । इसी प्रकार भवनवासियासे लेकर नो प्रवेयक तकके देवोंमे जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए । भवनवासी, व्यन्तर सौर ज्योतिपी देवोंमे २२ श्रोर २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल दूसरी प्रथिवींके समान है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थ- सिद्धि तकके देवोंमे २८, २४ श्रोर २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जाल करतर्मुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थितिप्रमाण है । २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थितप्रमाण है । २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थितिप्रमाण है । २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थितिप्रमाण है । इसी प्रकार यनाहारक मार्गणानक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ - जिसने श्रनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना नहीं की है ऐसा वेदकसम्यग्दृष्टि जीव देवोकी उन्कृष्ट त्राय लेकर उत्पन्न होकर अन्त तक वह उसी प्रकार बना रहे यह सम्भव है, इसिल् सामान्य देवोमे २८ प्रकृतियोके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल ततीस सागर कहा है। मिथ्यादृष्टि देव नौवें वेयक तक ही पाय जाते है, इसलिए इनमें २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल इकतीस सागर कहा है। किन्तु ये ऐसे देव लेने चाहिए जो सम्यक्व श्रौर सम्यग्मिश्यात्वकी सत्तासे रहित होते हैं। जिसने श्रनन्ताबुबन्धीकी विसंयोजना की हैं ऐसा वेदकसम्यग्दृष्टि जीव श्रीर ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि जीव देवांकी उत्कृष्ट श्रायु लेकर उनमे उत्पन्न हो यह भी सम्भव है, इसलिए सामान्य देवांमे २४ त्र्यौर २१ प्रकृतियांके प्रवेशक । उत्कृष्ट काल तेतीस सागर कहा है। नौ प्रैवेयक तकके दंवामे यह प्ररूपणा बन जाती है, इसलिए उनमें सामन्य देवोंके सामान जाननेकी सूचना की है। परन्तु इसके दो अपवाद है। एक तो इन देवोकी त्रायु पृथक पृथक है, इसलिए इस विशेषताको ध्यानमे रखकर उक्त पदोका काल कहना चाहिए। दूसरे भवनित्रकमें सम्यग्दृष्टि जीव मरकर उत्पन्न नहीं होतं, इसिलए इनमें २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल दूसरी पृथिवीके समान प्राप्त होनेसे उसके समान घटित कर लेना चाहिए। तथा इतनी विशेषता और जाननी चाहिए कि इनमे २४ प्रकृतियोके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण ही बनता है। कारण स्पष्ट है। अनुदिशादिकमें २८, २४, २२ श्रीर २१ प्रकृतियोके प्रवेशक जीव ही उपलब्ध होते है, इसलिए इनमें इन पदोंके प्रवेशकोंकी अपेक्षा काल कहा है। शेष कथन सगम है।

* श्रन्तरको विचार कर जानना चाहिए l

§ ३२२ इससे सूचित होनेवाले अर्थका कथन उशारणाके अनुसार करते हैं। यथा— अन्तरानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे २८, २४, २४, २२, २०, १८, १३, १२, १०, ६, ७, ६, ४, ३, २, और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर जह० पित्रदो० स्रसंखे०भागो । २१ जह० वेसमया, उक्क० दोएहं पि उवह्रपोग्गल०। २६ जह० अंतोम्र०, उक्क० वेद्यावद्विसागरो० सादिरेयाणि । २३ एत्थि अंतरं ।

अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। २७ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रगाण है, २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर दो समय है और दोनोका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण है। २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छ्यासठ सागरप्रमाण है। २३ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल नहीं है।

विश्रोषार्ध — कोई २८ प्रकृतियोंका प्रवेशक वेदकसम्यग्दृष्टि जीव श्रानन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके अन्तर्भृहर्तमें मिथ्यात्वमें जाकर पुनः २८ प्रकृतियोका प्रवेशक हो गया । इस प्रकार २८ प्रकृतियांके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहत प्राप्त होता है। कोई जीव उपशम सम्यग्दृष्टि होकर २५ प्रकृतियोंका प्रवेशक हुआ । फिर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके द्वारा २१ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो अन्तरको प्राप्त होगया। उपशम सम्यक्त्वके कालमें ६ आवली शेष रहने पर सासादनको प्राप्त हो दूसरे समयमें पुनः २५ का प्रवेशक होगया, उसके २५ प्रकृतियोंके प्रवेशक-का जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त प्राप्त होता है। जो अन्तर्भृहर्तके अन्तरसे दो बार वेदकसम्यदृष्टि हो श्रनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करता है उसके २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मृहर्त प्राप्त होता है। जो अनन्तानुबन्धीका वियोजक उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सासादनमे जाकर प्रथम समयमे २२ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है। पुनः मिध्यात्वमें जाकर व श्रतिशीघ्र वेदकसम्यक्त्व पूर्वक मिथ्यात्व व सम्यग्मिथ्यात्वकी चप्पाकर २२ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है उसके २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहर्त प्राप्त होता है। आगे २०, १९, १३, १२, १०, ह. ७, ६, ४, ३, २ और १ प्रकृतियों के प्रैवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहते दो बार उपशमश्रेणि पर चढ़ाकर श्रीर उतार कर प्राप्त होता है। यह उक्त स्थानोंके जघन्य श्रन्तरका विचार है। इन स्थानोंका उत्कृष्ट श्रन्तर उपार्ध पुरुगल परिवर्तनप्रमाण इन स्थानोंको श्रर्ध पुरुगल परिवर्तनके प्रारम्भमें श्रीर अन्तमें प्राप्त करानेसे घटित हो जाता है। मात्र यह अन्तर प्राप्त कराने समय जहाँ जो विशेषता हो उसे जानकर कहना चाहिए। २७ प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान सम्मिरिमध्यात्वकी उद्वेलना करानेसे प्राप्त होता है श्रीर इसकी उद्वेलनामे पल्यका श्रासंख्यातवाँ भागप्रमाण काल लगता है, स्रतः यह क्रिया दें। बार उपशमसम्यक्त्वसे गिरा कर करानी चाहिए। ऐसा करनेसे इस स्थानका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त हो जाता है। कोई द्वितीयोपशम जीव पुरुषवेदके उदयसे उपशमश्रीण पर चढ़ा। अन्तरकरणके बाद वह नपु सकवेदका उपशम कर २१ के स्थानमें २० प्रकृतियोंका प्रवेशक हुआ और उसी समय मर कर तथा देव हो देव होनेके प्रथम समयमे नषु सक्वेदका श्रपकर्षणकर उसका उदयाविलके बाहर नित्तेप किया तथा दू और समयमे पुनः वह २१ प्रकृतियों प्रवेशक हो गया। इस प्रकार २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर दो समय प्राप्त होता है। अन्य वेदोंके उदयसे भी यह अन्तर प्राप्त किया जा सकता है सो जानकर कथन कर लेना चाहिए। यह २७ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर है। इनका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपृद्गत्त-परिवर्तन प्रमाण होता है जो इन स्थानोंका उक्त कालके आदिमें और अन्तमें अधिकारी बनानेसे प्राप्त होता है। जो २६ प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त कर अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना करता है। पुनः जब सम्यक्त्वके कालमें एक समय शेष रहने पर सासादनमें जाकर दूसरे समयमें मिध्यात्वमें प्रवेश करता हुआ २६ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है उसके § ३२३. श्रादेसेण गोरइय० २८ २६ २४ २४ जह० श्रंतोम्र०, २७ २२ २१ जह० पत्तिदो० श्रसंखे०भागोः; उक्त० सब्वेसिं पि तेत्तीसं सागरो० देस्र०। एवं सब्वगोर०। णवरि सगद्विदी देस्र०।

§ ३२४. तिरिक्षेसु २८ २४ २४ जह० अंतोम्रु०, २७ २२ २१ जह० पितदो० असंखे०भागो, उक्त० सन्वेसिम्रुवहृषोग्गल०। २६ जह० अंतोम्रु०, उक्क० तिरिण पितदो० सादिरेयाणि। एवं पंचिदियतिरिक्खितए। णवरि सन्वपदाणमुक्क०

२६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जवन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहृत उवलच्ध होता है। तथा जो छन्बीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशम सम्यक्त्व पूर्वक वेदक सम्यग्हिष्ट हो श्रीर यथाविधि श्रन्तर्मुहूर्त कम दो छत्रासठ सागर काल तक बीचमें सम्यग्मिश्यात्वको प्राप्त हो वेदकसम्यक्त्वके साथ रह कर मिश्यात्वमें जाकर पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी उद्वेलना कर २६ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो जाता है उसके २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक दो छ्यासठ सागर प्राप्त होता है। तेईस प्रकृतियोंका प्रवेशक जीव जपणाके समय प्राप्त होता है, इसलिए इसका श्रन्तरकाल नहीं बनता। इस प्रकार श्रोधसे किस प्रवेशस्थानका क्या श्रन्तर काल है इसका विचार किया।

१३२३. आदेशसे नार्राकयोंमें २८, २६, २५ और २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। २७, २२ और २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यात्वें भागप्रमाण है और सबका उत्ऋष्ट अन्तर कुछ कम तेनीस सागर है। इसी प्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

विशेषार्थ — २८, २६, २५ और २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त तथा २७ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण जिस प्रकार आघप्रकृपणामें स्पष्ट करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ पर भी जान लेना चाहिए। जो पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तरसे दो बार उपशम सम्यक्त्वके साथ अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना पूर्वक सम्यक्त्वके साथ २१ प्रकृतियोंका प्रवेशक और सम्यक्त्वसे च्युत हो सास्यस्में आकर २२ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है उसके २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होनेसे इन स्थानोंका जघन्य अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। ओघसे नरकमें जो सब प्रवेशस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर कहा है सो यह प्रारम्भमें और अन्तमें उस उस रथानके प्राप्त करानेसे ही प्राप्त होता है। प्रथमादि नरकोंमें उक्त सब प्रवेशस्थानोंका जघन्य अन्तर तो सामान्य नारिकयोंके समान ही है। मात्र उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिको ध्यानमें रख कर घटित करना चाहिए। विशेष वक्तव्य न होनेसे यहाँ उसका अलग अलग स्पष्टीकरण नहीं किया है।

§ ३२४. तिर्यक्कोंमें २८, २४ झौर २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है, २७, २२ झौर २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा इन सब स्थानोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। इसी प्रकार पक्कोन्द्रय तिर्यक्कित्रकों जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि सब पदोंका उत्कृष्ट अन्तर

तिसिस पत्तिदो० पुन्त्रकोडिपुधत्तेसारुमहियाणि । पंचि०तिरि०अपज्ञ०-मणुसत्रपज्ज० २८ २७ २६ णित्थ त्रंतरं ।

 ३२५. मणुसतिए २८ २६ २५ २४ २२ २१ जह० म्रंतोम्र०, २७ जह० पित्तदो० त्रसंखे०भागो, उक्क० सब्वेसिं तिण्णि पित्तदो० पुव्तकोडिषुध०। २३ णित्थि त्रंतरं। २०१९ १३ १२ १०९ ७ ६ ४ ३ २ १ जह० त्र्यंतोम्रहुत्तं, उक्क० पुव्तकोडिपुध० ∤

पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्व ऋधिक तीन पल्य है। पञ्चोन्द्रिय तिर्यञ्च ऋपर्याप्त श्रीर मनुष्य ऋपर्याप्त जीवोंसे २८, २७ ऋौर २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका ऋन्तरकाल नहीं है।

विशेषार्थ--यहाँ पर सर्वत्र जघाय श्रन्तर सब पदोंके प्रवेशकका जिस प्रकार नरकमें घटित कर बतला आये हैं उसीप्रकार घटित कर लेना चाहिए। सात्र उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करते समय श्रिधिकसे अधिक कितने अन्तरसे ये प्रवेशस्थान सम्भव है इस विशेषता को जानकर उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करना च।हिए। यथा—२८, २७, २४, २४, २२ श्रौर २१ प्रकृतिक प्रवेश-स्थान उपार्ध पुदगल परिवर्तनप्रमाण अन्तरसे प्राप्त किये जा सकते हैं, क्योंकि य प्रवेशस्थान सम्यक्त पूर्वक होते है श्रीर सम्यक्तका उत्कृष्ट श्रन्तर श्रर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। मात्र २६ प्रकृतियोंके प्रवेशस्थानका उत्कृष्ट श्रन्तर सायिक तीन पल्य ही बनता है. क्योंकि जो २६ प्रकृतियोंकी सत्तावाला निर्येख्व उपशम सम्यक्तको प्राप्त कर क्रमसे यथायोग्य श्रविवक्तित स्थानोंका प्रवेशक हो जाता है वह अधिकसे अधिक साधिक तीन पत्य काल तक ही श्चन्य श्रविवज्ञित परोंके साथ निर्येख्न पर्यायमें रह सकता है। उसके बाद या तो तिर्येख्न पर्याय बदल जाती है या वह पुन: २६ प्रकृतियोका प्रवेशक हो जाता है। चूं कि यहाँ २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका तिर्यञ्च पर्याय रहते हुए उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करना है, इसलिए २६ प्रकृतियोंकी सत्तावाला ऐसा तिर्येख्व जीव लो जो उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त कर मिथ्यात्वमें जावे श्रीर वहाँ सम्यक्त्व तथा सम्यग्मिध्यात्वकी उद्देलना करता हुआ वेदक कालके भीतर तीन पल्यकी श्रायवाले तिर्यक्रोंमें उत्पन्न हो। फिर सम्यग्दृष्टि हो, जब इस श्रायमे पल्यका असंख्यातवाँ भाग काल शेष रहे तब मिथ्यात्वमें जाकर उक्त दोनों प्रकृतियोंकी उद्वेलना कर पनः छब्बीस प्रकृतियोका प्रवेशक हो जावे । पञ्चे न्द्रिय निर्यञ्चित्रिककी उत्कृष्ट कार्यास्थित पूर्वकोटि पृथक्त्व ऋधिक तीन पत्य है, इसलिए इनमें सब प्रवेशस्थानोंका उत्कृष्ट श्रन्तर उक्त काल प्रमास कहा है। जघन्य अन्तरका स्पष्टीकरण पूर्ववत् ही है। पख्नेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें २८, २७ श्रीर २६ प्रकृतियोंके प्रवेशस्थान इन पर्यायोंके रहते हुए दो बार नहीं प्राप्त होते, इसलिए इनमें उक्त प्रवेशस्थानोके अन्तर कालका निषेध किया है।

§ ३२४. मनुष्यित्रकमें २८, २६, २४, २४ त्रोर २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त है, २७ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और सब स्थानोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्टथक्त अधिक तीन पल्य है। २३ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल नहीं है। २० १६, १३, १२, १०, ९, ७, ६, ४, ३, २ और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अधन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि प्रथक्त प्रमाण है।

विशेषार्थ — श्रोषप्ररूपणामें सब स्थानोंका जो जधन्य श्रन्तर घटित करके बतलाया है वह यहाँ पर भी उसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र वहाँ २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका ३२६. देवेसु० २८ २६ २४ २४ जह० अंतोमु०, २७ २२ २१ जह० पितदो० श्रसंखे०भागो, उक्क० सन्वेसिमेकत्तीसं सागरो० देस्रणाणि । एवं भवणादि जाव णवगेवज्ञा ति । एवि सगद्विदी देस्रणा । अप्युद्दिसादि सन्बद्घा ति २८ २४ २२ २१ णित्थ अंतरं । एवं जाव० ।

🛞 णाणाजीवेहि भंगविचयो।

- ५ ३२७. सुगममेदमहियारपरामरमवर्कः ।
- अश्वावीस-सत्तावोस-छुव्वीस-चदुवीस-एक्कवीसाए पयडीओ णियमा पविसंति ।

जधन्य अन्तर दो समय दो पर्यायोंकी अपेचा घटित होता है जो यहाँ सम्भव नहीं है, इसलिए यहाँ इस प्रवेशस्थानका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहुर्त प्राप्त करनेका प्रकार यह है कि पहले उपशाम सम्यक्त्व पूर्वक अनन्तानुबन्धीकी विसयोजना करा कर २८ प्रकृतियोंका प्रवेशक बनावे। फिर वेदकसम्यक्त्वपूर्वक ज्ञायिक सम्यक्त्व उत्पन्न कराके पुनः २१ प्रकृतियोंका प्रवेशक बनावे। अन्तर्भृहृत्ते भीतर यह क्रिया करानेसं इस प्रवेशस्थानका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहृत्ते आ जाता है। सब प्रवेशस्थानोका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करते समय यह विशेषता ध्यानमे रखनी चाहिए कि भोगभूमिम उपशमश्रीणका प्राप्त होना सम्भव नहीं है, इसलिए २० आदि जो प्रवेशस्थान उपशमश्रीणसं सम्बन्ध रखन है उनका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण कहा है जो अपनी कर्मभूमिसम्बन्धी कायस्थितिके प्रारम्भमें और अन्तमे दो बार उपशमश्रीण पर आरोहण करानेसे प्राप्त होना है। शेष प्रवेशस्थानोका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पत्य है यह स्पष्ट ही है। २३ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट ही है।

§ १२६. देवोम २८, २६, २५ श्रोर २ प्रकृतियोके प्रवेशकका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है, २७, २२ श्रोर २१ प्रकृतियोके प्रवेशकका जघन्य श्रन्तर परुयके श्रमंख्यातवे भागप्रमाण है, तथा सबका उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। इसी प्रकार भवनवासियोस लेकर नो प्रवेयक तकके देवोमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि वृछ कम श्रपनी श्रपनी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिए। श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोमे २८, २४, २२ श्रोर २१ प्रकृतियोक प्रवशकका श्रन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा जानना चाहिए।

विशेषार्थ — यहाँ सामान्य देवांमे श्रीर नी मैंवेयक तकके देवांमे सब प्रवेशस्थानोका यथायांग्य जघन्य श्रान्तर जिसमकार नरकमें घटित करके बतलाया है उसी प्रकार यहा भी घटित कर लेनेमें कोई बाधा नहीं है। मात्र सामान्य देवोंमे उत्कृष्ट श्रान्तर प्राप्त करते समय नीव ग्रेवेयककी उत्कृष्ट श्रायु ही विवित्तित करनी चाहिए, क्योंकि गुण्स्थान परिवर्तन वहीं तक सम्भव है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

- * नाना जीवोंकी अपेता भंगविचयका अधिकार है।
- 🞙 ३२७. श्रधिकारका परामर्श करनेवाला यह वाक्य सुगम हं।
- * श्रद्वाईस, सत्ताईस, खन्बीस, चौबीस श्रीर इकीस प्रकृतियाँ उदयावित्तमें नियमसे प्रवेश करती हैं।

🛞 सेसाणि द्वाणाणि भजियव्वाणि ।

§ ३२९. कुदो १ पणुवीसादिसेसपवेमद्वाणाणमद्धुवभावदंसणादो । एतथ भंग-पमाणमेदं १४३४८९०७ । एवं मणुमतिए । आदेसेण गोरइय० २८ २७ २६ २४ २१ णिय० ऋत्थि । सेसपदाणि भयणिजाणि । भंगा ९ । एवं पढमाए तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्ख०२-देवा सोहम्मादि जाव णवभेवजा ति । विदियादि सत्तमा ति २८ २७ २६ २४ णियमा ऋत्थि । सेसपदा भयणिजा । भंगा २७ । एवं जोणिणि०-भवण०-वाणवें०-जोदिसियाणं । पंचि०तिरि० अपज्ञ० २८ २७ २६ णियमा ऋत्थि । मणुसअपज्ञ० सव्वपदा भयणिजा । भंगा २६ । अणुहिसादि सव्वद्वा ति २८ २४ २१ णियमा ऋत्थि । २२ पवे० भयणिजा । भंगा ३ । एवं जाव० ।

§ ३२८. क्योंकि नाना जीवोंकी अपेदा इन प्रवेशस्थानोका ध्रुवरूपसं सर्वदा अवस्थान देखा जाता है।

अ शेष प्रवेशस्थान भजनीय हैं।

\$ २२६ क्योंकि पचीस प्रकृतिक श्रादि रोप प्रवंशस्थान श्रध्रवरूप देखं जातं है। यहाँ पर भंगोंका प्रमाण यह है—१४३४८६०७। इसीप्रकार मनुष्यित्रकमें जानना चाहिए। श्रादेशसे नारिकयोंमें २८, २७, २६, २४ श्रोर २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव नियमसे हैं। शेप पर भजनीय हैं। भंग ६ हे। इसी प्रकार प्रथम पृथिवीके नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चिद्रिक सामान्य देव श्रोर सौधर्म कल्पसे लेकर नो प्रवेशक तकके देवोंमे जानना चाहिए। दृगरीस लेकर सामवी तकके नारिकयोंमे २८, २७, २६ श्रोर २४ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव नियमसे हैं। शेप पर भजनीय हैं। भंग २७ हें। इसीप्रकार योनिनी तिर्यञ्च, भवनवासी, व्यन्तर श्रोर ज्योतियी देवोंमे जानना चाहिए। पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रप्याप्तकोंमें २८, २७ श्रोर २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव नियमसे हैं। श्रमुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमे २८, २४ श्रोर २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव नियमसे हैं। २२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव नियमसे हैं। भग्ग तीन हैं। इसी प्रकार श्रमाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—श्रोघसं पाँच प्रवेशस्थान श्रुव हे झोर पन्द्रह प्रवेशस्थान श्रुव है। श्रत-एव एक जीव श्रीर नाना जीवोकी श्रपंत्ता पन्द्रह बार तीन संख्या रखकर गुणा करने पर कुल भंग १४३४८५०७ श्रात है। इनमें एक श्रुव भंग भी सिम्मिलित है। यथा—३×३×३×३×३ ×३×३×३×३×३×३×३×३ ×३ = १४३४८५००। इसी प्रकार श्रागे गित मार्गणांके भेदोमें जहाँ जितने श्रश्रुव प्रवेशस्थान हैं उतनी बार तीन संख्या रखकर गुणा करनेसे उस उस मार्गणांक सब भंग प्राप्त कर लेने चाहिए। कोई विशेषता न होनेसे श्रलग श्रलग स्पर्धांकरण नहीं किया है। मात्र मनुष्य श्रप्योप्तकोंमें २८, २७ श्रीर २६ ये तीन प्रवेशस्थान है जो श्रध्रुव है, इसलिए इनमें एक श्रुव भंगको छोड़कर २६ भंग प्राप्त होते हैं। ३३०. संपित एत्थुइसे सुगमत्तादो चुण्णसुत्तेणावरूविदाणं भागाभाग-परिमाणखेत्त-पोसणाणं परूत्रणमुचारणावलंबणेण कस्सामो । तं जहा—भागाभागाणुगमेण दुविहो
णिइसो—-श्रोषेण श्रादेसेण य । श्रोषेण झव्वीमपवे० सव्वजी० केविडिश्रो भागो ? श्रणंता
भागा । सेसमणंतभागो । एवं तिरिक्खा० । श्रादेसेण ग्रेरइय० २६ पवे० मव्वजी०
केव० भागो ? श्रसंखेजा भागा । सेसप० श्रसंखे०भागो । एवं सव्वग्रेरइय०-सव्वपंचिदियतिरिक्ख-मणुस-मणुस-प्रसुपज्ञ०-देवा भवणादि जाव सहस्सार ति । मणुसपज्ञ०मणुसिणी० २८ पवे० के० ? संखेजा भागा । सेसपदपवे० संखेजदिभागो । श्राणदादि
ग्यवगेवजा ति २८ मंखेजा भागा । २६ २४ २१ संखेजदिभागो । २० २४ २२
मव्वजी० श्रसंखे०भागो । श्रणुदिसादि श्रवराजिदा ति २८ पवे० संखेज भागा ।
२४ २१ मंखे०भागो । २२ श्रमंखे०भागो । एवं सव्वद्वे । ग्रवरि संखेजं कादव्वं ।
एवं जाव० ।

३३१. परिमाणाणु० दुविहो णिद्देसो—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण २६ पर्वे० केत्ति० ? श्रागता । २८ २७ २४ २२ २१ पर्वे० केत्ति० ? श्रागंखेडजा । सेससव्वपदा संखेडजा । श्रादेसेण ऐरइय० सव्वपदा केत्ति० ? श्रासंखेडजा । एवं

§ ३३० श्रब इस स्थानपर सुगम होनेसे चूर्णसूत्रकारके द्वारा नहीं कहे गये भागा गग, परिमाण, जेत्र श्रीर स्पर्शनकी प्रक्रपणा उत्चारणाका अवलम्बन लेकर करत है। यथा-भागाभागानगमकी अपंता िर्दश दो प्रकारका है-- अगेच और आदश। आयसे छटबीस प्रकृतियोक प्रवेशक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण है ? श्रवन्त बहुभागप्रमाण है। शेष परोक्ते प्रवेशक जीव श्रानन्तवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार सामान्य तिर्युख्नोंमे जानना चाहिए। अप्रदेशसे नारिकयोमे २६ प्रकृतियोके प्रवेशक जीव सब जीवोके कितने भागप्रमाण है ^१ स्पर्स-रुयात बहुभाग प्रमाण है। शंष पदोके प्रवेशक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है ? इसी प्रकार मब नारकी, सब पचेन्द्रिय तिर्यञ्ज, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव श्रीर भवन-वासियासे लंकर सहस्रार कल्पतकके देवामे जानना चाहिए। मनुष्य पर्यात्र श्रीर मनुष्यिनियोमें २६ प्रकृतियांके प्रवेशक जीव कितने हैं ? सख्यात बहुभागप्रमाण है । शेष पदोके प्रवेशक जीव संख्यातवें भागप्रमाण है। श्रानत कल्पसे लेकर नो प्रवेयक तकके देवांमें २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यात बहुभाग प्रमाण है। २६,२४ श्रोर २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्या-तवं भागप्रमाण है। २७, २५ श्रोर २२ प्रकृतियोके प्रवेशक जीव सब जीबोके श्रसंख्यातवे भाग-प्रभाग है। अनुदिशसे लेकर श्रपराजित तकके देवोमे २८ प्रकृतियांके प्रवेशक जीव संख्यात बहुभागप्रमास है। २४ श्रीर २१ प्रकृतियांके प्रवंशक जीव संख्यातवें भागप्रमास है तथा २२ प्रकृतियोके प्रवेशक जीव श्रमंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार सर्वार्थभिद्धिमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि ऋसंख्यातवें भागके स्थानमे संख्यातवें भाग करना चाहिए। इसीप्रकार श्रमाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २३१. परिमाणानुगमकी श्रपेता निर्देश दो प्रकारका है—श्रांघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे २६ प्रकृतियोके प्रवेशक जीव कितने हैं ? श्रानन्त है। २८, २७, २४, २२ श्रोर २१ प्रकृतियोके प्रवेशक जीव कितने हे ? श्रसंख्यात है। शेप सब पदोंके प्रवेशक जीव संख्यात है। श्रादेशसे सन्वर्णेरइय०-सन्वर्णेचिदियतिरिक्ख-मणुसम्चपज्ज०-देवा भवणादि जाव णवनेवज्जा ति । तिरिक्खेसु सन्वपदाणमोर्घ । मणुसेसु २८ २७ २६ केत्ति० ? असंखेज्जा । सेसपदा संखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सन्बद्घदेवेसु सन्वपदा संखेज्जा । अणुदिसादि अवराइदा ति २८ २४ २१ केति० ? असंखेज्जा । २२ पवे० के० ? संखेज्जा । एवं जाव० ।

§ ३३२. खेत्ताणु० दुविही णि०—श्रोघेण आदंसेण य । श्रोघेण छन्त्रीसपवे० केविड खेते ? सन्वलोगे । सेमपदाणि लोग० असंखे०भागे । एवं तिनिक्खा०। सेसदीसु सन्वपदा खोग० असंखे०भागे । एवं जाव० ।

\$ २२३. पोमणाणु० दुविहो णि० — श्रोघेण आदेसेण य । श्रोघेण छव्वीस-पदं० सव्वलोगो । २८ २७ लोग० असंखे०भागो अट्टचोइस० देस्रणा सव्वलोगो वा । २४ पवे० लोग० असखे०भागो अट्टचोइस० । २४ २२ २१ लोग० नारिक्योंम सब पदांके प्रवेशक जीव कितने हैं १ असंख्यात है । इसीप्रकार सब नारकी, सब पर्छ्वेन्द्रिय तिर्यक्क, मनुष्य अपयीप्त, सामान्य देव और भवनवासियोसे लेकर नी प्रवेषक तककं देवोंमे जानना चाहिए । तिर्यक्कोंमें सब पदांके प्रवेशक जीवोका परिमाण श्रोघके समान है । मनुष्योंमें २८, २७ और २६ प्रकृतियोंक प्रवेशक जीव कितने हें १ असंख्यात हैं । सेष पदोंके प्रवेशक जीव संख्यात है । मनुष्य पर्याप्त, सनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब पदोंके प्रवेशक जीव संख्यात है । अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें २८, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जाव कितने हैं १ असंख्यात है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

३२२. च्रेत्रानुगमकी अपंचा निर्देश दो प्रकारका है—आय और आदंश। आयसं छन्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवोंका कितना चेत्र हैं । सर्व लोक चेत्र हैं । शेष पदोक प्रवेशक जीवोंका कितना चेत्र हैं । इसीप्रकार तिर्यक्रोंमें जानना चाहिए । शेष गतियोंमें सब पदाके प्रवेशक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—यद्यपि २६ प्रकृतिक प्रवंशस्थान सम्यग्दशनकं होनेपर भी होता है, परन्तु सम्यग्दर्शन होनेके पूर्व सब जीव छड़बीस प्रकृतियोंके प्रवंशक ही होत है और वे श्रनन्त हे, इसिलए उनका चेत्र सर्व लोक कहा है। किन्तु शेप स्थानोंके प्रवंशक जीव सम्यग्दर्शन होनेके बाद यथा योग्य गुग्गस्थानके प्राप्त होनेपर ही होते हैं, श्रतः उनका सर्व लोक चेत्र नहीं बन स ता, इसिलए उनका लोकका श्रसंख्यातवां भागप्रमाण चेत्र कहा है। श्रपने सम्भव पदोंकी श्रपेचा यह चेत्र सामान्य तिर्यञ्जोमें बन जाता है, इसिलए उनकी प्रकृपणा श्रापक समान जाननेकी सूचना की है। तथा गितमार्गणाके शेप भेदोंका चेत्र ही लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है, इसिलए उनमे सम्भव सब पदोंके प्रवेशकांका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हहा है।

े ३३३. स्पर्शनानुगमकी अपेद्मा निर्देश दो प्रकारका है — आघ और आदेश। आघम छन्षीस प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने सर्व लोकप्रमाण दोत्रका स्पर्शन किया है। २८ और २७ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण दोत्रका स्परान किया है। २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग

त्रसंखे०भागो त्रहुचोद्दस० । सेमपदे० लोग त्रमंखे०भागो ।

ई ३३४. आदेसेण ऐरइय० २८ २७ २६ पर्व० लोग० स्नसंखे०भागो छ चोदस० देखणा। २४ लोग० असंखे०भागो पंचचोदस०। सेसं खेत्तं। एवं विदियादि जाव सत्तमा ति । एवरि सगपोसएं। सत्तमाए २४ पर्व० खेत्तं। पढमाए खेत्तं।

श्रीर त्रसनालीं के चौदह भागों में से कुछ कम श्राठ श्रीर बारह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। २४, २२ श्रीर २१ प्रकृतियों के प्रवेशकों ने लोक के श्रमंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीं के चौदह भागों में से कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदों प्रवेशकों ने लोक के श्रमंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ - श्रोधसे छन्बीस प्रकृतियोंके प्रवंशकोंका जब चेत्र ही सर्व लोक प्रमाण कहा है तब इनका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण होना सुनिश्चित है। जो सम्यक्त्वसे च्युत होकर सम्यक्त्व-की उद्वेलना होनेके पूर्व तक मिथ्यात्वके साथ रहते है या अनन्तानुबन्धीके अवियोजक वेदक-सम्यग्दृष्टि होते है वे ही २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक होते हैं। तथा जो २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक होते हैं, तथा जो २८ प्रकृतियोकी सत्तावाले जीव सम्यक्त्व प्रकृतिकी उद्वेलना कर लेते हैं वे २७ प्रकृतियोके प्रवेशक होते हैं, इसलिए इनका वर्तमान स्पर्शन लोकके ऋसंख्यानवें भागप्रमाण, विहारवत्स्व-स्थान आदिकी अपेचा अतीन स्पर्शन त्रसनालीके चोवह भागोमेसे आठ भागप्रमाण और भारणा-न्तिक समुद्धात तथा उपपादपद्की अपेत्ता अतीत स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण प्राप्त होना सम्भव है। यहीं समभकर इन दो पदाके प्रवेशकोका उक्त स्पर्शन कहा है। यह सामान्य कथन है। वैसे श्रनन्तानुबन्धो चतुष्कके श्रविसंयाजक २८ प्रकृतियोके प्रवेशक सम्यग्द्दष्टि जीवोका स्पर्शन सर्वलोक प्रमाण नहीं बनता है इतना विशेष जानना चाहिए। २४ प्रकृतियोके प्रवेशकोमे सासा-दन जीवोकी मुख्यता है और इनका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भागप्रभाग बतलाया है, इस लिए यहाँ पर उक्त पदके प्रवेशकोंका यह स्पर्शन कहा है। २४, २२ और २१ प्रकृतियोके प्रवेशकोमे सम्यग्द्राध्ट जीवोकी मुख्यता है। आंर इनका स्पर्शन लांकक श्रसंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है। यही कारण है कि यहाँ पर उक्त पदोके प्रवेशको का यह स्पर्शन कहा है। शेष पदोके प्रवेशकोका सम्बन्ध उपशमश्रेणि श्रीर चपकश्रेणिसे है श्रीर ऐसे जीवोंका स्पर्शन लोकके ऋसंख्यानवें भागप्रमाण बतलाया है। यही कारण है कि इन पदोके प्रवेशकांका यह स्पर्शन कहा है।

§ ३३४. श्रादेशसे नारिकयों में २८, २७ श्रीर २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके श्रसंख्या-तवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लाकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमसे कुछ कम पाँच भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके प्रवेशकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इसी प्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवी पृथिवी तकके नारिकयोंमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रपना स्पर्शन कहना चाहिए। सातवी पृथिवीमें २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। पहली पृथिवीमें सब पदोंकी श्रपेचा स्पर्शन चेत्रके समान है।

विशोषार्थ — सामान्यसे नारिकयोमे २८, २७ और २६ प्रकृतियोके प्रवेशक मिथ्यादृष्टि जीवोके मारणान्तिक समुद्धात श्रीर उपपादके समय भी सम्भव हैं, इसलिए इनकी श्रपेक्षा वर्तमान स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर श्रतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण कहा है। छटवें नरक तकके सासादन जीव ही मरकर श्रन्य गतिमें बस्पक्ष

§ ३३४. तिरिक्खेसु २८ २७ लोग० श्रसंखे०भागो सन्वलोगो वा । २६ पवे० सन्वलोगो । २४ लोग० श्रमंखे०भागो सत्तचोद्द० दे०। २४ लो० श्रसंखे०भागो झचोद्दस० देसणा । सेसं लोग० श्रमंखे०भागो । एवं पंचि०तिरिक्खतिए । एविर २६ लोग० श्रमंखे०भागो सन्वलोगो वा । पंचि०तिरिक्खश्रपञ्ज०-मणुसश्रपञ्ज० सन्वपदा० लोग० श्रमंखेजिदिभागो सन्वलोगो वा । मणुसतिए २८ २७ २६ २४ पंचिदियतिरिक्खभंगो । सेमपद० खेतं ।

होते हैं और २५ प्रकृतियों के प्रवेशकों में सासाइन जीवों की मुख्यता है। यही कारण है कि इनकी अपेचा वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागों में से पॉच भागपमाण कहा है। यहाँ रोप पदांके प्रवेशकों में सम्यग्द्रष्टि जीवों की मुख्यता है, इसलिए इनके प्रवेशकों का लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण स्पर्शन कहा है। दूसरीसे लेकर सानवीं पृथिबी तकके नारिकयों में अन्य सब कथन सामान्य नारिकयों के समान ही है। मात्र दो बातों की विशेषता है। प्रथम तो यह कि अतीत स्पर्शन कहते समय अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए। दूसरे सानवीं पृथिवीं के नारकी मिध्यात्वके साथ ही मरण करते है ऐसा एकान्त नियम है, इमलिए उनमें २४ प्रकृतियों के प्रवेशकों का स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। तथा पहली पृथिवीं के नारिकयों का स्पर्शन ही चेत्रके समान है, इसलिए इनमें सब पदों के प्रवेशकों के स्पर्शनकों चेत्रके समान जाननेकी सूचना की है।

५३५. तिर्यक्चोंमें २८ और २७ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण श्रोर सर्वलाक प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम सात भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। रोप पदोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी निशेषता है कि इनमे २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लाकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त अपर्याप्तकोंने स्व पदोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त कोने स्व पदोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यत्रिकमे २८, २७, २६ और २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका स्पर्शन पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। रोष पदोंके प्रवेशकाका स्पर्शन चेत्रके समान है। रोष पदोंके प्रवेशकाका स्पर्शन चेत्रके समान है। रोष पदोंके प्रवेशकाका

विशेषार्थ —ितर्यंचोंमं २८ प्रकृतियोंक प्रवेशकोंमं २८ प्रकृतियोंकी सत्तावाले सादि मिध्याहिट और अनन्तानुबन्धीके अवियोजक वेदक सम्यग्हिट्योंकी मुख्यता है। २७ प्रकृतियोंके
प्रवेशक सम्यन्त्वकी उद्वेलना कर स्थित हुए मिध्याहिट हैं और ऐसे तिर्यंचोंका वर्तमान
स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और अतीत स्पर्शन सर्व लोक प्रमाण सम्भव होनेसे उक्त
पदोंके प्रवेशकोंका यह स्पर्शन कहा है। परन्तु अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अत्रियोजक वेदकसम्यग्हिष्ट्योंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और असनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ
कम छह भाग प्रमाण ही समभना चाहिए। यहाँ पर २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक कीन जीव हैं यह
दिखलानेके लिए उक्त जीवोंका संग्रह किया है। २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक सामान्य तिर्यंचोंका

§ ३३६. देवेस २८ २७ २६ २४ लोगस्स असंखे०भागो श्रद्र-एवचोहस० देखणा। २४ २२ २१ लोग० असंखे०भागो अद्भवोहस० देखणा। एवं सोहम्मी-साणः । एवं चैव सञ्बदेवेस । णवरि मगपोमएां पदिवसेसो च जाणियव्यो । एवं जावः।

अ एएए जोवेहि कालो अंतरं च अणुचितिकए ऐदव्वं।

१३७. एदस्स दन्वद्वियणयमस्सिऊण पयद्वस्स सत्तस्स पञ्जवद्वियपह्रवणा विस्थररुइसत्ताणुग्गहद्वमुचारणावलेण कीरदे। तं जहा-कालाण् दविहो णि०-**ब्रादेसेण** य। ब्रोघेण २८ २७ २६ २४ २१ सन्बद्धा। २**४** जह० श्चोघेण सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन है यह स्पष्ट ही है। सम्यादृष्टि तिर्यञ्जोका वर्तमान स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर श्रतीत स्पर्शन श्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम छह भागप्रमाण बतलाया है। यही कारण है कि यहाँ २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकोका उक्त चेत्रप्रमाण स्पर्शन कहा है। इनमें शेप परोके प्रवेशकोंका स्पर्शन लोकके श्रासंख्यातवें भागप्रभागा है यह स्पष्ट ही है। पञ्चीन्द्रय तिर्यञ्चित्रिकमे श्रपने सब पदोंकी श्रपेचा यह स्पर्शन बन जाता है। मात्र इनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त हानेसे इनमें २६ प्रकृतियोक प्रवेशकोका लोकके असंख्या-तवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रनाण स्पर्शन कहा है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्त श्रीर मनुष्य अपर्याप्तकोंका जो स्पर्शन है वह स्पर्शन उनमें सम्भव पदाके प्रवेशकोंका बननेमें कोई प्रत्यवाय नहीं है. इसलिए उनमें सम्भव पदोके प्रवेशकोका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण कहा है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमे जो स्पर्शन कहा है वह घटित कर लेना चाहिए।

९ ३३६. देवोमें २८. २७, २६ श्रीर २४ प्रकृतियोके प्रवेशकोने लोकके श्रसंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे दुछ कम आठ श्रीर कुछ कम नी भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। २४, २२ श्रीर २१ प्रकृतियोके प्रवशकोने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सौधर्म श्रीर ऐशान कल्पकं देवांमे जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार सब देवांमे जानना चाहिए. किन्तु सर्वत्र अपना अपना स्वर्शन श्रौर पर्दावशेप जान कर कथन करना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विश्रोषार्थ - देवोमें २८, २७, २६ धार २५ प्रकृतियोके प्रवेशक जीव मारणान्तिक पर श्रीर उपपादपढ़के समय भी सम्भव हैं, इसलिए इनमें सामान्य देवोंका जो स्पर्शन सम्भव है वह बन जानेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा शेप पदोके प्रवेशकोमे सम्यग्दृष्टियोंकी मख्यता है. इसलिए उन पदोके प्रवेशकोका स्पर्शन सम्यग्द्धियोकी मुख्यतासे कहा है। सीधर्म श्रीर ऐशानकल्पके देवोंमें यह स्पर्शन बन जानेसे उसे सामान्य देवोके समान जाननेकी सचना की है। शेष देवोमें पूर्वोक्त विशेषताके साथ ऋपना अपना स्पर्शन जानकर उसे घटित कर लेना चाहिए। विशेष वक्तव्य न दोनेसे वह प्रथक् पृथक् नहीं बतलाया है।

* नाना जीवोंकी अपेदाा काल और अन्तरका विचारकर घटितकर लेना चाहिए।

§ ३३७. द्रव्यार्थिकत्तयका स्त्राश्रय कर प्रवृत्त हुए इस सूत्रकी पर्यायार्थिक प्ररूपणा बिस्तार रुचिवाले जीवोंका अनुप्रह करनेके लिए उच्चारगाके बलसे करते हैं। यथा-कालान-गमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है-आंघ श्रीर आदेश। श्रीघसे २८, २७, २६, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका काल सर्वदा है। २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय

एयसमस्रो, उक्कः पित्तदो० स्रसंखे०भागो । २३ जहण्णु० स्रंतोम्र० । २२ २० १९ १३ १२ ९ ६ ३ २ १ जह० एगसमस्रो, उक्कः स्रंतोम्र० । १० ७ ४ जह०एगस०, उक्कः संखेजा समया ।

है स्त्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके स्वसंख्यातवें भागप्रभाग है। २३ प्रकृतियोके प्रवेशकोंका जघन्य स्त्रीर उत्कृष्ट काल स्नन्तर्मुहूर्त है। २२, २०, १८, १३, १२, ९, ६, ३, २ स्त्रीर १ प्रकृतियोके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है स्त्रीर उत्कृष्ट काल स्नन्तर्मुहूर्न है। १०, ७, स्त्रीर ४ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है स्त्रीर उत्कृष्ट काल संख्यान समय है।

विशेषार्थ --- २८, २७, २६, २४ स्रोर २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सर्वदा पाये जाते हैं, इसलिए इनकी श्रापेत्ता सर्वदा काल कहा है। कारण स्पष्ट है। २४ प्रकृतियों के प्रवेशक जीव सासादन सम्यग्द्दष्टि हाते है और उनका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट नाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। यही कारण है कि यहाँ पर इस पदके प्रदेशकोंका उक्त काल कहा है। २३ प्रकृतियोंके प्रवेशक जिन्होंने सम्यग्मिश्यात्वकी सपमा कर ला है वे होते हैं स्त्रीर ऐसे जीव लगातार अन्तर्महर्त काल तक ही पाये जाते हैं, क्योंकि मिध्यात्वकी चप्रााः बाद सम्यग्मि-ध्यात्वकी च 4 गामें अन्तर्मुहूर्त काल लगता है। अय यदि नाना जीव भी क्रमसे अञ्जित परम्पराके साथ सम्यक्त्वकी न्नपणा करें तो वे संख्यात होनेसे उनके कालका जोड अन्तर्भहर्त ही होगा। यही कारण है कि यहापर २३ प्रकृतियोंके प्रवेशकांका जयन्य और उत्कृष्ट काल अपन्तर्मुहर्त कहा है। २२, २०, १६, १३, १२,६,६,३, २ त्यीर १ प्रक्वांतयों के प्रवेशकोंकी पूर्वमें जो समुर्त्कार्तना बतलाई है श्रीर उस श्राधारसे जो स्त्रामित्व कहा है उसं देखते हए इन पदोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्महर्त वजनेम कोई बाधा नहीं श्चाती, इसलिए इन पदाके प्रवेशकोंका उक्त काल कहा है। तीन प्र≆ारके लो∹मे मायासंज्व-लनका प्रवेश कराने पर चार, तीन प्रकारकी मायाके ऊपर मानसंज्यलनका प्रवेश कराने पर सात श्रीर त'न प्रकारके मानके ऊपर क्रोध संज्वलनका प्रवेश कराने पर १० प्रकृष्यों है। प्रवेशक होता है। चूंकि इन प्रवेशस्थानों का एक जीवकी ऋषेचा जघन्य ऋौर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रब यदि श्रत्रुटित सन्तानके साथ नाना जीव इन प्रवेशम्थानों तो प्राप्त हों तो उस सब कालका जोड़ संख्यात समय ही होगा श्रीर एक समय तक इन प्रवंगस्थानो हो प्राप्त कर दूसरे समयमे सन्तान भंग हो जाय तो इन प्रवेशस्थानोंका एक समय काल प्राप्त हागा। यही सब सममकर यहाँ पर इन पदोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्क्रष्ट काल संख्यात समय कहा है।

§ ३३८ आदेशसे नारिक गोंमें सब पदोंके प्रवेशकोंका काल सर्वदा है। िकन्तु इतनी विशेषता है िक २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका काल श्रोघके समान है। तथा २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रान्तर्मृहृत है। इमी प्रकार पहली पृथिवींके नारकी सामान्य तिर्यक्ष, पश्चिनिद्रय तिर्यक्षिक, सामान्य देव श्रीर मीधर्मकल्पसे लेकर नी भैवेयक तकके देवोमें जा।ना चाहिए। दूनरी पृथिवींसे लेकर सातवी पृथिवी तकके नारिक योंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इननी विशेषता है कि २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका

२२ जह० एयस०, उक्क० आविति० असंखे०भागो । २१ जह० अंतोग्रु०, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो । एवं जोणिणी०-भवण०-वाण०-जोदिसियाणं । पंचि०-तिरिक्खअपज० सन्वपदा सन्वद्धा । मणुसितिए ओघं । णवित्र २४ जह० एयसमश्रो, उक्क० अंतोग्रु० । मणुसअपज० २८ २७ २६ जह० एयस०, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो । अणुदिसादि सन्बद्धा कि २८ २४ २१ सन्बद्धा । २२ जह० एगम०, उक्क० अंतोग्रु० । एवं जाव० ।

जघन्य काल एक समय है और उन्कृष्ट काल आर्त्रालके असंख्यातर्वे भागप्रमाण है। २९ प्रकृतियोंके प्रवेशकांक जघन्य काल अन्तर्मृहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार योनिनी तिर्यक्ष, भवनवास, व्यन्तर और उयोनिपी देवोंमे जानना चाहिए। पञ्चीन्द्रय तिर्यञ्च अपर्याप्तकों सब पदोंके प्रवेशकोंका काल सर्वदा है। मनुष्यित्रकमें आंघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमे २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमे २८, २७, और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमे २८, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका काल सर्वदा है। २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — अनन्तानुबन्धाका वियाजक जो उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सासादनमे जाता है वह प्रथम समयमं २२ प्रकृतियाका अवेशक होता है स्त्रीर यदि वह द्वितीयादि समयमे सासादनमे रहता है ता २५ प्रकातयोका प्रवंशक हा जाता है। तथा जो उपशमसम्यादृष्टि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना किये विना सासादनमें जाता है वह जितने काल तक सासादनमें रहता है उतने काल तक पन्चास प्रकृतियोका ही प्रवेशक होता है। एक समय तक रहता है तो उतने काल तक २४ प्रकृतियोका प्रवशक होता है और छह आविलकाल तक रहता है तो उतने काल तक पच्चास प्रकृतियांका प्रवेशक हाता है। अब यदि बृटित सन्तानकी अपेना इस कालका विचार करते हैं तो वह कमस कम एक समय प्राप्त होता है और श्रत्रुटित सन्तानकी अपेन्। इसका विचार करते है तो वह पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। यही कारण है कि यहाँ पर नार्यक्यांम इस पदके प्रवेश शोका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यानचे भागप्रभाग कहा है। २२ प्रकृतियों के प्रवेशकों का जघन्य काल एक समय है यह तो हमने पूर्वमे बतलाया ही है। किन्तु इस पदक प्रवेशकांका उत्कृष्ट काल उन जीवोके होता हैं जो सम्यवत्वकी चपणा कर रहे हैं। अन्यथा यह काल आविलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। यही कारण है कि सामान्य नारिकयोमे और प्रथम पृथिवीके नारिकयोमे २२ प्रकृतियोंके प्रवेशको का जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त कहा है। तथा द्वितीयादि प्रियावयोके नारिकयामे इस पदके प्रवेशकोका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवितिके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। तिर्यक्षद्विक और सौधर्म कल्पसे लेकर नौ मैवेयक ताक देवोमे तो सामान्य नारिकयोके समान ही काल बन जाता है, क्योंकि इनमें कृतकृत्यवेदक सम्यारृष्टि जीवोकी उत्पत्ति सम्भव है। किन्तु योनिनी तिर्यव्य श्रीर भवनत्रिकमें द्सरी पृथिवीके समान काल बनता है, क्योंकि इनमे कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टियोकी उत्पत्ति नहीं होती। उक्त सब मार्गणात्रोमे कालका शेष कथन समान है। मनुष्यत्रिकमे संख्यात जीव ही पच्चीस प्रकृतियोके प्रवेशक होते हैं। इसलिए इनमे इस पदके प्रवेशकोका जघन्य काल एक § ३३९. श्रंतराणु० दुविहो णि० --श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण २८ २७ २६ २४ २१ णिथ श्रंतरं । २४ जह० एगस०, उक० सत्त रादिंदियाणि । २२ पवे० जह० एयसमश्रो, उक० चउवीसमहोरचे सादिरेगे । २३ १३ २ १ जह० एगस०, उक० झमासा । २०१९ १२ १०९ ७ ६ ४ ३ जह० एगसमश्रो, उक० वासपुधत्तं ।

\$ 380. आदेसेण एोग्ड्य० २८ २७ २६ २४ २१ णित्य अंतरं । २४ २२ श्रीघं । एवं पटमाए तिग्क्ख-पंचि०तिग्०२-देवा सोहम्मादि एविग्वजा ति । समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहतं कहा है । मनुष्य अपर्याप्त सान्तर मार्गणा है, इसलिए इसमें सब पदोंका जघन्य काल एक सन्य और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यानवें भागप्रमाण प्राप्त होनेसे वह तत्त्रमाण कहा है । नौअनुदिश आदिम जिस कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिको २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक होनेमें एक समय काल शेष है ऐसे एक जीव तथा नाना जीव भी उत्पन्न हो सकत हैं और कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव लगातार भी उत्पन्न होते हैं जो अनुदित सन्तान रूपसे अन्तर्मृह्त्वं काल तक बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशक वन रहते हैं । यही कारण है कि इनमे इस पदके प्रवेशकां जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृह्त्वं कहा है । शेष कथन सुगम है ।

३२८. श्रन्तरानुगमकी श्रपेता निर्देश दा प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे २८, २०, २६, २४ श्रोर २१ प्रकृतियोंक प्रवंशकोंका अन्तरकाल नहीं हैं। २५ प्रकृतियोंके प्रवंशकोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर रात दिन रान है। २२ प्रकृतियोंके प्रवंशकोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उन्कृष्ट श्रन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है। २३, १३, २ श्रोर १ प्रकृतियोंके प्रवंशकोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर छह महीना है। २०, १८, १०, १०, ८, ७, ६, ४ श्रोर १ प्रकृतियोंके प्रवंशकोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रम्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षपृथवत्वप्रमाण है।

विश्रोपार्थ — २८, २७, २६, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव निरन्तर उपलब्ध होते हैं, इसलिए इनके अन्तरकालका निर्णय किया है। २५ प्रकृतियोंके प्रवेशक अनन्तानुवन्धी चतुष्कके अवियोजक उपशमसम्यग्रहिट जीव भी होते हैं और इनका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन रात होनेसे यह उक्तप्रमाण कहा है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका वियोजक जो उपशम समयमे २२ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है, यतः ऐसे जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात होता है, इमलिए यहाँ पर इस पदके प्रवेशकोंका उक्त अन्तरकाल कहा है। दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी चपणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है, इमलिए यहां पर २३, १३, २ और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है, इमलिए यहां पर २३, १३, २ और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना कहा है, क्योंकि २३ प्रकृतिक प्रवेशक्थान दर्शनमोहनीयकी चपणाके समय की द्वारा है। शेप प्रवेशस्थान उपशमश्रीणमें होते हैं, इसलिए उसके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरको ध्यानमे रख कर उन प्रवेशस्थानोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तरको ध्यानमे रख कर उन प्रवेशस्थानोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तरको ध्यानमे रख कर उन प्रवेशस्थानोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षप्रथक्तवप्रमाण कहा है।

§ ३४०. त्रादेशसे नारिकयोंमे २८, २७,२६,२४ सौर २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका श्रम्तरकाल नहीं हैं। २५ श्रोर २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका श्रम्तरकाल त्राघके समान है। इसी प्रकार पहली पृथिवीके नारकी, सामान्य तिर्यक्क, पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्किहरू, सामान्य देव

एवं चेव विदियादि सत्तमा ति । एवरि २१ जह० एयस०, उक० चउबीसमहोरत्ते सादिरेगे । एवं जोिएएगी-भवरा०-वारा०-जोिदिसि० । पंचिदियतिरिक्खश्रपञ्ज० सच्च-पदायां णित्थि अंतरं णिरंतरं । मणुमतिए श्रोघं । णवि मणुसिणी०जिम्म झम्मासं, तिम्म वासपुधत्तं । मणुसश्रपञ्ज० सच्वपद्ववे० जह० एयस०, उक्क० पिलदो० श्रसंखे०भागो । अणुद्दिसादि सच्बद्घा ति २८ २४ २१ एत्थि श्रंतरं । २२ जह० एयम०, उक्क० वासपुधत्तं । सच्बद्घे पलिदो० संखे०भागो । एवं जाव० ।

श्रीर सीधर्म कल्पसे लेकर नौ मैंवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि २९ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है। इसी प्रकार योनिनी तिर्यक्क, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोमें जानना चाहिए। पब्चेन्द्रिय तिर्यक्क अपर्याप्तकोंमें सब पदोंके प्रवेशकोंका अन्तर नहीं है, निरन्तर है। मनुष्यित्रकमें श्रोधके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यित्रयोंमें जहां छह माह कहा है वहां वर्षपृथक्त्व कहना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पदोंके प्रवेशकोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थमिद्धि तकके देवोमे २८, २४ और २९ कृतियोंके प्रवेशकोंका अवनर वाल नहीं है। २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है तथा सर्वार्थीसिद्धि तं उत्कृष्ट अन्तर पल्यके संख्यातवे भाग प्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मागणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ-नारिकयोंमे २८, २, २६, २४ श्रीर इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सर्वदा पाये जाते हैं, इसिनिए उनके अन्तर का तका निषेध किया है। २५ और २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका अन्तरकाल जैसा श्रांवशरूपणामं घटित करके बतलाया है वेसा यहां भी बन जाता है। पहली पृथिवीके नारकी, सामान्य तिर्यक्क, पठचेन्द्रिय तिर्यकच द्विक, सामान्य देव श्रीर सौधर्म कल्पसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोमें यह प्ररूपणा बन जाती है, इसलिए उनमें सामान्य नारिक्योंके समान जाननेकी सूचना की हैं। द्वितीयादि प्रथिवियोंके नारकी, योनिनी तिर्यब्द श्रार भवनित्रकमें श्रीर सब प्ररूपणा तो सामान्य नार्राकयोके समान बन जानी है। मात्र इनमें चायिक सम्यग्टिष्ट जीव उत्पन्न नहीं होते हैं, इसलिए अनन्तानुबन्धीचतुष्कके वियो-जक उपरान नम्यग्दृष्टियोंकी ऋषेज्ञा २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंके ऋन्तरकालका कथन किया है जो जघन्य एक समय श्रीर उत्कृष्ट २४ दिन रात प्राप्त होता है। परुचेन्द्रिय तियेञ्च श्रपर्या-प्रकोंमे सम्भव सब पदोंका अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट ही है। मनुष्यत्रिकमे श्रोघके समान है यह भी स्पष्ट है। मनुष्यिनियोंमें चपगाका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उन्कृष्ट श्रन्तर वर्षप्रथक्त्वप्रमाण है, इसलिए इनमें २३, १३, २ श्रीर १ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका उक्त श्रन्तर बतलानेके लिए यह सूचना की है कि इनमें जहां छह माह अन्तर कहा है वहां वर्षप्रथक्त्व जानना चाहिए। मनुष्यत्रपर्याप्त सान्तर मार्गणा है। इसका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए यहां सब पदांके प्रवेशकोंका उक्त अन्तर कहा है। नौ अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोमें २८, २४ श्रीर २१ प्रकृतियोके प्रवेशको का अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट है। साथ ही इनमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्टिंक जीव कमसे कम एक समयके अन्तरसे और अधिकसे अधिक वर्षपृथक्तक अन्तरसे उत्पन्न होते हैं. इसलिए इनमें २२ प्रकृतियोके प्रवेशकोंका जयन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त प्रमाण कहा है। मात्र सर्वार्थसिद्धिमें उत्कृष्ट अन्तर पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण है।

६ ३४१. भावो सञ्वत्थ स्रोदइस्रो भावो ।

अप्पाबहुअं ।

६ ३४२. सुगममेदमहियारसंभालणसुत्तं ।

🛞 चउण्हं सत्तण्हं दसण्हं पयडीणं पवेसगा तुल्ला थोवा ।

§ ३४३. कुदो ? एयसमयसंचिदत्तादो । तं जहा—तिण्हं लोभाणस्विरि माया-संजलखे पवेसिदे एयसमयं चदुण्हं पवेसगो होइ । तिण्हं मायाणस्विरि माखसंजलखं पवेसिय एगसमयं सत्त्रण्हं पवेसगो होइ । तिण्हं माणाणस्विरि कोहसंजलखं पवेसय-माखो एयसमयं चेव दसएहं पवेसगो होदि ति एदेख कारखेण एदेसि तिण्हं पि पवेसट्टाणाणं सामिणो जीवा अण्णोण्खेख सिरसा होदूख उविर भणिस्समाणासेसपदे-सेहितो थोवा जादा ।

% तिग्हं पवेसगा संखेजगुणा।

\$ ३४४. किं कारणं ? संचयकालबहुत्तादो । तं जहा—तिविद्दं लोभमोकिडि-ऊण द्विदसुदुमसांपराइयकाले पुणो अणियद्विअद्धाए संखे०भागे च मंचिदो जीवरासी तिण्हं पवेसगो होइ । तेण पुन्विछादो एगसमयसंचयादो एसो अतोम्रहुत्तसंचओ संखेजजगुणो त्ति णत्थि संदेहो ।

🛞 छुगहं पवेसगा विसेसाहिया।

५ ३४१ भाव सर्वत्र श्रौद्यिक है।

अल्पवहुत्वका अधिकार है।

§ ३४२ अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम हैं।

* चार, सात और दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव परस्पर तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं।

§ २४३ क्योंकि इनका एक समयमें संचय होता है। यथा—तीन लोभोके उत्पर माया-संज्वलनका प्रवेश होने पर एक समय तक खार प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है। तीन प्रकारकी मायाके उत्पर मान संज्वलनका प्रवेश कर एक समय तक सात प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है। तीन मानोंके उत्पर क्रोधसंज्वलनका प्रवेश करता हुआ। एक समय तक ही दस प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है। इस कारणसे इन तीनों ही प्रवेशस्थानोंके स्वामी जीव परस्पर समान होते हुए आगे कहे जानेवाले समस्त प्रवेशस्थानोंके स्वामियोंकी आपेका स्लोक हुए।

* उनसे तीन प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुरो हैं।

§ ३४४ क्योंकि इनका सञ्चयकाल बहुत है। यथा— तीन लोभोंका श्रापकर्षण कर सुक्तमसाम्परायके कालमें स्थित होकर पुनः श्रानिष्टत्तिकरणके कालके संख्यातवें भागप्रमाण कालमें सिश्चत हुई जीव राशि तीन प्रकृतियोंकी प्रवेशक होती है। इसलिए पूर्वके प्रवेशस्थानोमें एक समयमे हुए सञ्चयसे यह श्रान्तर्मुहते कालके भीतर हुश्चा सञ्चय संख्यातगुणा है इसमे सन्देह नहीं है।

अ उनसे छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं।

३ ३४४. केण कारणेण ? विसेसाहियकालब्भंतरसंचिदत्तादो । णेदमसिद्धं, श्रोदरमाणयस्स लोभवेदगकालादो तस्सेव मायावेदगकालो विसेसाहियो ति परमागम-चक्खूणं सुप्पसिद्धत्तादो ।

🛞 एवएहं पवेसगा विसेसाहिया ।

९६४६. कुदो ? मायावेदगकालादो विसेसाहियमाणवेदगकालम्मि संचिदजीघ-रासिस्स गहणादो ।

🛞 बारसग्हं पवेसगा विसेसाहिया।

§ ३४७. किं कारणं १ पुव्यिक्लसंचयकालादो विसेसाहियकोहवेदगकालम्मि

श्रवगदवेदपडिबद्धम्मि संचिदजीवरामिस्स गहणादो ।

% एगुणवीसाए पवेसगा विसेसाहिया ।

§ ३४८. किं कारणं ? पुरिसवेद-छण्णोकसाए श्रोकड्डिय पुणो जाव इत्थिवेदं ण श्रोकड्डिद तात्र एदम्मि काले पुव्तिल्लसंचयकालादो विसेसाहियम्मि संचिदजीवरासिस्स विविक्खियत्तादो ।

🛞 वीसाए पवेसगा विसेसाहिया।

§ ३४९. कुदो ? इत्थिवेदमोकड्डिय पुणो जाव णवुंसयवेदं ण श्रोकड्डिद ताव एदम्मि काले पृव्विछ्लमंचयकालादो विसेमाहियम्मि संचिदजीवाणमिह ग्गहणादो ।

§ ३४६. क्योंकि यहाँ पर मायावेदक कालसे विशेष श्रधिक मानवेदक कालमें सिद्धात हुई ज वराशिका ग्रहण किया है।

अ उनसे बाग्ह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं।

 ३४७. क्योंकि पूर्वके सञ्चयकालसे विशेष श्राधिक श्रपगतवेदसे सम्बन्धित कोधवेदक कालमें सिद्धित हुई जीवराशिका प्रहण किया है।

उनसे उन्नीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं।

\$ ३४८. क्यों कि पुरुषवेद श्रीर छह नोकषायों का श्रपकर्षण कर पुनः जब तक स्रीवेदका श्रपकर्षण नहीं करता तब तक, जो कि पूर्वके सञ्चय कालसे विशेष श्रधिक है ऐसे इस कालमें सिद्धत हुई जीवराशि यहाँ पर विश्वति है।

उनसे बीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं।

\$ ३४६, क्योंकि स्त्रीवेदका अपकर्षण कर जब तक नपुंसकवेदका अपकर्षण नहीं करता है तक तक पूर्व के सञ्चयकालसे विशेष अधिक इस सञ्चयकालमें सञ्चित हुए जीवोंका यहां पर प्रहुण किया है।

[§] ३४४. च्योंकि, ये विशेष श्रधिक कालके भीतर स'ख्रत हुए हैं। यह श्रसिद्ध भी नहीं हैं, क्योंकि उत्तरनंवाले जावके लोभवेदक कालसे उसीका मायावेदक काल विशेष श्रधिक हैं यह चात परमागमरूप चहुवालोंके लिए सुप्रसिद्ध हैं।

अ उनसे नौ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं।

अ दोएहं पवेसगा संखेजगुणा।

§ ३५०. केण कारणेण ? पुरिमवेदोदएण खवगसेढिमारूढस्स अंतरकरणादो
समयुणावित्याए गदाए तदो प्पहुडि जाव पुरिसवेदपढमिट्टिदिचरिमममयो ति ताव
एदिम कालिविसेसे पयदसंचयावलंबणादो । जइ वि उवसमसेढीए चेव पयदसंचयो
अवलंबिजदे तो वि पुव्विछादो एदस्स संचयकालमाहप्पेण संखेजगुणतं ण विरुज्भदे ।

🛞 एकिस्से पवेसगा संखेजगुणा।

§ ३५१. कुदो १ पुव्विल्लादो एदस्म संचयकालमाहण्यदंगणादो । तं जहा — दोग्रहं पवेसगकालो णाम पुरिसवेदपढमिट्टदीए णवुंमवेद-इत्थिवेद-छण्णाकमायकखव-णद्धामेत्रो । एकिस्से पवेमगकालो पुण पुरिसवेदपढमिट्टदीए गालिदाए तत्रो प्पहुडि अस्सकएणकरणकालो किट्टीकरणकालो कोधितिण्णिसंग्रहिकिट्टिवेदगकाला माणवेदगकालो मायावेदगकालो लोभवेदकालो ति एदासि छएहमद्धाणं समुदायमेत्रो । एमो च पुव्विल्लसंचयकालादो किचूणदुगुणमेत्रो । तदो किचूणदुगुणकालव्मंत्रगंचिदत्रादो एमो रामी पुव्विछादो संखेळगुणो ति मिद्धं । इत्थिणवुंमयवेदाणमण्णद्रोदएण खवगसेटिमारूढस्स मादिरेयितगुणमेत्रो पयदसंचयकालो किण्णावलंविजवे १ पुरिसवेदोदयं मोत्रण सेमवेदोदएण चढमाणजीवाणं बहुत्तासंभवादो ।

***उनमें दो प्रकृतियोंके प्रवेशक जाव संख्यातगु** हैं।

१३५० क्यों ि पुरुपवेदके उदयसे त्तपकश्रेणिपर श्रारूढ़ हुए जीवके श्रन्तरकरणसे लेकर एक समय कम एक श्रावित्वज्ञाल जानेपर वहांसे लेकर पुरुपवेदकी प्रथम स्थितिके श्रन्तिम समक्के प्राप्त होने तक इस कालके भीतर हुए प्रकृत सञ्चयका श्रवलम्बन लिया गया है। यद्यपि उपशमश्रेणिका श्रपेत्ता ही प्रकृत सञ्चयका श्रवलम्बन लिया जा सकता है तो भी पूर्वसे यह सञ्चयकाल बड़ा है, इसलिए इसमें संख्यातगुणी जीवराशिके प्राप्त हानेम कोई विगंध नहीं श्राता।

* उनसे एक प्रकृतिके प्रवेशक जीव संख्यातगुरो हैं।

३५१ कथे क पूर्वके सञ्चयक्तालसे यह सञ्चयकाल बड़ा देख जाता है। यथा— दो प्रकृतियोंका प्रवेशकाल पुरुपवेदकी प्रथम स्थितिके रहते हुए नपु सकवेद, स्त्रीवेद और छह नोकपायोका चपणाक लमात्र है। परन्तु एक प्रकृतिका प्रवेशकाल पुरुपवेदकी प्रथम स्थितिके गल जानेपर वहांसे लेकर अश्वकर्णकरण हाल, कृष्टिकरणकाल, कोधकी तीन संप्रहकृष्टिवेदक-काल, मानवेदककाल, मायावेदककाल, और लोभवेदककाल इसप्रकार इन छह कालोके समुदाय-प्रमाण है। और यह पहलेके सञ्चयकालसे कुछ कम दूना है, इसलिए कुछ कम दूने कालके भीतर स्थिन्वत होनेके कारण यह राशि पूर्वकी राशिसे संख्यात्मुणी है यह किछ हुआ।

श्रंका—स्त्रं वेद श्रौर नपुंसक्वेदमेंसे किसी एक वेदके उदयसे ज्ञपकश्रेणी पर चढ़े हुएकी श्रपेत्ता साधिक निगुणे प्रकृत सब्बयकालका श्रवलम्बन क्यों नहीं लिया जाता ?

ममाधान—नहीं, क्योंकि पुरुषवेदको छोड़कर शेष वेदोंके उदयसे चढ़े हुए जीवोंका बहुत होना असम्भव हैं।

क्ष तेरसग्हं पवेसगा संखेजगुणा।

ः ३४२. कि कारणं ? अट्ठकसाएसु खिवदेसु तत्तो प्यहुिंड जाव अंतरकरणं समाणिय समयूणाविलयमेत्तो कालो गच्छदि ताव एदिम्म काले पुव्विल्लकालादो संस्थेअगुणे तेरमप्रवेमगाणं संच्याबलंबणादो ।

🛞 तेवीसाए पवेसगा संखेजगुणा।

🛞 बार्वासाए पवेसगा असंखेजगुणा।

् ३५४. इदो ? पलिदावमस्मासंखेजभागपमाणचादो ।

🛞 पणुवीसाए पवेसगा ऋसंखेजगुणा।

३ २४४. कुदो ? अर्णताणुवंधिविसंजायणाविरहिदाणुमुवसमसम्माइद्वीणं सामण-सम्माइद्वीणं च अंतोमुद्भत्तसंचिदाणमिह ग्गहणादो ।

🛞 सत्तावीसाए पवेसगा श्रसंखेज्जगुणा।

६ ३४६. कुदो १ सम्मत्ते उच्चेल्लिदे षुणो पलिदोवमासंखेळभागपमाणसम्मामि-च्छत्तुच्चेछ्रणाकालब्भंतरे पयदसंचयावलंबणादो ।

& एकवीसाए पवेसगा असंखेजगुणा।

* उनसे तेग्ह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुर्णे हैं।

६३५२. क्योंकि आठ कषायोंका चय करने पर वहाँसे लेकर अन्तरकरणको समाप्त कर एक समय कम आविल्मात्र काल जाने तक पहलेके कालसे संख्यातगुणे इस कालके भीतर तेरह प्रकृतियोंके प्रवेशकोंके सक्चयका अवलम्बन लिया है।

* उनसे तेईम प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यानगुरो हैं।

६ ३४३. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी चपणाके लिए उद्यत हुए जीवके द्वारा मिध्यात्वका चय कर देने पर वहाँसे लेकर सम्यग्मिध्यात्वकी चपणाके श्रान्तिम समय तक पहलेके कालसे संख्यानगुरों इस कालके भीतर सिद्धात हुए जीवोंका यहाँ पर प्रहुण किया है।

* उनसे बाईम प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव ऋसंख्यातगुरो हैं।

६ ३५४. क्योंकि ये जीव पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं।

* उनसे पच्चीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ३५ : क्योंकि श्रन्तमुहूर्त कालके भीतर सिद्धत हुए श्रनग्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोग जनासे रहित उपशमसम्यग्हिट श्रीर सासादन सम्यग्हिष्ट जीवोंका यहाँ पर प्रहरण किया है:

* उनसे सत्ताईस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुरो हैं।

े ३५६. क्योंकि सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर लेने पर पुनः पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण सम्यग्निथ्यात्वके उद्वेलनाकालके भीतर हुए प्रकृत सञ्जयका श्रवलम्बन लिया गया है।

- ६ ३४७. कि कारणं ? सोहम्मीसाणेसु वेसागरोवममेत्तकालब्भंतरसंचिदाणं खड्यसम्माइड्रिजीवाणमिह पहाणभावेण विवक्षियत्तादो ।
 - 🛞 चउवीसाए पवेसगा असंखेजगुणा।
 - § ३४८. कुदो ? चउवीससंतकम्मियवेदयसम्माइद्विरासिस्स गहणादो ।
 - 🛞 ब्रहावीसाए पवेसगा ब्रसंखेजगणा।
- - 🛞 छुव्वीसाए पवेसगा ऋणंतग्णा।
 - ६ ३६०. <mark>कुदो ? किं</mark>चूणसव्वजीवरासिपमाणत्तादो ।

एवमोघेराप्पाबहुऋं समत्तं।

- § ३६१. संपित आदेसपरूवणहमुचारणं वत्तहस्सामो । तं जहा—आदेसेण ऐरह्य० सन्वत्थोवा २२ पवे० । २४ पवेस० असंखेजगुणा । २७ पवे० असंखेजजगुणा । २१ पवे० असंखेजजगुणा । २४ पवे० असंखेजगुणा । २८ पवे० असंखेजजगुणा । २६ पवे० असंखेजजगुणा । एवं पढमाए पंचिदियति रिक्ख०२ देवा सोहम्मादि सहस्सार ति ।
 - * उनसे इक्कीम प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं।
- ५३५७. क्योंकि सौधर्म श्रोर ऐशानकल्पमें दो सागरप्रमाण कालके भीतर सिद्धत हुए ज्ञायिकसम्यग्दिष्ट जीवोंकी यहां पर प्रधानभावसे विवज्ञा की गई है।
 - * उनसे चौवीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव श्रसंख्यातगुर्णे हैं।
- § ३५८. क्योंकि चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले वेदकसम्यग्टिष्टियोंका यहां पर प्रहण् किया गया है।
 - * उनसे श्रद्वाईस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं।
- § ३५८. क्योंकि श्रद्धाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाली वेदकसम्यग्दृष्टि जीवराशि प्रधान-भावसे यहां पर विवक्तित है।
 - उनसे ब्रब्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव अनन्तगुरो हैं।
 - ६ ३६०. क्योंकि ये कुछ कम सब जीव राशिप्रमाण हैं,

इस प्रकार श्रोघसे शल्पबहुत्व समाप्त हुआ

\$ ३६१. श्रव श्रादेशका कथन करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं। यथा—श्रादेशसे नारिकयोंमें २२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे २४ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। उनसे २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार पहली पृथिवीके नारकी, पश्चेन्द्रिय तिर्यक्षिक, सामान्म दे। श्रीर सीधर्म कल्पसे लेकर सहस्रारकल्य तकके देवोंमें जानना चाहिए।

§ २६२. बिदियादि सत्तमा त्ति सञ्बत्थोवा २२ पवे० । २१ पवे० श्रसंखेजजगुणा । २४ पवे० श्रसंखेजगुणा । २७ पवे० श्रसंखेजगुणा । २४ पवे० श्रसंखेजजगुणा । २८ पवे० असंखेजजगुणा । २६ पवे० श्रसंखेजजगुणा । तिरिक्खाणं णारयभंगो । णविर २६ पवे० श्रणंतगुणा । जोणिणी० बिदियपुढवीभंगो । एवं भवण०वाणवें०-जोदिसि० । पंचिं०तिरिक्खश्रपज्ज०-मणुणश्रपज्ज० सन्वत्थोवा २७ पवे० ।
२८ पवे० श्रसंखेजजगुणा । २६ पवे० श्रसंखेजजगुणा ।

् ३६३. मणुस्सेस सन्वत्थोवा ४७१० प्रवेसगा सिरसा। ३ प्रवेसगा संखेजगुणा। ६ प्रवेसगा विसेसाहिया। ९ प्रवे० विसेसा०। १२ प्रवे० विसेसा०। १९ प्रवे०
विसे०। २० प्रवे० विसेसा०। २ प्रवे० संखेजगुणा। १ प्रवे० संखेजगुणा। १३
प्रवे० संखेजगुणा। २३ प्रवे० संखेजगुणा। २२ प्रवे० संखेजगुणा। २५ प्रवे०
संखेजगुणा। २१ प्रवे० संखेजगुणा। २४ प्रवे० मंखेजगुणा। २७ प्रवे० श्रसंखेजगुणा। २८ प्रवे० श्रसंखेजगुणा। २६ प्रवे० श्रसंखेजगुणा। एवं मणुसप्ज्ज०मणुसिणी०। णविर संखेजगुणां काद्वां।

§ ३६२ दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारिक्योंमे २२ प्रकृतियोंक प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे पच्चीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे एच्चीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। तिर्थक्कोंमें सामान्य नारिक्योंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषना है कि २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव अनन्तगुणे हैं। तिर्थक्कोंमें सामान्य नारिक्योंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषना है कि २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव अनन्तगुणे हैं। योनिनी तिर्थक्कोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है। इसी प्रकार भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमे जानना चाहिए। पद्धे न्द्रिय तिर्थक्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें २७ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं।

\$ ३६३ मनुष्योंमें ४, श्रीर १० प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव परस्पर समान हो कर सबसे स्ताक हैं। उनसे ३ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुरो हैं। उनसे ६ प्रकृतियों प्रवेशक जीव विशेष श्राधिक है। उनसे ६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष श्राधिक है। उनसे १२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष श्राधिक हैं। उनसे १२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष श्राधिक हैं। उनसे २० प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष श्राधिक हैं। उनसे २० प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष श्राधिक हैं। उनसे २० प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुरो हैं। उनसे १३ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुरो हैं। उनसे २३ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुरो हैं। उनसे २३ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुरो हैं। उनसे २० प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव श्रसंख्यातगुरो हैं। उनसे २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव श्रसंख्यातगुरो हैं। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त श्रीर मनुष्यितगुरो करना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यातगुरो से स्थानमें संख्यातगुरा करना चाहिए।

§ ३६४. त्राणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति सन्वत्थोवा २२ पवे० । २४ पवे० असंखेजजगुणा । २७ पवेसगा असंखेजजगुणा । २६ पवेसगा असंखेजजगुणा । २१ पवेमगा संखेजजगुणा । २८ पवेमगा संखेजजगुणा । २८ पवेमगा संखेजजगुणा । २८ पवे० संखेजजगुणा । २४ पवे० । २१ पवे० असंखेजजगुणा । २४ पवे० संखेजजगुणा । २४ पवे० संखेजजगुणा । २४ पवे० संखेजजगुणा । २८ पवे० संखेजजगुणा । २४ पवे० संखेजजगुणा । २८ पवे० संखेजजगुणा । १८ पवे० संखेजजगुणा । एवं जाव० ।

एवमप्पाबहुए समत्ते पयिडद्वारापवेसम्स मत्तारम अणियोगहाराणि समत्ताणि

- § ३६४. संपहि एत्थेव भ्रुजगागदिपरूवराष्ट्रमुविग्मं सुत्तकलावमाह—
- 🛞 भुजगारी कायव्वा ।
- 🛞 पदणिक्खेवो कायव्वा।
- 🛞 वड्डी वि कायव्या ।
- े ३६६. तं जहा भुजगारपवेसगे त्ति तत्थ इमाणि तेरम श्राणियोगहाराणि समुक्तित्तणा जात्र श्रप्याबहुए त्ति । समुक्तित्तणाणु० दुविहो णि० — श्रोघेण श्रादे-सेण य । श्रोघेण श्रात्थि भुज० – श्रप्य० -- श्रवहु० -- श्रवत्त ० पवेसगा । एवं मणुस-

§ ३६४ श्रानत कल्पस लेकर नोंभेवेयक तकके द्वोमं २२ प्रकृतियोंके प्रवंशक जीव सबसे स्तांक है। उनसे २४ प्रकृतियांके प्रवंशक जीव श्रसंख्यातगुर्गो है। उनसे २७ प्रकृतियांके प्रवंशक जीव श्रसंख्यातगुर्गो है। उनसे २६ प्रकृतियोंके प्रवंशक जीव श्रसंख्यातगुर्गो है। उनसे २४ प्रकृतियोंके प्रवंशक जीव संख्यातगुर्गो है। उनसे २४ प्रकृतियोंके प्रवंशक जीव संख्यातगुर्गो है। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवंशक जीव संख्यातगुर्गो है। श्रमुंदिशसे लेकर सर्वाथिसिद्धितकके देवोमे २२ प्रकृतियोंके प्रवंशक जीव सवस स्तांक है। उनसे २९ प्रकृतियोंके प्रवंशक जीव श्रसंख्यातगुर्गो है। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवंशक जीव संख्यातगुर्गो है। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवंशक जीव संख्यातगुर्गो है। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवंशक जाव संख्यातगुर्गो है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वाथिसिद्धिमें श्रसंख्य तगुर्गोके स्थानमें संख्यातगुर्गा करना चाहिए। इसी प्रकार श्रमाहारक मार्गागा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार ऋल्पबहुत्वके समाप्त होनेपर प्रकृतिस्थान प्रवेशकके सत्रह श्रनुयोगद्वार समाप्त हुए।

- ६ ३ ४ श्रब यहाँ पर भुजगारादिका कथन करनेके लिए श्रागेके सूत्रकलापका कहते हैं---
- *** भ्रजगार** करना चाहिए ।
- *** पदनिक्षेप करना** चाहिए ।
- # वृद्धि करनी चाहिए ।
- ् ३६६. यथा—भुजगारप्रवेशकका अधिकार है। उसमे समुर्त्कार्तनासे लेकर अला-बहुत्व तक ये तेरह अनुयोगद्वार होते है। समुर्त्कार्तनानुगमकी अपेदा निर्देश दो प्रकारका है— स्रोघ स्रोर आदेश। स्रोघसे भुजगार, अल्पतर, अवस्थित स्रोर स्वक्तन्वप्रवेशक जीव है।

१. ता**॰ प्रती भ्रमंखंजजगुरणा इत पाठ । २. ता प्रता असंखंजजगुरणा इति पाठ. ।**

३. ता० प्रतो भ्रमंसेज्जगुणा इति पाठः । ४. ता० प्रतौ श्रमंसेज्जगुरा। इति पाठः ।

तिए । श्रादेसेण ग्रेरइय० त्रस्थि सुज०--श्रप्प०--श्रवद्वि०पवे० । एवं सन्त्रग्रेरइय० तिरिक्ख०-पंचिदियतिरिक्खितय३--सन्वदेवा त्ति । पंचि०ितरि०श्रपञ्ज०-मणुसश्रपञ्ज० श्रस्थि श्रप्प०-श्रवद्वि०पवे० । एवं जाव० ।

३६७. सामित्ताणु० दुविहो णि०-त्रोघेण आदेसे०। त्रोघेण भुज०अप्प०--अविद्वि०पवेसगो को होदि ? अण्ण० सम्मादि० मिच्छाइट्टी वा। अवत्त०पवेसगो को होदि ? अण्ण० मणुसो वा मणुमिणी वा उवमामगो परिवदमाणगो देवो
वा पढमसमयपवेमगो। एवं मणुमतिए। णवारे पढमसमयदेवो ति ए भाणियव्वं।
एवं मव्त्रार्गेरइय०-सव्वतिरिक्ख-मव्वदेवा ति। णवरि अवत्त० णित्थ। एवरि पर्चि०तिरिक्खअपञ्ज०--मणुमअपञ्ज० अप्प०-अविद्वि० कस्म ? अण्णद०। अणुदिसादि
सव्वद्वा ति भुज०--अप्प०--अविद्वि० कस्म ? अण्णद०। एवं जाव०

३६८. कालागु० दुविहो णि० त्रोघेण आदेसे०। त्रोघेण भुज० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया। त कधं १ त्र्रणांताणुबंधी विसर्जाएदूण द्विदउवसमसम्माइद्वी उवसमसम्मत्तद्वाए वे समया अत्थि ति मामणभावं पिडवण्णो तस्स पढमसमए बाबीम-

इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदशसं नारिकयामें मुजगार, श्रल्पतर श्रांर भवस्थित प्रवेशक जीत्र है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च-त्रिक झोर सब देवोमे जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्त जीवोंमें श्रल्पतर और अवस्थितप्रवंशक जीव है। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाडिए।

३६% न्वामित्वानुगमकी अपेला निर्देश दं प्रकारका है— ओघ और आदश। श्रांघसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थित प्रवशक कीन होता है । अन्यतर सम्यग्दृष्टि और भिथ्याद्यष्टि होता है। अवक्तव्य प्रवेशक कीन होता है । उपशमश्रेणिसं गिरनेवाला मनुष्य या मनुष्यिनी अथवा प्रथम समयमे प्रवेश करनेवाला देव होता है। मनुष्यित्रकमं इसीप्रकार जानना चाहिए। स्नितु इतनी विशेपता है कि 'प्रथम समयमे प्रवेश करनेवाला देव' ऐसा नहीं कहना चाहिए। इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यव्य और सब देवोमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेपता है कि पव्यविव्य और मब देवोमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेपता है कि उपवत्यप्रवेशक नहीं है। तथा इतनी और विशेषता है कि पव्यविद्य तिर्यव्य अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अल्पतर और अवस्थित पद किसके होता है । अनुदिशसं लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोम भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपद किसके होते हे । अनुदिशसं लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोम भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपद किसके होते हे । अनुदिशसं लेकर होते है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गगा तक जानना चाहिए।

१३६८. कालानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—स्रोघ आर आदश। स्रोघसे भुजगार प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है।

शंका-वह कैसे ?

समाधान—ऋनन्तानुबन्धीचतुष्कर्का विसयोजना करनेत्राला उपशमसम्यग्दष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वके कालमे दा समय शेष रहने पर सासादनभावको प्राप्त हुआ। उसके प्रथम समयमे वाईस प्रकृतिकस्थान होकर एक सुजगार समय प्राप्त हुआ। उसी जीवके दूसरे हाणं होद्ण एगो मुजगारसमयो, तस्सेव विदियसमए पणुवीसपवेसहाणुष्पत्तीए विदियो भुजगारसमयो, से काले मिच्छत्तं पिडवरणम्स छन्वीसपवेसहाणसभवेण तिदियो, पुणो तदणंतरममए अहावीसपवेसहाणपिडविद्धो चउत्थो ममयो ति एवं मुजगारस्स चत्तारि समया भवंति । अष्प०--अवत्त० जहण्णुक० एयम० । अथवा अष्प० उक्क० वे समया । तं कधं ? सम्मत्तमुन्वेल्लेमाणो वेदगपाओग्गकालं बोलाविय सम्मत्ताहिमुहो होद्णंतरं करेमाणो अंतरदुचिरमफालीए सह सम्मत्तुव्वेल्लाणाचिरभफालि णिवादिय से काले अंतरकरणं समाणिय कमेण सम्मत्तमयगणावित्यमेत्तिहिनीओ गाहिय एयसमय प्यदरपवेसगो जादो, तिम्म समए सत्तावीसपवेसुलंभादो । पुणो से काले सम्मामिच्छत्तपढमिहिदिं णिल्लेविय छन्वीमपवेसगो जादो । एसो विदियो अप्यदरसमयो। एवं वे समया । अविद्धि तिण्ण भंगा । तत्थ जो सो सादिओ सपज्जविसिदो तस्म जह० एयसमओ, उक्क० उविद्धिंग्गलपिर्थेष्टं ।

समयमें पच्चीस प्रकृतिक प्रवेशस्थानकी उत्पत्ति होनेसे दूसरा सुजगार समय हुआ। पुनः तदनन्तर समयमे मिश्यात्वको प्राप्त हुए उसके छठ्वीस प्रकृतिक प्रवेशस्थान सम्भव होनेसे तीसरा सुजगार समय हुआ। पुनः तदनन्तर समयमे श्रष्टाईस प्रकृतिक प्रवेशस्थानस सम्बन्ध रखनेवाला चौथा सुजगारसमय हुआ। इस प्रकार सुजगारके चार समय होते हैं।

श्रालपतर श्रीर श्रावक्तव्य प्रवेशकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्राथवा श्रालपतरप्रवेशकका उत्कृत्य काल दो समय है।

शंका — वह कैसे ?

समाधान—सम्यवत्वकी उद्वेलना करनेवाला जीव वेदक प्रायाग्य कालको बिताकर श्रीर सम्यवत्वके श्रामिमुख हांकर अन्तर करता हुआ अन्तरकी द्विचरम फालिके साथ सम्यवत्वकी उद्वेलना सम्बन्धी अन्तिम फालिका पातकर तथा तद्दन्तर समयमे अन्तरकरणको पूराकर कमसे सम्यवत्वकी एक समय कम आविलिप्रमाण स्थितियोको गला । र एक समय तक अल्पतर प्रवेशक हुआ, क्योंकि उस समय सन्ताईस प्रकृतियोंका प्रवेश देखा जाता है। पुनः तद्दन्तर समयमें सम्यग्मिध्यात्वकी प्रथम स्थितिका अभाव कर छ्व्वीस प्रकृतियोका प्रवेशक हो गया। यह दूसरा अल्पतर समय है। इसतरह अल्पतर प्रवेशक दो समय प्राप्त हुए।

अवस्थित प्रवेशकके तीन मंग है। उनमें जो सादि-सान्त भंग है उसका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल उपार्घ पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है।

विशेषार्थ — यहां श्रोघसे भुजगार श्रोर श्रल्पतर प्रवेशकके उत्कृष्ट कालका निर्णय टीकाकारने स्वयं किया है। इनके जघन्य कालका विचार सुगम है। उदाहरणार्थ १६ प्रकृतियोका प्रवेशक जो उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला जीव जब स्त्रीवेदका श्रपकर्पण कर २० प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है तक उसके भुजगार प्रवेशकका जघन्य काल एक समय देखा जाता है। तथा श्रद्धाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक जो मिध्यादृष्टि जोव सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर दूसरे समयमे सत्ताईस प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है उसके श्रद्धानर प्रवेशकका जघन्य काल एक समय देखा जाता है। श्रवक्तव्यपद एक समय तक ही होता है, इसलिए इसका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है यह स्पष्ट ही है। नथा जो उपशम सम्यक्त्वके सन्मुख हो सम्यक्त्वको प्राप्त करनेके दो समय पूर्व सम्यक्त्वकी उद्वेलना करके प्रथम समयमें २८से २७

१३६९. आदेसेण ऐरइय० भुज० जह० एयस०, उक० चत्तारि समया। अप्प० जहण्णुक० एयसमञ्जो, अथवा उक० वे समया। अविद्वि० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। एवं सत्तसु पुढवीसु। एवरि सगिट्टिदी। तिरिक्खेसु भुज०-अप्प० णारयभंगो। अविद्वि० जह० एयम०, उक्क० अर्णतकालमसंखेआ पोग्गल-परियट्टा। एवं पंचिदियतिरिक्खतिए। णवरि अविद्वि० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पिलदो० पुव्चकोडिपुघत्तेणव्मिहियाणि। एवं मणुमतिए। णवरि अवत्त० अोघं। पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणु०अपज्ज० अप्प० जहण्णुक० एयममञ्जो। अविद्वि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। देवाणं णारयभंगो। एवं भवणादि जाव एवगेवज्जा ति। एवरि सगिट्टिदी। अणुद्दिसादि मञ्चट्टा ति भुज० जह० एयस०, उक्क० वे समया। अप्प० जहण्णुक० एयस०। अविद्वि० जह० एगस०, उक्क० वे समया। अप्प० जहण्णुक० एयस०। अविद्वि० जह० एगस०, उक्क० सगिट्टिदी। एवं जाव०।

प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर दूसरे समयमें अवस्थित पदका प्रवेशक होता है उसके अवस्थित पदके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है और जो जीव अर्धपुद्गल परिवर्तनकाल-प्रथम समयमें उपशम सम्यक्त्वको उत्पन्न कर कमसे अतिशीध मिध्यात्वमें जाकर और अति स्वल्प उद्वेलनाकालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वकी उद्वेलना कर २६ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनकाल तक इसी पदका प्रवेशक बना रहता है। पुनः संसारमें रहनेका अन्तर्मुह्तं काल शेप रहने पर उपशमसम्यक्त्वका प्राप्त कर जो इस पदका विघटन करता है उनके अन्तर्मुहूर्त अधिक पल्यका असंख्यातवाँ भागप्रमाण काल कम उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अवस्थित पदका उत्कृष्ट काल देखा जाता है।

ु ३६९ द्यादेशसे नारकियोंमे भुजगारप्रवेश+का जघन्य काल एक समय हैं स्त्रीर उत्कृष्ट काल चार समय है। श्रल्पतरप्रवेशकका जबन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्चाथवा उत्कृष्ट काल दो समय है। त्रावस्थित प्रवेशकका जधन्य काल एक समय है श्चीर उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इसी प्रकार सातों पृथित्रियोंमें जानना चाहिए। किन्त श्रपनी श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। तिर्यक्वोंमें भुजगार श्रौर श्रल्पतर प्रवेशकका भंग नार्कियोंके समान है। अवस्थितप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्चनन्त काल है जो ब्यसंख्यात पुदुगल परिवर्तनप्रमाण है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्युक्कत्रिकमें जानना च।हिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रवस्थितप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटि पृथक्त्र अधिक तीन पल्य है। इसी प्रकार मनुष्पोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यप्रवेशकका काल श्रोधके समान है। पक्केन्द्रिय तिर्येक्क श्रपर्याप्त श्रोर मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमे श्ररूपतरप्रवेशकका जघन्य श्रीर उत्क्रष्ट काल एक समय है। श्रवस्थितप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्चन्तर्महर्त है । देवोंमें नारिकयोंके समान भंग है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर नी ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रवस्थितप्रवेशकका उत्क्रष्ट काल कहते समय अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धिमं भुत्रगारप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। ऋल्पतरप्रवेशक-ज का जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

े ३७० अंतराणु० द्विहो णि०—-स्रोघेण स्रादेसेण य । स्रोघेण भ्रज०-स्रप्प० जह० एयम० स्रंतोमु०, स्रथवा अष्पदरस्य वि एगममस्रो । एसो स्रत्थो उविर वि जहामंभवं जोजेयव्यो । उक्त० उवडुपोग्गलपरियद्वा । स्रविद्धः जह० एगम०, उक्त० स्रंतोमु०, स्रवत्त० जह० स्रतोमु०, उक्त० उवड्हपो०परियद्वं ।

विशेषार्थ- अन्य सब गतियांमे जहां जितना उसका कायस्थिति या भवस्थितिकी श्रपेचा उत्कृष्ट काल है उतने काल तक उसे २६ प्रकृतियोका प्रवेशक बनाये रखनेसे उस गतिमें श्रवस्थिप्रवेशक का उत्कृष्ट काल श्रा जाता है। मात्र पञ्चेन्द्रिय तिर्येश्व श्रपयीप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्तकोमे २८, २८, श्रीर २६ इनमेसे किसी भी पदकी श्रपेत्ता श्रवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट वाल अन्तर्भृहर्त प्राप्त किया जा सकता है। कारण स्पष्ट है। तथा नौ अनुदिशसे लेकर सर्वाथिमिद्धि तकके देवोमे २८, २४ और २१ प्रकृतियोके प्रवेशककी अपेज्ञा अपनी अपनी म्थितिप्रम।गा स्रवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट काल प्राप्त करना चाहिए। इन परोकी स्रपेचा श्रवस्थितप्रवेशकका उन्कृष्ट काल सौधर्मादिकल्पोम भी प्राप्त किया जा सकता है इतना यहाँ विशेष समभाना चाहिए। शेष कथन सुगम है। किन्तु इस सम्बन्धमे कुछ विशेष वक्तब्य है। जो इस प्रकार है-पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त श्रोर मनुष्य अपर्याप्तकांमे जो जीव श्रपनी पर्यायक उपान्त्य समयमं उद्वलना कर २७ या २६ प्रकृतियोका प्रवेशक हाता है मात्र उमीके अवस्थित पदका जघन्य काल एक सभय कहना चाहिए। इसी प्रकार जो अनुदिशा-दिकका उपराम सम्यग्रहीट दव बेद्क सम्यक्त्वका प्राप्त हा प्रथम समयमे २१सं २२ प्रकतियोका प्रवेशक होता है ख्रीर दसर समयमे २४ प्रवेशस्थानको प्राप्त करता है उसके भूजगारप्रवेशकका उत्कृष्ट काल दो समय कहना चाहिए। इनमे श्रवस्थित पटका जधन्य काल एक समय स्पष्ट ही है जो उपशमश्रेगासे मर कर देव होने पर प्राप्त होता है।

५३७० अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। आंघसे मृजगार और अल्पतरप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है। अथवा अल्पतरप्रवेशकका भी जघन्य अन्तर एक समय है। इम अर्थ भी आगे भी यथासम्भव योजना करनी चाहिए। तथा उत्कृष्ट अन्तर उपार्घ पुद्गल परिवर्तनप्रशाण है। अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यश्वशकका जघन्य अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्घ पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है।

तिश्रीपार्थ — अनन्तानुबन्धीका वियोजक के ई उपशम सम्यग्दृष्टि जीव उपशम सम्यक्त्व-के कालमे तीन समय शेष ग्रहने पर सासादनभावको प्राप्त हो २२ प्रकृतियोका प्रवेशक हुआ। तथा दूसरे समयमे शेष अनन्तानुबन्धीत्रिकके उदयाविलमे प्रवेश करने पर २५ प्रकृतियोका प्रवेशक हुआ। इसके बाद वह तीसरे समयमे पच्चीस प्रकृतियोका ही प्रवेशक बना रहा और तदनगर समयमे मिण्यात्वमं जाकर वह २६ प्रकृतियोका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार मुजगार प्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हुआ। कोई छुब्बीस प्रकृतियोभा प्रवेशक सिण्यादृष्टि जाव उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त कर पर्चीस प्रकृतियोका प्रवेशक हो गया इस प्रकार बाद वह अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर इक्कीस प्रकृतियोका प्रवेशक हो गया इस प्रकार अल्पतर प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्भुदूर्त प्राप्त हुआ। सकता है सो जान कर घटित कर लेना चाहिए। ओघ प्रकृपणामे यद्यपि इसकी मुख्यता है। फिर भी चारों ६ ३७१. त्रादेसेण ऐरइय० भुज०-त्रप्प० जह० एयस० अंतोमु०, उक० तेत्तीसं सागरो० देखणाणि । अवद्वि० जह० एयस०, उक० चत्तारि समया । एवं सन्वरोरइय० । णवरि सगद्विदी देखणा । तिरिक्तेस भुज०-त्रप्प० श्रोधं । अवद्वि० णारयभंगो । एवं पंचि०तिरिक्खितए । एविर सगद्विदी देखणा । पंचि०तिरि०- अवज्ञ०-मणुसत्रप्रज्ञ० अप्प० एत्थि अंतरं । अवद्वि० जहए एयस० । मणुसतिए पंचि०तिरिक्खभंगो । णवरि अवद्वि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अवत्त० जह० अंतोमु० । अवत्त० जह० अंतोमु० ।

गितयों में श्राल्पतर पदके जघन्य श्रान्तरका प्रकार बतलानेके लिए हमने प्रथम उदाहरण लिपिबद्ध किया है। द्यथवा श्राल्पतर पदका जघन्य श्रान्तर एक समय जो टीका में कहा है वह जो
उपशम सन्यक्तवको प्राप्त करनेके दो समय पूर्व सम्यक्तवकी उद्वेलना कर लेता है उसकी श्राप्त होता है। इन दोनों पदोंके प्रवेशकोंका उत्कृष्ट श्रान्तर उपार्घ पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है
यह स्पष्ट ही है। जो श्रावस्थितप्रवेशक जीव एक समय तक भुजगार या श्राल्पतरप्रवेशक
हो एक समयके श्रान्तरसे पुनः श्रावस्थितप्रवेशक हो जाता है उसके श्रावस्थितप्रवेशकका
जघन्य श्रान्तर एक समय प्राप्त होता है। तथा जो एक प्रकृतिक प्रवेशक सर्वापशामना करके
श्रान्तर्मुहूर्त तक श्राप्तवेशक वना रहता है। पुनः उपशमश्रेणिसे उतरने हुए प्रथम समयमे श्रावन्तन्तर्मुहूर्त तक श्राप्तवेशक वना रहता है। पुनः उपशमश्रेणिसे उतरने हुए प्रथम समयमे श्रावन्तर्म्वशक हो श्रार होता है उसके
श्रावस्थितप्रवेशक हो श्रीर दूसरे समयमें भुजगार प्रवेशक हो श्रावस्थितप्रवेशक हो जाता है उसके
श्रावस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट श्रान्तर श्रान्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। श्रान्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है और
उपार्धपुद्गलपरिवर्तनके श्रान्तरसे चढ़ाने पर उत्कृष्ट श्रान्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण
प्राप्त होता है। यह श्रोघकी श्रापेता सव पदोंके श्रान्तरकालका खुलासा है। श्रादेशसे श्राप्ती
श्राप्ती विशेषताको समक कर इसे घटित करना चाहिए। जो विशेष वक्तव्य होगा मात्र उतनेका
निर्देश करेंगे।

§ ३७१ आदेशसे नारिकगों में मुजगार श्रह्णप्रत्यवेशकों ज्ञां ज्ञां श्र-तर्महूर्त है और दोनों का उत्कृष्ट श्रान्तर कुछ कम तेतीस सागर हैं। श्रविश्वितप्रवेशकका ज्ञां श्रान्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रान्तर चार ममय है। इसी प्रकार सब नारिक्यों में जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम श्राप्ती श्रप्ती श्रिपतिप्रमाण है। निर्यक्रों में मुजगार और श्रान्यत्यवेशकका श्रान्तरकाल खोष के समान है। श्रविश्वित्रमाण है। निर्यक्रों में मुजगार और श्रान्यत्यवेशकका श्रान्तरकाल खोष के समान है। श्रविश्वित्रमाण बाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम श्रप्ती श्रप्ती निथित कहनी चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्र अपर्याप्त हैं। श्रांत कि स्वान स्वाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम श्रप्ती श्रप्त कि श्रान्तरकाल नहीं है। श्रविश्वत्रवेशकका ज्ञान्य और उत्कृष्ट श्रान्तर एक समय है। मनुष्यत्रिकमें पंचेन्द्रिय तिर्यक्रों से समान मंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि श्रवस्थितप्रवेशकका ज्ञान्य श्रान्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तर श्रान श्रान्तर श्रान श्रान्तर श्रान्तर श्रान्तर श्रान्तर श्रान्तर श्र

विशेषार्थ —नारिकयों में अवस्थित प्रवेशक का उत्कृष्ट काल तेतीस सागर बतला आये हैं, इसिलए यहाँ भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका उक्त कालप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर बन जाता है। तथा इनमें पहले भुजगारप्रवेशकका उत्कृष्ट काल चार समय बतला आये हैं, इसिलए

३७२. देवेसु भूज०-ऋष्प० जह० एयम० ऋंतोमु०, उक्क० एकत्तीसं सागरो० देस्र गाणि । अबिहि० जह० एयम०, उक्क० चत्तारि ममया । एवं भवणादि जाव णवगेवज्जा ति । णवि सगिहिदी देस्रणा । अणुदिसादि सन्बद्घा ति भुज० जहण्णु०
अंतोमु० । ऋष्प० णित्थ अंतरं । अबिह० जह० एयस०, उक्क० वे समया । एवं जाव० ।

यहां अवस्थितप्रवशकका उत्कृष्ट श्रान्तर चार समय बन जाता है। सब नारकियोंमें यह श्रान्तर काल इसी प्रकार घटिन कर लेना चाहिए। मात्र प्रत्येक नरककी खलग-खलग भवस्थिति होनेसे उसे ध्यानमें रख वर भूजगार श्रीर श्रव्पतरप्रवेशकका उत्कृष्ट श्रन्तर कहना चाहिए। तिर्युख्री-में कायस्थिति अनन्त काल है। इसलिए उनमे भूजगार श्रीर श्रल्पतरप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर उपार्घ पुद्गल परिवर्तनप्रमाण घटिन होनेमें कोई बाधा नहीं आती। यही कारण है कि इनमें उक्त दोनों पदोकी अपेचा अन्तर कालको आंघके समान जाननेकी सचना की है। तथा श्रवस्थितप्रवेशकका श्रन्तरकाल नारिकयोके समान बन जानेसे उनके समान जाननेकी सचना की है। यही बात पच्चेन्ट्रिय तिर्यक्षत्रिकमें जाननी चाहिए। मात्र इनकी कायस्थिति पुर्वकोटि पृथवत्व श्रधिक तीन पत्य है, इसिलए इनमें भूजगार श्रीर श्रल्पतरप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर अपनी कायस्थितप्रभाग जाननेकी सूचना की हैं। पक्केन्द्रिय तिर्यक्क अपर्याप्त श्रोर मनुष्य अपर्याप्तकामे अपनी-अपनी कायस्थितिके भीतर दो बार अल्पतरपद सम्भव नहीं हैं. इसलिए इनके अन्तरकालका निषेय किया है। किन्तु जिसके इनकी कायस्थितिके भीतर सम्य-करव या सम्याग्मध्यात्वकी उद्वेलना होकर एक समय तक अल्पतर पद होता है उसके अव-स्थित प्रवेशकका अन्तरकाल एक समय देखा जाता है, इसलिए इनमें अवस्थितप्रवेशकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर एक समय कहा है। मनुष्यत्रिकमे श्रन्य सब भंग पञ्चेन्द्रिय तियञ्चोंके समान है यह ता स्पष्ट ही है। मात्र इनमे उपशमश्रेग्गिकी प्राप्ति सम्भव होनेसे अव-स्थित प्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त तथा अवन्तव्य प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त श्रोर उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकाटि पृथक्त्वप्रमाण बन जानेसे उसे श्रलगसे कहा है।

्र ३७०. देवोंमे भुजगार श्रीर श्रल्पनरप्रवेशकका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर श्रन्तमुंहर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। श्रविश्वतप्रवेशकका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर चार समय है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर नो प्रवेयको तकके देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम श्रपनी श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थिभिद्धि तकके देवोंमें भुजगारप्रवेशकका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तमुंहर्त है। श्रल्पतरप्रवेशकका श्रन्तरकाल नहीं है। श्रवस्थित प्रवेशकका जघन्य श्रन्तर एक समय हे श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर दो समय है। इसी प्रकार श्रना हारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

निश्लोषार्थ — देवोंमें जो २६ प्रकृतियोके प्रवेशक मिथ्यादृष्टि हैं उनकी अपेक्षा ही भुज-गार और अलगतरप्रवेशकका उत्कृष्ट श्रन्तर प्राप्त हो सकता है, इसलिए यह तत्ममाण कहा है। मात्र भवनवासी श्रादि नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें भवस्थिति श्रलग-श्रलग है, इसलिए उस उस निकायके देवोमें श्रपनी अपनी भवस्थितिको ध्यानमें रख कर भुजगार और अलपतर प्रवेशकका उन्कृष्ट श्रनगर लाना बाहिए। श्रमुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जो ३७३. णाणाजीवेहिं भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिइसो—श्रोघेण श्रादेसेण य । मोषेण श्रवद्दि० सन्वजीव० णिय० श्रात्थि, सेसपदा भयणिज्जा । एवं चदुसु गदीसु । एवरि पंचि०तिग्विस्त्रप्रपञ्ज० श्रवद्दि णिय• यन्थि, सिया एवे च श्रप्प० विहत्तिओ च, मिया एदे च श्रप्पदग्विहत्तया च । मणुसश्रपञ्ज० श्रप्प०-श्रवद्दि० भयणिज्जा । एवं जाव० ।

६ २७४. भागाभागाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण श्रवद्वि० सन्त्रजी० के० ? श्रणंता भागा । सेसमणंतभागो । एवं तिरिक्खा० । श्रादेसेण लोग्इय० श्रवद्वि० सन्त्रजी० श्रसंखेज्जा भागा । सेसमसंखे०भागो । एवं सन्त्रणिरय०-- सन्त्र- पंचिदियतिरिक्ख-मणुस-मणुमअपज्ज०--देवा जाव श्रवराजिदा ति । मणुमपज्ज०- मणुसिणी०-सन्त्र० श्रवद्वि० संखेज्जा भागा । सेस संखे०भागो । एवं जाव०

६ ३७४. परिमाणाण् ० दविहो णि० — श्रोघेण आदेसे० । श्रोघेण भुज० अप्रप०

उपशान्तकपायसे मरकर प्रथम समयमे ६ का प्रवेशक और दूसरे समयमे २१ का प्रवेशक होकर भुजगार हो गया श्रतः श्रन्तर्मुहूर्त पश्चात् उसने वंदकसम्यक्त प्राप्त करन समय प्रथम समयमे २२ प्रकृतिक प्रवेशस्थान श्रीर दूसरं समयमे २४ प्रकृतिक प्रवेशस्थान प्राप्त किया। इस प्रकार इन देवोमे भुजगारप्रवेशकका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है। श्रन्त्पारका श्रन्तर नहीं है, क्योंकि वहाँ पर या तो २२ से २१ वालेके या २८ से २४ वालेके एक बार श्रन्त्पतर होता है। पहले इनमें भुजगारप्रवेशकका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल हो समय बतला श्राये हैं, इसलिए उसे ध्यानमे रख कर यहाँ पर श्रवस्थितप्रवेशकका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर दो समय कहा है। शोष कथन सगम है।

१३७३. नाना जीवांकी अपेक्षा भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—आंघ आंदेश । आंघसे अवस्थितप्रवेशक सन्न जीव नियमसे हैं । शंप पद भजनीय हैं । इसप्रकार चारो गितयोमे जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यच्च अपयीप्त जीवोमे अवस्थितप्रवेशक जीव नियमसे हैं । कदाचित् ये हैं श्रीर एक अल्पतरप्रवेशक जीव है । कदाचित् ये हैं श्रीर एक अल्पतरप्रवेशक जीव है । कदाचित् ये हैं और नाना अल्पतरप्रवेशक जीव है । मनुष्य अपर्याप्तकोमें अल्पतर और अवस्थितप्रवेशक जीव भजनीय है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१३७४ भागाभागानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। आंघसे अवस्थितप्रवेशक जीव सब जीवोके कितने भागप्रमाण है। अनन्त बहुभागप्रमाण है। शेष पदोके प्रवेशक जीव सब जीवोके कितने भागप्रमाण है। अनन्त बहुभागप्रमाण है। शेष पदोके प्रवेशक जीव अनन्तवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोमे जानना चाहिए। भादेशसे नारिकयोंमें अवस्थितप्रवेशक जीव सब जीवोके असंख्यात बहुतभागप्रमाण है। शप पदोंके प्रवेशक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पद्धन्द्रिय विर्यक्ष, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपयोप्त, सामान्य देव और अपराजित विमान तकके देवोमे जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिन। और सर्वार्थसिद्धिके देवोमे अवस्थितप्रवेशक जीव सब जीवोके संख्यात बहुभागप्रमाण है। शेष पदीके प्रवेशक जीव संख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

् ३७४ परिमाणानुगमकी अपेज्ञा निर्देश दो प्रकारका है- स्रोप स्रोर स्रादंश । स्रोघस

के० ? त्रसंखेडजा । अविष्ठि केति० ? त्रणंता । अवत्त० केति० ? संखेडजा । एवं तिरिक्खा० । एवरि अवत्त० णित्थ । सव्विणरय०-सव्वपंचिं०तिरिक्ख-मणुसअपज्ञ०-देवा भवणादि जाव एवरेवजा ति सव्वपदा असंखेजा । मणुसेसु अप्प०-अविष्ठि केति० ? असंखेजा । अज०-अवत्त० केति० ? संखेजा । मणुसपज्ञ०-मणुसिणी०-सव्वद्द० सव्वपदा संखेजा । अज०-अवत्त० केति० ? अवराइदा ति अप्प०-अवद्वि० केति० । असंखेजा । अज० केति० ? संखेजा । एवं जाव० ।

3 ३७६. खेताणु० दुनिहो णि०—ओघेण आदेसे०। त्रोघेण त्रवाद्वि० केवडि० खेते? सन्वलोगे। सेमपदा० लोग० त्र्यमंखे०भागे। एवं तिरिक्खा०। सेमगदीसु मन्वपदा० लोग० त्र्यमंखे०भागे। एवं जाव०।

३७७, फोसणाणु० दुविहो शि०—श्रोघेण श्रादेसे०। श्रोघेण भ्रुज० लोग० श्रमंखे०भागो श्रद्ध-बारहचोहम० देखणा। श्रप्प० लोग० श्रसंखे०भागो श्रद्धचोहम०

मुजगार क्रांर अल्पनरप्रवंशक जीव कितने है ? स्रसंख्यात हैं। अवस्थितप्रवंशक जीव कितने हैं ? स्रमन्त है। यवक्तव्यप्रवेशक जीव कितने हैं ? संख्यात है। इसी प्रकार तिर्यक्कोमें जानना चर्गहण। किन्त इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यप्रवेशक जीव नहीं है। सब नारकी, सब पक्तेन्द्रिय तिर्यक्क, मनुष्य प्रपर्याप्त, सामान्य देव क्रीर भवनवासियोंसे लेकर नी प्रवेशक तकके देवोमें सब पदोंके प्रवेशक जीव असंख्यात है। मनुष्योंमें अल्पतर और अविश्वतप्रवेशक जीव कितने हैं ? संख्यात है। मनुष्यों के प्रवेशक जीव कितने हैं ? संख्यात है। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी श्रीर मर्वार्थसिद्धिके देवोमें सब पदोंके प्रवेशक जीव संख्यात है। अनुद्शिसे लेकर अपराजित तकके देवोमें अल्पतर और अवस्थितप्रवेशक जीव कितने हैं ? श्रसंख्यात है। सुजगारप्रवेशक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१३७६. च्रेत्रानगमकी श्रपंचा निर्देश दो प्रकारका हैं—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे श्रवस्थितप्रवेशक जीवोका कितना चेत्र हैं ? सर्व लोकप्रमाग्ग चेत्र हैं। शेप पदोके प्रवेशक जीवोका लोकके श्रमंख्यातवे भागप्रमाग्ग चेत्र हैं। इसीप्रकार सामान्य तिर्यव्योमें जानता चाहिए। शेप गतियोमे सब पदोके प्रवेशक जीवोका लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाग्ग चेत्र हैं। इसी प्रकार श्रानादारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—श्रोत्रसे अवस्थितप्रवेशकों २६ प्रकृतियों के प्रवेशकों की सुख्यता है सौर इनका चेत्र सर्व लोकप्रमाण पहले बतला श्राये हैं, इसलिए यहाँ पर श्रवस्थितप्रवेशकों का चेत्र सर्व लोकप्रमाण कहा है। शेष पदों के प्रवेशकों का चेत्र लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रम ए है यह स्पष्ट ही है। यह प्रकृष्णा सामान्य तिर्यक्रों में बन जाती है, इसलिए उनमें श्रोधके समान जनानेकी सूचना की है। शेष मार्गणाश्रोका चेत्र लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे उनमें सब पदोंके प्रवेशकों का लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण चेत्र कहा है।

्र ४५७ स्पर्शनानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रवारका है—श्रोघ और आदेश। आघसे भुजगारप्रवेशक जीवोने लोकक असंख्यातवे भागप्रमाण तथा त्रसनालीके चौदह भागामेसे इन्छ कम आठ और इन्छ कम बारह भागप्रमाण स्त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अल्पतरप्रवेशक दे० सन्त्रलोगो वा । अवद्वि० सन्वलोगो । अवत्त० लोग० असंखे०भागो ।

ह ३७८० आदेसेण ऐरइय० अप्प०-अवद्वि० लोग० असंखेज० अचोद्दस०। अज० लोग० असंखे०भागो पंचचोद्द० देस्रणा । पटमाए खेत्तं । विदियादि सत्तमा ति मन्त्र-पदाणं सगपोसणं । णवि सत्तमाए अज० खेत्तभंगो । तिग्क्खेस अज० लोग० असंखे०-भागो सत्त्वोद्दस० देस्रणा । अप्प० लोग० असंखे०भागो सन्त्रलोगो वा । अवद्वि० सन्त्रलोगो । एवं पंचिदियतिरिक्खतिय०। णवि अवद्वि० लोग० असंखे०भागो सन्त्रलोगो वा । पंचि०तिरि०अपज०-मणुसअपज० अप्प०अवद्वि० लोग० असंखे०भागो जीवोने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, त्रसनालीके चौद्द भागोंमंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण और सर्वलोक प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । अवस्थितप्रवेशकोने सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया ।

विशेषार्थ — जो गुणस्थान प्रतिपन्न जीव यथायोग्य अधस्तन गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं उनके मुजगारपद होता है ऐसे जीव सम्यग्द्रव्टि और मासादनसम्यग्द्रव्टि गुणस्थानोंका भी प्राप्त होते हैं, यही देख कर यहाँ पर श्रोघसे मुजगारप्रवंशकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौद्र भागोंमें कुछ कम श्राठ और कुछ कम बारह भागप्रमाण कहा है। जो जीव मिध्यात्वादि गुणस्थानोंसे उपरके गुणस्थानोंमे जाते हैं वे तो अल्पतरप्रवेशक होते ही हैं। साथ ही जो मिध्याद्रव्टि सम्यक्त श्रोर सम्यमिध्यात्वकी उद्वेलना करते हैं वे भी श्राल्पतरप्रवेशक होते हैं। यहां मात्र इनमें सासादन जीव नहीं होते। यही देख कर यहाँ श्रल्पतरप्रवेशकोंका लोकके श्रामंख्यातवें भाग, त्रसनालींक चौद्र भागोंस कुछ कम श्राठ भाग और सर्वलोक प्रमाण चेत्र कहा है। इतना श्रवश्य है कि यहाँ पर सर्वलोकप्रमाण स्पर्शन उन जीवोंके कहना चाहिए जो २८ प्रकृतियोंमेंसे सन्यक्त्वकी उद्वेलना होने पर २६ प्रकृतियोंमें प्रवेश कर श्रल्पतरप्रवेशक होने है। श्रविश्विपत्रवंशकोंका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण तथा श्रवक्तव्यप्रवेशकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है वह स्पष्ट ही है। इसी प्रकार आगोके स्थानोंमें स्पर्शनका विचार कर लेना चाहिए। विशेष वक्तव्य न हानेसे हम प्रथक प्रथक खुलासा नहीं करेंगे।

§ ३०८ त्रादेशसे नारिकयों में श्रल्पतर श्रीर श्रवस्थितप्रवेशकोंने लोकके श्रसंख्यातवें माग श्रार त्रसनालीके चौद्द भागों में से कुछ कम छह भागप्रमाण चित्रका स्पर्शन किया है। भुजगारप्रवेशकोने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौद्द भागों में से कुछ कम पाँच भागप्रमाण चित्रका स्पर्शन किया है। पहली पृथिवीका चित्रके समान स्पर्शन है। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारिकयों में सब पदों का श्रपेचा श्रपना श्रपना स्पर्शन जानना चाहिए। इननी विशेषता है कि सप्तम पृथिवीमें भुजगारका स्पर्शन चित्रके समान है। तिर्यव्योंमें भुजगारप्रवेशकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौद्द भागोंमें से कुछ कम सात भागप्रमाण चित्रका स्पर्शन किया है। श्रवस्थतप्रवेशकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण चित्रका स्पर्शन किया है। श्रवस्थितप्रवेशकोंने सर्व लोकप्रमाण चित्रका स्पर्शन किया है। श्रवस्थितप्रवेशकोंने सर्व लोकप्रमाण चित्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्यिक्तिकों जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें श्रवस्थितप्रवेशकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण चित्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्य श्रसंख्यातवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण चित्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्य श्रमंख्यातवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण चित्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्य श्रमंख्यातवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण चित्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्य श्रमंख्यातवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण चित्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्य श्रमंखान श्रीर श्रवस्थित

सन्वलोगो वा । मणुसतिए पंचिदियतिरिक्खभंगो । णवरि अवत्त० खेत्तं । देवा० भवणादि जाव अच्चुदा ति सन्वपदायां सगफोसयां । उवरि खेत्तं । एवं० जाव० ।

६ ३७९. कालाणु० दुविहो णि० — श्रोघेण श्रादेसे० । श्रोघेण भ्रुज०-श्रप्प० जह० एयम०, उक्क० श्रावित श्रमंखे०भागो । श्रविद्धि० मन्बद्धा । श्रवत्त० जह० एयस०, उक्क० संखेजा समया । एवं सन्वर्णोरहय-तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खितय-देवा भवणादि जाव णवगेवज्ञा ति । णवि श्रवत्त० णित्य । पंचि०तिरिक्खश्रपज्ज० श्रप्थ०-श्रवद्धि० श्रोघं ।

३८०. मणुसेसु भुज०-त्रवत्त० जह० एयस०, उक्क० संखेजजा समया। त्रुप्प० त्रवृद्धि० त्रोघं। एवमणृदिसादि जाव त्रवराजिदा त्ति। णवि त्रव्यत्त० एत्थि। मणुमपज्ज०-मणृसिगी-सन्बद्ध० त्रवृद्धि० सन्बद्धा। सेमपदा० जह० एयस०, उक्क० प्रवेशकोने लाकक असंख्यातवे भाग त्रोग सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यित्रकम पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि त्रवक्तव्यप्रवेशकोका स्पर्शन चेत्रके समान है। सामान्य देव त्र्योग भवनवासियोसे लेकग अन्युन कल्प तकके देवोमे सव पदाकी अपना अपना अपना स्पर्शन जानना चाहिए। अपनके देवोमे चेत्रके समान स्पर्शन हे। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३७६. कालानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—आव और आदेश। आंघसे मुजगार खोर अल्पतरप्रवेशकोका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवित्र के ससंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितप्रवेशकोका काल सर्वदा है। अवक्तव्यप्रवेशकोका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इमाप्रकार सब नारकी, सामान्य तियञ्च, पञ्चेशन्द्रय निर्यञ्चित्रक और भवनवाभियोसे लकर नौ प्रवेयक तकके देवोमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विश्रपता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है। पञ्चेशन्द्रय तिर्यक्ष अपर्याप्तकोमें अल्पतर खोर अवस्थितप्रवेशकोका काल आघके समान है।

तिश्रोषार्थ — त्र्यांचसं मुजगारपद और अल्पतरपद एक समयतक हो श्रीर दूसरे समयमं न हो यह सम्भव है। तथा नाना जीव यदि निरन्तर इन पदोको करें तो उस कालका योग आविलके असंख्यातवं भागप्रमाण ही हांगा, इसिलए श्रांघसे मुजगार और अल्पर प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। अवस्थितप्रवेशकोंका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है। अवस्कव्यपवेशक उपशम-श्रेणिसे गिरनेवाले जीव होत है, इसिलए इनके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात ममय कहा है। यहाँ कही गई मार्गणा श्रोमे यह काल बन जाता है, इसिलए उनमें श्रांघके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र इनमें उपशमश्रेणींकी प्रतिप्र सम्भव न होनेसे अवस्वव्यपदका निषेध किया है।

३८०. मनुष्योंमें भुजगार स्रोर स्थवक्तव्यप्रवेशकोका जघन्य काल एक समय स्रोर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अल्पतर स्थार अवस्थितप्रवेशकोका काल स्रोघके समान है। इसीप्रकार अनुदिशस लेकर अपराजित विमान तकके देवोमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है। मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यिनी स्रोर सर्वार्थसिद्धिक देवोमे अवस्थितप्रवशकोका काल सर्वदा ह। शेष पदोक प्रवेशकोका जघन्य काल एक सभय

संखेडजा समया। मणुमञ्जपङ्ज० श्रप्प० श्रोघं। श्रवद्वि० जह० एगस०, उक्क० पतिदो० असंखे०भागो। एवं जाव०।

६ ३८१. श्रंतराणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण श्रुज०-श्रप्प० जह० एयस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि । श्रविद्ध० णितथ श्रंतरं । श्रवत्त० जह० एयम०, उक्क० वामपुधत्तं । एवं मणुसतिए। एवं सव्विणिरय-तिरिक्ख-पंचि०तिरिक्ख-तिय-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा ति । णविर श्रवत्त० णितथ ।

३८२. पंचिदियतिरिक्ख अपज्ज० श्रप्प० जह० एयम०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते मादिरेगे । अवट्ठि० एात्थि अंतरं । मणुमश्रपज्ज० अप्प०-अवट्ठि० जह०
एयस०, उक्क० पित्रो० असंखे०भागो । अणुदिसादि सन्वट्ठा ति अवट्ठि० एात्थि
अंतरं । भ्रुज०-अप्प० जह० एयममञ्रो, उक्क० वामपुधत्तं । सन्वट्ठे पित्रो० असंखे०-

है भीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। मनुष्य अपर्याप्तकोमें अल्पतरप्रवेशकोका काल त्रोघके समान है। अवस्थितप्रवेशकोका जघन्य काल एक समय और उस्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसाप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—-सामान्य मनुष्योमे भुजगार श्रोर श्ववक्तव्यपद मनुष्यद्विकमे ही होते हैं, इसिलिए इनकी श्रपेचा जघन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट गल सख्यात समय कहा है। शेष पद श्रपर्याप्त मनुष्योमे भी सम्भव है, इसिलिए इनमे उनका काल श्रोघके समान बन जानेसे वह तत्प्रमाण कहा है। शेप कथन सुगम है।

५ ३८१. त्रान्तरानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्राघ श्रौर श्रादेश। श्रोघसे भुजगार श्रोर श्रव्एतरप्रवेशकोका जघन्य श्रन्तर एक समय हे श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर सात दिन-रात है। श्रवित्रविशकोका श्रन्तर काल नहीं है। श्रवक्तव्यप्रवेशकोका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रौर उत्कष्ट श्रन्तर वर्षप्रथक्तवप्रमाण है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकम जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चिक सामान्य देव श्रौर भवनवासियोसे लेकर नी प्रवेयक तकके द्वामे जानना चाहिए। मात्र इननी विशंषता है कि इनमे श्रवक्तव्यपद नहीं है।

विशेषार्थ — यहाँ विशेष वक्तव्य इतना ही है कि उपशामसम्यवत्वका उत्कृष्ट श्रान्तर सात दिन-रात बतलाया है। श्रीर उपशामसम्यवत्वके श्रामावमे भुजगार तथा श्राल्पतरपद सम्भव नहीं, इसलिए यहाँ पर श्राघसे श्रीर उल्लिखित मार्गणाश्रोमे उक्त पदो श उत्कृष्ट श्रान्तर सात दिन-रात कहा है। यद्यपि चपणाके कालमे श्राल्पतरपद होते है पर उसकी श्रापेचा उत्कृष्ट श्रान्तर छह महीनासे कम नहीं है, इसलिए वह प्रश्नुतमे उपयोगी नहीं।

§ ३८२. पञ्चे निद्रयतिर्यक्षश्चपर्यात जीवोमे श्राल्पतरप्रवेशकोका जघन्य श्रान्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रान्तर साधिक चौषीस दिन-रात है। श्रावस्थितप्रवेशकोका श्रान्तरकाल नहीं है। मनुष्य श्राप्यांप्तकोमे श्राल्पतर श्रीर श्रावस्थितप्रवेशकोका जघन्य श्रान्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तर पत्यके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण है। श्रानुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमे श्रावस्थितप्रवेशकोका श्रान्तरकाल नहीं है। भुजगार श्रीर श्राल्पतरप्रवेशकोका जघन्य श्रान्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तर वर्षप्रथक्तवप्रमाण है। सर्वार्थसिद्धिमें उत्कृष्ट श्रान्तर

भागो । एवं जाव० ।

६ ३८३. भावो सन्वत्थ ऋांदइऋा भावो ।

६ ३८४. ऋष्पाबहुऋाणु० दुविहो णि०—श्रोधेण ऋादेसे०। ऋोधेण सन्त्र-त्थोवा ऋवत्त्र०। ऋष्प० ऋसंखे०गुणा। मुज०पवे० विसेमा०। ऋवद्वि० ऋणंतगुणा।

् ३८४. श्रादेसेण ऐरइय० सन्वत्थोवा अप्प०पवे० । भुज०पवे० विसेसा० । श्रवट्टि०पवे० श्रसंखे०गुणा । एवं मन्त्रणिरय०-पंचिदियतिरिक्खतिय३-देवा भन्नणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । पंचिदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मन्त्रत्थोवा अप्प०-पवे० । अवट्टि०पवे० असंखे०गुणा ।

 ३८६. तिरिक्खेसु सन्वत्थोवा अप्प०पवे० । भुज०पवे० विसेसा० । अविट्ठ०-पवे० अगांतगुणा । मणुसेसु सन्वत्थोवा अवत्त०पवे० । भुज०पवे० संखे०गुणा । अप्प०-पवे० असंखे०गुणा । अविट्ठि०पवे० असंखे०गुणा । एवं मणुमपज्ज०-मणुसिणी० । गाविर संखेजजगुणं कायन्वं । भ्रणृद्दिसादि सन्वद्घा त्ति सन्वत्थोवा भुज०पवे०। अप्प०-पवे० असंखे०गुणा । अविट्ठि०पवे० असंखे०गुणा । णविर सन्बद्घे संखेजजगुणं कायन्वं । एवं जाव० ।

पल्यके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार ऋनाहारक मार्गणा तक जःनना चाहिए।

§ ३८३. भाव सर्वत्र श्रौदयिक भाव है।

स्वेदश. श्रल्पबहुत्वानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका हं—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे श्रवकतव्यप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे श्रव्पतरप्रवेशक जीव श्रसंख्यात-गुगो हैं। उनसे भुजगारप्रवेशक जीव विशेष श्रिवक हैं। उनसे श्रवस्थितप्रवेशक जीव श्रमन्तगुगो हैं।

९ ३८४. घादेशसे नारिकयोंमें श्रल्पतरप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुतागर-प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थितप्रवेशक जीव श्रासंख्यातगुऐ। हैं। इसीप्रकार सब नारकी, पक्रोन्द्रिय तिर्यञ्चित्रक, सामान्य देव तथा भवनित्रकसे लेकर नौ प्रवेयकतकके देवोंमें जानना चाहिए। पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपयीप्त श्रीर मनुष्य श्रपयीप्तकोंमें श्रल्पतरप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे श्रवस्थितप्रवेशक जीव श्रसंख्यातगुऐ। हैं।

\$ ३८७. पदिणिक्सेवे तत्थ इमाणि तिण्णि ऋणिओगद्दाराणि— समुिकत्तणा० मामित्तमप्पाबहुत्रं च । समु० दुविहा—जह० उक्त० । उक्तस्से पयदं । दुविहो णि०——श्रोषेण आदेसे० । श्रोषेण ऋत्थि उक्त० बहुी हाणी श्रवहाणं च । एवं चदुगदीसु । एवं पिंचिदियतिरिक्ख अपज्ज०-मणुस अपज्ज० श्रात्थि उक्क० हाणी श्रवहाणं च । एवं जाव० । एवं जहण्ययं पि रोदेव्वं ।

३८८. सामित्ताणु० दुविहो ि ए० — जह० उक० । उक० पयदं । दुविहो ि ए० — स्रोधेए स्रादेशेण य । ओधेण उक० बङ्ढी कस्स १ प्रण्णद० उवसमसे ि हिमारुह-माएगो अंतरकरणं कादृण मदो देवो जादा तदो छप्पवेशिय इगिनी सपवेसगो जादो, तस्स विदियसमयदेवस्स उक० बङ्ढी । उक० हाणी कस्स १ अण्णद० उवसमसे ि हिमारुहमाएगो एकावी संपय०पवेसगो स्रंतरे कदे समयूणावित्यमेत्तं गंतृण दोण्हं पवेसगो जादो, तस्स उक० हाणी । तस्सेव से काले उक० समबहाएं।

§ ३८९. श्रादेसेण ऐर० उक्त० वही कस्स ? श्राग्णद० जो चउनीसं पवेस-माणो अद्वानीसं पवसेदि तस्स उक्त० वही । उक्त० हाणी कस्स ? अण्णद० श्रद्वानीसं पवेसेमाऐण श्रणंताणुबंधिचउके णासिदे तस्स उक्त० हाणी । एगद्रत्थावद्वाणं । एवं सन्वऐरइय०-तिरिक्ल०-पंचिंदियतिरिक्लितिय ३—देश भवणादि जाव एवगेवजा ति ।

^{\$} ३८७. पद्दिन तेपका ऋधिकार है। उसमें ये तीन ऋधिकार हैं —समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। समुत्कीर्तना दो प्रकारकी हैं — जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका हैं — ओव और आदेश। ओधकी ऋपेता उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थान है। इसी प्रकार चारों गतियों में जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्योप्त और मनुष्य अपर्याप्तकों में उत्कृष्ट हानि और अवस्थान है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार जघन्य भी जानना चाहिए।

[§] ३८८. स्वामित्वानुगमकी अपेचा निर्देश दे। प्रकारका है—जधन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—आध और आदेश। आवसे उत्कृष्ट बुद्धिका स्वामी कीन है ? जो अन्यतर उपशमश्रीणपर आगोहण करनेवाला अन्तरकरण करके मरा और देव हो गया। उसके बाद छह प्रकृतियोंका प्रवेशक वह इक्कीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। ऐसा वह द्विनीय समयवर्ती देव उत्कृष्ट बुद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कीन है ? अन्यतर जो उपशमश्रीणपर आरोहण करनेवाला इक्कीस प्रकृतियोंका प्रवेशक अन्तर करनेपर एक समय कम आवित्मात्र जाकर दोका प्रवेशक हो गया वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। तथा वही अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है।

^{\$} २८९ स्रादेशसे नारिकयोंमें उत्कृष्ट बृद्धिका स्वामी कौन है ? श्रन्यतर जो चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक स्रद्धाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है वह उत्कृष्ट बृद्धिका स्वामी है । उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? श्रन्यतर जो श्रद्धाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक है वह स्वनन्तानुबन्धीचतु-किका नाश होनेपर उत्कृष्ट हानिका स्वामी है । इनमेंसे किसी एक स्थानमें उत्कृष्ट स्वस्थानका स्वामी है । इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यव्च, प्रवचित्रय तिर्यव्चित्रक, सामान्य देव

अधवा आदेसे० ऐरइय० उक्क० वड्डी कस्स ? अण्णद० जो वावीमं पवेसेमाएो उवसमसम्मा० अद्वावीसं पवेसेदि, तस्स उक्क० वड्डी । तस्सेव से काले उक्क० अवद्वाएं । एवं जाव० णवगेवजा ति अपज्ञत्तवज्ञं । पंचि०तिरि०अपज्ञ०-मणुमअपज्ञ० उक्क० हाणी कस्म ? अण्णद० जो अद्वावीमं पवेसेमाणो सत्तावीमं पवेसेदि तस्स उक्क० हाणी । तस्सेव से काले उक्क० अवद्वाएं ।

३९०. मणुमतिए उक्क० वड्डी कस्स ? अएणद० उवममसेटीदो श्रोदरमाणो वारम पवेसिय पुणो सत्तणोकमायाणं पवेमगो जादो, तस्म उक्क० वड्डी । उक्क० हाणी अवद्वाणं च श्रोघं । देवेस उक्क० वड्डी श्रोघं । तस्सेव से काले उक्क० अवद्वाणं । उक्क० हाणी कस्म ? अण्णद० श्रद्धावीसं पवेसेमाणा चउवीमपवे० जादो तस्स उक्क० हाणो । एवमणुदिसादि जाव सन्वद्वा ति । एवं जाव० ।

ः ३९१. जह० पयदं । दुविहो खि० — त्रोघेण त्रादेसे० । त्रोघेण जह० वही कस्स ? त्र्रण्यद० पण्वीसं पवेसेमाणो ब्रव्वीसपवेसगो जादा तम्स जह० वही । जह० हाणी कस्म ? अण्णद० त्र्रहात्रीसं पवेसेमाणो सत्तात्रीसपवेसगो जादो तस्स जह० हाखी । तस्सेव से काले जह० अवट्टाणं । एतं चदुगदीसु । णविर पंचि०- तिरिक्खश्रपञ्ज०-मणुमश्रपञ्ज० जह० वही णित्थ । त्र्रणुद्दिसादि सव्वद्टा ति जह०

श्रीर भवनवासिकों में लेकर नो प्रैवेयक तकके देवों में जातन। चाहिए। श्रथवा श्रादेशमें नारिकयों में उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कीन है ? श्रान्यतर जो बाईम प्रकृतियोंका प्रवेशक उपशम प्रम्यान्दिए जीव श्रष्टाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। वही श्रान्तर समयमें उत्कृष्ट श्रावस्थानका स्वामी है। इसी प्रकार श्राप्याप्रकोंका छोड़कर नो ग्रेवेयक तक जानना चाहिए। पंचेन्द्रिय तिर्यंच श्राप्याप्त श्रोर मनुष्य श्राप्याप्तकों से उत्कृष्ट हानिका स्वामी कीन है ? श्रान्यतर जो श्राह्म प्रकृतियोंका प्रवेशक जीव सत्ताइस प्रकृतियोंका प्रवेशक होता ह वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। तथा वही श्रान्तर समयमें उत्कृष्ट श्रावस्थानका स्वामी है।

§ ३६० भनुष्यात्रिकमे उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कोन है ? क्षन्यतर उपशमश्रेणिसं उतरते-वाला जो बारह प्रकृतियोंका प्रवेश कर पुनः सात नाकपायोंका प्रवेशक हो गया वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है । उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामित्व श्रोघके समान है । देवोमे उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी ओघके समान है । तथा वही अनन्तर समयमे उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है । उत्कृष्ट हानिका स्वामी कीन है ? अन्यतर जो अष्टाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है । इसी प्रकार अनुदिशसं लेकर सर्वार्थिसिद्धि तक जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

् ३६१. जघन्यका प्रकरण हैं। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्राघसे जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन हं १ श्रान्यतर जो पच्चीस प्रकृतियोंका प्रवेशक छ्व्चीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है १ श्रान्यतर जो श्राह्यहंस प्रकृतियोंका प्रवेशक स्वामी कौन है १ श्रान्यतर जो श्राह्यहंस प्रकृतियोंका प्रवेशक स्वामी कौन है १ श्रान्यतर जो श्राह्यहंस प्रकृतियोंका प्रवेशक स्वामी है। इसी प्रकार वारों गतियोंमें तानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यंच श्राप्यीप श्रोर मतुष्य श्राप्यीपकोंमें

वहीं कस्स ? अण्णद० एकावीसं पवेसेमाणो सम्मत्तं पवेसेदि तस्स जह० वहीं । जह० हाणी कस्स ? अण्णद० बाबीसं पवेसेमाणेण सम्मत्तं खिवदे तस्स जह० हाणी। तस्सेव से काले जह० अवद्वाणं। एवं जाव०।

३९२. ऋषाबहुअं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०— ऋषिण आदेसेण य । श्रोधेण मन्वत्थो० उक्क० बहुी । हाणी अबद्वाणं च दो वि सिरसाणि विसे० । आदेसे० गेग्इय• उक्कम्मबह्वि-हाणि-अबद्वाणाणि तिण्णि वि मिरसाणि । अधवा सन्वत्थो० उक्क० हाणी । उक्क० बहुी अबद्वाणं च दो वि सिरसाणि विसेमा० । एवं मन्वणेग्इय०-मन्वतिरिक्ख-देवा भवणादि जाव एवगेवजा ति । णविर पचि०तिरिक्खअपअ०-मणुमअपअ० उक्क० हाणी अबद्वाणं च दो वि मिरसाणि । मणुसतिए सन्वत्थो० उक्क० बहुी । हाणी अबद्वाणं च दो वि मिरसाणि संखेज-गुणाणि । देवेसु सन्वत्थो० उक्क० हाणी । बहुी अबद्वाणं च दो वि मिरसाणि संखे०-गुणाणि । एवमणुद्दिमादि सन्वद्वा ति । एव जाव० ।

३९३. जह० पयदं । दुविहो िण्हिसो — श्रोघेण आदेसे० । श्रोघेण जह० वहीं हाणी श्रवद्वाणं च तिण्णि वि मिन्मिणि । एवं चदुगदीसु । णविर पंचि० जघन्य वृद्धि नहीं हैं । अनुदिशसे लेकर सवार्थसिद्धि तकके देवांमें जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर जो इक्कास प्रकृतियोंका प्रवेशक सम्यक्तका प्रवेशक होता है वह जघन्य वृद्धिका स्वामी हैं । जघन्य हानिका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर जो बाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक सम्यक्तव प्रकृतिका चय करता है वह जघन्य हानिका स्वामी है । वहीं अनन्तर समयमें जघन्य अवस्थान का स्वामी हैं । इसी प्रकार अनाहारक माग्रेणा तक ल जाना चाहिए।

े ३६६. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है — अोघ और आदेश । आघम उत्कृष्ट वृद्धिके प्रवेशक सबसे स्ताक है । उत्कृष्ट हानि और अवस्थानके स्वामी दोनो ही परस्पर समान होकर विशेष अधिक है । आदेशसे नारिकयोंमें उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थानके प्रवेशक तीनो ही समान है । अथवा उत्कृष्ट हानिके प्रवेशक सबसे स्ताक है । उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानके प्रवेशक दोनो ही परस्पर समान हाकर विशेष अधिक है । इनी प्रकार सब नारकी, सब तियेच, सामान्य देव और अवन्यासियोंमें लेकर नो ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पचेन्द्रिय तियंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट हानि और अवस्थानके प्रवेशक दोनों ही समान है । मनुष्यिककों उत्कृष्ट वृद्धिके प्रवेशक सबसे स्तोक है । उनसे उत्कृष्ट हानि और अवस्थानके प्रवेशक दोनों ही परस्पर समान होकर संख्यातगुणे है । देवोंमें उत्कृष्ट हानिके प्रवेशक सबसे स्तोक है । उत्कृष्ट हानिके प्रवेशक सबसे स्तोक है । उत्कृष्ट हानिके प्रवेशक सबसे स्तोक है । इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिक देवों तक जानना चाहिए । इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धके देवों तक जानना चाहिए । इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धके देवों तक जानना चाहिए । इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धके देवों तक जानना चाहिए । इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धके देवों तक जानना चाहिए । इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धके देवों तक जानना चाहिए ।

६३६३. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—झांघ ऋौर आदेश। आंघसे जघन्य बुद्धि, हानि खोर खबस्थानके तीनो ही प्रवेशक परम्पर समान है। इसी प्रकार चारो गतियोमे जानना चाहिए। इतनी विरोपता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यच अपयात खोर मनुष्य

तिरिक्खअपज्ञ०-मणुसञ्चपञ्ज० जह० हाणी श्रवद्वा० दो वि सरिसाणि । एवं जाव० ।

§ ३९४. बह्रिपवेसगो ति तत्थ इमाणि तेरस अणियोगदाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए ति । समुक्कित्तणा० दुविहो णि०— स्रोघेण आदेसे० । स्रोघेण अत्थि संखे०भागबह्नि-हाणि-संखे०गुणबह्नि-हाणी-अबद्धि०-स्रवत्त ०पवेसगा । एवं मणुसतिए ।

ह २९४. स्रादे० णेग्ड्य० अन्थि संखेन्मागविह्नहाणि-स्रविद्विण्पते०। एवं सञ्बिण्रय०-तिरिक्ख-पंचिं०तिरिक्खितय ३-भवणादि जाव णवगेवसा चि । पंचि०-तिरिक्खिल-मणुमस्रपञ्ज० स्रिथि संखे०भागहा०-स्रविद्वि । देवेसु स्रिथि संखे०भाग-विद्वि-हाणि-संखे०गुणविद्विस्त्रविद्वि । एवं जाव०।

६ ३९६. सामित्ताणु० दुविहो णि०— श्रोघेण श्रादेसे० । श्रोघेण संसे०भाग-विष्टु-हाणि-श्रविद्धि० कस्म ? श्रण्णद० सम्माइद्वि० मिच्छाइद्वि० । संसे०गुणविद्धि-हाणि० कस्स ? श्रण्णद० सम्माइद्वि० । श्रवत्त० भ्रजगारभंगो । एवं मणुसतिए । सव्वर्णरङ्ग-सव्वितिरिक्स-मणुमअपञ्ज०-भवणादि जाव णवगेवञा ति भ्रजगारभंगो । एवि संसेञ्जभागविद्धि-हाणि-श्रवद्विदालावेण र्णदव्वं । देवाणमोधं । णविर संसे०गुण-

श्चपर्याप्तकोंमें जघन्य हाति श्वीर श्चवस्थानके प्रवेशक दोनों ही समान है। इसी प्रकार श्वना-हारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

१ ३९४ वृद्धिप्रवेशकका अधिकार है। उनमें ये तेरह अनुयोगद्वार है—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व नक। समुन्कीर्तनांक अनुसार निर्देश हो प्रकारका है — श्रोघ और आदेश। श्रोघसे संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुणवृद्धि, संख्यात गुणवृद्धि, संख्यात गुणवृद्धि, संख्यात गुणवृद्धि, श्रवेशक है। इसी प्रकार मनुष्यितिकमें जानना चाहिए।

े ३६४. आदेशसे नारिकयोमे संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवानि श्रीर अवस्थित पदके प्रवेशक हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यंच, पर्चेन्द्रिय तिर्यंचित्रिक और भवनवासियोंसे लेकर नो प्रेवेयक तकके देवोमे जानना चाहिए। पर्चेन्द्रिय तिर्यंच्य अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें संख्यात भागवानि और अवस्थित पदके प्रवेशक है। देवोंमें संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि और अवस्थित पदके प्रवेशक हैं। इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोमें जानना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक ले जाना चाहिए।

१ दि६ स्वामित्वानुगमको अपेता निर्देश दो प्रकारका है— ब्रोघ और ब्रादेश। ब्रोघसं संख्यात भागवृद्धि, संख्यातभागहानि क्रोर ब्रावस्थित पदका स्वामी कीन है १ ब्रान्थतर सम्यग्टिट ब्रोर मिथ्याद्दिट स्वामी है। संख्यातगुणवृद्धि ब्रोर संख्यात गुणहानिका स्वामी कीन है १ ब्रान्थतर सम्यग्टिट स्वामी है। ब्रावक्तव्य पदका भङ्ग भुजगारके समान है। इसी प्रकार मनुष्यित्रकमे जानना चाहिए। सब नारकी, सब तिर्यव्य, मनुष्य ब्रापयीप ब्रोर भवनवासियोंसं लेकर नी प्रवेयक तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। इननी विशेषता है कि इनमें संख्यात भागवृद्धि, संख्यान भागहानि ब्रोर ब्रावस्थित पदके ब्राजायके साथ स्वामित्व ले जाना चाहिए। त्वोंमें ब्रावके समान भंग है। इननी विशेषता है कि इनमें संख्यात

हाणि-ग्रवत्त ० णित्थ । त्र्रणुहिमादि सञ्बद्धा ति सञ्वपदाणि कस्स १ त्रण्णद० एवं जाव० ।

इर्७. कालाणु० दुनिहो णि०—ग्रोघेण श्रादेसे०। ओघेण संखेजभागविहु०
 तह० एयम०, उक्क० चत्तारि समया। संखे०भागहाणि-संखेजगुणहाणि-ग्रवत्त०
 तहण्णु० एयस०। त्रधवा संखे०भागहाणि० उक्क० वे समया। संखे०गुणविहु० जह०
 एयममत्रो, उक्क० तिरिण समया। श्रविह० ग्रुज०भंगो।

६ ३९८. श्रादंसेण मन्यस्रेरइय०-सन्त्रतिरिक्ख-मसुमअपञ्ज० भवसादि जाव स्वाविष्णविष्णा संस्वे०भागक्षण्य संस्वे०भागविष्ण्ण जह० स्वरुष्ण उक्क० चत्तारि ममया । संस्वे०भागहाणि-संस्वे०गुणविष्ण-हास्सि-श्राच जह० उक्क० स्यम० । मंखे०भागहा० उक्क० बेममया वा । श्रविष्ठि० भ्रज०भंगो । देवासं णाग्यभंगो । णविरि मंखे०गुणविष्ण्ण जह० उक्क० स्यम० । श्रसुद्धिसादि मन्बद्धा ति संखे०भागविष्ण्ण जह० एयम०। जह० स्यम०, उक्क० बेममया । संखे०भागहा० मंखे०गुणविष्ण्ण जह० उक्क० स्यम०।

नहीं हैं। अनुदिशमे लेकर सर्वार्थीसद्धि तकके द्वामे सब परोका स्वामी कीत हैं ? अन्यतर जीव स्वामी हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

१३६७. कालानुगमकी अपंत्रा निर्देश दो प्रकारका है—अधि और आदेश। श्रोधसे संख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है। संख्यात भागहानि, संख्यात गुण्हानि और अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट वाल एक समय है। अथवा संख्यात भागहानिका उत्कृष्ट काल दो समय है। संख्यात गुण्वृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सोन समय है। अवस्थित पदका भंग भुजगारके समान है।

विशेषाथ—पहले भुजगारका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल चार समय बनला आये है उसी प्रकार यहाँ मंख्यान भागवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल चार समय घटिन कर लेना चाहिए। पहले अल्पनर और अवक्तव्य पदवा जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय बनला आये हैं उसी प्रकार यहाँ संख्यानभागहानि, मंख्यानगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय घटिन कर लेना चाहिए। बहाँ प्रकार।न्तरसे अल्पनर पदका उत्कृष्ट काल दो समय बनला आये है वहाँ यहाँ संख्यान भागहानिका उत्कृष्ट काल दो समय जानना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

\$ ३६८. आदेशमे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सनुष्य अपर्याप्त और भवनवासियोंसे लेकर नी प्रेवेयक तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। मनुष्यित्रकमें मंख्यानभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि धौर अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अथवा संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल हो समय है। अवस्थित पदका भंग भुजगारके समान है। देवोंमें नारिकयोंके समान भंग है। इननी विशेषता है कि मंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुदिशमें लेकर सर्वार्थिनिद्धितकके देवोंमें संख्यात भागवृद्धिका जघन्य अवन्य काल एक समय है अनुदिशमें लेकर सर्वार्थिनिद्धितकके देवोंमें संख्यात भागवृद्धिका जघन्य अवन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। संख्यात भागवृद्धिका

अविद्विदं जह० एयममत्रो, उक्क० समिद्विदी । एवं जाव० ।

६ ३९९. श्रंतराणु दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे०। श्रोघेण संखे०भागबहु-मंखे०गुगबह्वि० जह० एयम० मंखे०भागहा० संखे०गुणहा०-श्रवत्त० जह० श्रंतोमु०। अथवा मंखे०भागहा० जह० एयम०। उक्त० मध्वेमिमुबह्वपो० परियट्टं। अबिह्वि० जह० एयम०, उक्त० श्रंतोमु०।

४००. त्रादेसेण सन्त्रिणिय०-सन्त्रतिरिक्ख-मणुसत्रपञ्च० भाणादि जात्र एविमेवज्ञा ति भ्रज०भंगो । मणुमतिए भुज०भंगो । एविर संखे०गुणविङ्क-हाणि-स्रवत्त० जह० स्रंतामु०, उक्क० पुन्यकोडिवृधत्तं । देवगदिदेवा स्रणुहिमादि सन्बद्धा त्ति भुज०भंगो । एविरि संखेगुणविङ्कि० णत्थि स्रंतरं । एवं जाव० ।

४०१. गागाजीवेहि भंगविचयाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे०। श्रोघेण श्रवांद्व० गिय० श्रित्य । सेमपदा भयणिजा । भंगा २४३ । एवं चदुगदीसु । णवि भंगा जाणिय वत्तवा । मणुमश्रपक्ज० सव्वपदा भयणिक्जा । भंगा ८ । एवं जाव० ।

् ३१६. अन्तरानुषमका अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर आरंश। श्रोघसं संख्यातभागवृद्धि श्रीर संख्यात सागहानि, सख्यातभागवृद्धि श्रीर संख्यात सागहानि, सख्यातगुण हानि श्रीर अवक्षव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तमुहृते हैं अथवा संख्यात सागहानि का जघन्य अन्तर एक समय है और सबका उत्कृष्ट अन्तर उपार्थ पुद्रणल परिवर्तनप्रमाण है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहृते हैं।

१४०० स्रादेशसं स्व नारकी, मच नियंच, मनुष्य अपयीप्त स्रीर भवनवासियोसं लेकर नी मैंब्यक तकके देवामे भुजगारके समान भंग हैं। मनुष्यित्रकमें भुजगारके समान भंग हैं। इतनी विशेषता हैं कि संख्यातगुग्गबृद्धि, संख्यातगुग्गहानि और अवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्म क्रन्तमृहर्त हैं स्रोर उत्कृष्ट अन्तर पृवकोटिष्ट्यक्तवप्रमागा हैं। देवगतिमें सामान्य देव तथा अनुदिशसं लेकर सर्वार्थिसद्धि तकके देवां भुजगारके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संख्या गुण्युद्धिका अन्तरकाल नहीं हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ४०१ नाना जीवोका श्रवलम्बन लेकर भंगविचयानुगमकी अपेला निर्देश हो प्रकारका है—श्रोष श्रोर आदेश। श्रोषकी श्रविश्वत पद नियमसे हैं, शेष पद भजनीय हैं। भंग २४३ ह। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि भंग जानकर कहने चाहिए। भनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें सब पद भजनीय हैं। भंग आठ है। इसी प्रकार श्रन।हारक मार्गगा तक जानना चाहिए।

४०२. भागानागानुगमनी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ घोर आदश। श्रोयसे अवस्थित पदवाले जीव सब जीवोके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्त बहुभागप्रमाण है । मन्त्रपंचि विरिक्ख-मणुम-मणुमश्रपञ्ज०-देवा भवणादि जाव श्रवराजिदा ति श्रविद्धि श्रमखेडजा भागा । सेममसंवे वभागो । मणुमपडज०-मणुमिणिव-मन्बद्धदेवेसु श्रविद्धि संखेडजा भागा । सेसं संखे वभागो । एवं जाव ।

१०३. परिमाणाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण आदेसे० । श्रोघेण संखे०भाग-विह्न-हाणि० केति० ? श्रमंखेज्ञा । श्रविद्वि० केति० ? श्रणंता । मंखे०गुणविह्न-हाणि-श्रवत्त ० केति० ? संखेज्ञा । सव्यणिर०-मव्यतिरिक्ख-मणुसश्रपज्ञ०-भवणादि जाव णवगेवज्ञा ति भुज०भंगो । मणुसेसु सखे०भागहा०-श्रविद्वि० केति० ? श्रसंखेज्ञा । सेसपदा संखेज्ञा । मणुसपज्ञ०-मणुमिणी०मव्यद्वदेवेसु मव्यपदा मंखेज्ञा । देवगदिदेवा श्रणुहिसादि श्रवराजिदा ति भुज०भंगो । णविर संखे०गुण-विद्वि० केति० ? संखेज्ञा । एवं जाव० ।

६ ४०४. खेताणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण श्रविद्वि मञ्ज्ञतोगे । सेमपदा लोग० अमंखे०भागे । एवं तिग्विखा० । सेमगदीसु मञ्जपदा लोग० अमंखे० । एवं जाव० ।

शेष पदवाले जीव सब जीवोंके अनन्तवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार तिर्यञ्चामे जानना चाहिए। सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव श्रीर भवनवासियोसे लेकर श्रपराजित कल्पतकके द्वोंमे श्रविध्यत पदवाले जीव श्रसंख्यात बहुभाग प्रमाण है। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी श्रीर सर्वार्थसिद्धिके देवोंमे श्रविध्यत पदवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है। क्षेत्र श्रप पदवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है तथा शेष पदवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है तथा शेष पदवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ४०३ पिरमाणानुगमकी श्रपेता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोय श्रौर श्रादेश । श्रोपम संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागवृान पदवाले जीव किनने है ? श्रमंख्यात है । श्रवं स्थत पदवाले जीव किनने है ? श्रमंख्यात है । श्रवं स्थत पदवाले जीव किनने है ? संख्यातमुग्गवृद्धि, संख्यातमुग्गवृद्धि, संख्यातमुग्गवृद्धि, संख्यातमुग्गवृद्धि, संख्यातमुग्गवृद्धि, संख्यातमुग्गवान श्रीर श्रवन व्यासयांसे लेकर नो ग्रेवेयक तकके देवोका भंग भुजगारके समान है । मनुष्योम संख्यात भागवानि श्रीर श्रवस्थित पदवाले जीव कितने है ? श्रमंख्यात है । श्रीप पदवाले जीव संख्यात है । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्य पर्याप्त, सनुष्य स्वाप्त स्वाप्त

§ ४०४. च्रेत्रानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है— श्रोघ और आदेश। श्रोघसे अवस्थित पदवाले जीवोका कितना चेत्र है ? सर्व लोक चेत्र है। शेप पदवाले जीवोका चेत्र लोकके अमंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार तिर्यक्षोमे जानना चाहिए। शेप गतियोमें सब पदवाले जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१४०५. पोमणाणु० दृतिहो णि०—श्रोघे० त्रादेसे०। श्रोघेण संखे०भागविक्वि लोग० श्रसखे०भागो श्रद्ध-बारहचोदम० देखणा। मंग्वेज्जभागहाणि० लोग०
अमंखे०भागो श्रद्धचोदस० देखणा सन्वलोगो वा। श्रविद्वि मन्वलोगो। सेसपदा
लोग० श्रसंखे०भागो। मन्वणिरय०-सन्वितिष्क्ख०-मणुसश्रपञ्ज० भवणादि जाव
णवगेवज्ञा ति भुज०भंगो। मणुसतिए श्रुज०भंगो। णवि संखे०गुणविद्व-हाणि०
लोग० असंखे०भागो। देवगदिदेवा श्रणुद्दिमादि सन्वद्वा ति श्रुज०भंगो। णविरि
मंखे०गुणविद्व० लोग० श्रमंखे०भागो। एवं जाव०।

४०६. कालाणु० दृतिहो णि०—ओघेण आदेसे०। आघे० संखे०भागविहिहाणि० जह० एयम०, उक्क० आवित्वि० असंखे०भागो। अविदि० सन्त्रद्धा। सेसपद०
जह० एयस०, उक्क० मंखेजा समया। सन्विण्रिय०-सन्वितिरिक्ख०-मणुसअपज०
भवणादि जाव णवगेवजा ति अज०भंगो। मणुमतिए अज०भंगो। णविर संखे०गुणविह्निहिण्० जह० एगम०, उक्क० संखेजा समया। देवगदिदेवा अणुदिमादि सन्त्रहा
ति अज०भंगो। एविर मंखे०गुणविह्न० जह० एयस०, उक्क० संखेजा समया।

् ४०५. स्पर्शनानुगम की अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है— श्रोघ और आदेश। श्रोघसे संख्यातमागवृद्धि पदवाले जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है ? लोक के असंख्यातवें भाग-प्रमाण तथा असनाली के चेद्द भागों में से कुछ कम आठ और बारह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। संख्यात भागहानि पदवाले जीवोंने लोक के असंख्यातवें भागप्रमाण तथा अमनाली के चेद्द भागों में से कुछ कम आठ भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। अवस्थित पदवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। अवस्थित पदवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सव निर्यक्का मनुष्य अपयीत और भवनवासियोंसे लेकर नो प्रवेचयक तक के देवों में भुजगारके समान भंग है। मनुष्यित्रक में भुजगारके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि पदवाले जीवोंने लोक के असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि पदवाले देवोंने लोक के असंख्यात गुणवृद्धि पदवाले देवोंने लोक असंख्यात मागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि पदवाले देवोंने लोक असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

५ ४०६. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। श्रोघसे संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागवृद्धि श्रोर उत्कृष्ट काल श्राविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थित पदका काल सर्वदा है। शेष पदोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त श्रोर भवनवासियोंसे लेकर नौ मैवेयक तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। मनुष्यित्रकम भुजगारके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संख्यात समय है। देवगितमें सामान्य देव तथा अनुदिशसे लेकर सर्वार्थ सिद्धि तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि श्रोर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि पदका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात

एवं जाव० ।

४०७. श्रंतराणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे०। श्रोघेण संखेजनागविक्वि०-हाणि० जह० एयम०, उक्क० सत्तर्गादिदियाणि । श्रविद्वाणि णित्थ श्रंतरं ।
मंखे०गुणविद्वि०-श्रवत्त० जह० एयम०, उक्क० वासपुधत्तं । मंखे०गुणहाणि० जह०
एयम०, उक्क० छम्मासा । एवं मणुसतिए । णविर मणुमिणी० मंखे०गुणहाणि०
जह० एयसमश्रो, उक्क० वासपुधत्तं । मन्वर्णोरइय०-सन्वतिरिक्ख०-मणुसञ्चपज्ञ०
भवणादि जाव णवगेवजा त्ति भ्रज०भंगो । देवगइदेवा श्रणृहिसादि सन्बद्घा त्ति भ्रज०भंगो । एवं संखे०गुणविद्वि० जह० एयम०, उक्क० वासपुधत्तं । णविर मन्बद्घे
पित्तदो० मंख०भागो । एवं जाव० ।

🛚 ४०८. भावणुगमेण सन्वत्थ स्रोदहस्रो भावो ।

ः ४०९. ऋष्पाबहुगाणु० दुविहो णि०— ऋोघेण आदेसे० । ऋोघेण सन्वत्थो० अवत्त०पवे० । संखे०गुणवङ्किपवे० संखे०गुणा । संखे०गुणहाणिपवे० विवेसा० । संखे०भागहाणि० ऋसंखे०गुणा । संखे०भागवङ्कि० विसेसा० । ऋवद्वि० ऋणंतगुणा ।

६ ४१०. आदेसेण ऐरइय० सन्त्रतथो० संखे०भागहा । संखे०भागवहि० समय है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना बाहिए।

४०७. श्रन्तरानुगमकी श्रपेता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे मच्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात भागवानिका जघन्य श्रन्तर काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर मात दिन-रात हैं। श्रवस्थित पर हा श्रन्तर काल नहीं हैं। संख्यात गुण्यृद्धि श्रोर श्रवन्तर मात दिन-रात हैं। श्रवस्थित पर हा श्रन्तर काल नहीं हैं। संख्यात गुण्यृद्धि श्रोर श्रवन्तर पर वर्षप्रथकत्वप्रमाण हैं। संख्यात गुण्यातिनपदका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षप्रथकत्वप्रमाण है। इसीप्रकार मनुष्यित्रकमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यित्रियोमें संख्यात गुण्यानिका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षप्रथकत्वप्रमाण है। सब नारकी, सब तिर्यक्ष मनुष्य श्रप्यात श्रोर भवनवासियोंसे लेकर नौ प्रवेयकत्तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। देवगितमें सामान्य देव तथा श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संख्यात गुण्युद्धिका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षप्रथकत्वप्रमाण है। इतनी विशेषता श्रोर है कि सर्वार्थसिद्धिमें पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

६ ४०८. भावानुगमको अपेत्ता सर्वत्र श्रीर्पिक भाव है।

४०६. ऋल्पबहुत्वानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—आंघ श्रीर श्रादेश। श्रोधसे श्रवक्तव्य पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात गुणवृद्धि पदके प्रवेशक जीव संख्यातगुणों हैं। उनसे संख्यातगुणों हैं। उनसे संख्यातगुणों हैं। उनसे संख्यात गुणहानि पदके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे संख्यात भागहानि पदके प्रवेशक जीव श्राप श्री हैं। उनसे संख्यातभागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे श्रवेशक जीव श्री श्री हैं।

१ ४१०. आदेशसे नारिकयोंमें संख्यात भागहानि पदके प्रवेशक जीव सबसे थोड़े हैं।

विसे० । अवद्वि० अमंखे०गुणा । एवं मन्वर्णेग्ड्य०-पंचिदियतिश्विस्वतिय३-भवणादि जाव णवगेवजा ति । तिरिक्खेसु सन्वत्थो० संखे०भागहाणि० । संखे०भागविद्वि० विसेपा० । अवद्वि०पवे० अर्णतगुणा । पंचि०तिश्विस्वअपज्ञ०-मणुसअपज्ञ० सन्वत्थो० संखे०भागहाणिपवे० । अवद्वि०पवे० असंखे०गुणा ।

ह ४१२. देवेसु मन्बत्थो० संखे०गुणबह्निपवे०। संखे०भागहाणिपवे० असंखे०-गुणा। संखे०भागबङ्गिपवे० विसेसा०। अबद्धि०पवे० असंखे०गुणा। अणुदिमादि सन्बद्धा त्ति सन्बत्थोबा संखे०गुणबङ्गिपवे०। संखे०भागबङ्गिपवे० विसेषा०। सखे०-भागहा०पवे० असंखे०गुणा। अबद्धि०पवे० असंखे०गुणा। एपबिर सन्बद्ध संखेअगुणं कायन्वं। एव जाव०।

एवमेदेमु भुजगारादिश्रिणियोगहारेसु विहासिदेसु तर्रा 'कदि च पविस्मति कस्म आविलयं' ति पदं समर्च ।

उनसं संख्यात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव विरोष ऋषिक है। उनसं व्यक्तित पदक प्रवेशक जीव असंख्यात गुणे है। इसीप्रकार सब नारकी, पञ्जेन्द्रिय तिर्याचिक तथा भवनवासियोसे लेकर नी प्रवेशक तकके देवांसे जानना चाहिए। तिर्यञ्जोमे संख्यात भागहानि पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक है। उनसे संख्यात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीत विरोष ऋषिक है। उनसं अवस्थित पदके प्रवेशक जीव आनन्तगुणे है। पंचेन्द्रिय तिर्यच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकों में संख्यात भागहानि पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक है। उनसं अवस्थित पदके प्रवेशक जीव असंख्यात गुणे हैं।

४११. मनुष्योमें श्रवक्तव्य पदके प्रवेशक जीव सबसे रतीक है। उनसे संख्यात गुणवृद्धि पदके प्रवेशक जीव रंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणवृद्धि पदके प्रवेशक जीव रंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणवृद्धि पदके प्रवेशक जीव श्रिक्ष पदके प्रवेशक जीव साम्बद्धात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे स्रवेशक जीव श्रासंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवेशक जीव श्रासंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवेशक जीव श्रासंख्यातगुणे हैं। इनीप्रकार मनुष्य पर्योप्त श्रोर मनुष्यित्योमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणा करना चाहिए।

६ ४१२ देशोम संख्यात गुणवृद्धि पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक है। उनमे संख्यात भागहाति पदके प्रवेशक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव विशेष श्रिष्ठि है। उनसे श्रविशय पदके प्रवेशक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। श्रवृद्धिम लेकर सर्वार्थिक्षिद्ध तकके देवामे संख्यात गुणवृद्धि पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव विशेष श्रविशक है। उनसे संख्यात भागवाति पदके प्रवेशक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रविशयत पदके प्रवेशक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रविशयत पदके प्रवेशक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रविशयत पदके प्रवेशक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे विशेषता है कि सर्वार्थिक्षिद्धमें सख्यातगुणा करना चाहिए। इस प्रकार श्रवादारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इम प्रकार इन भुजगार ऋादि ऋनुयोगद्वारोंका व्याख्यान करने पर 'निद् च पविस्मृति कस्स ऋावित्यं' इस पदका व्याख्यान समाप्त हुआ।

🛞 'खेत - भव - काल - पांग्गल - हिदिविवागोदयखयां दु' त्ति एदस्स विहासा ।

४१३. एचो एदम्म गाहापच्छिमद्भम पनावसरा परूवणा कायव्या चि पडण्णावक्रमेदं । संपिंह एदम्स गाहापच्छद्धस्म ममुदायत्थे श्रणवगये तिव्यसया विहासा पयष्टदि चि तप्पस्वराष्ट्रमुचरसुचनाह—

क्ष तम्मोदयो खेल-भय-काल-पाग्गल हिदिविवागोदयक्ष्वश्रा अविद। १४१८ कम्मेण उद्यो कम्मादयो । अपक्षपाचणाए विणा जहाकालजिएदो कम्माएं हिदिक्खएण जो विवागो सो कम्मोदयो ति भण्णदे । सो वृण खेल-भव-काल-पोग्गलहिदिविवागोदयख्यो ति एदस्स गाहापच्छद्धस्म ममुदायत्थो भविद । कृदो ? खेल-भव-काल-पोग्गले अस्सिऊण जो हिदिक्खयो उदिण्णफलकम्मक्खध्यप्रिम्मडणलक्खणो सोदयो ति सुत्तत्थावलंबणादो । तदो कम्मोदशो 'दृ' महेण सचिदा-मेयविसेमपरूत्रणो एदिम्म गाहापच्छिमद्धिम णिलीणो इदाणि विदामियव्वो ति एयो एदस्म चुण्णिसुत्तस्म भावत्थो । सो च कम्मोदयो पयिड-हिदि-प्रणुभाग-पदेस-विमयत्तेण चउच्विहो । तत्थेह ताव पयिडउद्ग्रण पयदं, पयिडउद्ग्रणाणांत्रमेदस्म परूवणाजोगत्तादो । जह एवं, कम्मोदयस्म अत्थविहामा किमद्रमेत्य सुत्त्यारेण ण

^{* &#}x27;क्षेत्र, भव, काल ख्रोर पुद्गलको निमित्त कर स्थितिविषाकसे उदयक्षय होता है' इसका विशेष व्याख्यान करना चाहिए।

१४८२ त्रागे इस गाथाके उत्तरार्धका त्रवसर प्राप्त कथन करना चाहिए इस प्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है। ऋब इस गाथाके उत्तरार्धका समुद्दायार्थ ऋवगत होने पर तद्विपयक विशेष व्याच्यान प्रवृत्त होता है, इसलिस उसका कथन करनेक लिए आगे का सूत्र कहते हैं--

अ वर्मोंका उज्य क्षेत्र, मद, काल त्र्योग पृद्शलको निमित्त कर स्थितिविषाकमे उदयक्त-रूप होता है ।

४/४. कर्मकपसे उद्यक्त नाम कर्मोद्य है। अपक्वपाचनके बिना कर्मोंका स्थितिचय-से जो यया राजर्जनित विपाक होता है वह कर्मोद्य कहा जाता है। परन्तु वह 'चेत्र, भव, काल और पहलको निमित्त कर स्थितिविपाकसे उद्यक्त्यक्तप है।' इस प्रकार गाथाके इस उत्तर्गर्थका नमुदायार्थ है, क्यों क चेत्र, भव, काल और पुहलको आश्रय कर उदीर्ग फल कर्म रकन्यका परिशानन लचाग जा स्थितिचय हाता है वह उद्य ह, इस प्रकार सूत्रक अर्थका अवलम्बन लिया है। इसिलए गाथाके अन्तमे आये हुए 'नु' शहरण सूचित अथाय पिणपोका कथन करनेक्य जा कर्मोद्य गाथाके इस उत्तरार्थमें लीन है उसका इस समय व्याक्यान करना चाहिए इसश्कार यह इस जुलिसूत्रका भावाथ है। वह कर्मोद्य प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशको विपय करनेवाला होनसे चार प्रकारका है। उनमेसे यहाँ पर प्रकृति उद्य प्रकृत ह, क्योंकि प्रकृति उद्दिरणांके बाद यह प्रकृतणायोग्य है।

शंका-यदि ऐसा है तो यहा पर स्वकारने कर्मोदयशी अर्थविभाषा क्यो नहीं की ?

कीरिद ति णासंक्रणिजं, उदीरणादो चेव कम्मोदयस्स वि गयत्थत्तादो । ण च उदयादो उदीरणा एयंतेण पुधमुदा अत्थि, उदयितसेसस्सेत्र उदीरणात्रवएमादो । तदो उदीरणाए पक्षविदाए एमो वि पक्षविदो चेव । जो च थोवयरो विसेमो एत्थ वि वक्खाणकारएहिं वक्खाणेयव्वो ति एदेणाहिष्पाएण कम्मोदयो एत्थ सुत्त्यारेण ण वित्थारिदो । अत्थसमप्पणामेत्तं चेत्र कयं, तदो एदं चेव देमामामयवयणमस्सिद्ण कम्मोदयो एत्थ विहासियव्वो । एतं कम्मोदय विहासिए पढमगाहाए अत्था समत्तो होह ।

🕸 को कदमाए हिदीए पवेसगा त्ति पदस्स हिदिउदीरणा कायव्वा ।

ः ४१५. पयिष्ठउदीरणाणंतरमेत्तो द्विदिउदीरणा कायव्या, पत्तावसरतादो । सा वृण द्विदिउदीरणा विदियगाहाए पढमपादे णिबद्धा ति जाणावणहमेदं सुत्तमोइण्णं 'का कदमाए द्विदीए पवेसगो ति ।'

४४६. एदस्स पदस्स अत्थो द्विदिउदीरणाए ति तदो एदं बीजपद द्विदि-उदीरणामामन्त्रिसयपुच्छामुहेण पयद्वमस्मिऊण द्विदिउदीरणा विद्वासियव्वा ति एसो एदस्स भावत्थो । सा च द्विदिउदीरणा मृत्तुत्तरपयिविवसयभेद्रृण दुविहा होदि ति जाणावणद्वमुत्तरसुत्तमाह—

समाधान—ऐसी श्राशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उदीरणासे ही कर्मोदयक श्रर्थका भी ज्ञान हो जाता है।

यदि कहा जाय कि उद्यक्षे उदीरणा एकान्तसे प्रथम्भूत है सो भी बात नहीं है, क्योंकि उद्यक्तिंपकी ही उदीरणा मंज्ञा है। इसिलए उदीरणाका कथन करने पर उदयका भी कथन हो ही गया। खोर जो थोड़ी-सा विशेषता है सो उभका यहाँ पर भी ज्याक्यानकारकोंको ज्याख्यान करना चाहिए इसप्रकार इस खामिप्रायसे कमेंदियक ज्याख्यानका यहा पर सूत्रकारन विस्तार नहा किया, अर्थका समर्पण्मात्र किया। इसिलए इसी देशामर्षक वचनका आश्रय कर कमोदयका यहाँ पर ज्याख्यान करने पर प्रथम गाथाका खर्थ समाप्त होता है।

* 'कान जीव किम स्थितिमें प्रवेशक हैं' इस पदका आश्रय लेकर स्थिति उदीरणा करनी चाहिए।

§ ४१६. इस पदका श्रर्थ स्थिति उदीरणासे सम्बन्ध रखता है, इसलिए स्थिति उदीरणाके स्वामित्वविषयक पृच्छाके द्वारा प्रवृत्त हुए इस बीजपदका श्राश्रय कर रिथिति उदीरणाका व्याख्यान करना चाहिए। या इसका भावार्य हैं। श्रार वह स्थिति उदीरणा मृलप्रकृति श्रीर उत्तरप्रकृतिक्य विषय भावार्य हैं। श्रार वह स्थिति उदीरणा मृलप्रकृति श्रीर

एश्य द्विविचवीरणा दुविहा—मृत्तपयिष्ठिद्विवदीरणा उत्तरपयिष्ठि-द्विविचवीरणा च ।

४१७. एत्थ एदम्मि द्विदिउदीरणापरूत्रणात्रमरे म्लपयिडिहिदिउदीरणा उत्तरपयिडिहिदिउदीरणा चेदि दुविहा चेत्र द्विदिउदीरणा होइ, तद्भयवदिरेगेण हिदि-उदीरणाए पयारंतरामंभवादो । एवं दुवियप्पाए द्विदिउदीरणाए ऋणियोगद्दारेहि विणा परूत्रणा ण संभवदि ति तविवसयाणमिणियोगद्दाराणमुत्रण्णासो कीरदे ।

क्ष तत्थ इमाणि अणियोगद्वाराणि । तं जहा—पमाणापुगमां सामित्तं कालो अंतरं णाणाजीवेहि भंगविचयों कालो अंतरं सण्णियासी अप्पाबहुअं भुजयारो पदणिक्षेवो वहीं हाणाणि च ।

\$ ४ ८ एत्थ सुगमत्त दो श्रणुवइद्वागं मन्त-णोसन्व-उक्कम्माणुक्कम्य-जहण्णा-जहण्ण-माद्विश्वणाद-भुव-अद्भुवाणियोगद्दाराणमद्वाच्छेदाणतर्राणदृशिरिद्दाणं भागाभाग-परिमाण-खेत्त-पोनणाणं च मगविचयागंतरणिदेभजोग्गागं भागाणुगमम्स च मंगहां कायन्वो । ए च एदेमिर्माणयोगद्दाराणं गाहामुत्ते णिवध्यां णान्ध्य ति आमंकाणिञ्ज, 'मांतर-णिरंतरं वा०' इच्चेदेण गाहापच्छद्धेण स्चित्त्तादो । तदो मृलपर्यः द्विदिउदीर-णाए सिएण्यासेण विणा तेतीसमणियोगद्दाराणि भुजगार-पद्णिक्स्वेय-प्रदृत्विद्वाणाणि च उत्तरपयिद्विद्विदिदिरीरणाए बुण मण्णियासेण सह चउवीममणियोगद्दाराणि संपुण्याणि

* पहाँ म्थितिउदीरणा दां प्रकारका है— मृलप्रकृति स्थितिउदीरणा और उत्तरप्रकृति स्थितिउदीरणा।

४१७. यहा इस स्थितिउदीरणाकं कथनकं आवसर पर मूलप्रकृति रिथातिउदीरणा श्रोर उत्तरप्रकृति स्थितिउदीरणा यह दो प्रश्नारकी ही स्थितिउदीरणा है, क्योंकि इन दोनोसे भिन्न रिथातिउदीरणाका प्रकारान्तर श्रमम्भव हैं। इसप्रकार दा प्रकारकी स्थितिउदीरणाका श्रनुयोग-द्वारोके बिना कथन सम्भव नहीं हैं, इसलिए तद्विपयक श्रनुयोगद्वारोका उपस्यत्म करन हैं—

* उसमें ये अनुयोगद्वार हैं। यथा—प्रमाणानुगम, स्वामित्व, काल, अन्तर, नाना जीवांकी अपेत्ता मंगविचय, काल, अन्तर, मिककर्प, अरुपवहृत्व, अजगार, पदिनिक्षेप, वृद्धि और स्थान।

६४९८ यहा पर सुगम होनेसे नहीं कहे गयं तथा अद्धाच्छेदके अनन्तर निर्देश योग्य ऐसे सर्व, नोमर्व, उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जयन्य, अजवन्य, सादि, अनादि, ध्रुव, और अध्रुव अनुन्यागद्वारोका नथा भंगविचयके बाद निर्देश योग्य भागाभाग, परिमाण, चेत्र छोर स्पर्शन अनुयोगद्वारोका तथा भागानुगमका संबह करना चाित्य । इन अनुयोगद्वारोका गाथाम् त्रमें संबह नहीं है ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि 'सातर-णिरंतर वा' इसप्रकार इस गाथाक उत्तरार्थके द्वारा इनका सचन हुआ है । इस्पिल्य मृत्यकृति रिथित प्रदीरणामें सिन्नकष्के बिना तर्झम अनुयागद्वार तथा सुजगार, पदिनचेत्र, बृद्धि और स्थान य अनुयागद्वार होते तथा उत्तरप्रकृति स्थित प्रदीरणाम नो सिन्नकर्षके साथ पूर्व योगीस अनुयोगद्वार तथा सुजगार,

भुजगार-पदिणक्खेत्र-बिहु-द्वाणाणि चेदि एमी एदस्स सुत्तस्य भावत्थी ।

अ एदेसु अणियागदारेसु विहासिदेसु 'को कदमाए द्विदोए पवेसगी' ति पदं समत्तं।

४१९. मंपिह मंदबुद्धिजणाणुगहहुमेदेण ममिष्पदत्थपस्वरामुचारसाइग्यो-वएमवलेण पयामइस्मामो । तं जहा—द्विदिउदीरसा दुविहा—मृलपयिडिद्विदिउदीरसा उत्तरपयिडिद्विदिउदीरसा च । मृलपयिडिद्विदिउदीरसाए ताव पयदं । तन्थ इमाणि तेवीममिणियोगदाराणि सादव्वासि भवंति पमाणाणुगमो जाव अप्यावहुए ति भुज० पद्मा० बह्वीद्वाणाणि च ।

४२०. तत्थ पमाणाणु० दुविहं — जह० उक० । उक० पयदं । दुविहो णिहं मी — ओघेण आदंसेण य । ओघेण मोह० उक० द्विदिउदीरणा मत्तरिमागरीवम-कोडाकोडी स्रो दोहिं स्रावित्याहिं ऊणास्रो । एवं चदुगदीसु । णवरि पंचिदियतिरिक्ख-स्रपञ्ज०-मणुमस्रपञ्ज० मोह० उक० द्विदिउदीरणा मत्तरिमागरी०कोडाकोडी स्रो स्रतीमृहृत्तृणाओ । आणदादि सन्बद्घा ति मोह० उक० द्विदिउदी० स्रांतकोडाकोडी स्रो। एवं जाव० ।

पदिनित्तेष, वृद्धि त्योर स्थान ये अनुयोगद्वार होते हैं यह इस सुत्रका भावार्थ है।

ॐ इन अनुयोगडारोंका व्याक्यान करने पर 'कॉन किस स्थितिमें प्रवेशक है'
यह पद समाप्त हुआ।

१४ ६. अब मन्दवृद्धि जनोंके अनुप्रहके लिए इसके द्वारा समार्पत अर्थका कथन उच्चारणाचार्यके उपदेशके बलसे प्रकाशित करेंगे। यथा—स्थितिउदीरणा दा प्रकारकी है मूलप्रकृति स्थितिउदीरणा और उत्तरप्रकृति स्थितिउदीरणा। सर्व प्रथम मूजप्रकृतिस्थितिउदीरणा प्रकृत है। उसमें ये तेईस अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं—प्रमाणानुगमसे लेकर अल्पबहुत्व तक तथा भूजगार, पद्विचेप, वृद्धि और स्थान।

४२०. उसमेसं प्रमाणानुगम दो प्रकारका है—जघन्य श्रीर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—श्राघ श्रीर श्रादेश । श्राघसे मोडनीयकी उत्कृष्ट स्थिति उदारणा दो श्राविल कम सत्तार कोड़ाकोड़ी सागरीपम होती है । इसीप्रकार चारों गतियोमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पश्चिन्द्रिय तिर्यब्ध श्रपयीप्त श्रीर मनुष्य श्रपयीप्तकोंमें मोहनीय की उत्कृष्ट स्थिति उदीरणा श्रान्तर्भृह तेकम सत्तार कोड़ाकाड़ी सागरीपम हातो ह । श्रान्त कल्पसे लेकर सर्वार्थी सिव्यक्त द्वोमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणा श्रान्तः कोड़ाकोड़ा प्रमाण होती है । इसीप्रकार सनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ — माहनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होने पर बन्धावितके वाद उदयावित से उपाितन निषेकोंकी उदीरणा हानेपर वह दो आवित कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरीपम प्राप्त होती है। शेप कथन सुगम है।

६ ४२१. जहण्णए पयदं । दुविहो णि•-- ओघेण आदेसे० । श्रोघेण मोह० जह० द्विदिउदीरणा एया द्विदी सभयाहियावित्यकालद्विदिया । एवं मणुसितए । आदेसेण ऐरइय० मोह० जह० द्विदिउदीरणा सागरोवमसहस्सस्स सत्तसत्तभागा पिलदो० संखेभागेण ऊणिया । एवं पढमपुढवि०-देवा भवण०-वाणवेंतर० । सेम-मग्गणासु द्विदिविद्वित्तभंगो । एवरि उदीरणालावो कायव्वो ।

४२२. मव्वउदीरणा-णोसव्वउदीरणाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे०। श्रोघेण सव्वाश्रो हिदीश्रो उदीरेमाणस्म सव्वहिदिउदीरणा। तद्णं णोसव्वहिदि-उदीरणा। एवं जाव०।

ः ४२३. उक्क०द्विदिउदी०-श्रणुक्क०द्विदिउदीग्णाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण त्रादेसेण य । ओघेण सन्वुक्किमयं द्विदिमुदीरेमाणस्स उक्क० द्विदिउदी० । तद्णमणुक्क०-द्विदिउदीग्णा । एवं जाव० ।

\$ ४२१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है— ब्रोघ श्रीर श्रादेश। ब्रोघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक समय श्रिधिक एक श्रावित काल स्थितिवाली एक स्थिति है। इसीप्रकार मनुष्यितिकमें जानना चाहिए। श्रादेशसे नारिकयोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक इजार सागरके सान भागोमेसे पल्यका संख्यातवाँ भाग कम सात भागप्रमाण है। इसी प्रकार प्रथम पृथिवी, सामान्य देव, भवनवासी श्रीर व्यन्तर देवोमें जानना चाहिए। शेष मार्गणाश्रोमें स्थितिविभक्तिक समान भंग है। इतनी विशेषता है कि स्थितिसत्त्वके स्थानमें स्थितिउदीरणा कहनी चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ पर सामान्यसे मोहनीयकी जघन्य स्थित उदीरणा एक समय श्रिषिक एक श्रावांल काल स्थितवाली एक स्थित कही है सो सपक सूस्मसांपरायिकके संज्वलन सूस्म लोभकी जब श्रिष्ठस्त स्थित एक समय श्रिक एक श्रावांलिशमाण शेप रहती है तब यह जघन्य स्थितिउदीरणा प्राप्त होती है। मनुष्यित्रकमें श्रोघ प्ररूपणा श्रिविक्त बन जानेसे उसे श्रोवके समान जाननेकी सूचना की है। सामान्य नारकी, प्रथम पृथिवीक नारकी, सामान्य देव, भवनवामी श्रोर व्यन्तरोंने श्रासंबी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीव मरकर उत्पन्न हो सकते है, इसालए इन मार्गणात्रोंने श्रासंबी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोके मोहनीय सम्बन्धी जघन्य स्थितिस्वको ध्यानमें रखकर जघन्य स्थितिउदीरणाका प्रमाण कहा है। प्रमाणका उल्लेख मुलमें किया ही है। शेप कथन स्पष्ट है।

§ ४२२. सर्वउदीरणा और नोसर्वउदीरणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। ओघसे सब स्थितियोंकी उदीरणा करनेवालेके सर्विध्यितउदीरणा होती है और उससे न्यून स्थितियोंकी उदीरणा करनेवालेके नोसर्वस्थितिउदीरणा होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

९ ४२३. उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रीच श्रीर श्रादेश । श्रोघसे सर्वोत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवालेके उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है श्रीर उससे न्यून स्थितिकी उदीरणा करनेवालेके श्रनुत्कृष्ट स्थिति-उदीरणा होती है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। १४२४. जह०उदीर०-अजह०हिदि०-उदीरणाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण आदेसे०। योघेण मन्यजहाण्णयद्विदिमुदीरेनाणयस्य जह० हिदिउदीरणा। तदो उत्तरिमजह०हिदिउदीरणा। एवं जाव०।

१४२४. सादि०-अणादि०-धुव०-अद्धुवाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण आदेसे०। श्रोघेण मोह० उक्क० अणुक्क० जह० किं सादि० ४ १ सादि-अद्धुवा। श्रजह०द्विदि- उदीर० किं सादि० ४ १ मादि० अणादि० धुवा अद्धुवा वा। सेसगदीमु उक्क० अणुक्क० जह० अजह० मादि-अद्धुवा। एवं जाव०।

४२६. मामित्ताणुगमं दृतिहं—जह० उक्त०। उक्तस्से पयदं। दृतिहो णि०— श्रोधेण श्रादेसे०। श्रोधेण मोह० उक्त०द्विदिउदी० कम्म ? श्रण्णद० उक्तम्मद्विदिं बंधिदृणाविनयदिदिस्म । एवं चदुसु गदीसु । सावि पंचिठितिम्बिश्वश्रपञ्च०-मणुम-

१४२४. जघन्य स्थितिउदीरमा श्रीर श्रजवन्य स्थितिउदीरमानुगमकी श्रपेद्धा निर्देश हैं। प्रकारका हैं—श्रीघ श्रीर श्रादेश। श्रीघसे सबसे जघन्य स्थितिकी उदीरमा करनेवाले जीवके जघन्य स्थितिउदीरमा होती हैं। उससे ऊपर श्रजघन्य स्थितिउदीरमा होती हैं। इसीप्रकार श्रजघन्य स्थितिउदीरमा होती हैं।

१२२१ सादि, अनिदि, भूव और अध्वातुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है— श्रीय श्रीर आदेश । श्रीयम मोहनीयकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट श्रीर जयन्य स्थितिउदीरणा क्या सादि है, अनिदि है, भूव है या श्रभ्रुव है । सादि आग्र श्रभ्रुव है । अजधन्य स्थितिउदीरणा क्या मादि है, अनिदि हे, भूव है या श्रभ्रुव है । सादि, अनिदि, भूव श्रीर श्रभ्रुव है । शेष गितयोमे उत्कृष्ट, श्रनुत्कृष्ट, जयन्य श्रीर अजधन्य स्थितिउदीरणा सादि श्रीर अध्रुव है । इनीप्रकार अनुहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ— उन्कृष्ट स्थिति उर्रारणा पुनः पुनः प्राप्त हो सकती है, इ शिनए उन्कृष्ट स्रोर स्र मुद्दुक्ष्ट स्थिति उर्रारणा में श्रमादि और श्रम व ये दो विकल्प नहीं वन सकते। यही कारण है कि इन दोनों प्रकारकी उदीरणास्रोंको सादि श्रोर अश्रम व यहा है। जवन्य रिथिति उर्दारणा उपशासक या जपकके होती है, इसिलए इसे भी सादि और श्रम्भ कश्रम है। किन्तु इसके पूर्व अजन्य स्थिति उर्दारणा अनिद है, उश्शासक के जवन्य स्थिति उर्दारणा के बाद सादि है, तथा सब्योंसे अश्रम और अश्रम और अश्रम की स्थिति उर्दारणा के बाद सादि है, तथा सब्योंसे अश्रम और अश्रम की स्थिति उर्दारणा सादि श्रीर अश्रम कही है। यह स्थाय स्थाय स्थाय स्थाय स्थाय स्थाय स्थाय स्थाय की स्थाय स्थाय

१४२६. स्वामित्वानुगम दो प्रकारका है—जघन्य छोर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—छोघ और आदेश । श्रे घसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी कोन है ? उत्कृष्ट स्थिति बाँघनेके बाद जिसे एक आवित काल गया है ऐसा अन्यतर जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामा है । इसीप्रकार चारो गानयोम जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्च अपयोप्त और मनुष्य अपयोप्त कोंमें मोह-

अपञ्च० मोह० उक्क०हिदिउदी० कस्स ? अण्णद० मणुसो वा मणुसिणी वा पंचि०तिरिक्खजोणिय्रो वा उक्कस्सिहिदिं बंधिद्ण अंतोम्रहुत्तहिदिधादमकाऊण अपञ०
उत्रभण्णो तस्म पढमसम्यउत्रभण्णत्त्वयस्स । आण्यदादि णवगेत्रज्ञा ति मोह० उक्क०
हिदि०उदीर० कस्म ? अण्णद० द्व्यत्तिंगिणो तप्पाश्रोग्गुक्कस्मिहिदिसं १० पढमसमयउत्रभण्णत्त्वयस्स । अणुिह्मादि सव्यद्घा ति मोह० उक्क०हिदिउदी• कस्म ? अण्णद०
जो संजदो तप्पाश्रोग्गउक्क०हिदिमंत० पढमममय उत्रभण्णो तस्म उक्क०हिदिउदीरणा।
एवं जात्र।

ः ४२७. जह० पयदं । दुविहो णि० — त्रोघेण आदेसे० । त्रोघेण मोह० जह० द्विदिउदी० कस्स ? अण्णद० उवसामगस्य वा खवगस्स वा समयाहियावितय-उदीरेमाणस्स । एवं मणुमतिए ।

ः ४२८. त्रादेसेण रोरइय० मोह० जह० द्विदि०उदी० कस्म ? ऋण्णद० ऋसण्णिपच्छायददुसमयाहियावित्यउववण्णल्लयस्स । एवं पढनाए देवा भवण०-वाणवें० । विदियादि जाव छद्वि त्ति मोह० जह०द्विदिउदी० कस्स ? अण्णद० दीहाए ऋाउद्विदीए उवविज्ञऊण अंतोम्रहृत्तेरा सम्मत्तं पडिविज्ञय अणंताणु०चउक्कं० विसंजो-

नीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी कीन है ? जो मनुष्य, मनुष्यिनी या पठचेन्द्रिय तिर्यंव योनिवाला श्रन्यतर जीव उत्कृष्ट स्थिति बाँधकर रिथितिघान किये विना श्रन्तर्मुहूर्तमें श्रपर्याप्तकों में उत्पन्न हुत्रा वह जीव उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी है। श्रानत कल्पसे लेकर नो ग्रैवेयक तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी कीन है ? तत्त्रायोग्य उत्कृष्ट स्थिति सत्कर्मवाला श्रन्यतर जो द्रव्यिलिंगी मरकर उक्त देवोंमें उत्पन्न हुत्रा वह उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका स्वामी है। श्रनुदिशस लेकर सर्वाथिसिद्ध तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका स्वामी कीन है ? तत्त्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितियक्षित्र लोक मंग्रस्य माहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी उत्पन्न हुत्रा, वह उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

\$ ४२७. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी कीन है ? उपशामक या चपक जो श्रन्यतर जीव एक समय श्रिधिक श्राविलिप्रमाण स्थितिके रहनेपर उदीरणा कर रहा है वह मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी है। इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए।

§ ४२८. त्रादेशसे भोहनीयकी जघन्य स्थिति उदीरणाका स्वामी कीन है ? त्रान्यतर जो त्रासंझी मरकर नरकमें उत्पन्न हुन्ना है और जिसे वहाँ उत्पन्न हुए दो समय अधिक एक आवित हो गया है वह मोहनीयकी जघन्य स्थिति उदीरणाका स्वामी है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीके नारकी, सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारिकयोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति उदीरणाका स्वामी कीन है ? अन्यतर जो दीर्घ आयुस्थितिके साथ उत्पन्न होकर, अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त होकर और

एद्गा तत्थ य भविद्विदिमणुपालिय चिरमसमयणिप्पिडमाणयस्य । एवं जोदिमि० । सत्तमाए एवं चेव । णविष् तत्य सर्विद्विदमणुपालेऊण थोवावसेसे जीविद्व्वए ति मिच्छत्तं गदो जाव सर्कं तार संतकम्मस्य हेट्ठा विधिऊण समद्विदियं वा बंधिऊण संतकम्मं बोलेदण वा आविलियादीदस्स तम्म जह० द्विदिउदीरणा ।

४२९. तिग्विसेस मोह० जह०डिदिउदी० कम्म ? अण्णद० वादरेइंदियसस हदसमुष्पत्तियस्म जाव मवः ताव मंतकम्मम्म हेट्ठा वंधिऊण समिद्विदियं वा बंधिद्ण संतकम्मं बोलेद्ण वा आवित्यादीदम्म तस्म जह० द्विदिउदीर०। मन्वपंचिदिय-तिरिक्ख-मणुमश्रपञ्ज० मोह० जहण्णद्विदिउदी० कम्म ? अण्णद० वादरेइंदियपच्छा० हदसमुष्पत्ति० आवित्यउववण्णो तस्म जह० द्विदिउदी०। मोहम्मादि जाव मन्बद्वे त्ति मोह० जह० द्विदिउदीर० कम्म ? अण्णद० खइयसम्माइट्ठि० उवममसेदिपच्छाय० दीहाए आउद्विदीए उवविज्ञछण चिरमममयणिष्पिडमाणयम्म तम्म जह० द्विदिउदी०। एवं जार०।

ः ४३०. कालाणुगमं दुविहं---जह० उक्त० । उक्तस्से पयदं । दुविही णि०---त्रोघेण त्रादेसेण य । त्रोघेण मोह० उक्त०द्विदिउदीर० जह० एयसमत्री, उक्त०

स्रान्तानुबन्धीचतुष्ककौ विसंयोजना करके उसी श्रवस्थामें भवस्थितिका पालन कर जब स्रान्तिम समयमें वहाँसे निकलने पाला टोना हैं तब मोहनीय की जघन्य रिथिति उदीरणाका स्वामी हैं। इसीप्रकार ज्योतिषी देवोमें स्वामित्व हैं। पानवी पृथिवीमें इसीप्रकार हैं। इतनी विशेषता हैं कि वहाँ भवस्थितिका पालन कर जीवितव्यके स्तोक शेष रहनेपर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ और जब तक शक्य है तब तक सत्कर्मसे कम या समान रिथितिका बन्च कर सत्कर्मको बिताते हुए जब एक आवित काल चला जाता है तब वह जयन्य रिथिति उदीरणाका स्वामी है।

१४२६. तिर्यञ्चोमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी कोन है ? जो हत समुत्विक अन्यतर बादर ए.केन्द्रिय जीव जब तक शक्य है तब नक सत्कर्मसे वम या समान स्थितिको बॉधकर सत्कर्मको बिनात हुए जब एक आविल काल चला जाता है तब वह मोहनीयकी जघन्य रिथितउदीरणाका स्वामी है। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चो और मनुष्य अपर्याप्तकोमे मोहनीयकी जवन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी कौन ह ? जिस हतसमुत्पत्तिक जीवको बादर ए.केन्द्रियोमेसे आकर यहा उत्पन्न हुए एक आविल हुआ है वह अन्यतर जीव मोहनीयकी जवन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी है। सौधर्म कल्पसे लेकर सबीर्यसिद्धितक देवोमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी कौन है ? अन्यतर जा चायिक मन्यग्टि जीव उपशमश्रेणिसे आकर दीर्घ आयुस्थितिवाले देवोमे उत्पन्न होकर जब वहाँसे निकलनेके अन्तिम समयमे स्थित होता है तब वह मोहनीय शे जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

६ ४३०. कालानुगम दो प्रकारका ६—जघन्क श्रीर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश । श्राघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका

श्रंतोमु० । श्रणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० श्ररणंतकालमसंखेजा पोग्गलपरियद्वा । एवं तिरिक्खार्ण । णवरि श्रणुक्क० जह० एयस० ।

४३१. **त्रादेसेण** ग्रोरइय० उक्क० द्विदिउदीर० जह० एयसमत्री, उक्क० त्र्यंतोमु० । त्र्यणुक्क० जह० एयम०, उक्क० तेत्तीमं सागरोवमाणि । एवं मन्वग्रेरइय० पंचिदियतिस्क्लितिय ३-मणुमतिय-देवा भवणादि जाव सहम्मार त्ति । एवरि मगह्रिदी ।

४३२. पंचिदियतिरिक्खश्रपञ्ज०-मणुमश्रपञ्ज० मोह० उक्त०द्विदि०उदीरणा जह० उक्त० एयस० । अणुक्क० जह० खुदाभवग्गहणं ममऊण, उक्क० श्रंतोमु० ।

जघन्य काल एक समय है और उत्क्रष्ट काल अन्तर्मुहर्त है। अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट अमन्त काल है जो असंख्यात पुहल परिवर्तनप्रमाण है। इसी प्रकार तिर्यव्योम है। इतनी विशेषना है कि इनमे अनुत्कृष्ट स्थिति उदारणाका जघन्य काल एक समय है।

विशेषार्थ—मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जवन्य वन्धकाल एक समय और उत्कृष्ट बन्यकाल प्रन्तर्मुहूर्त होनेमें उत्कृष्ट क्षिति उदीरणाका वह काल बन जानेसे उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जवन्य वाल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। उत्कृष्ट स्थितिबन्धके बाद पुनः उत्मका बन्य कमसं कम अन्तर्मुहूर्त के पहले नहीं होता और एसा जीव यदि एकेन्द्रियोमें मरकर उत्पन्न हो जाता है और सबसे अधिक काल तक वहाँ तथा यथायान्य अमंजियोमें रहकर पुनः संज्ञी पर्याप्त होता है तो अधिकसं अधिक अनन्त काल बाद हा वहाँ उत्पन्न होता है। यही कारण है कि आघसं मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जयन्य काल अन्तर्मुहूर्व और उत्कृष्ट आनन्त काल कहा है। तिर्यव्यामें यह आंघप्रकृष्णणा बन जाती है, इम्लिए उनमें आंघके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र तिर्यव्यामें ऐसा जीव भी आकर उत्पन्न हो सकता है जो अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा एक समय तक करके उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा करने लगे। यहीं कारण है कि इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय कहा है।

१४३१. स्रादेशसे नारिकयों में उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जवन्य काल एक समय है स्रोर उत्कृष्ट काल स्मत्तर्मुहूर्त है। स्रमुद्धिप्ट स्थितिउदीरणाका जवन्य काल एक समय है स्रोर उत्कृष्ट काल नेतीस मागर है। इमीप्रकार सब नारकी, पब्चेन्द्रिय तियंब्चित्रक, ममुख्यित्रक, सामान्य देव स्रोर भवनयासियोंसे लेकर महस्राग कल्प तकके देवोंमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्रपनी-स्रपनी स्थिति कहनी चाहिए।

विशेषार्थ — पूर्वमें जिस प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोमे स्पष्टीकरण किया है उस प्रकार यहाँ कर लेना चाहिए। यहाँ सर्वत्र जो अनुत्कृष्ट निथतिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अपनी अपना स्थितिप्रमाण कहा है सो उस उस गतिमें यथायोग्य सम्यक्त्व ब्रोर मिथ्यात्व परिणामके साथ इसप्रकार रखे जिससे उस उस गतिमें उत्कृष्ट स्थितिबन्ध तथा तदनुमार उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा न प्राप्त हो।

५४२२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त श्रीर मनुष्य अपर्याप्तकोमं मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय कम जुल्लकमनप्रहगणप्रमाग श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुहर्त हैं। स्रानन कल्पमं आणदादि मन्बद्वा त्ति मोह० उक्क०द्विदि० उदी० जहण्णुक्क० एयस० । अणुक्क० जह० जहण्णद्विदी ममयूणा, उक्क० उक्कस्सद्विदी । एवं जाव० ।

' ४३३. जहण्णए पयदं । दुनिहो णि० — ख्रोघेण आदेसेण य । श्रोघेण मोह० जह०द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम० । अजह० तिण्णि भंगा । जो मो मादिश्रो सपज्जनसिदो जह० ख्रंतोमु०, उक्क० उन्ह्रयोग्गलपरियद्वं ।

४३४. श्रादेसेण णेग्इय० मोह० जह०द्विदिद्यी० जहण्णुक० एयम०। श्रज० जह० श्रावित्या समयाहिया, उक० तेत्तीमं मागगेवमाणि । एवं पढमाए देवा भवण०-वाणवेंतर० । णवि सगद्विदी ।

लेकर सर्वार्थिसिद्धि तक्के देवोमें मोहनीय ही उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थिति-प्रमाण श्रीर उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इनीप्रकार श्रानाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — एवंकि दोनों लब्ध्यपर्याप्र जीवोमे अपने स्वामित्वके अनुसार मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणा एक समय तक ही प्राप्त होती है, इसलिए इनमें इनका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा इस एक समयको जुल्लकभवके कालमेंसे कम पर देने पर इनमें मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थित उदीरणाका जघन्य काल एक समय कम जुल्लक भवप्रमाण प्राप्त होता है, इसलिए इनमें मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य काल उक्त कालप्रमाण कहा है। तथा इनमें मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मृह्त प्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इसीप्रकार आनतादि देवोमे स्वामित्वका विवार कर कालप्रसूपणा समक्त लेनी चाहिए। विशेष वक्तव्य न होनेसे अलगसे स्पष्टीकरण नहीं किया है।

४२३. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रींग श्रादेश। श्रोघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाके तीन भंग है। उनमें जो वह सादिसपर्यवसित भंग है उनका जदन्य काल श्रम्तमुंहत है श्रीर उत्कृष्ट काल उपार्थ पुहल परिवर्तनप्रमाण है।

त्रिश्रोपार्थ — अपने स्वाभित्वके अनुसार जघन्य स्थितिउदीरणः एक समय तक होती है, इसिलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। किन्तु किसी जीवके अर्ध-पुन्नलपरावर्तके प्रारम्भमं और अन्तमं यथायोग्य जघन्य स्थितिउदीरणा हो और मध्यमं अजघन्य स्थितिउदीरणा होती रहे तथा किसी जीवके अन्तर्मृहूर्त काल तक ही यह हो यह भा सम्भव हैं, इसिलिए अोघने अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मृहूर्त और उत्कृष्ट काल उपार्घ पुन्नलपरावर्तप्रमाण कहा है।

§ ४३४ आदेशसे नारिकयोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय श्रीधिक एक श्राविल श्रार उत्कृष्ट काल नेतीस सागर है। इसीप्रकार प्रथम पृथिविक नारकी, सामान्य देव, भवनवामी श्रीर व्यन्तर देवोमे जानना चाहिए। इतनी विशेषा है कि श्रपनी-श्रपनी रिथित कहनी चाहिए। ः ४३४. बिदियादि छद्धि ति मोह० जह०द्विदिउदी० जहण्णुक० एयस०। अज० जहण्णुकस्सिद्धिती। एवं जोदिसियादि जात्र सव्बद्धा ति। सत्तमाए मोह० जह०द्विदिउदी० जह० एयस०, उक० अंतोम्र०। अज० जह० अंतोम्र०, उक० तेत्तीसं सागरो०।

ः ४३६. तिरिक्लेसु मोह० जह०द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। अज० जह० एयस०, उक्क० असंखेजा लोगा। पंचिदियतिरिक्खितए मोह० जह०-द्विदिउदी० जहण्णुक्क० एयस०। अजह० जह० आविलया समयूणा, उक्क०

विशेषार्थ — नारिकयोंमें मोह नीयकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय जैसे पूर्वमें घटित करके बतला श्राये हैं उसी प्रकार यहां श्रीर आगे घटित कर लेना चाहिए। विशेषता न होनेसे उसका श्रलगसे खुलासा नहीं करेंगे। नरकमें श्रपने स्वामित्वके श्रनुसार जघन्य स्थिति उदीरणा यहाँ उत्पन्न होनेके बाद एक श्रावली श्रीर एक समय जानेपर द्वितीय समयमें ही प्राप्त होती है। इससे पूर्व श्रजघन्य स्थिति उदीरणा होती रहती है, इसलिए इनमें श्रजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय श्रिधिक एक श्रावित कहा है। रोष कथन सुगम है।

४३४. दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारिकयोमें भोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार ज्योतिपियोंसे लेकर सर्वार्थिकिंद्ध तकके देवामे जानना चाहिए। सातवीं पृथिवीमे माहनीयकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त है। श्रजघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहर्त है।

विशेषार्थ — दूसरे नरकसे लेकर छठे नरक तक जयन्य स्थितिउदीरणा अपने-अपने स्वाभित्वके अनुसार भवके अन्तिम समयमं प्राप्त होती हैं। अतः इतमे जयन्य स्थितिउदीरणा का जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा जो उक्त नारकी उक्त प्रकारसे जयन्य स्थितिउदीरणा नहीं करने उनके सर्वदा अजयन्य स्थितिउदीरणा बन जानंस इस अपेत्रा अजयन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य काल जयन्य स्थितिउदीरणा और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। ज्यातियी देवोसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोम यह काल अपने स्वामित्वके अनुसार उक्त पद्धितसे बन जाता है, अतः इनमे द्वितीयादि नरकांके समान कालके जाननेकी सूचना की है। साववें नरकमे अपने स्वामित्वके अनुसार जयन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहर्त वन जाता है, इमिलए इनमे यह काल उक्त प्रमाण कहा है। तथा इनमे अजयन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहर्त वन जाता है, इमिलए इनमे यह काल उक्त प्रमाण कहा है। तथा इनमे अजयन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य काल अन्तर्मृहर्त जयन्य स्थितिउदीरणाके बाद प्राप्त होनेवाला लिया है। उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट भवस्थितिप्रमाण होता है यह स्पष्ट ही है।

९४३६. तिर्यक्कोमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल श्रान्तमुंहर्त है। श्राज्ञघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल असंख्यात लोक रमाण है। पश्चित्रिय तिर्यक्षितिकमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल

सगद्विदी । एवं पंचिदियतिरिक्खअपञ्ज०-मणुमअपञ्ज० । णत्रिर अजह० उक्क० अंतोमु० । मणुसतिए मोह० जह०द्विदिउदी० जहण्णुक्क० एयसमञ्रो । अज० जह० एयसमओ, उक्क० सगद्विदी । एवं जाव० ।

६ ४३७. श्रंतरं दृविहं—जह० उक्त० । उक्तस्से पयदं । दुविहों िणिहेसो— श्रोघेण आदेसेण य । श्रोघेण मोह० उक्त०द्विदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्त० श्रणंत-कालमसंखेजा पोग्गलपरियङ्घा । श्रणुक्त० जह० एयस०, उक्त० अंतोमु० । एवं तिरिक्खेसु ।

६ ४२८. ब्रादेसेण णेरइय० मोह० उक्क०द्विदिउदी० जह० अंतोग्रुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देस्रणाणि । अणुक्क० ब्रोघं । एवं सन्त्रणेरइय० । णवरि सगद्विदी

एक समय कम एक आर्वाल है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार पश्चेन्द्रिय तिर्यक्ष अपयोप्त और मनुष्य अपयोप्तकोमें जानना चाहिए। इननी विशेषता है कि इनमें अजधन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहर्त हैं। मनुष्यित्रकमं मोहनीयकी जधन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है अजधन्य रिथितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा नक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — पूर्वमे जो खुलासा कर आये हैं उसे ध्यानमे रखकर तथा अपने-अपने रवामित्वको लच्यमें रखकर उक्त विषयका राष्ट्रीकरण हो जाता है, इसलिए यहाँ अलगसे खुलासा नहीं किया।

४३७ अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है —श्रोघ और आदेश । श्रोघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिनिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहर्त है । इसीप्रकार विर्यक्रोमे हैं ।

विशेषार्थ — मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध हाकर पुनः उसका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कमसे कम अन्तर्महूर्तक पहल नहीं होता तथा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पयीप्त पयीयका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है। यहां कारण है कि यहां मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूत ख्रीर उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल कहा है। मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्य एक समय तक हो यह भी नियम है और अन्त्यमुहूर्त काल तक हो यह भी नियम है। इसीसे यहां अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्त्यमुहूर्त कहा है। सामान्य तियंख्रीमे यह अोघप्रकृषणा अविकल घटिन हो जानेसे उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ४३८. श्रादेशसे नारिकयोंमे मोहनीयको उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्न है श्रोर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका श्रन्तरकाल श्रोयके समान है। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है

लेना चाहिए।

देस्णा। पंचिदियतिरिक्खतिय-मणुसतिण मोह० उक्त०द्विदिउदी० जह० अंनोमु०, उक्त० पुन्वकोडिपुधत्तं। अणुक्त० ओघं। पंचि०तिरि०अपञ्ज०-मणुमअपञ्ज० आणदादि मन्बद्वा ति मोह० उक्त०द्विदिउदी० अणुक्त०द्विदिउदी० एत्थि अंतरं। देवेसु मोह० उक्त०द्विदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्त० अद्वारस सागरो० सादिरेयाणि। अणुक्क० स्रोघं। एवं भवणादि जान सहस्सार ति। णवरि सगद्विदी। एवं जाव०।

४ ४३९. जहएएो पयदं । दुविहो णि०—श्रोधेण श्रादेसे०। श्रोधेण मोह० जह०द्विदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्त० उवहुपो०परियद्वं। श्रजह० जह० एयस०, उक्त० श्रंतोमु०।

इ ४४०. श्रादेसेण ऐरइय० मोह० जह०ड्विदिउदी० णत्थि श्रंतरं। श्रज०

कि कुक कम अपनी-अपनी ग्थित कहनी चाहिए। पञ्चेन्द्रिय निर्यक्षत्रिक और मनुष्यत्रिकमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जयन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिप्रथक्त्वप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल आधकं समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्ष अपयोप्त, मनुष्य अपयोप्त और आनत कल्पसे लेकर मर्वार्थमिद्धि तककं देवोमें उत्कृष्ट म्थितिउदीरणा और अनुत्कृष्ट रिथि।उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। देवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जयन्य अन्तर अन्तर्म हुने हैं और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह मागर है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल आधके समान है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर महस्रारकल्प तकके देवोमें जानना चाहिए। इनर्ना विशेपता है कि अपनी-

विशेषार्थ — तिर्यद्ध श्रपयीप्त, मनुष्य श्रपयीप्त श्रीर श्रानत कल्पसे लेकर सर्वार्थामिडि तकके देवोंमें उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा श्रपने-श्रपने स्वामित्वके श्रनुसार मात्र भवके प्रथम समयमें प्राप्त होती है, इसलिए इनमें मोहनीयकी उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाके श्रन्तरकालका निषेध किया है। शेष कथन सुगम है।

श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गमा तक श्रन्तरकाल घटित कर जान

१४४६. जघन्य प्रकरण है। निर्देश टो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर त्रादेश। श्रोघसे मोहनीयकी जबन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मु हुर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अजबन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मु हुर्त है।

विश्वापार्थ — उपशामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहृत है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। यद्दी कारण है कि यहां मोहनीयकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहृत और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है। तथा जो उपशामक जघन्य स्थिति उदीरणा करके दूसरे समयमे मरकर देव हो जाता है उसके मोहनीयकी अजघन्य स्थिति उदरीणाका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है और उपशामकके माहनीयकी अजघन्य स्थिति उदरीणाका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है और उपशामकके माहनीयकी अजघन्य स्थिति उदरीणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर मोहनीयकी अजघन्य स्थिति उद्दीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर मुँहूर्त कहा है।

§ ४४०. आदेशसे नारिकयोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं

जहण्णुक ० एयम ० । एवं पढमाए मन्त्रपंचि ० तिरिक्ख-मणुमअपञ्च०-देवा भवण०-वाणवंतरा ति । विदियादि छद्वि ति मोह० जह०-अजह०द्विदि०उदीर० णित्य अतरं । एवं जोदिमियादि जाव सन्वद्वा ति । सत्तमाए मोह० जह०द्विदिउदी० णित्थि अंतरं । अजह० जह० एयममओ, उक्क० अंतोग्र० । तिरिक्खेसु मोह० जह०द्विदि-उदीर० जह० अंतोग्र०, उक्क० असंखेजा लोगा । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोग्र० । मणुमतिए मोह० जह०द्विदि०उदी० जह० अंतोग्रहुत्तं, उक्क० पुन्तकोडि-पुघ० । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोग्र० । एवं जाव० ।

४४१. णाणाजीनभंगिवचयाणुगमं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे० । श्रोघेण उदीरगेसु पय० । श्राणुदीरगेसु श्रव्ववहारो । एदेण श्रद्धपटेशा उक्कस्सियाए द्विदीए सन्वे श्रगुदीरगा, सिया अणुदीरगा च उदीरगो च, मिया श्रणुदीरगा च उदीरगा च । श्रणुक्कस्मद्विदीए मिया मन्वे उटीरगा, मिया उदीरगा च श्रणुदीरगा च । एवं चदुसु गदीसु ।

विशोपार्थ—यहां प्रतिपादित सभी मार्गणाश्रोमे स्वाभित्वको जानकर श्रन्तरकाल घटित कर लेना चाहिए । सुगम होनेसे विशेष स्पष्टीकरण नहीं किया ।

१४४१. नाना जीवोंकी अपेज्ञा भंगविचयानुगम दो प्रकारका है—जघन्य श्रोर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश । श्रांघसे उदीरकोंका प्रकरण है, श्रानुदीरक व्यवहार योग्य नहीं हैं । इस अर्थपदके अनुसार उत्कृष्ट स्थितिके कदाचित् सब अनुदीरक है, कराचित् नाना जीव श्रानुदीरक हैं और एक जीव उदीरक हैं, कदाचित् नाना जीव उदीरक हैं । श्रानुत्कृष्ट स्थितिके कदाचित् सब जीव उदीरक हैं, कदाचित् नाना जीव उदीरक हैं । श्रानुत्कृष्ट स्थितिके कदाचित् साना जीव उदीरक हैं श्रीर नाना जीव उदीरक हैं श्रीर एक जीव श्रानुदीरक है, कदाचित् नाना जीव उदीरक हैं श्रीर नाना जीव श्रानुदीरक हैं । इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है

है। श्रजधन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल एक समय है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवी, सब पञ्च न्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तर देवामे जानना बाहिए। दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारिक्योंमे माहनीयकी जघन्य और श्रजन्य स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार ज्याति पियोंसे लेकर सर्वार्थिसिद्ध तकके देवामे जानना चाहिए। सानवी पृथिवीमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति उदीरणाका आन्तरकाल नहीं है। श्रजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रन्तर्मुहर्त है। तिर्यञ्चोंमे मोहनीयकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है। तिर्यञ्चोंमे मोहनीयकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है। श्रजघन्य रिथिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है। मनुष्यिति की स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है। मनुष्यिति की स्थित उदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है। सनुष्यित उदि स्थित उदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है। श्रजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

णवरि मण्मत्रपञ्ज० मोह० उक्त०-त्रण्क्क०द्विदिउदीर० ऋद्व भंगा । एवं जाव० ।

२ ४४२. जह० पयदं । दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे० । श्रोघेण तं चैव श्रह्वपदं कादृण मोह० जह०-श्रजह०द्विदिउदीरगाणं तिरिण भंगा। एवं चदुसु गदीसु । णवरि तिरिक्षेसु जह०-श्रजह०द्विदिउदीरगा णिय० श्रन्थि । मणुसश्रपञ्ज० जह०-श्रजह० श्रद्वभंगा। एवं जाव० ।

६ ४४३. भागाभागाणु वृतिहं — जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि० — स्रोधेण आदेसेण य । स्रोधेण मोह० उक्क०िद्धिदिउदी० मन्त्रजी० केत्र० १ स्रागंत-भागो । स्रणुक्क० स्रागंता भागा । एवं तिस्क्लिस । स्रादेसेण गोरइ० मोह० उक्क०िद्धिदिउदी० स्रमंखे०भागो । अणुक० स्रमंखेजा भागा । एवं सन्त्रगोरइय०-सन्त्र-पंचिदियतिरिक्ख - मणुम - मणुमस्रपञ्ज०-देवा जाव स्रत्रराहदा ति । मणुसपञ्ज०-मणुमिणी-सन्त्रद्धदेवेस उक्कस्सिद्धिदिउदी० मंखे०भागो । स्रणुक्क० संखेजा भागा । एवं जाव० ।

\$ 888. जह० पयदं । दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मोह० जह०द्विदिउदीर० सन्वजी० केव०भागो ? श्राणंतभागो । श्राजह० अणंता भागा । कि मनुष्य श्रापयीप्तकां में माहनीयकी उत्कृष्ट श्रोर श्रानुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंके श्राठ भंग है। इसीप्रकार श्रानाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१ ४४२. जघन्यका प्रकरण हैं। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ और श्रादेश। श्रोघसे उसी श्रर्थपदका करके माहनीयकी जघन्य श्रोर श्राज्यन्य स्थितिके उदीरकोंके तीन भंग जानने चाहिए। इसीप्रकार चारो गिनयोमे जानना चाहिए। इतनी विशेषण हैं कि तिर्यक्कोंमें जघन्य श्रीर श्राज्यन्य स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। मनुष्य श्रपयाप्रकोंमे मोहनीयकी जघन्य श्रीर श्राज्यन्य स्थितिके उदीरकोंके श्राठ भंग हैं। इसी प्रकार श्रानाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

५ ४४३. भागाभागानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ और आदेश । श्रोघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण है ! श्रानन्तवें भागप्रमाण है । श्रानुतकृष्ट स्थितिके उदीरक जीव श्रानन्त बहुभागप्रमाण है । इसीप्रकार तिर्येख्यांमें जानना चाहिए । श्रादेशसे नारिकयोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण हैं तथा श्रानुतकृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके श्रासंख्यात बहुभागप्रमाण है । इसीप्रकार सब नारकी, सब पश्चेन्द्रिय तिर्येख्य, सामान्य मनुष्य, मनुष्य श्राप्याप्त, सामान्य देव श्रीर श्राप राजित कल्प तकके देवामें जानना चाहिए । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी श्रीर सर्वार्थसिद्धिके देवोमें उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके संख्यातवें भागप्रमाण हैं श्रीर श्रनुतकृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

् ४४४. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—स्रोघ स्रौर स्रादेश। स्रोघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सत्र जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? स्रानन्तर्वे

श्रादेसेण ऐरि मोह० जह०द्विदिउदी० श्रमंखे०भागो । श्रजह० श्रसंखेजा भागा । एवं सब्बरोग्ड्य०-मब्बितिरिक्ख-मणुम-मणुमश्रपञ्ज०-देवा जाव श्रवराजिदा ति । मणुसपञ्ज०-मणुसिणी०-मब्बद्वदेवा जह०द्विदिउदीर० संखे०भागो । श्रज० संखेजा भागा । एवं जाव० ।

ः ४४४. परिमाणं दुविहं — जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि० — अघेण आदेसेण य । अघेण मोह० उक्क०द्विदिउदी० केत्तिया ? आसंखेआ । अणुक्क० द्विदिउदी० केत्ति० ? आणंता० । एवं तिरिक्खा० । आदेसे • गोरइय० मोह० उक्क०-अणुक्क० द्विदिउदी० केत्ति० ? आसंखेआ । एवं सन्वगोरइय०-सन्वपंचि-दियतिरिक्ख-मणुसअपज्ञ०-देवा भवणादि जाव सहस्सार ति । मणुसेसु मोह० उक्क०द्विदिउदी० केत्ति० ? संखेआ । अणुक्क० द्विदिउदीर० केत्ति० ? संखेआ । एवमाणदादि जाव अवराजिदा ति । मणुसपज्ञ०-मणुसिणी०-सन्वद्वदेवेसु उक्क० आणुक्क०द्विदिउदीर० केत्ति० ? संखेआ । एवं जाव० ।

६ ४४६. जह० पय०। दुवि० णिद्देमी—श्रोघेण आदे०। श्रोघे० मोह० जह०द्विदिउदी० केत्रि०। श्रणंता। श्रादे०

भागप्रमाण हैं, अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके अनन्त बहुभागप्रमाण है। आदेशसे नारिकयोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं, अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यव्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपयीप्त और सामान्य देवोंसं लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी और सर्वार्थ-सिद्धिके देवोंमें जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके संख्यातवें भागप्रमाण है तथा अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके संख्यात बहुभागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्यणा तक जानना चाहिए।

८ ४४५. परिमाण दं प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ज्योघ और ब्रादेश । श्रोघसे माहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हें ? असंख्यात हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हें ? असंख्यात हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हें ? असंख्यात हैं । इसी-प्रकार सामान्य निर्यक्रोंमें जानना चाहिए । आदेशसे नारिक्योंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हें ? असंख्यात हैं ! इसीप्रकार सब नारकी, सब पक्रेन्ट्रिय निर्यक्त, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव श्रीर भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्योंमें उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हें ? संख्यात हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हें ? असंख्यात है । इसीप्रकार श्रानत कल्पसे लेकर श्रपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी और सर्वार्थ-सिद्धिके देवोंमें उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हें ? संख्यात हैं । इसीप्रकार श्रमाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४४६. जधन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है— भोष और आदेश। ओघसे मोहनीय की जघन्य स्थिति के उद्दोरक जोव कितने हैं ? संख्यात हैं। अजयन्य स्थितिके उद्दोरक णेर० मोह० जह०-श्रजह० द्विदिउदीर० केति० ? श्रसंखेआ। एवं पटमाए सत्तमाए सन्वपंचिं०तिरिक्ख-मणुसग्रप०-देव। भवण०-वाणवें०। विदियादि छद्वि ति मोह० जह०द्विदिउदी० केति० संखेआ। अजह० केति० श्रसंखेआ। एवं मणुस-जोदिसियादि जाव श्रवगाजिदा ति। तिरिक्खेस मोह० जह०-श्रजह० केति० ? श्रणंता। मणुसपञ्ज०-मणुमिणी०-सन्वद्वदेवा मोह० जह०-श्रजह०द्विदिउदी० केति० ? संखेआ। एवं जाव०।

४४७. खेत्ताणु० दुविहो — जह० उक्क० । उक्क० पथदं । दुविहा णि० — ओघेण आदेसे० । त्रोघेण मोह० उक्क० द्विदिउदीग० केविह खेत्ते ? लोगस्स असंखे० भागे । अणुक्क० केव० खेते ? मन्वलोगे । एवं तिरिक्खा० । आदेसेण सेमगदीसु मोह० उक्क०-अणुक्क० द्विदीउदी० लोग० असंखे० भागे । एवं जाव० ।

ः ४४८. जह० पयदं । दुनिहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मोह० जह० द्विदिउदीर० लोग० असंखे०भागे । श्रज० सन्त्रलोगे । तिरिक्खंसु मोह० जह०-द्विदिउदी० लोग० संखे०भागे । अज० सन्त्रलोगे । सेसगदीसु जह०-अजह० लोग०

जीव कितने हैं ? श्रानन्त हैं । श्राहेशसं नागित्यों में मोहनीयकी जघन्य और श्राजयन्य स्थितिके उदीगक जीव कितने हैं ? श्रासंक्यात है । इस प्रकार प्रथम पृथिवी और सातवी पृथिवीके नारकी तथा सब पश्चेन्द्रिय तिर्यव्च, सनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तर देवों में जानना चाहिए । दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवा नकके नारिकयों में मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं । श्रामण्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं । संख्यात हैं । इसीप्रकार श्रामण्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं । संख्यात हैं । इसीप्रकार श्रामण्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं । संख्यात हैं । इसीप्रकार श्रामण्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं । संख्यात हैं । इसीप्रकार श्रामण्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । इसीप्रकार श्रामण्य स्थितिके जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । इसीप्रकार श्रामण्य स्थितिके जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । इसीप्रकार श्रामण्य स्थितिक स्थापण स्थापण

१४४७. चेत्रानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है — ग्रांघ और आदेश । श्रोघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोका कितना चेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्र है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोका कितना चेत्र है ? सर्व लोक चेत्र है । इसीप्रकार सामान्य तिर्यक्रोम जानना चाहिए । आदेशसे शेप गतियोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकांका कितना चेत्र है ? लोकक असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्र है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

१४४८. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—स्रोघ स्रोर आदेश। स्रोघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका कितना चेत्र है १ लोकके स्थतंत्र्यातर्वे भागप्रमाण चेत्र है श्रोर स्थानक स्थितिके उदीरकोंका सर्वलाक चेत्र है। तिर्यक्रोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका सर्वलाक चेत्र है स्रोर स्थानक स्थितिके उदीरकोंका सर्वलाक चेत्र है स्रोर स्थानक उदीरकोंका सर्वलाक चेत्र है। रोप गितयोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थीर स्थानक स्थानक उदीरकोंका सर्वलाक चेत्र है। रोप गितयोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थीर स्थानक उदीरकोंका

ग्रसंखे०भागे । एवं जाव० ।

१४४९. पोसणं दुविहं—जह० उक्त० । उक्तस्से पयदं । दुविहो णि०— श्रोघेण ब्रादेसे० । श्रोघेण मोह० उक्त०द्विदिउदी० लोग० श्रसंखे०भागो श्रद्ध-तेरह-चोद्म० । श्रणुक्त० सच्वलोगो ।

\$ ४४०. त्रादेसेण ऐरइय० मोह० उक्त०-त्रणुक्त० द्विदिउदी० लोग० त्रसंखं०-भागो अचोइस० । एवं विदियादि सत्तमा ति । एविर सगपोमएं । पढमाए खेतं । तिरिक्लेसु मोह० उक्त० द्विदिउदीर० लोग० त्रमंखे० भागो अचोहस० । अएक्र० मन्वलोगो । पंचिदियतिरिक्खितए मोह० उक्त० द्विदिउदी० लोग० असंखे० भागो अचोहस० देखएए। अण्क० द्विदिउदीर० लोग० असंखे० भागो सन्वलोगो वा ।

लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण चेत्र हैं। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

निश्चोपार्थ — तिर्यक्कोमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक वे हतसमुत्यत्तिक बादर एकेन्द्रिय जीव होते हैं जो सत्कर्मसे कम या सम स्थितिको बोधकर एक आवित्तिके बाद उसकी उदीरए। करते हैं। यही कारण हैं कि यहाँ इनका चेत्र लोकके मंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष चेत्र सम्बन्धी सब कथन सुगम हैं।

§ ४४९. स्पर्शन दो प्रकारका हे — जघन्य खोर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है — खोघ खोर आदेश । खोघसे मोह नीयकी उत्कृष्ट स्थितिक उदीरकोने लोकके असंख्यातवें भागश्रमाण चेत्रका तथा जमनालीके चोदह मागोमेंने कुछ कप आठ आर तरह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिक उदीरकोने सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्दर्शन किया है ।

तिशोषार्थ—यहाँ त्रसनालीके चौदह भागामेसं कुछ कम आठ भागप्रमाण रवर्शन विहारवत्स्वस्थानकी आपेचा और कुछ कम तेरह भागप्रमाण स्वर्शन मारणान्तिक समुद्घातकी आपेचा कहा है। शेष कथन सुगम है।

४५० श्रादेशसे नारिकयोमें मोहर्नायकी उत्कृष्ट श्रांग अनुत्कृष्ट स्थितिक उदीरकोने लोकके श्रासंस्थानवे भाग तथा असनार्जाके चौदह भागोमें से कुछ कम छह भागप्रमाण चैत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार दूसरीसे लेकर मानवी पृथिवी तकके नार्राक्योमें जानना चाहिए। इननी विशेषणा है कि श्रपना श्रपना स्पर्शन कहना चाहिए। प्रथम पृथिवीमें चैत्रके समान स्पर्शन है। निर्यवचोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोने लोकके श्रासंस्थातवे भाग श्रोर त्रसनालीके चौदह भागोमें से कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोने लोकके श्रमंख्यातवें भाग श्रोर त्रसनालीके चौदह भागोमें से कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोने लोकके श्रमंख्यातवें भाग श्रोर त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोने लोकके श्रमंख्यातवें भाग श्रोर त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोने लोकके श्रमंख्यातवें भाग श्रोर सर्व लोक चेत्रका स्पर्शन किया है।

विश्वापार्थ-- यहाँ सामान्य तिर्यञ्चा श्रीर पद्मीन्द्रय तिर्यंत्रिकमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका त्रमनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण स्पर्शन मारणान्तिक ४४१. पंचिं०तिरि०त्रपञ्ज०-सन्वमणुस० मोह० उक्त०द्विदिउदी० लोग०त्रसंखे०भागो । त्र्रणुक० लोग० ऋसंखे०भागो सव्वलोगो वा ।

४४२. देवेसु मोह० उक्क०-अर्णुक०द्विदिउदीर० लोग० असंखे०भागो अट्ट-णवचोद्दस देसणा। एवं सोहम्मीमाणे। भवण०-वाण०-जोदिमि० मोह० उक्क०-अर्णुक०द्विदिउदीर० लोग० असंखे०भागो अद्धुद्वा वा अट्ट-णवचोद्दस०। मणकुमा-गदि सहस्सारे ति मोह० उक्क०-अर्णुक०द्विदि०उदीर० लोग० असंखे०भागो अट्टचोद्द०। वे०। आणदादि अच्चुदा ति मोह० उक्क०द्विदिउदी० लोग० असंखे०भागो। अर्णुक० लोग० असंखे०भागो बचोद्दस०। उविर खेतं। एवं जाव०।

४५२. जह० पयदं । दुविहो णि०--श्रोधेण आदसे० । श्रोधेण मोह०

समुद्धानकी मुख्यतासे बतलाया हैं, क्योंकि ऐसे जीवोका नीचे सातवी पृथिवीतकके नारिक्योंमें मारणान्तिक समुद्धात करना बन जाता है। शेष कथन सुगम है।

विशेषार्थ — जो मनुष्य, मनुष्यिनी या "चेन्द्रिय तिर्यच उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर श्रोर उसका घात किये बिना श्रन्तर्मुहर्तमे उक्त दोनी प्रकारके जीशोम मरकर उत्पन्न होत हैं उन्हींके माहनीयकी उत्कृष्ट न्थितिकी उदीरणा होती है। यतः ऐसे जीवोका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है श्रन: इनमे यह स्पर्शन उक्तप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

१४८२ देवोमे मोहनीयकी उन्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदारकोने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम आठ तथा कुछ कम नो भागप्रमाण दोत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सोवर्म और ऐशान कल्पमे जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट रिथितिके उदीरकोने लोकके असंख्यातवे भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम साढ़े तीन भाग तथा कुछ कम आठ और नो भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सनत्कुनारसे सहस्रार कल्प तकके देवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रमनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। आनतसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिक उदीरकोने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। आनतसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोमे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिक उदीरकोने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। आगेके देवोमे स्पर्शन खेदह भागोमेसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। आगेके देवोमे स्पर्शन चत्रके समान है। इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थे—यहाँ श्रपनी-श्रपनी उत्कृष्ट श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थिति ही उदीरणाके स्वामित्व का विचार कर स्पर्शन घटित कर लेना च।हिए। भामान्य श्रीर श्रशन्तर देवोका जो स्पर्शन बतलाया है उससे यहाँ कोई विशेषना नहीं हैं। इस्रांलए इसका स्पर्धकरण नहीं किया।

§ ४५३. जयन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है--श्रोघ श्रीर आदेश। श्रोधसे

जह०द्विदिउदीर० लोग० असंखे०भागो । अज० सन्त्रतोगो । आदेसे० ऐरहय० मोह० जह०द्विदिउदी० लोग० असंखे०भागो । अज० लोग० असंखे०भागो छचोहम० देख्या । एवं विदियादि मत्तमा त्ति । णवि मगपोसएं । पढमाए खेतं ।

४४४. तिरिक्खेसु मोह • जह०द्विदिउदी० लोग० संखे०भागो । अज० मन्यलोगो । मन्त्रपंचिदियतिरिक्ख-सन्त्रमणुस्सेसु मोह० जह० लोग० असंखे०भागो । अज० लोग० असंखे०भागो सन्त्रलोगो वा । देवा जाव महस्सार ति जह०द्विदि-उदीर० लोग० असंखे०भागो । अजह० सगपोसणं । आणदादि अन्जुदा ति जह० लोग० असंखे०भागो । अजह० लोग० असंखे०भागो छचोहम० देस्रणा । उपि खेतं । एवं जाव० ।

४४४. कालाणु० दुविहं—जह० उक०। उक्तस्से पयदं। दुविहो णि० — श्रोघेण आदेसे०। श्रोघेण मोह० उक्त०द्विदिउदी० जह० एयसमओ, उक्त० पलिदो०

मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकक असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका रपर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकका स्पर्शन किया है। आदशने नार्शकयों मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असख्यातवे भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और असनालीके चौदह भागों में से कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार दूमरीसे लेकर सातवी पृथिवी तकके नारिकयों में जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-प्रपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली पृथिवीमें चेत्रके समान स्पर्शन है।

१ ४५४. तिर्यव्योमे मोहनीयकी जघन्य स्थितिक उदीरकोने लोकके असंख्यानवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया ह तथा अजघन्य स्थितिक उदीरकोने सर्व लोकका स्परान किया है।
सब पक्षे निद्रय तिर्यक्ष श्रीर सब मनुष्योमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिक उदीरकोने लोकक
असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिक उदीरकोन लोकक
असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सामान्य देव और सहस्रार
कल्पतकके देवोमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिक उदीरकोंने लोकके असख्यातवें भागप्रमाण
चेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिक उदीरकोंका अपना-अपना स्पर्शन है। आनतसं
लेकर अच्युत कल्प तकके देवोमें मोहन'यकी जघन्य स्थितिक उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें
भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिक उदारकोंने लोकके असंख्यातवें
भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। उदारकोंने लोकके असंख्यातवें
भाग तथा त्रसनालोंके चीदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्परान किया है।
उत्पर्क देवोंमें स्पर्शन चेत्रके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

त्रिश्रोषार्थ—स्वामित्व श्रोर अपने-अपने स्पर्शनका विचार कर यह स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए।

 असंखे०भागो । अणुक्क० सन्बद्धा । एवं सन्बर्णेरइय०-तिरिक्खपंचिंदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव सहस्मार त्ति ।

४४६. पंचि०तिरि०त्रपञ्ज० मोह० उक्क०द्विदिउदीर० जह० एयस०, उक्क० श्रावित्वि असंखे०भागो । श्रणुक्क० सन्बद्धा । एवं मणुसश्रपञ्ज० । णविरे श्रणुक्क० जह० खुद्दाभवग्गहणं समयुणं, उक्क० पत्तिरो० श्रसंखे०भागो ।

६४४७. मणुमतिए मोह० उक्क०द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोग्र०। श्रणुक्क० सन्बद्धा । श्राणदादि सन्बद्घा त्ति मोह∙ उक्कस्स-द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० संखेजा समया। श्रणुक्क० सन्बद्धा। एवं जाव०।

श्रानुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंचित्रक, सामान्य देव श्रीर भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका एक जीवकी अपेत्ता जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहर्त बतला आये हैं। अब यदि नाना जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा एक समय तक करें और द्वितीयादि समयमें न करें तो यह भी सम्भव है आर सन्तानमें भंग पड़े बिना लगातार करते रहें तो यह काल पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाणसे अधिक नहीं हो सकता। इसी बातका विचार कर यहाँ मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल उक्तप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

५४६. पचेन्द्रिय तिर्यंच श्रपर्याप्तकों में मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय हैं और उत्कृष्ट काल श्रात्रलिके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्रनुत्कष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार मनुष्य श्रपर्याप्तकों में जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय कम जुल्लक भवमहण-प्रमाण है श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है।

[प्रशेषार्थ — उक्त जीवोंमें एक जीवकी श्रपेत्ता मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जयन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय बतला श्राये हैं। यही कारण है कि यहाँ नाना जीवोंकी श्रपेत्ता मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जयन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल श्रावित्तके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

\$ ४५७. मनुष्यत्रिकमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वेदा है। आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थ सिद्धि तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इस'प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विश्रोषार्थ — यहाँ सामान्य मनुष्योंमें शेष दो प्रकारके मनुष्योंकी मुख्यता है, इसिक्षए इनमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा यदि नाना जीव लगातार करते रहें तो भी उस कालका योग अन्तर्मुद्र्व हो हागा। यही कारण है कि यहाँ इनमें उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट

६ ४४८. जह० पयदं । दुविहो णि०—श्रोघेण आदेसे०। श्रोघेण मोह० इह०द्विदि० जह० एयस०, उक्क० संवेज्जा समया। श्रज० सन्त्रद्धा। एवं विदियादि र्छाट्ठ ति मणुसतिए जोदिसियादि सन्वद्वा ति ।

४४९. त्रादेसेण एोरइय० मोह० जह०ट्टिदिउदीर० जह० एयस०, उक्क० त्रावित्व त्रसंखे०भागो । अज० सन्बद्धा । एवं पढमाए सन्वपंचिदियतिरिक्ख-देवा० भवण०-वाणवें । मत्तमाए मोह० जह०ट्टिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० पितदो० असंखे०भागो । अज० सन्बद्धा । तिरिक्खेसु मोह० जह०-अज० मन्बद्धा । मणुम-अपज० मोह० जह०ट्टिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० त्रावित्व त्रसंखे०भागो । अज० जह० आवित्या समयूणा, उक्क० पितदो० असखे०भागो । एवं जाव० ।

काल अन्तर्मुहर्त कहा है। अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार आनवादि कल्पोमे भवके प्रथम समयमें ही मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा बनती है। अब यदि ऐसी उदीरणा करनेवाले नाना जीव लगातार इन कल्पो और कल्पानीतामे उत्पन्न हो ना संख्यान समय तक ही यह कर चल सकता है। यही कारण है कि इनमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थि तके उदीरकोका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। रोप कथन सुगम है।

४४८ जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—आंघ आदे आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है छोर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सबैदा है। इसीप्रकार दूसरीसे लेकर छठी पृथिबी तकके नारकी, मनुष्यितिक और ज्यातिषियोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए।

विशोपार्थ—मत्र मित्वको ध्यानमें लेने पर म्पष्ट हो जाता है कि मोहनीयकी जघन्य स्थितिकी उदीरगा नाना जीवोंकी अपेचा लगातार संख्यात समय तक ही हो सकती है। यही कारण है कि यहाँ मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। शेप कथन सुगम है। आगे भी सुगम होनेसे अलग-अलग खुलामा नहीं करेंगे।

८४९. आदेशसे नारकियों में मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इनीप्रकार प्रथम पृथिवीके नारकी, सब पञ्चिन्द्रय तिर्यञ्च, सामान्य देव भवनवामी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। सातवीं पृथिवीमें माहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पत्थके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। निर्यक्रोंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य है और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय कम एक आविलक्षमाण है और उत्कृष्ट काल पत्थके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१. श्राव्प्रतो श्रावलि० श्रमंखे०भागो इति पाटः।

६ ४६०. श्रंतरं द्विहं—जह० उक्त० । उक्तस्से पयदं । दुविहो णि०—श्रोघे० श्रादेसे० । श्रोघेण मोह० उक्त०द्विदिउदी० श्रंतरं जह० एयसमस्रो, उक्त० श्रंगुलस्स श्रसंखे०भागो । श्रणुक्क० णित्थ श्रंतरं । एवं चदुसु गदीसु । एवति मणुसश्रपञ्ज० मोह० श्रणुक्क० जह० एयस०, उक्त० पिलदो० श्रमंखे०भागो । एवं जाव० ।

४६२. आदेसेण णेग्इय० मोह० जह०द्विदिउदी० जह० एयम०, उक्क० अंगुलस्स अमंखे०भागा । अज० णत्थि अंतरं । एवं सन्वणेरइय०-सन्वपंचिदियतिरिक्ख-सन्व-देवा त्ति । तिरिक्खेसु मोह० जह०-अज० णत्थि अंतरं । मणुमस्रपञ्ज० मोह०

५४६०. अन्तर दो प्रकारका है—जधन्य श्रीर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश हो प्रकारका है—श्रोघ और श्रादेश । श्रोघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जधन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर श्रंगुलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार चारों गतियों में जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्य श्रपर्याप्तकों में मोहनीयकी श्रमुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जधन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पल्यके श्रसंख्यातवे भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा कोई भी जीव न करे तो ऋंगुलके ऋसंख्यातर्वे भाग काल तक वह नहीं होती, इसके बाद उसके उदीरक एक या नाना जीव अवश्य होते हैं। यहीं कारण है कि यहाँ नाना जीवोंकी ऋपेत्ता उसका उत्कृष्ट ऋन्तर काल ऋंगुलके ऋसंख्यातर्वे भागप्रमाण वतलाया है। शेष कथन सुगम है।

५ ४६१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर छह माह है। श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंका श्रन्तरक.ल नहीं है। इसीप्रकार मनुष्यितिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें जघन्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है।

विश्लोषार्थ—मनुष्यिनियोंका उपशम श्रीर त्तपक श्रेणिपर श्रारोहणका उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षपृथक्तव प्रमाण है इसलिए इनमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट श्रन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ४६२. त्रादेशसे नारिकयोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्थे आपेर सब देवोंमें जानना चाहिए। तिर्थे आपेरेंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। सनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका अपन्य

जह०द्दिदिदि। जह० एयसमञ्ची, उक्क० श्रंगुलस्स श्रसंखे०भागो । अज० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० श्रसंखे०भागो । एवं जाव० ।

९ ४६३. भावो उक्त०-त्र्रणुक्त० जह० त्र्रजह० सन्वत्थ श्रोदइत्रो भावो ।

४६४. ऋषाबहुऋं दुविहं--जह० उक्त० । उक्तस्से पयदं । दुविहो णि०क्रोधेण श्रादेसे० । श्रोधेण सन्वत्थोवा मोह० उक्त०द्विदिउदी० । श्रणुक्त०द्विदिउदी०
अणंतगुणा । एवं तिरिक्खा० । श्रादे० ग्रेर० मोह० सन्वत्थोवा उक्त०द्विदिउदी०,
ऋणुक्त०द्विदिउदी० श्रसंखेअगुणा । एवं सन्वर्णेरइय०-सन्वर्णचिदियतिरिक्ख-मणुसमणुसअपञ्ज०-देवा अवराजिदा चि । मणुसपञ्ज०-मणुसिणी०-सन्वद्वदेवा सन्वत्थो०
मोह० उक्त०द्विदिउदी०, ऋणुक्त०द्विदिउदी० संखे०गुणा । एवं जाव० ।

\$ ४६५. जह० पयदं । दुविहो णि०—श्रोघेण आदेसे० । ओघेण सन्वत्थो० मोह० जह०द्विदिउदी०, अज०द्विदिउदी० अएंतगुणा । आदेसे० ऐरइप० सन्वत्थो० मोह० जह०द्विदिउदी०, अज०द्विदिउदीर० असंखे०गुणा । एवं सन्वणेरइप०-सन्व-अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है आप

विशोषार्थ — मनुष्य अपयोग्न यह सान्तर मार्गणा है। आगममें इसका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है। उसे ध्यानमें रखकर यहाँ मोहनीयकी अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सगम है।

६ ४६३. भाव—मोहनीयकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके खदीरकोंका सर्वत्र श्रोदियक भाव है।

६ ४६४. श्रल्पबहुत्व दो प्रकारका हैं—जघन्य श्रोर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण हैं । निर्देश दो प्रकारका हें—श्राघ श्रोर श्रादेश । श्रोघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे श्रानुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव श्रान्तगुणे हैं । इसीप्रकार तिर्यचोंमें जानना चाहिए । श्रादेशसे नारिकयोमें मोहनायकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे श्रानुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार सब नारकी, सब पद्यचिद्रय तिर्यक्ष, सामान्य मनुष्य, मनुष्य श्रपयीप्त श्रोर सामान्य देवोंसे लेकर अपराजिन-विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी श्रोर सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक है । उनसे श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ४६४. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव अनन्तगुर्ण हैं। श्रादेशसे नारिकयोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे आजघन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुर्णे हैं। इसीप्रकार सब नारकी, तिरिक्ख-मणुस-मणुमश्रपञ्ज०-देवा जाव श्रवराइदा ति । मणुसपञ्ज०-मणुसिणी०-सन्त्रहृदेवा० सन्त्रत्थोवा मोह० जह०द्विदिउदी०, श्रज० द्विदिउदीर० संखे०गुणा। एवं जाव०।

४६६. भुजगारिद्विदिदिरणाए तत्थ इमाणि तेरस श्रणियोगद्दाराणि—समुकित्तणा जाव श्रप्पाबहुए ति । समुकित्तणाणु० दृविहो णि०—श्रोघेण आदेसे० ।
श्रोघेण माह० श्रत्थि भुज०-श्रप्प०-श्रवद्वि०-अवत्त०द्विदि०दिरिगा। एवं मणुसतिए ।
श्रादेसेण णेरइय० मोह० श्रात्थि भुज०-श्रप्प०-श्रवद्वि०द्विदिदिवि। एवं सन्वणेरइय०मन्वतिग्विल-मणुमश्रपञ्ज०-देवा जाव सहस्सार ति । श्राणदादि सन्बद्धा ति मोह०
श्रत्थि श्रप्पदर०दिर० । एवं जाव० ।

४६७. मामित्ताणु० दुविही शिहेमी — श्रोघेण श्रादेसे० । श्रोघेण भुज० अवद्वि० कस्स ? श्रण्णद० मिच्छाइद्वि० । णविर सेढिविवक्खाए भुज० सम्माइद्विस्स वि लब्भइ । एदमेत्थ ण विविक्खियं । श्रप्प० कम्म ? श्रण्णद० सम्माइद्वि० मिच्छा-इद्वि० । श्रवत्त० कम्म ? श्रण्णद० जो उवसामगो परिवदमाणगो मणुमो देवो वा पदमसमयउदीरगो । एवं मणुमतिए । णविर देवो ति ण भाणिद्व्बो । एवं सव्व-

सब तिर्यक्त, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त श्रोर सामान्य देवोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी श्रोर सर्वार्थिसिद्धिके देवोंमे मोहनीयकी जघन्य म्थितिके उदीरक जीव सबसे स्ताक हैं। उनसे अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात-गुरो हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

ह ४६६. भुजगार स्थित उदीरणामे वहाँ ये तेरह अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक । समुत्कीर्तनानुगमकी अपेचा निर्देश दा प्रकारका है—आंघ और आदेश । आंघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव हैं । इसीप्रकार मनुष्यित्रकमें जानना चाहिए । आदेशसे नारिक्योंमें मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव हैं । इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्येख्न, मनुष्य अपयोप्त और सामान्य देवोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमे जानना चाहिए । आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थितिद्व तकके देवोंमें मोहनीयकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

१४६७. स्वामित्वकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—अंघ और आदेश। आंघस भुजगार और अवस्थित स्थितिकी उदीरणा किसके होती हैं श अन्यतर मिध्यादृष्टिक होती हैं। इतनी विशेषता हैं कि श्रेणिकी विवक्षामें भुजगार स्थितिकी उदीरणा सम्यग्दृष्टिके भी प्राप्त होती हैं। किन्तु इसकी यहाँ विवक्षा नहीं हैं। अल्पतर स्थितिकी उदीरणा किसके होती हैं श अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिध्यादृष्टिके होती हैं। अवक्तव्य स्थितिकी उदीरणा किसके होती हैं श जो गिरनेवाला अन्यतर उपशामक मनुष्य या (मरण होनेपर) देव प्रथम समयमें मोहनीयकी स्थितिका उदीरक हैं उसके मोहनीयकी अवक्तव्य स्थितिकी उदीरणा होती हैं। इस्रीप्रकार मनुष्यित्रकमें कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें देव पदका आलाप

णेरइय-तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खतिय०-देवा जाव सहस्सार ति । णवरि श्रवत्त० णित्थि। पंचि०तिरि०श्रपञ्ज०-मणुसञ्चपञ्ज० सन्वपदाणि कस्स ? श्रण्णद० । श्राणदादि सन्वद्वा ति मोह० श्रप्प० कस्स ? श्रण्णदरस्स । एवं जाव० ।

४६८. कालाणु० दुविहो णि० — श्रोघेण श्रादेसे०। श्रोघेण मोह० सुज० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया। श्रप्प० जह० एयस०, उक्क० तेवद्विसागरोवम-सदं तिण्णि पिलदो० सादि०। श्रवद्वि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। श्रवत्त० जह० उक्क० एयसमश्रो।

४६९. श्रादेसेण णेरइय० मोह० भ्रुज० जह० एयम०. उक्क० तिण्णि समया। श्राप्य० जह० एयम०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देखणाणि। श्रावद्वि० श्रोघं। एवं पढमाए। सावरि सागरोवमं देखणं।

नहीं करना चाहिए। इभीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यक्क, पब्चेन्द्रिय तिर्यक्कित्रिक श्रीर सामान्य देशोसे लेकर सहस्रार तकके देशोमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें श्रवत्तन्य पद नहीं है। पब्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपयीप्त श्रीर मनुष्य श्रपयीप्तकोंमें सब पद किसके होते हैं। श्रानत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देशोमें मोहनीयकी श्रव्यतरिकी उदीरणा किसके होतो हैं। श्रान्तकप्तरिकी होती है। इभीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

े ४६८. कालानुगमकी अपेचा निर्देश दा प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे भोहनीयकी मुजगारस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रार समय है। श्रल्पतर स्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त श्रोर तीन पत्य श्रिषक एक सो त्रेसठ सागर है। श्रवस्थित स्थिनिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट क ल श्रन्तर्मुहर्त है। श्रवक्तव्यस्थितिके उदीरकका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है।

विश्रापार्थ—स्थितिविभक्ति पु० भाग ३ पृ० ६८ में मुजगार आदि तीन पदोका स्थिति-सत्त्वकी अपेचा जैसा खुलासा (क्या हे उसी प्रकार यहाँ उदीरणाकी अपचा खुलासा कर लेना चाहिए। इतना विशेष है कि यह काल उदीरणाकी अपेचा जैसे घटित हो वैसे आलापके साथ कहना चाहिए। अवक्तव्य स्थिति उदीरणा उपशमश्रेणिसे विस्ते समय मृद्मसापराय गुणस्थानके प्रथम समयमे या मरण कर देव होनेके प्रथम समयमे ही होती है, इस्र्लिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा।

\$ ६६६ आदेशसे नार्गकयोमे माहनीयकी मुजगारिस्थितिक उदीरकरा जवन्य काल एक समय है आर उत्कृष्ट काल तीन समय हैं। अल्पतरिथितिक उदीरकरा जवन्य काल एक समय ह और उत्कृष्ट काल कुछ ततीस सागर है। अवस्थितिक उदीरकका काल ओवके समान है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमे जानना चाहिए। इतना विशासा है कि यहाँ अल्पतरिस्थानके उदीरकका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर है।

विशेषार्थ---नग्कमे असबी जीवारी ५२कर उत्पत्ति सम्मव है, इन अपत्तास यहाँ पर सुजगारस्थितिकी उदीरणाके तान समय ही बन सकत है। यही कारण ह कि नारिकयोंमे १ ४७०. बिदियादि सत्तमा ति भुज० जह० एयस०, उक्क० बे समया । ऋष०
 जह० एयस०, उक्क० सगद्विदी देख्णा । श्रविद्वदमोघं ।

§ ४७१. तिरिक्खेसु भुज०-त्रबद्धिः ओघं। ऋष्वः जहः एयसः, उक्कः तिण्णि पितदोः भादिरेयाणि। एवं पंचिदियतिरिक्खितिए। पंचिं०तिरिक्खश्रपज्ञ०-मणुसऋपञ्ज० भुज० जहः एयसः, उक्कः चत्तारि समया। ऋष्व०-श्रबद्धिः जहः एयसः, उक्कः अंतोमुः।

४७२. मणुसतिए भ्रुज० जह० एयम०, उक्क० चत्तारि समया । स्रप्प० जह० एगस०, उक्क० निण्णि पत्तिदो० पुन्तकोडितिभागेण सादिरेयाणि । एविरि मशुमिणी० अंतोमुहूनेण सादिरेगे । अवद्वि०-स्रवत्त० स्रोघं ।

४७३. देवेसु भ्रज० जह० एयम०, उक्क०, तिण्णि समया। श्रप्प० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीस सागरोवमं। अवट्ठि० श्रोघं। एव भवण०-वाणवंत०। णविरि मुजगारिस्थितिके उदीर कका उत्कृष्ट काल तीन समय कहा है। यहाँ श्रद्धान्तय, शर्गर महण् श्रीर संक्लेशत्त्रयसे भुजगारके तीन समय प्राप्त कर मुजगार रिथित उदीरणाके तीन समय प्राप्त करने नाहिए। शेष कथन सुगम है।

१४७०. दूरारीसं लेकर सानवी पृथिवी तकके नार्यक्रयोम मुजगारस्थितके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दा समय है। अल्पनरस्थितिके उदीरका। जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी अपनी स्थिनिप्रमाण है। अवस्थित-स्थितिके उदीरका काल श्रोधके समान है।

विशोपार्थ--इन नरकोंमें ऋसंज्ञी जीव मरकर नहीं उत्पन्न होते, इसलिए इनमें खढ़ात्तय श्रीर संक्लेशत्त्रयसे ही भुजगारस्थिति उदीरकके दो समय प्राप्त होने हैं। प्राप कथन सुगम है।

१४७१. तिर्यञ्चोंमे मुजगार श्रोर श्रवस्थितस्थितिके उदीरकका काल झांघके समान है। श्रवप्तरस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल साधिक तीन पत्य है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रय तिर्यचित्रिकमे जानना चाहिए। पंचेन्द्रिय तिर्यच श्रपयीप्त श्रोर मनुष्य श्रपयीप्तकोंमे मुजगारस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल चार समय है। श्रवप्तर श्रोर अवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है।

४७२ मनुष्यत्रिकमं भुजगारस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है। श्रव्णतरस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय श्रीर उकुष्ट काल पूर्वकोटिका त्रिभाग श्रिधिक तीन पत्य है। इतनी विशेषना है कि मनुष्यिनीमें यह काल अन्तर्मुहूर्त श्रिधिक तीन पत्य है। श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्यस्थितिक उदीरकका काल श्रोघवे समान है।

१४७३ देवांम मुजगारस्थितिके उदारकका जवन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय है। अलपतरस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय ओर उन्कृष्ट काल तेतीस सागर है। अवस्थितस्थितिके उदीरकका काल ओघके समान है। इसीप्रकार भवनवासी ओर सगद्विदी । जोदिसियादि सहस्सारे ति एवं चैत्र । णवरि भ्रुज० जह० एयस०, उक्क० बेसमया । आणदादि सन्बद्धा ति मोह० अप्प० जह० उक्क० जहण्णुकस्सद्विदी । एवं जाव० ।

१ ४७४. अंतराणु० दुविहो णि० — स्रोघेण स्रादेसे०। ओघेण मोह० भ्रज०-स्रवद्वि० जह० एयस०, उक्क० तेवद्विमागरोत्रममदं तिण्णि पिलदोवमं सादिरेयं। स्रप्प० जह० एयस०, उक्क० स्रंतोग्र०। अवत्त० जह० अंतोग्र०, उक्क० उवह्र-पोग्गलपरियद्वं।

ः ४७४. आदेसेण णेरइय० भ्रज०-श्रवद्वि० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोत्रमं देखणं । अप्प० श्रोघं । एवं सन्वणेरइय० । णवरि सगद्विदी देखणा । तिरिक्खेसु भ्रज०-त्रविद्वि० जह० एयस०, उक्क० पित्तदो० श्रसंखे०भागो । श्रप्प०

व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रपनी-श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। इयोतिपियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमे इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें भुजगारस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। श्रानव कल्पसं लेकर सर्वायसिद्धितकके देवोंमें मोहनीयकी श्रल्पतरस्थितिके उदीरकका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल श्रपनी-श्रपनी जघन्य श्रीर उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ -- कालका प्रारम्भमें श्रोषसे श्रोर कतिपयगति मार्गणाके भेदोंकी श्रपेत्ता जो स्पष्टीकरण किया है उसे ध्यानमे लेनेपर रोप गतिमार्गणाके भेदोंमें स्पष्टीकरण करनेमें कठिनाई नहीं जाती, इसलिए श्रलगसे स्पष्टीकरण नहीं किया है।

् ४७४. श्रन्तरानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दं प्रकारका है —श्राघ श्रोर श्रादेश । श्रांघसे मोहनीयकी भुजगार श्रोर श्रवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक तीन पल्य श्रिष्ठिक एक सौ त्रेसठ सागर है। श्रव्पतरस्थितिके उदीरकका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्भुहूर्त है। श्रवक्तव्यस्थितिके उदीरकका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्भुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर उपार्थ पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

निश्रोपार्थ — पहले श्राहपतरस्थितिके उदीरकका उत्कृष्ट काल साधिक तीन पत्य श्राधिक एक सौ त्रेसठ सागर बतला आये हैं। वही यहाँ मुजागर और श्रावस्थितस्थितिके उदीरकका उत्कृष्ट श्रान्तरकाल प्राप्त होता है, इसलिए यह तत्प्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

१ ४७५. श्रादेशसे नारिकयोमे भुजगार श्रीर श्रवस्थितस्थितिके उदीरकका जवन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है। श्रल्पतरस्थितिके उदीरकका श्रन्तरकाल श्रोघके समान है। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम श्रपनी-श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। तिर्यञ्चोंमें भुजगार श्रीर श्रवस्थितिके उदीरकका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल पल्यके श्रमंख्यातवे मागप्रमाण है। श्रल्पतरस्थितिके उदीरकका श्रान्तरकाल श्रोघके समान

श्रोघं । पंचिदियतिरिक्खितए भ्रज्ञ०-श्रविद्वि जह० एयसमश्रो, उक्क० पुन्तकोडिपुधत्तं । पंचिदियतिरिक्खश्रपञ्ज०-मणुमश्रपञ्ज० भ्रज्ञ०-श्रविद्वि जह० एयस०, उक्क० अंतोम्रु० ।

१४७६. मणुमतिए भुज०-त्रविद्विजह० एयस०, उक्क० पुन्वकोडी देसूणा। त्रवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० पुन्वकोडिपुधत्तं। ऋष्प० स्रोघं०।

४७८. णाणाजीवभंगविचयाणु० दुविहो णि० — ऋोघेण ऋादेसे० । ओघेण मोह० भुज०-ऋप्प०-ऋवद्वि० णिय० ऋ'त्थ, सिया एदे च ऋवत्तगो च, सिया एदे

है। पंचेन्द्रिय तिर्यंचित्रिकमें भुजगार श्रीर श्रवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच श्रपर्याप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्तकोमे भुजगार, श्रन्पतर श्रीर यवस्थितस्थितिक उदीरकका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रन्तर्भृहर्त है।

विशेषार्थ—सामान्य तिर्यं वोमें एकेन्द्रिय जीव भी सम्मिलित है श्रोर उनमे श्रल्पतर स्थितिकी उदीरणात्रा उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। उसे ख्यालमें रखकर ही यहाँ सामान्य निर्यं वोमें भुजगार श्रोर श्रवस्थितरिथितके उदीरकका उत्कृष्ट श्रन्तर-काल पल्यके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन मुगम है।

्र ४७६ मनुष्यत्रिकमे भुजगार श्रीर अवरिथतस्थितिके उदीरकका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमागा है। श्रवक्तव्यक्ष्यितिके उदीरकका जघन्य श्रन्तरकाल श्रन्तर्भुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल प्रवंकोटिपृथकत्वप्रमागा है। श्रवणतरस्थितिके उदीरकका श्रन्तरकाल श्रोघके समान है।

त्रिशोपार्थ — जो मनुष्य आठ वर्ष अन्तर्मृहर्त होनेपर सम्यक्त्व उपार्जित कर भवके अन्तर्मुहर्न पूर्व तक सम्यग्हिष्ट रहकर मिथ्याहिष्ट हो जाता है उसीके मुजगार और अवस्थित-स्थितिके उनीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि बनता है। इसी तथ्यका ध्यानमें रखकर मनुष्यित्रकों यह अन्तरकाल उक्त कालप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

४४७०. देवोंमें भुजगार श्रोर श्रवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल साधिक श्रठारह सागर है। श्रव्पत्तर स्थितिके उदीरकका श्रन्तरकाल श्रोघकं समान है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रपनी-श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। श्रान्तकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोमें श्रन्पतर स्थितिके उदीरकका श्रन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार श्रनाह।रक मार्गणातक जाना चाहिए।

১ ৪৩০. नाना जीवोंकी अपेत्ता भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—आध श्रीर आदेश। श्रोवसे मोहनीयकी भुजगार, श्रल्पतर और श्रवस्थितस्थितिके उदीरक जीव नियमसे च अवत्तगा च । आदेसेण ऐरइय० अष्प०-अविद्वि० णियमा अत्थि, सिया एदे च अजगारमा च । एवं सन्वरोरइय०-सन्वर्षचिदियतिरिक्ख-देवा जाव सहस्सार ति । तिरिक्खेसु अज०-अष्प०-अविद्वि० णिय० अत्थि । मणुसतिए अष्प०-अविद्वि० णिय० अत्थि । सेमपदा भयणिजा । मणुसस्रपज० सन्वपदा भयणिजा । आणदादि सन्वद्वा ति अष्प० णिय० अत्थि । एवं जाव० ।

ः ४७९. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ग्रोघेण त्रादेसे० । श्रोघेण त्रवत्त०उदीर० सन्वजी० केव० ? त्रणंतभागो । भ्रुज० त्रसंखे०भागो । अवट्ठि० संखे०भागो ।
त्रप्त० संखेजा भागा । एवं सन्वग्णेरइय० सन्वितिक्ख०-मणुसत्रपञ्ज०-देवा जाव
सहस्तार ति । णवरि त्रवत्त० णित्थ । मणुसेसु अवट्ठि० संखे०भागो । त्रप्प०
संखेजा भागा । सेसपदा त्रसंखे०भागो । मणुमपज्ज०-मणुसिणी० त्रप्प० संखेजा
भागा । सेसपदा संखे०भागो । त्राणदादि सन्वद्वा त्ति णित्थि भागाभागो । एवं जाव०।

ं ४⊏०. परिमाणाणु० द्विहो णि०—ओघेण त्रादेसे०। त्रोघेण मोह०

हैं, कदाचित् ये नाना जीव हैं श्रोर एक श्रवक्तव्यिध्यितिका उदीरक जीय है, कदाचित् ये नाना जीव हैं श्रोर नाना श्रवक्तव्यिधितिके उदीरक जीव हैं। श्रादेशसे नारिक्योमें श्रव्यत्तर श्रोर श्रवस्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये नाना जीव हैं श्रोर एक मुजगारिध्यितिका उदीरक जीव हैं, कदाचित् ये नाना जीव हैं श्रोर एक मुजगारिध्यितिका उदीरक जीव हैं। इसी प्रकार सभी नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय निर्यक्ष, सामान्य देश श्रीर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। तिर्यक्षोंमें मुजगार, श्रव्यवर श्रीर श्रविधितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। मनुष्यित्रकमें श्रव्यवर श्रीर श्रविधितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। मनुष्य श्रपयीप्तकोंमें सब पद भजनीय हैं। श्रानत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें श्रव्यवरस्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४७६. भागाभागानुगमकी अपेत्ता निर्देश दा प्रकारका है—श्रोव श्रीर आदेश। श्रोवसे श्रवक्तव्यिस्थितिके उदीरक जीव सब जीवोके कितने भागप्रमाण हैं श्र अनन्तवें भागप्रमाण हैं। अवस्थितिके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण है। श्रवस्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सब तियंक्र, मनुष्य अपर्याप्त श्रीर सामान्य देवोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्य पद नहीं है। मनुष्योंमें अवस्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। श्रेष पदीके उदीरक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं। मनुष्यांमें श्रविके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। श्राप पदीके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। मनुष्य पर्याप्त श्रीर मनुष्यिनियोंमें अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। श्राप पदीके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। श्रानत कल्पसे लेकर सर्वार्थिसिद्धि तकके देवोंमें भागाभाग नहीं है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४८०. परिमाणानुगमकी अपेत्रा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। ओघसे

भुज०-श्रप्प०-श्रवद्वि० केतिया ? अगंता । अवत्त० केति० ? संखेओ । एवं तिरि-क्खेस । णवरि अवत्त० णित्थ । आदेसेण ऐरइय० सव्वपदा केति० ? असंऐजा । एवं सव्वऐरइय०-सव्वपंचिं०तिरिक्ख-मणुस अपज०-देवा भवणादि जाव सहस्सार ति । मणुसेस अवत्त० केति० ? संखेजा । सेमपदा केति० ? असंखेजा । मणुसपज्ञ०-मणुमिणी० सव्वपदा केति० ? संखेजा । आणदादि मव्बद्वा ति अप्प० केति० ? असंखेजा । णवरि मव्बद्वे संखेजा । एवं जाव० ।

४८१. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ग्रोघेण आदेसे०। श्रोघेण मोह० तिण्णि पदा केव० ? सन्वलोगे । अवत्त० लाग० असंखे०मागे । एवं तिरिक्खा० । णविर अवत्त० णात्थि । सेसगदीसु मन्वपदा लोग० असंखे०मागे । एवं जाव० ।

ं ४⊏३. त्रादेसे ऐरइय० सब्वपद० लोग० त्रमंखेजदिभागो छचोइस०

मोहनीयकी मुजगार, श्राल्पतर श्रीर श्रावस्थितस्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रानन्त हैं । श्रावक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कितने हें ? संख्यात हैं । इसीप्रकार तिर्यक्रचोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें श्रावक्तव्यपद नहीं है । श्रादेशसे नारिक्योंमें सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रासंख्यात हैं । इसीप्रकार सब नारकी, सब पश्रोत्त्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य श्राप्याप्त, सामान्य देव श्रीर भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतक देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्योंमें श्रावक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं ? श्राप पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रासंख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त श्रीर मनुष्यिनियोंसे सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । श्राननकल्पसे लेकर सर्वार्थिनिद्ध तकके देवोंमें श्राव्यतर्यितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रासंख्यात हैं । इतनी विशेषता है कि सर्वार्थिसिद्धिमें संख्यात हैं । इसाप्रकार श्रानाहारक मार्गणा तक जानना घाहिए ।

९४८९. चेत्रानुगमकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रांघ झौर आदेश। श्रांघसे मोहनीयके तीन पदोंके उदीरक जीवोंका कितना चेत्र हैं १ सर्व लोक चेत्र है। श्रवक्तव्यपदके उदीरक जीवोंका केत्र ससंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार सामान्य तिर्यव्योंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमे श्रवक्तव्यपद नहीं है। शेप गतियोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

६ ४८२. स्पर्शनानुगमकी अपेज्ञा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। आंघसे भोहनीयके तीन पदोंके उदीरक जीवोंने सर्व लोक जेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण जेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सामान्य तिर्यक्कोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है।

े ४८३. ऋादेशसे नारिकयोंमें सब परोंके उदीरक जीवोंने लोकके अमंख्यातवें भाग

१. ता०प्रती श्रसंखेरजा इति पाठः। २, श्रा०-ता०प्रस्योः श्रसंखेरजा इति पाठः।

देख्यणा। एवं विदियादि सत्तमा ति। णवरि सगपोसणं। पढमाए खेतं। सन्व-पंचिदियतिरिक्ख-सन्वमणुस सन्वपद० लोग० असंखे०भागो सन्वलोगो वा। णवरि मणुसतिए अवत्त० लोग० असंखे०भागो। देवेसु मोह० तिरिणपद० लोग० असंखे०-भागो अष्ट-णवचोद्दस० देख्या। एवं सन्वदेवाणं। णवरि सगपदाणं सगपोसणं णेदन्वं। एवं जाव०।

१४८४. कालाणु० दुविहो णि०—-ग्रोघेण श्रादेसेण य । ग्रोघेण मोह० भ्रुज०-ग्रप्प०-श्रवद्वि० सन्बद्धा । श्रवत्त० जह० एयम०, उक्क० मंखेजा समया । त्रादेसेण णेरइय० भ्रुज० जह० एयस०, उक्क० श्रावत्ति० श्रसंखे०भागो । श्रप्प०-श्रवद्वि० सन्बद्धा । एवं सन्वणेरइय०-सन्वर्णचिदियतिरिक्ख-देवा जाव सहस्सार ति ।

्र ४८४. तिरिक्खेसु सन्त्रपदा सन्त्रद्धा । मणुसेसु णारयभंगो । णवरि अवत्त० स्रोघं । मणुसपञ्ज०-मणुसिणी० श्रप्प०-स्रवद्धि० सन्त्रद्धा । भुज०-स्रवत्त० जह० एयस०, उक्क० संखेजा समया । मणुसश्चपञ्ज० भुज० जह० एयस०, उक्क० श्रावित्त०

श्रीर त्रसनालांके चौद्द भागोंमेसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्वर्शन किया है। इसीप्रकार दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारिकयोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्वर्शन द्वितीयादि पृथिवियोंके कहना चाहिए। प्रथम पृथिवांके नारिकयोंमें स्वर्शन चेत्रके समान है। सब पद्धोन्द्रिय तिर्यञ्च श्रीर सब मनुष्योंमें सब पद्दोंके उद्दीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग श्रोर सर्व लोक चेत्रका स्वर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यित्रकम अवक्तव्यपद्के उद्दीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्वर्शन किया है। देवोंमें मोहनीयके तीन पदोंके उद्दीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौद्द भागोंमेंसे कुछ कम आठ श्रोर नो भागप्रमाण चेत्रका स्वर्शन किया है। इसीप्रकार सब देवोंमें जानना चाहिए। इत्सनी विशेषता है कि अपने-अपने पदोंका श्रपना-अपना स्वर्शन ले श्राना चाहिए। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४८४. कालानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है— आंघ भोर आदेश। श्रोघसे मोहनीयकी भुजगार, श्रव्यतर श्रोर अवस्थितस्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। अवक्तव्य-स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्रादेशसे नारिकयोंमें भुजगारिश्यितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल श्राविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सब नारकी, सब पक्षेत्रिय तिर्यक्ष, सामान्य देव श्रीर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए।

§ ४८५. तिर्यक्कोंमें सब पदोंके उदीरकोंका काल सर्वदा है। मनुष्योंमें नारिकयोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें स्रवक्तव्यपदके उदीरकोंका काल स्रोघके समान है। मनुष्य पर्याप्त स्रोर मनुष्यितियोंमें ऋल्पतर श्रीर श्रवस्थितिथितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। मुजगार श्रीर श्रवक्तव्यितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय स्रोर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें भुजगारिश्यितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय त्र्रसंखे०भागो । श्रप्प०-त्र्रवद्वि० जह० एगस०, उक्क० पत्तिदो० श्रसंखे०भागो । आणदादि सव्बद्घा त्ति अप्प० सव्बद्धा । एवं जाव० ।

ः ४८६. अंतराणु० दुविहो णि०—ग्रोघेण आदेसे० । श्रोघेण तिएहं पदाणं णित्थ ग्रंतरं । अवत्त० जह० एयम०, उक्त० वासपुधतं । एवं तिरिक्खंसु । णविर अवत्त० णित्थ । श्रादेसेण ऐरइय० भ्रज० जह० एयस०, उक्त० अंतोम्र० । अप्प०- अविष्ठि एतिथ अंतरं । एवं मन्त्रणेरइय० सन्वपंचिदियतिरिक्ख-देवा जाव सहस्सार ति । मणुसतिए एगरयभंगो । एगविर अवत्त० श्रोघं । मणुसग्रपज्ञ० सन्वपदा जह० एयस०, उक्त० पितदो० श्रसंखे०भागो । श्राणदादि सन्बद्धा ति श्रप्प० णित्थ अंतरं । एवं जाव० ।

🖇 ४८७. भावाणुगमेण सन्वत्थ स्रोदइयो भावो ।

६ ४८८. ऋष्पाबहुआणु० दुविहो णि०—-ग्रोघेण श्रादेसे०। श्रोघेण सञ्बत्थो० अवत्त । सुज्ञ अर्णतगुणा । अविद्वि असंखे०गुणा । ऋष्य० संखे०गुणा ।

४८९. आदेसेण णेग्इय० महात्थो० भूज०। अविद्वि० असंखे०गुणा। श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविक श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतर और अविस्थितिक उदीरकोंका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यक श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्रानतकल्पमे लेकर सर्वार्थमिद्धितकके देवोंमें अल्पतरस्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इमीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जाना चाहिए।

हिन्द्रश्वास्तरानुगमकी अपेना निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। श्रोघसे तीन पदोंके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। अवक्तव्यस्थितिके उदीरकोंका ज्ञान्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षप्रथक्तव है। इसीप्रकार तिर्यक्कोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है। आदेशसे नारिकयोमें भुजगारिस्थितिके उदीरकोंका ज्ञान्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मूहूर्त है। अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार सब नारकी, सब पख्रीन्द्रय तिर्यक्ष और सामान्य देवोंसे लंकर सहस्रार कल्पतकके देवोमें जानना चाहिए। मनुष्यित्रकमे नारिकयोंके समान मंग है। इतनी विशेषता है कि इनमे अवक्तव्यपदका मंग आघके समान है। मनुष्य अपयोप्तकोंमें सब पदोंके उदीरकोंका ज्ञान्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। आनतकल्पसं लेकर सर्वार्थसिद्धितकक देवोंमें अल्पतरिधितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१ ४८७. भावानुगमकी श्रपंत्रा सर्वत्र श्रोदयिक भाव है।

§ ४८८. ऋल्पबहुत्वानुगमकी ऋपेज्ञा निर्देश दो प्रकारका है—ऋ। इ और आदेश। स्त्रोघसे अवक्तव्यस्थितिके उदोरक जीव सबसं स्तोक हैं। उनसे मुजगारस्थितिके उदोरक जीव स्त्रमन्तगुर्गो हैं। उनसे अवस्थितिके उदोरक जीव असंख्यातगुर्गे हैं। उनसे अल्पतर-स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुर्गे हैं।

ं ४८६. श्रादेशसे नारकियोंमे भुजगारस्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे

त्रप्प० संखे०गुणा । एवं सन्वणेरइय०-सन्वतिरिक्ख-मणुसञ्चपञ्ज०-देवा जाव सहस्मार त्ति । मणुसेसु मन्वत्थो० त्रवत्त०द्विदिउदी० । भुज० त्रसंखे०गुणा । त्रवद्वि० त्रसंखे०गुणा । त्रप्प० मंखे०गुणा । एवं मणुसपञ्ज०-मणुसिणी० । स्वविर संखे०गुर्स कायन्वं । त्राणदादि मन्वद्वा त्ति णत्थि त्रप्पाबहुअं । एवं जाव० ।

४९०. पदणिक्येवे ति तत्थ इमाणि । तिण्णि ख्राणिख्रोगहाराणि—समु-कित्तणा सामित्तं अप्पावहुत्रं चेदि । समुक्ति० दुविहं — जह० उक्त० । उक्तस्से पयदं । दुविहो णि०-—ख्रोघेण ख्रादेसेण य । ख्रोघेण मोह० अत्थि उक्त०विष्टु-हाणि०-ख्रवद्वा० । एवं चदुगदीसु । णविर ख्राणदादि सन्बद्वा ति ख्रत्थि उक्त०हाणी । एवं जाव० ।

६ ४९१. एवं जहण्णयं पि णेदच्वं ।

े ४९२. मामित्तं दुविहं—जह० उक्क० । उक्सस्से पयदं । दुविहो ग्णि०— स्रोघेण आदेसेण य । स्रोघेण मोढ० उक्क०वड्ढी कस्म ? स्रएणद० तप्पास्रोगगजहण्ण-द्विदिमुदीरेमाणो उक्कस्सद्विदं पबद्धो तस्स स्रावित्यादीदस्स तस्म उक्क०वड्ढी । तम्सेव से काले उक्क० स्रवद्वाणां । उक्क०हाणी कस्म ? स्रण्णद० उक्कस्मद्विदिमुदीरेमाणो

श्रवस्थितस्थितिके उद्दारक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं । उनसे श्रल्पतरस्थितिके उद्दारक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार सब नारकी, सब निर्यञ्च, मनुष्य न्यपर्याप्त, श्रीर सामान्य देवींस लेकर सहस्रार कल्पतकके देवींमें जानना चाहिए । मनुष्योंमें श्रवकत्यस्थितिक उद्दीरक जीव सबसे स्ताक हैं । उनसे भुजगारस्थितिके उद्दीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं । उनसे श्रवस्थित स्थितिके उद्दीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं । उनसे श्रवस्थित हैं । उनसे श्रवण्यातगुणे हैं । उनसे श्रवण्यातगुणे हैं । इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त श्रोर मनुष्यित्वयोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें श्रयस्थातगुणे के स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिए । श्रानतकलपसे लेकर सर्वार्थ सिद्धितकके देवों से श्रवण्याहत्व नहीं है । इसीप्रकार श्रनाहारक सार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४६०. पद्दिन्तेपका अधिकार है । उभमे ये तीन अनुयोगद्वार है—समुत्कीर्तना, स्वामित्व श्रोर अल्पवहुत्व । समुत्कीर्तनाकी अपेचा निर्देश दे। प्रकारका है—जघन्य श्रोर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है — श्रोघ श्रोर आदेश । श्रोघसे भोहनीयकी उत्कृष्ट दृद्धि, हानि श्रोर श्रवस्थान है । इसाप्रकार चारो गतियोमे जानना चाहिए। इननी विशेषता है कि श्रानतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोमे उत्कृष्ट हानि है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४९१. इसीप्रकार जवन्य पदिनच्चेपका भी जानना चाहिए ।

ू ४८६२. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—जोघ और आदेश । आघमें मोहनीयकी उत्कृष्ट दृद्धि किसके होती है ? नत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाला अन्य पर जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, एक आविलिके नाद उत्कृष्ट दृद्धि होती है । उत्तीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है । उत्कृष्ट हानि किसके हानी है ? उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर

उक्तस्सयं द्विदिखंडयं हणदि, तम्म उक्क०हाणी । एवं चदुगदीसु । णगरि पंचि०तिरिक्खन्नपञ्ज०-मणुसन्नपञ्ज० उक्क०वड्ढी कस्स ? अण्णद० तप्यात्रोग्गजहण्णद्विदिसुदीरेमाणो तप्पात्रोग्गजकस्सद्विदिं पगद्धो तस्स आगिलयादीदस्स उक्क०वट्ढी । तस्सेव से
काले उक्क० अवद्वा० । उक्क०हाणी कस्स ? अण्ण० तिरिक्खो वा मणुसो उक्कस्सद्विदिसुदीरेमाणो उक्तस्मयं द्विदिखंडयं पादयमाणो अपज्ञत्तएस उववण्णो तस्स पढमे द्विदिखंडये हदे तम्म उक्क०हाणी० । आग्रादादि एवगेवजा त्ति उक्क०हाणी कस्स ?
अण्णद० तप्पात्रोग्गुकस्मद्विदिसुदीरेमाणो पढमसम्मत्ताहिसुहो जादो तेण पढमे द्विदिखंडए हदे तम्म उक्क०हाणी० । आग्राहिसादि मन्बद्वा त्ति उक्क०हाणी कस्स ?
अण्णद० वेदयसम्माइद्विस्स आणंताणुबंधी विसंजोएतस्म पढमे द्विदिखंडए हदे तस्स
उक्क०हाणी । एवं जाव० ।

४९३. जह० पयदं । दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मोह० जह०वड्ढी कस्स ? श्रण्णद० जो समयूणमुक्कस्सिट्टिदिमुदीरेमाणो उक्कस्सिट्टिदिमुदीरेदि तस्स जह०वड्ढी । जह०ढाणी कस्म ? श्रण्णद० जो उक्कस्मिट्टिदिमुदीरेमाणो ममयूण-द्विदिमुदीरेदि तस्स जह०ढाणी । एगदरत्थावट्ढाणं । एवं चदुगदीसु । णविर श्राणदादि

जीव उत्कृष्ट स्थितिकाएडकका हुनन करता है उमके उत्कृष्ट हाति होती है। इक्षीप्रकार चारो गितियों में जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पर्व्चित्रिय तिर्यव्च श्रार्थाप्रश्चीर मनुष्य अपर्याप्तकों उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती हैं? तत्प्रायोग्य जयन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाला अन्यतर जो जीव तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, एक आविल के बाद उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती हैं। उनीके श्रानतर समयमें उत्कृष्ट श्रवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं? उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जो श्रान्यतर तिर्यव्च या मनुष्य उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात करना हुआ अपर्याप्तकों उत्पन्न हुआ, उसके प्रथम स्थितिकाण्डकका घात करने पर उत्कृष्ट हानि होती हैं। आततकल्यसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवों उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं? जो तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला श्रान्यतर जीव प्रथम सम्यक्त्वके श्राममुख है उसके प्रथम स्थितिकाण्डकके घात करने पर उत्कृष्ट हानि होती हैं। श्रनुदिशसं लेकर सर्वार्थिनिद्धि तकके देवों उत्कृष्ट हानि किसके होती हैं? श्रान्यतर जो वेदकसम्यग्रहिष्ठ जीव श्रानतानुवन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर रहा है उसके प्रथम स्थितिकाण्डकके घात करने पर उत्कृष्ट हानि होती हैं। इसीप्रकार श्रानहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१४६३ जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर आदेश। श्रोघसं माहनीयकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? अन्यतर जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करता है उसके जघन्य वृद्धि होती है। जघन्य हानि किसके होती ? अन्यतर जो उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला एक समय कम स्थितिकी उदीरणा करनेवाला एक समय कम स्थितिकी उदीरणा करता है उसके जघन्य हानि होती है। इसमसे किसी एक जगह जघन्य अवस्थान होता है। इसीप्रकार चारों गतियोंमे जानना चाहिए। इतनी विश्वा है कि श्रानतल्पकस

सन्बद्घा ति जह ० हाणी कस्स ? अण्णद० श्रधद्विदिं गालेमाणस्स तस्स जह ० हाणी। एवं जाव०।

४९४. ऋष्पबहुअं दुविहं—जह० उक्त०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि० ओघेण ऋादेसे०। ऋोघेण भव्वत्थो० उक्त०हाणी। वड्डी ऋवट्ठाणं च विसेमा०। एवं चदुगदीसु। णविः पंचितिस्क्लिअपऊन०-मणुसऋपऊन० सव्वत्थो० उक्त०वड्डी ऋवट्ठाणं च। हाणी संखे०गुणा। ऋाणदादि सव्वट्ठा ति णित्थि ऋष्पाबहुअं। एवं जाव०।

ः ४९४. जह० पयदं । दुविहो णि०—स्रोघेण स्रादेसे० । स्रोघेण मोह० जह०विष्ट-हाणि-स्रवद्वाणाणि मारिमाणि । एवं चदुगदीसु । णवरि स्राणदादि सन्बद्धा ति णत्थि स्रप्याबहुअं । एवं जाव० ।

\$ ४९६. बिहुउदीरमे ति तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि—समुक्तित्तणा जाव अप्पाबहुए ति । समुक्तित्तणाणु० दृविहो णि० — ग्रोघेण आदेसेण य । त्रोघेण मोह० अत्थि अपंखे०भागवहि-हाणी संखे०भागवहि-हाणी संखे०भागवहि-हाणी असंखे०भागवहि-हाणी अविद्वि अवत्त । आदेसेण ग्रेरइय० अत्थि तिण्णिवहि-हाणी-अविद्वि । एवं सन्वग्रेर०-सन्वतिरिक्ख०-मणुमअपञ्च०-देवा जाव सहस्मार ति ।

लेकर सर्वार्थिसिद्ध तकके देवोंमे जघन्य हानि किसके होती है ? ख्रधःस्थितिकी गालना करनेवाला जो अन्यतर जीव है उसके जघन्य हाति होती है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

४८४. अलबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य श्रोर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण हैं । निर्देश यो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रदेश । श्रोघमे उत्कृष्ट हानि सबसे म्तांक हैं । उत्कृष्ट बुद्धि श्रोर श्रवस्थान विशेष श्रीवक हैं । उसीपकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिये व श्रपयीप्त श्रोर मनुष्य श्रपयीप्तकोंमें उत्कृष्ट बुद्धि श्रोर अवस्थान सबसे स्तोक हैं । उससे उत्कृष्ट हानि संख्यानगुणी हैं । श्रानत कल्पसे लेकर सर्वार्थिसिद्धि तकके देवोंमें श्रह्मबहुत्व नहीं हैं । इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

६४९८ जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दा प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसं मोहनीयकी जघन्य वृद्धि, हानि श्रोर श्रवस्थान समान हैं। इसीप्रकार चारों गनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रानतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें श्रल्पबहुत्व नहीं है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१४६६. बृद्धि उदीगाका प्रकरण है। उसमें ये तेरह अनुयोगद्वार है—समुत्कीर्तनासे लकर अल्पबहुत्स तक। समुत्कीर्तनाका निर्देश दो प्रकारका है—आव और आवश । आवसे मोहनीयकी असंख्यात भागवृद्धि-हानि, संख्यात भागवृद्धि-हानि, संख्यात भागवृद्धि-हानि, अवस्थान और अवक्तव्यपद है। आदेशसे नारिकयोंमें नीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थान पद है। इसप्रकार सम नारकी, सम तियंच, मनुष्य अपर्याप्त और सामान्य

मणुसतिए ओघं । त्र्याणदादि मन्त्रद्वा ति त्र्यत्थि असंखे०भागहाणी संखे०भागहाणी । एवं जाव० ।

§ ४९७. सामित्ताणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे०। श्रोघेण मोह० तिण्णिवड्डि०-श्रवद्धि कस्स १ श्रण्णद० मिच्छाइड्डिस्स । तिरिणहाणि० कस्स १ श्रण्णद० सम्माइड्डि० मिच्छाइड्डि०। श्रसंखे०गुणवड्डि-हाणि० कस्स १ श्रण्णद० सम्माइड्डि०। श्रवत्त० भ्रुज०भंगो । एव मण्सतिए ।

§ ४९८, त्रादेसेण ऐरइय० तिण्णिवहि-हाणी-श्रवदि० श्रोघं। एवं सच्य-णेरइय०-तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव सहस्सार ति। पंचि०-तिरिक्खश्रपञ्ज०-मणुमश्रपञ्ज० तिण्णिवहि-हाणि-श्रवि० कस्स १ अएणद०। आणदादि णवगेवञ्जा ति ऋसंखे०भागहाणि-संखे०भागहाणि० कस्स १ श्रएणद० सम्माइहि० मिच्छाइहिस्स वा। श्रणुदिसादि मच्बद्ठा ति श्रसंखे०भागहा०-संखे०-भागहा० कस्स १ श्रण्णदरस्म । एवं जाव०।

४९९. कालाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसे य । श्रोघेण तिण्णिवही
केविचरं० १ जह० एयस०, उक्क० बेसमया । श्रसंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क०
तेविद्विसागरीवमसदं पिलदो० श्रमंखे०भागेण सािदरे० । संखे०भागहाणि०-संख०-

देवोसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोमें जानना चाहिए। मनुष्यतिकमें श्रोधके समान भंग है। श्रानत कल्पसे लेकर सर्वार्थीसद्धि तकके देवोंमे असंख्यात भागहानि श्रोर संख्यान भागहानि है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१४६७. स्वामित्वानुगमकी अपेज्ञा निर्देश दो प्रकारका है—आघ और आदेश। श्रोघसे मोहनीयकी तीन वृद्धि और अवस्थान किसके होते हैं। अन्यतर मिथ्यार्टाष्ट्रके होते हैं। तीन हानि किसके होती हैं। अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यार्ट्रष्टिके होती हैं। असंख्यात गुणवृद्धि और हानि किसके होती हैं। अवक्तव्यपद्का मंग भुजगारके समान है। इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए।

. § ४६८. त्रादेशसे नारिकयों में तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर श्रवम्थानका भंग श्रोघके समान है। इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यश्च, पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिक, सामान्य देव श्रोर भवनवासियों से लेकर सहस्रार तकके देवों में जानना चाहिए। पंचेन्द्रिय निर्यञ्च श्रपर्याप्त श्रौर मनुष्य श्रप्याप्तकों ने तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर श्रवस्थान किसके होते हें ? श्रान्यतरके होते हैं। श्रान्तकल्पसे लेकर नी ग्रैवेयक तकके देवों श्रे श्रसंख्यात भागहानि श्रौर संख्यात भागहानि किसके होती हैं। श्रन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती हैं। श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धितकके देवों श्रे श्रसंख्यात भागहानि श्रौर संख्यात भागहानि किसके होती हैं। श्रन्यतरके होती हैं। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

३ ४६६. कालानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—सोघ श्रीर आदेश। श्रोघसे तीन वृद्धियोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल दो समय है । श्रासंख्यात भागहानिका जयन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यका श्रासंख्यातवाँ भाग श्राधक

गुणहाणि०-श्रमंखेञ्जगुणवड्डि०हाणि-श्रवत्त० जहण्णुक्क० एयम०। अवद्वि० जह० एयम०, उक्क० अंतोम्र०।

१५००. त्रादेसेण णेग्इय० त्रसंखे०भागविष्ठ० जह० एयम०, उक्त० वे-समया। त्रसंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्त० तेत्तीयंमागरो० देखणाणि। दोविष्ठि-हाणि० जह०-उक्त० एयसमश्रो। त्रविद्वि० श्रोघं। एवं सव्वर्णेग्हय०। एवरि मगद्विदी देखणा।

एक सौ त्रेसठ सागर हैं। संख्यात भागहानि, संख्यात गुण्हानि, असंख्यात गुण्हादि, असंख्यात गुण्हादि, असंख्यात गुण्हानि और अवक्तव्यका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्भृहर्त है।

विश्लोषार्थ-- असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि श्रीर संख्यात गुणवृद्धिका श्रद्धात्तय या संक्लेशत्त्वयसे एक समय प्राप्त कर उसी रूपमे उसकी उदीरणा होनेपर इनके उदीरकका जधन्य काल एक समय कहा है। तथा जो जीव पहले समयमें श्रद्धान्त्रयसं श्रीर दूसरे समयमं संक्लेशज्ञयसे असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिको बढाकर बॉधता है तथा क्रमसे उसी रूपमें उनकी उदीरणा करता है तब श्रसंख्यात भागवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त होनेसे वह तत्त्रमाण कहा है। तथा जब कोई द्वीन्द्रिय जीव एक समय तक संक्रतेशज्ञयसे संख्यातर्वे मागप्रमाण स्थितिको बढ़ाकर बाँधता है और इसरे सध्यमें मरकर तथा ब्रीन्डियोंमें उत्पन्न होकर पूर्वीस्थतिसे संख्यातवं भाग अधिक त्रीन्द्रिय र योग्य स्थितिको बढाकर बाँधता है श्रीर क्रममे उसी रूपमें उनकी उदीरणा करता है तब संख्यात भागवृद्धिका उत्क्रष्ट काल दो समय प्राप्त होनेसे वह नत्प्रमाण कहा है। नथा जो एकेन्द्रिय जीव एक मोड़ा लकर संज्ञियोंमे उत्पन्त होता है उसके पहले समयमे असंज्ञीके यांग्य आर दूसरे समयमे संज्ञीक योग्य स्थिति-बन्ध होता है । इसप्रकार इस जीवके संख्यात गुणवृद्धिके दो समय प्राप्त कर क्रमसं उसी रूपमें उनकी :दीरणा करनेपर संख्यात गुण्यृद्धिका उत्कृष्ट काल दां समय कहा है। असंख्यात भागहानि हा जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यका श्रमरूयातवा भाग श्रधिक १६३ सागर स्पष्ट ही है। इसका विशेष खुलासा स्थितिविभक्ति भाग ३ पृ० १४२ से जान लेना चाहिए। शंप हानि स्रोर वृद्धियों तथा स्रवक्तव्यादुका जघन्य स्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है यह स्पष्ट ही है। श्रवस्थित उदीरणा कमसं कम एक समयतक और अधिकसे अधिक अन्तर्सहर्त काल तक हो यह सम्भव है, इसलिए इसका जघन्य कात एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्भहर्त कहा है।

विशेषार्थ—यहाँ श्रद्धात्तय श्रीर संक्लेशत्त्रयसे असंख्यात भागवृद्धिके दो समय प्राप्त होना सम्भव है, इसलिए इसका उल्हुब्ट काल दो समय कहा है। शेव कथन सुगम है। इसी प्रकार विचारकर श्रागे भी कालको घटित कर लेना चाहिए। १ ४०१. तिरिक्खेसु तिष्णिविष्टु-दोहाणि-श्रविष्टु० श्रोघं । श्रसंखे०भागहा० जह० एयस०, उक० तिष्णिपिलदो० सादिरेयाणि । एवं पंचिदियतिरिक्खतिए । एवर्षसे विष्णुक्क० एयस० । पंचि०तिरि०श्रपञ्ज०-मणुसश्चपञ्ज० श्रसंखे०भागविष्टु० जह० एयस० । पंचि०तिरि०श्रपञ्ज०-मणुसश्चपञ्ज० श्रसंखे०भागविष्टु०-संखे०गुणविष्टु० जह० एयस०, उक० वेसमया। श्रसंखे०भागहाणि-श्रविष्टु० जह० एयस०, उक० अंतोमु०। मंखे०भागविष्टु-दोहाणि० जहण्णुक० एयस०। मणुमतिए पंचिदियतिरिक्खभंगो । णविष्टु श्रमंखे०गुणविष्टु-हाणि-श्रवत्त० जह०-उक० एयस०।

४०२. देवेसु असंखे०भागहा० जह० एयसमस्रो, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमा०। सेमपदाणं णाग्यभंगो। एवं भवणादि जाव सहस्मार ति। णवरि सगद्विदी। आणदादि सव्वद्वा ति। असंखे०भागहा० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क०सगद्विदी। संखे०-भागहाणि० जहण्णु० एयम०। एवं जाव०।

§ ५०२. देवोंमें श्रसंख्यात भागहानिका जघन्य वाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। शेप परोंका भंग नारिकयोंके समान है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रपनी-श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। श्रानतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें श्रमंख्यात भागहानिका जघन्य काल श्रम्तर्मुहूर्त श्रोर उत्कृष्ट काल श्रपनी स्थितिप्रमाण है। संख्यात भागहानिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ — जो आनतादिका देव वहाँ उत्पन्त होनेके अन्तर्महर्तमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करता है उसके प्रारम्भसे लेकर उसके पूर्व असंख्यात भागहानि होती रहती है, इसलिए यहाँ इसका जघन्य काल अन्तर्मुहर्त कहा है। नोवें मैवयक तकके देव वहाँ उत्पन्त होनेके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहर्तमें प्रथमोपशम सम्यक्तवको भी प्राप्त करते हैं, इसलिए इस अपेत्तासे इनमें असंख्यात भागहानिका जघन्य काल अन्तर्महर्त बन जाता है। इन आन्तादि सब देवोंमें विसंयोजनाके समय संख्यात भागहानि होती है तथा नौ मैवेयक तकके इन देवोंमें प्रथम सम्यक्तवकी उत्पत्तिके समय भी संख्यात भागहानि होती है। यदा इसका काल एक समय है, अतः इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। शेष कथन सुगम है।

१५०१. तिर्यक्कोमें तीन बृद्धियों, दो हानियों और अवस्थितपदका मंग श्रोघके समान है। असंख्यात भागहानिका जघन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है। इसीप्रकार पक्कोन्द्रिय निर्यक्कित्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें संख्यात भागवृद्धिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। पञ्चेन्द्रिय निर्यक्क अपर्याप्त श्रोर मनुष्य अपर्याप्तकोंमें असंख्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात गुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल दो समय है। असंख्यात भागवृद्धि श्रोर अवस्थितका जघन्य काल एक समय श्रोर उत्कृष्ट काल दो समय है। असंख्यात भागवृद्धि श्रोर दो हानियोंका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। मनुष्यित्रकमें पञ्चेन्द्रिय निर्यञ्चके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि श्रोर अवक्तव्यका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है।

६ ५०३. त्रंतगण्० दृविहो णि० — श्रोघेण आदेसेस य । श्रोघेण असंखेज-भागविहु-अविद्वि जह० एगम०, उक० तेविद्विसागरोवममदं तिण्णि पितदो० सादिरेयाणि । असंखे०भागहा० जह० एयम०, उक० अंतोम्र० । दोविहु-हाणि० जह० एगस० अंतोम्र०, उक० अस्तिकालमसंखेजा पोग्गलपिरयद्वा । असंखे०गुणविहु-हा०-अवत्त० जह० अंतोम्र०, उक० उवहुपो०पिरयद्वं ।

६ ४०४. आदेसेण गोरइय० असंखे०भागविहु-अविद्वि० जह० एयस०, दीवही-हाणि जह० अंतो०, उक्त० तेतीसं मागरी० देस्० । असंखे०भागहा० ओघं। एवं मन्त्रगोर० । णविर सगद्विदी देस्० ।

४०४. तिरिक्खेसु अमंखे०भागविष्ट-अविद्वि० जह० एयस०, उक्क० पिलदो०
असंखे०भागो । अमंखे०भागहा० जह० एयम०, उक्क० अंतोमु० । दोविष्टि-हाणि०
जह० एगम०, अंतोमु० उक्क० अणंतकालममंखे० । पंचिदियतिरिक्खितिए असंखे०भागविष्टि-संखे०गुणविष्टि० अविद्वि० जह० एयम०, मंखे०भागविष्टि०-संखे०गुणहाणि०

् ५०३. अन्तरानुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है— ओघ और आदेश। ओघसे असल्यात भागवृद्धि और अवस्थितपद्का जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तीन पत्य अधिक १६३ सागर है। असंख्यात भागहानिका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्भुहूर्त है। दो वृद्धियों और दो हानियोका जघन्य अन्तरकाल कमसे एक समय तथा अन्तर्भुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है जो असंख्यात पुढ़ल परिवर्तनप्रमाण है। असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तन्यका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्थ पुढ़ल परिवर्तनप्रमाण है।

विशोपार्थ — स्वामित्व श्रोर कालको ध्यानमें रखकर श्रन्तरकालका स्पष्टीकरण सुगम है, इसिलए श्रलगसे खुलासा नहीं किया। श्रागे भी यही समझना। दिशाका ज्ञान करनेके लिए स्थितिविभक्ति भाग तीन पृ० १५० श्रादिके विशेषार्थ देखो। इतना श्रवश्य है कि यहाँ उदीरणाकी श्रपेका यह श्रन्तरकाल घटित करना च हिए।

६ १०४. श्रादेशसे नारिकयोंमें असंख्यात भागवृद्धि श्रीर श्रवस्थितका जघन्य अन्तर काल एक समय हैं, दो वृद्धियों और दो हातियोंका जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर हैं। श्रसंख्यात भागहानिका भंग श्रोधके समान हैं। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम श्रपनी-श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए।

५५०५ तिर्यक्रोंमें असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पह्यके असंख्यातचें भागप्रमाण है। असंख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्महूर्त है। दो वृद्धियों और दो हानियोंका जघन्य अन्तरकाल क्रमसे एक समय और अन्तर्महूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल हे जो असंख्यात पृद्रल परिवर्तनप्रमाग है। पञ्चेन्द्रय तिर्यक्षित्रकमें असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुग्रवृद्धि और अवस्थितपदका जघन्य अन्तरकाल एक समय है, संख्यात

जह० अंतोमु०, उक्क० पुष्वकोडिपुथत्तं । असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । संखे०भागहा० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पत्तिदो० सादिरेयाणि । पंचि०तिरि०अपज०-मणुसअपज० असंखे०भागविह्न-हाणि-संखे०गुणविह्न अविद्वि० जह० एगम०, उक्क० अंतोमु० । संखे०भागविह्न-हाणि-संखे०गुणहाणि० जह० उक्क० अंतोमु० ।

४०६. मणुसतिए असंखे०भागविहु-संखे०गुणविहु-अविद्वि जह० एगस०,
संखे०भागविहु-संखे०गुणहाणि० जह० अंतोमु०, उक० मव्वेसि पुव्वकोडी देखणा।
असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक० अंतोमु०। संखे०भागहाणि० जह० अंतोमु०,
उक्क० तिण्णि पिलदो० सादिरेयाणि। असंखे०गुणविहु-हाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०,
उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं।

१५०७. देवेसु असंखे०भागविष्ट-अविद्वि जह० एयस०, दोविष्ट-संखे०गुण-हाणि० जह० अंतोम्र०, उक्क० अद्वारस सागरो० सादिरेयाणि । असंखे०भागहा० ओघं । संखे०भागहाणि० जह० अंतोम्र०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसणाणि । एवं भवणादि जाव सहस्सार ति । णविर सगद्विदी देस्रणा । आगणदादि एवगेवजा ति

भागवृद्धि श्रीर संख्यात गुणहानिका जघन्य श्रन्तरकाल अन्तर्मुहृते है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्वप्रमाण है। असंख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहृते है। संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहृते हैं और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहृते हैं। पञ्चेन्द्रय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकों असंख्यात भागवृद्धि, अमंख्यात भागहानि, संख्यात गुणवृद्धि और अवस्थित-पदका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मृहृते हैं। संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागहानि और संख्यात गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मृहृते हैं।

६ ४०६. मनुष्यत्रिकमं असंख्यात भागवृद्धि संख्यात गुणवृद्धि श्रोर अवस्थितका जवन्य अन्तरकाल एक समय है, संख्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात गुणहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि है। आसंख्यात भाग-हानिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मूहर्त है। संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहर्त है। संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तीन पल्य है। असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तत्र्यका जयन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकाटिष्टथक्तव्यक्ताण ह।

५०७. देवांमे असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थितपदका जघन्य अन्तरकाल एक समय है, दो वृद्धियों और संख्यात गुण्हानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तरमुहूर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अठारह सागर है। असंख्यात भागहानिका अन्तरकाल आघ्ये समान है। संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तरकाल कर कम इकतीस सागर है। इसीप्रकार भननवासियामें लेकर सहस्रार कल्पनक स्थान जानना चाहिए।

असंखे०भागहा० जह० उनक० एयसमञ्जो । संखे०भागहा० जह० अंतोमु०, उनक० सगद्विदी देख्णा । अणुहिसादि सन्त्रद्वा ति असंखे०भागहा० जहण्णु० एयसमञ्जो । संखे०भागहा० जहण्णुकक० अंतोमु० । एवं जाव० ।

१ १० म. एगणाजीवभंगविचयाणु० दृविहो णि० — श्रोघेण श्रादेसे० । श्रोघेण श्रसंखे०भागविष्टि । एवं निरिक्षेसु । आदेसेण ऐरइय० श्रसंखे०भागहा०-श्रविष्टि० णिय० श्रात्थ । सेसपदा भयणिजा । एवं निरिक्षेसु । आदेसेण ऐरइय० श्रमंखे०भागहा०-श्रविष्टि० णिय० श्रात्थ । सेसपदा भयणिजा । एवं निरिक्षेसु । श्रादेसेण ऐरइय० श्रमंखे०भागहा०-श्रविष्टि० एिय० श्रात्थ । सेसपदा भयणिजा । एवं सव्वणेरइय०-सव्वर्णाचंदियनिरिक्ख-मणुसनिय-देवा जाव महस्सार चि । मणुसश्रपञ्ज० सव्वपदा भयणिजा । श्राणदादि सव्वष्टा चि श्रसंखे०भागहा० एएय० श्रात्थ, सिया एदं च संखे०भागहाणिगो च, सिया एदं च संखे०भागहाणिगा च । एवं जाव० ।

्र ४०९. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ग्रोघेण त्रादेसे० । श्रोघेण असंखे०-भागहाणि० संखेजा भागा । अवद्वि० संखे०भागो । असंखे०भागवड्वि० असंखे०भागो । सेसपदा अर्णतभागो । सेममग्गणासु विहत्ती व कायव्वा । णवरि मणुस्सेसु असंखे०-

इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी स्थित कहनी चाहिए। आननकल्पसे लेकर नो प्रैवेयक तकके देवोमें आसंख्यात भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। संख्यात भागहानिका जयन्य अन्तरकाल अन्तर्भृहत है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी न्थितिप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धितकके देवोमें असख्यात भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। संख्यात भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्भृहत्वे हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१ ५० माना जीवोका आश्रय कर मंगविचयानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—
अांघ और आदेश। श्रोघसे अमंख्यात भागवृद्धि, अमंख्यात भागहानि और अवस्थितपद्
नियमसे हैं, शंप पद् भजनीय हैं। इसी प्रकार तिर्यञ्चोमे जानना चाहिए। आदेशसे
नारिकयोमे असंख्यात भागहानि और अवस्थितपद नियमसे हैं, शंप पद भजीनय हैं।
इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च मनुष्यित्रिक और सामान्य देवोंसे लेकर
सहस्त्रारकल्प तकके देवोंमे जानना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमे सब पद भजनीय है। आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमे असंख्यात भागहानि स्थितिक उदीरक जीव नियमसे हैं,
कदाचित् ये नाना जीव हैं और एक संख्यातभागहानि स्थितिका उदीरक जीव हैं, कदाचित्
य नाना जीव हैं और नाना संख्यात भागहानि स्थितिक उदीरक जीव हैं। इसीप्रकार अनाहारक
मार्गणा तक जानना चाहिए।

१५०६ भागाभागनुगमकी आपंत्रा निर्देश दो प्रकारका है — स्रोघ स्रोर स्नादेश। स्रोघसे स्रसंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है। स्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण है। स्रसंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव स्रसंख्यातवे भागप्रमाण है। शेष परोके उदीरक जीव स्रानन्तवें भागप्रमाण है। शेष मार्गणाओं में

गुणविह्न-हाणि-स्रवत्त० स्रसंखे०भागो । मणुसपञ्ज०-मणुमिणी० स्रसंखे०भागहा० मंखेजा भागा । सेमपदा संखे०भागो । एवं जाव० ।

- ् ५१० परिमाणाणु० दुविहो० णि०—ग्रोघेण ग्रादेसेण य । श्रोघेण श्रमंगे०-भागविह-हाणि-श्रविह० केत्ति० ? श्रणंता । दोविह्न-हाणि० श्रमंगेजा । श्रसग्वे०गुणविह्न-हाणि०-श्रवत्त० संग्वेजा । सममग्गणासु विहत्तिभंगो । एविरि मणुसतिए श्रमंग्वे०गुणविह्न-हाणि-श्रवत्त० मंग्वेजा । एवं जाव० ।
- ४११. खेत्ताणु० दुविहो णि०—-श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण श्रमंखे०-भागवड्डि-हाणि-प्रवद्धि० सन्वलोगे । सेसपदा लोग० श्रमंखे०भागे । एवं तिरिक्खा०। सेमगदीसु सन्वपदा लोग० श्रसंखे०भागे । एवं जाव० ।
- ४१२. पोसए। गु० दुविहो णि० श्रोघेण आदंसेण य । श्रोघेण असंखे०-भाग-बिहु-हािग-श्रविद्धि० सच्वलोगो । दोबिहु-हािण० लोग० असंखे०भागो अहुचो० देस्एणा । सेमपदा लोग० अमंखे०भागो । सेमगइमगणासु विहित्तिभंगो । एविरि स्थितिविभक्तिके समान भागाभाग करना चािहए । इतना विशेषता है कि मनुष्योमे असंख्यात गुरावृद्धि, असंख्यात गुराहािन और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात ने भागप्रमाण है । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमे असंख्यात भागहािन विश्वितके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है । शेष पदीके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसीप्रकार अनाहारक भागणा तक जानना चाहिए ।
- § ५६०. परिभाणानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है— भोव और आदेश। श्रोघसं असंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागहानि और अवस्थितस्थितिक उदीरक जीव कितने हैं ? श्रमन्त हैं ? दो वृद्धि और दो हानिरूप स्थितियोंक उदीरक जीव असंख्यात है। श्रसंख्यात गुणवृद्धि, श्रसंख्यात गुणहानि और श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव रांख्यात है। श्रेष मार्गणाओं से स्थितिविभक्तिके समान भंग है। इननी विशेषता है कि भनुष्यित्रकमें श्रसंख्यात गुणवृद्धि, श्रसंख्यात गुणहानि और श्रवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव संख्यात है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।
- १५११ च्रेत्रानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंच और आदेश। श्रोघसे असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितिके उदीरक जीवोंका चेत्र सर्व लोक है। शेष पदोंके उदीरक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार तियचोमें जानना चाहिए। शेष गतियोमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवे भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।
- § ४१२. स्पर्शनानुगमकी श्रापेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रांर श्रादेश। श्रोघसे श्रासंख्यात भागवृद्धि, श्रासंख्यात भागवृद्धि, श्रासंख्यात भागवृद्धि, श्रासंख्यात भागवृद्धि, श्रासंख्यात भागवृद्धि, श्रासंख्यात भागवृद्धि, श्रासंख्यात के प्रविच्या है। दो वृद्धि श्रोर दो हानिरूप स्थितियोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रासंख्यात में भाग श्रोर त्रसनालींके चोदह भागांमसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रेष पदींके उदीरक जीवोंने लोकके श्रासंख्यात में भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रेष प्रतिमार्गण्यांमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है। इतनी विश्यता है कि मन्द्यत्रिकां

मणुमतिए असंखे ० गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त ० लोग ० असंखे ० भागो । एवं जाव ० ।

४१३. कालाणु० दुविहो णि० — श्रीघेण श्रादेसेण य । श्रीघेण श्रसंखे०-भागविह्न-हाणि-श्रविद्धि० मन्त्रद्धा । दोविह्न-हाणि० जह० एयस०, उक० श्रावित्वि० श्रमखे०भागो । श्रमंखे०-गुणविह्न-हाणि-श्रवत्त० जह० एयस०, उक० मंखेआ समया । मणुमितिए श्रमंखे०गुणविद्वि-हाणि-श्रवत्त० जह० एगसमश्रो, उक्क० संखे० समया । सेमयदा सेममगणाश्रो च विहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

४१४. अंतरासु० दुविहो णि०—श्रोघेस श्रादेसे०। श्रोघेस विहत्तिभंगो । स्पर्यार श्रमंखे०गुणबह्धि-अवत्त० जह० स्यम०, उक्क० वासपुधत्तं । मणुमतिस विहत्ति-भंगो । णबिर श्रमखे०गुणबह्धि-श्रवत्त० जह० स्यम०, उक्क० वासपुधत्तं । सेसगइ-मरगणासु विहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

४ ४१४. भावाणु० सव्वत्थ स्रोदइस्रो भावो ।

५ ४१६. अप्पाबहुत्राणु० दुविहो णि०--त्रोघेण त्रादेसे० । त्रोघेण सन्वत्यो०

श्चसंख्यात गुगावृद्धि, श्रसंख्यात गुगाहानि श्रीर श्चवक्तव्यस्थितिकं उदीरक जीवोने लेकिके श्चसंख्यातवे भागप्रमागा चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार श्वनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

५१३. कालानुगमकी अपंचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ और आदेश। श्रोघसे असंख्यात भागवृद्ध, असंख्यात भागवृद्ध, असंख्यात भागवृद्ध, असंख्यात भागवृद्ध, असंख्यात भागवृद्ध, असंख्यात भागवृद्ध, असंख्याक उदीरक जीवोका काल सर्वदा है। दो वृद्धि और दो हानिरूप स्थितियोक उदीरक जीवोका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि। अप्यात समय है। श्रीप पद श्रीर मार्गणाश्रोका भंग स्थितिविभक्तिके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

्रेप्त अन्तरानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आघ और आदेश। आघसे स्थितिवर्भाक्तके समान भंग हैं। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुण्युद्धि और अवक्तव्य-स्थितिके उदीरक जीवोका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षप्रथक्तव-प्रमाण है। मनुष्यितिको स्थितिविभक्तिके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुण्युद्धि और अवक्तव्यिश्यितके उदीरक जीवोका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षप्रथक्त्वप्रमाण है। शेष गतिमार्गणाओं स्थितिविभक्तिके समान भंग है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

६ ४१५. भावानुगमकी ऋषेचा सर्वत्र स्रोदयिक भाव है।

§ ५१६. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेवा निर्देश दो प्रकारका है—स्रोध स्रोर आदेश।

श्रवत्त०उदीर० । श्रसंखे०गुणविद्वउदीर० संखे०गुणा । श्रमंखे०गुणहाणिउदी० मंखे०गुणा । संखे०गुणहा० असंखेगुणा । संखे०भागहा० मंखे०गुणा । संखे०गुणविद्वि०
असंखे०गुणा । मंखे०भागविद्वि० संखे०गुणा । श्रमंखे०भागविद्वि० श्रणंतगुणा ।
श्रवद्वि० श्रसंखे०गुणा । श्रसंखे०भागहा० संखे०गुणा । सेममग्गणासु विहित्तभंगो ।
णविर मणुमतिए सन्वत्थो० श्रवत्त० । असंखे०गुणाविद्वि० मंखे०गुणा । श्रमंखे०गुणहाणि० मंखे०गुणा । सेसपदाणं विहित्तभंगो ।

एवं वड्डी समत्ता।

१ ४१७. एत्थ द्वाणपरूवणे कीरमाणे द्विदिसंकमभंगो । एवं मृलपयिडिद्विदिउदीरणा समत्ता ।

१ ४१८. एत्तो उत्तरपयिडिहिदिउदीरणा । तत्थ इमाणि चउवीसमणिश्रोग-दाराणि श्रद्धाच्छेदो जाव श्रप्पाबहुए त्ति भुजगार-पदिणिक्खेब-बिहुउदीरणा च । श्रद्धाछेदो दुविहो — जह० उक्त० । उक्तस्से पयदं । दुविहो णि० — श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ० उक्तस्सिया द्विदिउदीरणा सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीश्रो दोहिं

श्रीघसे श्रवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे श्रसंख्यात गुण्यृद्धिस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे श्रसंख्यात गुण्यहानिस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुण्यहानिस्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागहानिस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागहानिस्थितिके उदीरक जीव संख्यात भागवृद्धिस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवस्थितिके उदीरक जीव श्रवस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष मार्गणाश्रोमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यितिक अवक्षित्रके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवक्ष्यातगुणे हैं। इति संख्यातगुणे हिं। इति संख्यातगुणे हैं। इति संख्यातगुणे हिं। इति संख्यातगु

इसप्रकार वृद्धि समाप्त हुई।

६ ४१७. यहाँ पर स्थानप्ररूपणा करनेपर उसका भंग स्थितिसंक्रमके समान है। इसप्रकार मृलप्रकृतिस्थितिउदीरणा समाप्त हुई।

§ ४१८. आगे उत्तरप्रकृतिस्थित उदीरणाका प्रकरण है। उसमें ये चौबीस अनुबोगद्वार हैं—श्रद्धाच्छेदसे लेकर अल्पबहुत्व तक तथा भुजगार, पदिनक्षेप और वृद्धिउदीरणा। श्रद्धाच्छेद दो प्रकारका हैं—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका हैं—श्रोघ और आदेश। श्रोघसे मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा दो श्रावित कम सत्तर श्रावित्याहि ऊणाश्रो । सम्म०-सम्मामि० उक्त० द्विदिउदी० सत्तरिसागरीवमकोडा-कोडीश्रो श्रानेम्रहृत्तृणाश्रो । गोलमक० उक्त० द्विदिउदी० चत्तालीसंसागरो० कोडा-कोडीश्रो दोहिं श्रावित्याहिं ऊणाओ । एवंणोकमाय० उक्त० द्विदिउदी० चत्तालीमसा० कोडा० तीहिं श्रावित्याहिं ऊणाओ । एवं मन्वणेग्इय० । णवि इत्थिवेद-पुरिसवेद० उदीरुणा णात्थि ।

५१९. तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खितिए श्रोघं। एवरि पञ्ज० इत्थिवेद० उदी० रास्थि। जोणिसीसु पुरिस०-णवुंम० उदी० णित्थ। पंचितिरि०श्रपञ्ज० मणुसत्रपञ्ज० मिच्छ०सोलमक०-सत्तर्सोक० उक्क० द्विदि०उदी० मत्तरि-चत्तालीसं-मागरो०कोडा० अंतोम्रहुत्त्णाश्रो। मणुमतिए पंचिदियतिरिक्खितयभंगो। देवाणमोघं। एवि णवुंस० उदीरसा स्वत्थि। एवं भवण०-वाणवें०-जादिसि०-सोहम्मीमाणा ति। मणकुमागदि महस्सारा ति एवं चेव। णविर इत्थिवेद० उदी० पित्य। श्राणदादि णवगेवज्ञा ति छुन्वीसं पयडीसं उक्क० द्विदिउदीर० श्रंतोकोडाकोडी। श्रणुहिमादि मन्त्रहा ति सम्म०-वारमक०-पत्तर्योक० उक्क० द्विदिउदीरसा श्रंतोकोडाकोडी। एवं जाव०।

६ ४२०, जहण्णाए पयदं । दुविही णि०—श्रोघेण आदेसेण य । ओघेण

§ ४२०. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ और श्रादेश। श्रोघसे

कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण है। सम्यक्त श्रोर सम्यग्निध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा श्रन्त-र्मुहर्त कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है। सोलह कषायकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा है। श्राविल कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है। नी नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा तीन श्राविल कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी उदीरणा नहीं है।

[§] ४१६. तिर्यक्क स्रोर पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्कित्रिक स्थापक समान भंग है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्क पर्याप्त रोमें स्वीवेद की उद्दीरणा नहीं हैं। तथा पञ्चेन्द्रिय तिर्यक योनिनयों में पुरुषवेद स्थार स्वीवेद की उद्दीरणा नहीं हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्क स्वपर्याप्त स्थार सालह कपाय स्थार सात नोकपायों का उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा स्थन्य प्रप्राप्त कम सत्तर स्थार चालीस कोड़ा कोड़ी सागर है। मनुष्यित्रकमें पस्त्रेन्द्रिय निर्यक्चित्रक समान भंग हैं। देवों में स्थापक समान भंग हैं। इतनी विशेषता है कि देवों में नपुंसकवेद की उदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासी, वानव्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म स्थार ऐशान कल्पके देवों में जानना चाहिए। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्पतक देवों इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्थावेदकी उदीरणा नहीं है। स्थानतकल्पसे लेकर नौ मैंवेयक तक के देवों से २६ प्रकृतियों की उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा स्थन्तः कोड़ाकाड़ीप्रमाण है। स्वित्रदिश्से लेकर सर्वार्थि स्थित उदीरणा स्थन्तः कोड़ाकाड़ीप्रमाण है। स्थितिउदीरणा स्थन्तः काला स्थार सात नाकपायों की उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा स्थन्तः काला स्थारणा स्थन्तः काला सार्वेश सात नाकपायों की उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा स्थन्तः काला सार्वेश सात नाकपायों की उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा स्थन्तः काला सार्वेश स्थार सात नाकपायों की उत्कृष्ट स्थार सार्वेश सार्वेश सात्र सार्वेश सा

मिच्छ०-मम्म०-चदुमंजल०-तिरिरावेद० जह० द्विदिउदी० एया द्विदी गमयाहिया-वित्तयद्विदी । सम्मामि० जह० द्विदिउदी० मागरोवमपुधत्तं । श्रास्मक०-छण्णेक० जह० द्विदिउदी० मागरोवमस्म चत्तारि मत्तभागा पित्तदो० ऋसंखे०भागेणुणा ।

१ ४२१. त्रादेसेण ऐग्ड्य० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० श्रोघं । मोलमक०-सत्तरणोक० जह० द्विदिउदी० सागरोवमसहस्मस्स चत्तारि सत्तभागा पिलदो० संखे०-भागेण्णा । एवं पढमाए । विदियादि सत्तमा ति मिच्छ० श्रोघं । सम्म०-सम्मामि० जह० द्विदिउदीर० सागरोवमपुधत्तं । मोलमक०-मत्तणोक० जह० द्विदिउदी० अंतोकोडा० ।

१ ४२२. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० श्रोघं। सोलसक०-णवणोक० जह० द्विदिउदी० सागरो० चत्तारि सत्तभागा पलिदो० श्रमंखे०भागेण ऊणा। एवं पंचिदियतिरिक्खतिए। णवरि पञ्ज० इत्थिवेदो णित्थ। जोणिणी० पुरिस०-राग्वंम० णित्थ। सम्म० सम्मामि०भंगो। पंचिदियतिरिक्खश्रपञ्ज०-मणुमश्रपञ्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० जह० द्विदिउदी० सागरोवम० सत्त सत्तभागा चत्तारि सत्तभागा पलिदोवसम्मासंखे०भागेण ऊणा।

१२३. मणुमतिए श्रोघं। णविर पञ्ज० इत्थिवे० णित्थि। मणुसिणी० मिण्यात्व, सम्यक्त्व, चार मंज्वलन झोर तीन वेदकी जघन्य स्थिनिउदीरणा एक समय श्रिष्ठिक एक झावलिप्रमाण स्थितिके रहनेपर एक रिथित है। सम्यिग्धियात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सागरप्रथक्तवप्रमाण है। बारह कपाय श्रीर छह नोक्ष्यायकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक सागरका चार बटे सात भागप्रमाण है जो कि पल्यका श्रमंख्यात्वां भाग कम है।

५ ५२१. श्रादेशसे नारिकयोमें मिध्यात्व, सम्यक्त्व श्रोर सम्यम्भिध्यात्वका संग श्रोघके समान है। सोलह कषाय श्रोर सान नोकपायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक सागरकी चार बटे सात भागप्रमाण है जो कि पल्यका श्रमंख्यानवाँ भाग कम है। इसीप्रकार प्रथम पृथिबीमें जानना चाहिए। दूसरीसे लेकर सातवी पृथिवी नकके नारिकयोंमें मिध्यात्वका संग श्रोघके समान है। सम्यक्त्व श्रोर सम्यागिध्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सागरपृथकत्वप्रमाण है। सोलह कषाय श्रीर सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा श्रन्तःकोड़ी है।

ू ४२२. तिर्यक्कोमें मिध्यात्व, सम्यक्त श्रीर सम्यग्निध्यात्वका भंग श्रीष्ठके समान है। सोलह कपाय श्रीर नी नोकपायोकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक सागरकी चार बट सात भाग-प्रमाण है जो कि पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग कम है। इसीप्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यक्कित्रिमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी स्थितिउदीरणा नहीं है तथा योनिनी तिर्यक्कोंमें पुरुषवेद श्रीर नपुंभकवेदकी स्थितिउदीरणा नहीं है। सम्यक्तका भंग सम्यग्निध्यात्वके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्क श्रप्याप्त श्रीर मनुष्य श्रप्याप्तकोंमें भिध्यात्व, संलह कपाय श्रीर सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक सागरकी कमसे पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग कम सात बटे सात भागप्रमाण श्रीर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग कम चार बटे सात भागप्रमाण है।

§ ५२३. मनुष्यत्रिकमें त्र्योघके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमे स्त्रीवेदकी

पुरिम०-णवुं म० णिरथ । देवाणं णारयभंगो । णवि णवुं म० णिरथ । एवं भवण०-वाणवें० । एवि सम्म० सम्मामि०भंगो । जोिद्सि० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० विदियपुढिविभंगो । मोलसक०-श्रष्टणोक० जह० द्विदिउदी० अंतोकोडाकोडी । एवं मोहम्मीमार्गे । णवि सम्म० श्रोघं । मएक्कुमारादि जाव णवगेवज्ञा ति एवं चेव । एवि इत्थिवेद० एत्थि उदीर० । श्रणुहिमादि सबद्वा ति सम्म० औषं । बारसक०-मत्तणोक० जह० द्विदिउदी० अंतोकोडाकोडि ति । एवं जाव० ।

६ ४२४. सच्नुदीर०-णोसच्नुदीर०-उक्त०-अणुक्त०-जह०-श्रजह०उदीर० मूल-पयडिभंगो ।

४२४. सादि-त्रणादि०-धुव०-श्रद्धुवाणु० मिच्छ० उक्क०-अणुक्क०-जह० कि मादि०४ १ सादि-अद्धुवा । अज० कि मादि०४ १ मादी अणादी धुवा अद्धुवा वा । सेमपयडीणमुक्क० अणुक० जह० अजह० कि मादि०४ १ सादि-अद्धुवा । सेमगदीस मन्वपय० उक्क० अणुक० जह० अजह० मादि-अद्धुवा० ।

स्थितिउदीरणा नहीं है। मनुष्यितियोमे पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी स्थितिउदीरणा नहीं है। देवोमे नारिकयोके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमे नपुंसकवेदकी स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासी और व्यन्तरोमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमे सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिध्यात्वके समान है। ज्योतिषियोमे मिध्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वके समान है। ज्योतिषियोमे मिध्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिध्यात्वका भंग दूसरी पृथिवीके समान है। सोलह कषाय और आठ नोकषायोकी जघन्य स्थितिउदीरणा अन्तःकोड़ाकोड़ी है। इसीप्रकार सीधमें और ऐशानकल्पमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वका भंग आंघके समान है। इसीप्रकार सन्तक्त्रमार कल्पसे लेकर नोवें मैवेयक तकके देवोमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमे स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोमे सम्यक्त्वका भंग आंघके समान है। बारह कषाय और सात नोकषायोकी जघन्य स्थितिउदीरणा अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

४२४. सर्व स्थितिउदीरणा, नोसर्व स्थितिउदीरणा, उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा, अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा, जघन्य स्थितिउदीरणा और अजघन्य स्थितिउदीरणाका भग मृलप्रकृतिके समान है।

१ ४२४. सादि, त्रानादि ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेत्ता मिध्यात्वकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य स्थितिउदीरणा क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है या अध्रुव है १ सादि और अध्रुव है। अजघन्य स्थितिउदीरणा क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है या अध्रुव है १ सादि, अनादि ध्रुव और अध्रुव है। शेष प्रकृतियोकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणा क्या सादि है, अनादि हे, ध्रुव है या अध्रुव है । शेष गतियोमें सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अध्रुव है। शेष गतियोमें सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणा सादि और अध्रुव है।

विश्वेषार्थ — घोघसे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा कादाचित्क है तथा इसकी जघन्य स्थितिउदीरणा ऐसे जीवके होती है जो उपशमसम्यक्त्वके सन्मुख होकर एक समय अधिक एक आविलिप्रमाण स्थितिके शेष रहनेपर आविलकी उपरितनवर्ती प्रथम १२६. सामित्तं दुविहं—जह० उक०। उकस्से पयदं। दुविहो णि०—ग्रोघेण श्रादेसेण य। श्रोघेण मिच्छत्त-सोलसक० उक० द्विदिउदी० कस्स ? श्रण्णद० मिच्छाइद्वि० उक्कस्सद्विदिं बंधिऊणाविष्ठयादीदस्म। एवणोक० उक० द्विदिउदी० कस्स ? श्रण्णद० मिच्छाइद्वि० उक्क०द्विदिं पिडिच्छिद्ग्णावित्यादीदस्स। मम्म० उक्क० द्विदिउदी० कस्स० ? श्रण्णद० जो पुञ्चवेदगो मिच्छत्त० उक्क०द्विदिं बंधिऊण श्रंतोम्र० द्विदिघादमकादृण सम्मत्तं पिडवण्णो, तस्म बिदियसमयसम्माइद्विस्स। सम्मामि० उक्कस्सद्विदिउदी० कस्म ? श्रण्णद० स एव वेदयमम्माइद्वी श्रतोम्रहुत्तमिच्छऊण पढमसमयसम्मामिच्छाइद्वी जादो, तस्स उक्क० द्विदिउदी०। एवं सञ्चणेग्इय०-तिरिक्ख-पंचि०तिरिक्खितय-सणुमतिय-देवा जाव सहस्सार ति । एवरि श्रप्पपणो पयडीश्रो जाणिदव्वाश्रो।

१ ५२७. पंचिं०तिरि० अपञ्ज०-मणुसअपञ्ज० मिच्छ०-सोलसक०-पत्तणोक०
 उक० द्विदिउदी० कस्म १ अएएाद० मणुस्सस्स वा मणुसिणीए वा पंचिं०तिरिक्ख-

स्थितिकी उदीरणा करता है, इसिलए ये तीनों स्थितिउदीरणा सादि और अधुव कही हैं। किन्तु अजघन्य स्थितिउदीरणा जघन्य स्थितिउदीरणाके पूर्व भी होती है और बादमें भी मिथ्यात्व गुणस्थानके प्राप्त होनेपर होती है, इसिलए इसे सादि आदि चारों प्रकारका कहा है। शेप प्रकृतियोंकी चारों प्रकारको स्थितिउदीरणा श्रपने-अपने स्वामित्वके अनुसार कदाचित् ही होती हैं, इसिलए इन्हें सादि और अधुव कहा है। गितमार्गणाके सब भेद सादि और अधुव है, इसिलए इन्हें सिथितिउदीरणाके उत्कृष्टादि चारों भेदोंको सादि और अधुव कहा है। इसीप्रकार अन्य मार्गणाओं विचार कर घटित कर लेना चाहिए।

§ ४२६. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उरकृष्ट । उरकृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ज्योघ और आदेश । आध्मे मिध्यात्व और सोलह कषायकी उरकृष्ट स्थिति उदीरणा किनके होती है ? जिस अन्यतर मिध्यादिष्टको उरकृष्ट स्थिति बॉधकर एक आविल काल व्यतीत हुआ है उसके होती है । नो नोकपायोंकी उरकृष्ट स्थिति बॉधकर एक आविल काल व्यतीत हुआ है उसके होती है । नो नोकपायोंकी उरकृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जिस मिध्यादिष्टको कषायकी उरकृष्ट स्थितिका नो नोकपायोमें संक्रमण करनेके बाद एक आविल काल गया है उसके होती है । सम्यक्त्वकी उरकृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होती है । पृथेमें वेदकसम्यक्त्व प्राप्त कर चुके हुए जिस मिध्यादिष्ट जीवने निध्यात्वकी उरकृष्ट स्थिति बांधकर और स्थितिघात किये बिना अन्तर्सुहूर्तमे वेदकसम्यक्त्वका प्राप्त किया है उस द्वितीय समयवर्ती वेदकसम्यग्दिष्टके सम्यक्त्वकी उरकृष्ट स्थिति उदीरणा होती है । सम्यिमध्यात्वकी उरकृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होनी है ? अन्यतर वही वेदकसम्यग्दिष्ट जीव अन्तर्सुहूर्त रहकर सम्यिमध्यादिष्ट हो गया, प्रथम समयवर्ती उस सम्यिमध्यादिष्ट जीवके उरकृष्ट स्थितिउदीरणा होती है । इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यक्क, पद्मेन्द्रिय तिर्यक्चित्रक, मनुष्यिति क्रोर सामान्य देवोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी प्रकृतियां जानना चाहिए ।

१ ४२७. पटचेन्द्रिय तिर्यव्य अपयोप्त श्रीर मनुष्य अपयोप्तकोंमें मिश्रयात्व, सोलह कपाय श्रीर सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा किमके होती हैं ? श्रान्यतर जो मनुष्य

जोणिणीयस्स वा उक्कस्मिद्धिदं बंधिऊण अंतोम्रहुत्तं हिदिघादमकाद्ण अपञ्जत्तएस् उववण्णस्त्यस्य तस्स पढमसमयउववण्णस्त्यस्स उक्क० हिदिउदी० ।

६ ४२८. आणदादि णवगेवजा ति मिच्छ०-मोलमक०-मत्तणोक० उक्क० द्विदिउदी० कम्म ? अण्णद० द्व्विलंगी तप्ताओग्गुकस्मिद्वित्मंतक्तिमम् प्रो पढमममय-उववण्णस्लगो तम्म । णवि अरिद-मोग० अंतोमुहुत्तउववण्णस्लगो तस्स उक्क० द्विदिउदी० वस्स ? अण्णद० तप्पाओग्गुकस्सिद्विदिस्तक्तिम० वेदयसम्माइद्वि० पढमममयउववण्णस्लयस्म । तस्सेव अंतोमुहुत्तेण सम्मामच्छत्तं पिडवण्णस्म पढमममयसम्मामिच्छाइद्विस्स सम्मामि० उक्क० द्विदिउदी० । अण्णद० वेदयसम्माइद्वी तप्पाओग्गुउक्क०द्विदिसंतक्तिम० पढमसमयउववण्णस्लगो तस्स उक्क० द्विदिउदी० । णविर अरिद-सोग० अंतोमुहुत्तोववण्णस्लगस्स । एवं जाव०।

१५९. जहण्णए पयदं। दुविहो णिहेमो—ओघेण आदेसेण य। श्रोघेण भिच्छ० जह० द्विदिउदी० कस्म ? ऋण्णद० भिच्छाइद्विस्म उत्रसममम्मनाहिम्रहस्स ममयाहियावित्यपढमद्विदिउदीरगस्म तस्स जह० द्विदिउदी०। सम्म० जह० द्विदि-

या मनुष्यिनी या पञ्चेन्द्रिय तियेञ्च योनिवाला जीव उत्कृष्ट स्थिति बांधकर स्थितिघात किये बिना अन्तर्मुहर्तमे उक्त अपर्याप्तकोमे मरकर उत्पन्न हुआ है उसक वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमे उक्त प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरगा हाती है।

§ ४२८. श्रानत कल्पसे लंकर नो ग्रेंबेयक दकके देवोमे मिध्यात्व, सोलद कपाय और सात नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होती है ? श्रन्यतर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थिति सहकर्मवाला जो द्रव्यलिगी सरकर उक्त देवोमे उत्पन्न हुश्रा है उसके वहाँ उत्पन्न होनके प्रथम समयमे उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। इतना विशेषता है कि जिसे वहां उत्पन्न हुए श्रन्तमुहूर्त हुआ है उसके अर्रात श्रीर शोककी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। सम्यक्तको उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होती है। तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। सम्यक्तको उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। उसके बहा उत्पन्न होनके प्रथम समयमे सम्यक्तको उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। उसके श्रम्व सम्यग्निध्यात्वको प्राप्त होने पर प्रथम समयवर्ती उस सम्यग्निध्यादृष्टि जीवक सम्यग्निध्यात्वको उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। श्रमुदिशसे लंकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोमे सम्यक्त्व, बाग्ह कपाय और सात नोकपायोको उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा किसके हाती है? तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा श्रम्य समयमे उक्त प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। इतनी विशेषता है कि जिस उक्त जीवको वहाँ उत्पन्न हुए श्रम्तप्त श्रमाहार सार्वणी तक आनना चाहिए।

् ४२६. जघन्यका प्रकरण ह । निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश । श्रोघसे मिण्यात्वकी जघन्य स्थिति दीरणा किसके होता है ? उपशमसम्यक्तकं अभिमुख श्रान्यतर जो मिण्यादृष्टि जीव मिण्यात्वकी प्रथम स्थितिकी एक समय श्रीधक एक श्रावित स्थिति शेष

उदी० कस्स ? श्रण्णद० दंसणमोहक्खवयस्य ममयाहियावित्यउदीरगस्स । सम्मामि० जह० द्विदिउदी० कस्य ? श्रण्णद० जो मिच्छाइट्ठी वेदगपाश्रोगगजहण्णद्विदिसंत-किम्श्रो सम्मामि० पिडवण्णो श्रंतोम्रहुत्तं विगद्वं मम्मामिच्छत्तद्वमणुणित्य चिरम्म्यसम्मामिच्छाइट्ठिस्म तस्म जह० द्विदिउदी० । बारसक० जह० द्विदिउदी० कस्य ? श्रण्णद० बादरेइदियस्म हदसमुप्पत्तियस्म जाविद सक्तं ताव मंतकम्मस्म हेट्ठा बंधिदृण ममिट्ठिदि वा बंधिदृण संतकम्मं बोलेदृण वा श्रावित्यादीदस्स । एवं भय-दुगुंछा० । णविर वेआवित्यादीदस्म तस्म जह० । हस्म-रिद-श्ररिद-सोग० जह० द्विदिउदी० कस्म ? श्रण्णद० जो वादरेइदियपच्छायदो हदममुप्पत्तियो सिण्णपंचिदियपञ्चल्स उववण्णो तस्म श्रंतोमुहुत्तुववण्णल्लयस्स जह० द्विदिउदी० । तिण्हं वेदाणं जह० द्विदिउदी० कस्म ? श्रण्णद० उवसामगो खबगो वा श्रप्पपणो वेदण सेदिमारूढा समयाहियावित्यं उदीरेमाणयस्म तस्म जह० । चदुसंज० जह० द्विदिउदीर० कस्स ? श्रण्णद० उवसामगस्स वा खबगस्स वा श्रप्पपणो कसाएहिं सेदिमारूढस्य ममयाहियावित्यउदी० तस्म जह० ।

रहनेपर प्रथम उपन्तिन) स्थितिकी उद्दिरणा करता है उसके जयन्य स्थिति उद्दिरणा होती है। सम्यक्तवर्ग जवन्य स्थितिवदीरमा किसके होती है ? दर्शनमोहनीयकी चपसा करनेवाला जो अन्यतर कृतकृत्यवैदक सम्यग्र्हाष्ट्र जीव सम्यक्त्वभी एक समय अधिक एक आर्वाल स्थिति शेष रहनेपर उपरितन एक स्थितिकी उदीरणा करता है उसके जबन्य स्थितिउदीरणा होती है। सम्यागमध्यात्मकी जघन्य स्थिति।उदीरणा किसके होती है ? वंदकप्रायोग्य जयन्य स्थिति-सत्कर्मवाल जिस अन्यतर भिश्यादृष्टि जीवको सम्याग्मध्यात्वको प्राप्त हुए उत्कृष्ट अन्तर्भूहर्त काल गया है, सम्याग्मिश्यात्वके कालका पालन करनेवाले उस सम्याग्मिश्यादृष्टि जीवके ऋन्तिम समयमे उत्क्रब्ट स्थितिउदीरणा होती है। बारह कपायको जधन्य रिथतिउदीरणा किसके होती है ? हनम्मुर्त्पात्तक जिल अन्यतर बादर एक्टिय जावने जबतक शक्य है तबतक सरकर्मस कम स्थितिका वन्त्र किया है या समान स्थितिका बन्ध किया है, या मत्कर्मको बिताकर जिसे एक आविल गया है उसके जधन्य स्थिति उदीरणा होती है। इसीप्रकार भय और जुगुरसाके विषयमें जानना चाहिए। इननी विशेषता है कि जिसे दो आविल काल गया है उसके भय और जगुष्माकी जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। हास्य, रति, श्ररीत श्रीर शांककी जघन्य स्थिति-उदीरणा किसके होती है ? जो अन्यतर हतसमुत्पत्तिक बादर एकेन्द्रियोमेंसे आकर संज्ञी पद्मचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुन्ना है उसके वहाँ उत्पन्न होनेके श्रम्तर्महुत्तेके श्रम्तमे उक्त प्रकृतियोंका जघन्य स्थित उदीरमा होती है। तान बंदोंकी जघन्य स्थित उदीरमा किसके होती है ? जो उपशामक या ज्ञपक अपने-अपने बंद्से श्रेणिपर अ।स्ट हुआ है, प्रथम स्थितिमें एक समय आधिक एक आविल स्थितिके शेप रहनेपर उपरितन स्थितिकी उदीरणा करनेवाल उसके उक्त वेदोंकी जघन्य स्थिति उदीरणा होती है। चार संज्यलनकी जघन्य स्थिति उदीरणा किसके होती है ? जो उपशामक या जपक अपनी अपना कपायसे श्रेणिपर आरूद हुआ है, प्रथम स्थितिमे एक समय अधिक एक आविल स्थितिक शेप रहनेपर उपरितन स्थितिकी उदारणा करनेवाले उसके चार संज्वलनकी जधन्य रिधनिवर्दारमा होती है।

१ १३०. श्रादेसे० ऐरइय० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० श्रोघं। सोलसक०भय-दुगुंछ० जह० द्विदिउदी० कस्स ? श्राग्णाद० श्रसण्णिपच्छायदहदसग्रुप्पत्तियसस
दुसमयाहियावित्यउववण्णन्लयस्स तस्म जह०। पंचणोक० जह० द्विदिउदी० कस्म ?
श्रण्णाद० श्रमणिएपच्छायदहदमग्रुप्पत्तियस्म अंतोग्रुहुत्तादीदस्म तस्म जह० द्विदिउदी०। एवं पटमाए। विदियादि जाव सत्तमा ति द्विदिसंकमभंगो। णविर मिच्छ०सम्मामि० पटमपुदविभंगो। सम्म० जह० द्विदिउदी० कस्म ? अण्णाद० वेदगसम्मत्तपाओग्गजह०द्विदिसंतकम्मि० सम्मत्तं पिडवण्णो तस्स पटमममयवेदयसम्माइद्विस्म।
श्रणंताणु०४ जह० द्विदिउदी० कस्म ? श्रण्णाद० दीहाउद्विदिएसु उवविज्ञित्रण
अंतोग्रुहुत्तेण सम्मतं पिडवण्णो श्रणंताणु०चउक्कं विमंजोएद्ण थोवावसेसे जीविद्वयए
ति मिच्छत्तं गदो जाव सक्कं मंतकम्मस्म हेट्ठा विधिद्ण समिद्विदे वा विधिद्ण संतकम्मं
वा बोलेद्ण श्रावित्यादीदस्म तस्स जह०।

६ ४३१. सव्यतिरिक्खेसु ऋष्पष्पणो द्विदिसंक्रमभंगो । णवरि दंसणितय-अर्ण-ताणु०४ त्रोघं । पंचिदियतिरिक्खितिए ऋणिताणु०४ ऋपचक्खाणभंगो । णवरि जोणिणीसु सम्म० विदियपुढविभंगो । पचि०तिरि०ऋपञ्ज०-मणुसऋपञ्ज० जास्रो

६ ५३०. श्रादेशसं नारिकयोंमें मिथ्यात्व, सन्यक्त्व श्रीर सन्यिग्मिथ्यात्वका भंग श्रोघके समान है। सोलह कपाय, भय श्रीर जुगुप्ताका जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ! जिस हतसमृत्पत्तिक जीवको असंब्रियोंमेसे आकर दो समय अधिक एक आर्वाल काल गया है उसके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। पाँच नोकपायोकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती हैं ? जिस हतसमुत्पत्तिक जीवका असीझयामेसे त्राकर त्रान्तर्मुहर्त काल अतीत हुआ है उमकं ज्ञधन्य स्थितिउदीरणा होती हैं। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए। दूसरीसे लेकर मातवीं प्रथिवीतकके नारिकयोमें स्थितिसंक्रमके समान भंग है। इननी विशेषता है कि इनमें मिध्यारत और सम्यग्मिध्यात्वका भंग प्रथम पृथिवीके समान है। सभ्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? वेदकसम्यक्त्वके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मवाला जो अन्यतर जीव सम्यक्त्वको प्राप्त हुन्या उस प्रथम समयवर्ती वेदक सम्यग्दृष्टि जीवके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थिति उदीरणा किसके होती है ? जो अन्यतर दीर्घ त्रायुस्थितिवाले जीवोमे उत्पन्न होकर अन्तर्भुहुर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। फिर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर जीवितके थोड़ा शंव रहने पर मिध्यात्वको प्राप्त हुआ श्रीर जबतक शक्य है तबतक सत्कर्मसे नीचे स्थितिका बन्ध कर या समान स्थितिका बन्ध कर या सत्कर्मको बिताकर एक आविल अतीत हुए उस जीवके जघन्य स्थितिउदीरणा होती हैं।

५ ५३१. सब तिर्यव्योग अपने-अपने स्थितिसंक्रमके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि दर्शनमोहनीयकी तीन और अनन्तानुबन्बीचनुष्कका भंग खोषके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्चत्रिकमें अनन्तानुबन्बीचनुष्कका भंग अप्रत्याख्यानके समान है। इतनी विशेषता है कि योनिनियोंग सम्यक्त्यका मंग दूसरी पृथिवीके समान है। पद्मेन्द्रिय तिर्यक्च अपर्याप्त और पयडीश्रो श्रित्थि नासि द्विदिसंकमभंगो । मणुमनिए जाश्रो पयडीश्रो श्रित्थि नासि-मोघं । एवरि बारमक०-भय-दुगुंछ० जह० द्विदिउदी० कस्म ? श्रण्णद० बादरेइंदिय-पच्छायदहद्ममुप्पत्तियस्म श्रावित्यउववण्णल्लयस्य तस्स जह० । हस्स-रिद् श्ररिद-मोग० तस्सेव पञ्जत्तपसु श्रंतोमुहुतुववएएल्लयस्म ।

४२२. देवाणं णारयभंगो । एवि इत्थिवे०-पुरिसवे०-हस्स-रह-अरह-सोग० असण्णिपच्छायदहदसमुप्पत्तियस्स अंतोमुहुत्तुववण्णल्लयस्स । एवं भवरा०-वार्णवें । एवि सम्म० विदियपुढविभंगो । जोदिसि० विदियपुढविभंगो । णविर एवुं सयं छंडेऊण इत्थिवेदे पुरिसवेदे भाणिद्व्वं ।

१ ५३३. सोहम्म० जाव महस्मार ति दंमणितयमोघं । अर्णानाणु०४ विदिय-पुढिविभंगो । बारसक०-सत्तणोक० जह० द्विदिउदी० कस्स ? अण्णद० जो खड्य-मम्माइट्टी उवसमसेढिपच्छायदो दीहाए आउट्टिदीए उववण्णो तस्स चरिमसमयणिप्पद-माणयस्य जह० द्विदिउदी० । एवि सोहम्मीयाणे इत्थिवे० जह० द्विदिउदी० कस्स ? जो पणवण्णं पिलदोविमिएस उववण्णो अंतोमु० सम्मत्तं पिडविष्णो । पुणो अणंताणु०-चउकं विमंजोएद्ण चरिमसमयिणिष्पदमाणयस्स तस्स जह० । उवरि इत्थिवे०

मनुष्य श्राप्यांप्रकों में जो प्रकृतियाँ हैं उनका भंग स्थितिसंक्रमके समान है। मनुष्यितिकमें जो प्रकृतियाँ हैं उनका भंग श्रोपके समान है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय, भय श्रोर जुगुष्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा किमके होती हैं? जिसे श्रान्यतर हतसमुत्पत्तिक बादर एकेन्द्रियोंमेंसे श्राकर उत्पन्न हुए एक श्रावित काल हुश्रा है उसके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। तथा उसीके पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुए श्रान्तर्भुहर्त हानेपर हास्य, रित, भय श्रीर जुगुष्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा होती है।

६ ४२२. देवोंका भंग नागिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्वीवेद, पुरुषवेद, हास्य रित, अप्रति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणा जिसे इतसमुत्पत्तिक असंज्ञियोंमेंसे आकर उत्पन्न हुए अन्तर्मुहूर्त हुआ है उसके हाती है। इसीप्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग दितीय पृथिवीके समान है। ज्योतिषी देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदको छोड़कर स्वीवेद और पुरुषवेद कहलाना चाहिए।

\$ १३3. सौधर्म कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकक देवों में दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियों का भंग श्रोचके समान है। श्रान्नवानुबन्धीचतुष्कका भंग दूसरी प्रथिवीके समान है। बारह कषाय और सात नोकषायों की जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है? जो श्रान्यतर ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणिसे पीछे श्राकर दीर्घ श्रायुस्थितिवाले उक्त देवों में उत्पन्न हुश्रा उसके वहाँ से निकलते हुए श्रान्तम समयमें जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। इतनी विशेषता है कि सौधर्म श्रीर ऐशानकल्पमें स्थितेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है? जो पचवन पत्यवाले स्थिविद्यों उत्पन्न हुश्रा, पुनः श्रान्यमुंहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुश्रा, पुनः श्रान्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके वहाँसे निकलनेके श्रान्तम समयमें स्थित है उसके

णित्य । आग्यदादि णवभेवजा ति मणक्कुमारभंगो । एवि अर्एतासु०४ जह० द्विदिउदी० कस्म ? अर्एएद० जो वेदयसम्माइड्डी चउर्वाममंतकिम्मओ उक्कस्माउ-द्विदीए उववण्णो मिच्छत्तं गंतूण अर्णताणु०४ मंजोजित्ता चित्रमसमयणिप्पदमाण-यस्म तस्स जह० द्विदिउदी० । अर्णुहिमादि मव्बद्घा ति मम्म०-बारसक०-मत्तणोक० आणदभंगो । एवं जाव० ।

१ ४३४. कालाणु० दृविहो णि०—जह० उक्क०। उक्कस्से पयदं। दृविहो णि०—श्रोधेण श्रादेसेण य। श्रोधेण मिन्छ० उक्क० द्विदिउदी० जह० एगम०, उक्क० श्रंतोमु०। श्रणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० श्रणंतकालममंखेजा पोग्गल-पियद्वा। सम्म० उक्क० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम०। श्रणुक्क० जह० एयम०, उक्क० छात्रद्विमागगेतमाणि देसणाणि। सम्मामि० उक्क० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम०। श्रणुक्क० जह० उक्क० अंतोमु०। सोलमक०-भय-दृगुंछ० उक्क० श्रणुक्क० जह० एगममश्रो, उक्क० अंतोमु०। हित्यवेद-पृग्मिवेद० उक्क० द्विदिउदी० जह० एपम०, उक्क० श्रावित्या०। श्रणुक्क० जह० एपम०, उक्क० पतिद्विममद-पुधनं सागगेतमसदपुधनं। हस्स-रदि० उक्क० द्विदिउदी० जह० एपम०, उक्क०

जघन्य स्थिति उदीरणा होती है। इन दोनों कल्पोंके उत्पर स्थिविदकी उदीरणा नहीं है। आनत कल्पसे लेकर नी वैवेयक तकके देवोमें सनत्कुमार कल्पके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्कर्भा जघन्य स्थिति उदारणा किसके होती है ? जा अन्यतर चौबीस कमौंकी सत्तावाला वेदकसम्यर्द्धाष्ट जीव उत्कृष्ट आयुस्थितिवालों में उत्पत्न हा और मिश्यात्त्रमें जाकर तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्कका संयोजन कर वहासे निकलनेक अन्तिम समयमें स्थित होता है उसके जघन्य स्थिति उदीरणा होती है। अनुदिशमं लेकर सर्वार्थी मिद्धितकके देवों में सम्यक्त, बारह कपाय और सात नोकपायों का भंग आनतकल्पके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

१३४. कालानुगम दो प्रकारका है—जघन्य श्रीर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है —श्राय श्रीर आदेश । श्रायसे मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रम्म मृह्त है । श्रमुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल श्रम्म मृह्त है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रम्म काल है जो श्रमंख्यान पुद्रलपिवर्तनप्रमाण है । सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है । श्रमुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है । श्रमुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है । श्रमुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रम्म से है । स्थीवेद श्रीर पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल कमसे सी प्रथक्त प्रमाण श्रीर सी प्रथक्त सागर्म प्रमाण है । हास्य श्रीर रितकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर

त्रावित्याः । त्रणुक्कः जहः एयमः, उक्कः द्रम्मासं । श्ररिद-सोगः -णवुंनयः उक्कः द्विदि उदीः जहः एयमः, उक्कः श्रंतोगुः । त्रणुक्कः जहः एयसः, उक्कः तेत्तीमं सागरोः सादिरेयाणि । णवरि णवुंसः अणंतकालममंखेः पो०परियद्वः ।

उत्कृष्ट काल एक आवित है। अनुस्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल छह महीना है। अपित, शोक और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहर्त है। अनुस्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदकी अनुस्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

विशेषार्थ - मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अन्तर्महर्त तक होता है। इसीप्रकार इसकी अनुत्कृष्ट स्थितका बन्ध कमसे कम अन्तर्भृहर्त तक और अधिकसे आधक अनन्त काल तक होता है। इसीसे इसकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जधन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल श्रन्तमुहुर्त तथा श्रनुत्कृष्ट स्थित-उदीरमाका जघन्य काल अन्तर्मुहर्न और उत्कृष्ट काल असंख्यान पुरुलप स्वर्तनश्रमाण श्रानन्त काल कहा है। जो मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति बॉधकर श्रान्तर्मुहर्तमे स्थितिघात किये बिना बेदकसम्यग्दांष्ट हुन्ना है उसके संक्रमविधानसे दूसरे समयमे सम्यक्ताको उत्कृष्ट स्थित-उदीरमा होती है, इसलिए इसकी उत्कृष्ट स्थिति व्हीरमाका जधन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा ऐमे जीवके प्रथम समयमे अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणा होती है इसलिए इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिउर्दारणाका जघन्य काल एक समय कहा है श्रीर वेदकसम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल कुछ कम छ्यासठ सागर है, इसलिए इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरगाका उत्कृष्ट काल कुछ कम छ्यासठ सागर कहा है ! सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिनिउदीरणा अपने स्वामित्वके त्रानुसार सम्यग्निध्यात्व गुणस्थातक प्राप्त होनेक प्रथम समयमें होती है, इसलिए इसकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाश जलन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। श्रनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्महर्त है यह स्पष्ट ही है। सोलह कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका जधन्य बन्ध काल एक समय और उत्कृष्ट बन्ध काल अन्तर्सुहर्न है, इसलिए तो इनकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जधन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्महर्त कहा है। भय, जुराप्सा ये संक्रमसे उत्कृष्ट स्थितिवाली प्रकृतियां हैं, इसलिए इनकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य और उल्कुब्ट काल उक्त प्रमाण बन जानेस यह भी उक्त प्रमाण कहा है। किन्तु सोलड कपाय तथा भय श्रीर जुगुप्ताका उदय उदीरगाका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्भुहर्त होनेसे इनका अनुत्कृष्ट स्थिति उदारणाका अधन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूत कहा है। यह जघन्य काल ऐसे कि किसी जीवने एक समय तक कोधको अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा की आरे दूसरे समयमे मानकी अनुत्कृष्ट स्थिति-उदीरणा करने लगा। इसीप्रकार भय श्रीर जुगुत्साका उक्त काल भी घटित कर लेना चाहिए। इनके निरन्तर उदय-उदीरणाका नियम भी नहीं है, इसलिए भी यह काल बन जाता है। कपायोके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके समय स्त्रीवंद श्रीर पुरुषवेदका बन्ध नहीं होता, इसलिए इनकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल एक आविल बन जानेसे वह तत्त्रमाण कहा है। इसीप्रकार हास्य और रतिकी उत्कृष्ट उदीरणाका काल घटित कर

१ १३ १. आदेसेण रोग्इय० मिच्छ०-णवुं म०-अग्दि-मोग० उक्क० द्विदिउदी० जह० एयम०, उक्क० अंतोमु० । अणुक्क० जह० एयम०, उक्क० तेनीसं मागरो-वमाणि । मम्म० उक्क० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० तेनीसं मागरोवमं देखणं । सम्मामि०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० श्रोघं । हस्स-रदि० उक्क० द्विदिउदी० जह० एयम०, उक्क० आविलया । अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० श्रंतोमु० । एवं मत्तमाए । एवं पटमाए जाव छट्टि ति । णवरि मगद्दिदी । अर्रिद-मोग० उक्क० अणुक्क० द्विदिउदी० जह० एयम०, उक्क० अंतोमु० ।

लेना चाहिए । इन चारो प्रकृतियोंकी श्रमुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाके जघन्य श्रीर उत्कृष्ट कालका कथन सुगम है। मात्र स्त्रीवेद और पुरुपवेद ही अनुत्कृष्ट स्थिति उद्देशियाके जघन्य कालके कथनमं जो विशेषता है वह आगे बतलानेवाले हैं। अगति, शोक और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल भय-जुगुष्साके समान घटित कर लेना चाहिए। श्ररित श्रीर शोककी श्रनुत्कृष्ट स्थिनिउदीरणाका जघन्य काल एक समय भी यथा सम्भव उसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। अरित और शोककी अनुत्कृष्ट उदीरणाका उत्कृष्ट काल जो साधिक तेतीस सागर बतलाया है उसका कारण यह है कि नरकमें समनके पूर्व इनकी उदीरणा होने लगी और वहां तंतीस सागर कालतक इनकी उदीरणा होती रही। इसप्रकार यह काल बन जाता है। जो जीव नपंसकवेदसे उपशमश्रेशिपर श्रारोहण कर उत्तरन समय एक समय तक नपुंसकवेदका उदीरक हन्नान्नीर दसरे समयमे मरकर देव हो गया उसके नपु सकवेदकी ऋनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाको जधन्य काल एक समय प्राप्त होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। इसीप्रकार स्त्रीवदकी श्रपेत्ता श्रानुत्कृष्ट स्थिति उद्गिराणाका एक समय जघन्य काल घटित कर लेना चाहिए। मात्र पुरुपवेदका भवक अन्तिम समयमे एक समयके लिए अनुत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा कराकर यह वाल लाना चाहिए। नपुंसकवंद श्रोर स्त्रीवेदका यह काल इसप्रकार भी प्राप्त किया जा सकता है। एकेन्द्रियोकी उत्कृब्द कायस्थिति अनन्त काल है, इसलिए इसकी मुख्यतासे नेषु सकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट काल तत्प्रमाण कहा है।

१५३५. आदेशसे नाग्कियोंमे मिण्यात्व, नपुंसकवेद, श्रग्नि और शोककी उत्कृष्ट स्थितिउदीग्णाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहूर्त है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीग्णाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल नेतीस सागर है। सम्यक्तकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल
एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम ततीस सागर है। सम्यग्निण्यात्व, सोलह कषाय,
भय और जुगुप्साका भंग श्रोषके समान है। हास्य और रितको उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका
जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एक श्राविल है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका
जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहूते है। इसीप्रकार सानवीं पृथिवीमे
जानना चाहिए। इसीप्रकार पहली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकक नार्रकयोमें जानना
चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रपनी श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। श्ररित श्रीर शाककी
उत्कृष्ट और श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल
श्रन्तमुंहूर्त है।

१ १३६. तिरिक्लेस मिच्छ०-णवुंम० उक्क० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोस्र०। अणुक० जह० एयस०, उक्क० अणंतकालमसंखेजा पोग्गलपरियद्वा। सम्म० उक्क० द्विदिउदी जह० उक्क० एयस०। अणुक० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पित्रदो० देस्एणि। सम्माम्म०-सोलसक०-छएणोक० पढमाए भंगो। इत्थिवे०-पुरिसवे० उक्क० द्विदिउदी० श्रोघं। अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पित्रदो० पुन्वकोडिपुधत्तं। एवं पंचिदियतिगिक्खिनए। एविगि मिच्छ० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० मगद्विदी। णवुंसँ० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पुन्वकोडिपुधत्तं। णवुंसँ० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पुन्वकोडिपुधत्तं। णवुंसँ० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पुन्वकोडिपुधत्तं। णवारि

विशेषार्थ — इनके स्वामित्वमें आधमं कार्र विशेषता नहीं है, इसलिए श्रोधशरूपणाके स्पष्टीकरणको ध्यानमें रखकर तथा यहाँकी भविस्थितिको ख्यालमे रखकर यहा स्पष्टीकरण कर लेना चाहिए। मात्र मिथ्यात्व धार नपुंसकवेदकी श्रमुत्कृष्ट स्थिति उदीरणा भवके श्रन्तिम समयमे करानपर इनकी श्रमुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय प्राप्त करना चाहिए। प्रथमादि छह पृथिविशोमे श्राप्त श्रीर शांककी उद्य उदीरणा श्रिषकमे श्रिक श्रम्तम् मूहूर्त कालतक होती है, इसलिए यहां इनकी श्रमुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट काल श्रम्तमुंहूर्त कहा है। इसीप्रकार श्रापे भी कालको घटित कर लेना चाहिए। यदि कही कोई विशेषता होगी तो उसका श्रम्तमें स्पष्टीकरण करेंगे।

१५३६. निर्यक्कांम मिश्रपात्व और नपुंसकवंदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय हे और उत्कृष्ट काल अनन्य केल एक समय है और उत्कृष्ट काल अनन्य काल है जो असंख्यात पुद्रलपिवर्तनश्माण है। सम्यक्त्वका उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है। सम्यिग्ध्यात्व, सोलह कपाय और छह नोकपायोका भंग श्रथम पृथिवीके समान है। स्त्रविद और पुरुपवंदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन पल्य अधिक पूर्वकाटिप्रथक्त्वश्रमाण है। इसी-प्रकार पब्चेन्द्रिय तिर्यक्कांत्रकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें मिश्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल प्रवित्रमाण है। चित्रप्ति उदीरणाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकाटिप्रथक्त्वश्रमाण है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें म्त्रविदकी उदीरणा नहीं है। तथा योगिनियोमें पुरुपवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा योगिनियोमें पुरुपवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है।

विश्रोपार्थ — भोगभूमिमें नपुंसकवेदी तिर्यक्ष खीर मनुष्य नहीं होते, खतः पंचेन्द्रिय तिर्यक्ष पर्याप्तकोंमें नपुंसकवेदकी खनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट काल मात्र पूर्वकोटिष्टथक्त्व-प्रमाण कहा है। यह विशेषता खारों भी यथायोग्य जान लेनी चाहिए। शेष कथन स्पष्ट ही है।

ता०प्रतौ उद्ग० पुग्वभादिपुश्रनं इति पाटः ।

२, ताब्प्रतो उक्कव् नपुंस्य इति पाटः।

३. ता॰प्रती उक्क॰ निष्णिपलिडो॰ पुन्वकोडिपुधत्तं इति पाटः।

१ १३७. पंचि वितिरिव्झपञ्जव-मणुमश्चपञ्जव मिच्छव-णवुं मव उक्कव जहण्णुकव एयसव । श्रणुकव जहव खुद्दाभवव ममऊणं, उक्कव अंतोमुव । मोलसकव-छण्णोकव उक्कव द्विदिद्यदिव जहव उक्कव एयसव । श्रणुकव जहव एयमव, उक्कव अंतोमुव । मणुमतिए पंचिदियतिरिक्खितियभंगो ।

४२८. देवेसु मिच्छ० उक्क० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोसु० । श्रणुक्क० जह० एयम०, उक्क० एकत्तीसं सागरे। । सम्म० उक्क० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम० । अणुक्क० जह० एयम०, उक्क० तेत्तीमं मागरे। त्रमाणि । सम्मामि०-मोलमक०-अरिद-सोग-भय-दृगुंछा० पढमपुढिविभंगो । इत्थिवे• उक्क० जह० एयम०, उक्क० आविलिया० । अणुक्क० जह० एयम०, उक्क० पणवएणपिलदां० । पुरिसवेद० उक्क० ओघं । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं मागरे। । हम्म-रिद० उक्क० द्विदिउदी० ओघं । अणुक्क० जह० एयसमओ, उक्क० छम्मामा । एवं भवणादि जाव सहस्मार ति । णवरि सगद्विदी । हस्म-रिद० णारयभंगो । महस्मारे हस्म-रिद० ओघं । अगुक्क० जह० एयस०, उक्क०

५ ५३७. पञ्चीन्द्रय निर्यञ्च त्रापर्याप्त श्रोर मनुष्य श्राप्यीप्तकांमं मिथ्यात्व श्रोर नपुं सक वन्की उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। त्रानुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय कम जुल्लक भवप्रहण्यमाण् है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रम्तर्मुहृत्तं हैं। सोलह कषाय श्रोर छह नोकपायोकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रम्तर्मुहृत्ते है। मनुष्यत्रिकमे पञ्चीन्द्रय निर्यञ्चित्रकके समान मंग ह।

[§] ५३८. देवामे भिष्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका ाघन्य नाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहर्त है। श्रनुत्कृष्ट रिथितउपीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल इकतीम सागर है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल तिस सागर है। श्रम्यिमध्यात्व, सालह कपाय, श्रर्रात, शोह, भय श्रीर जुगुप्साका भग प्रथम प्रथिविक समान है। स्त्रीविद्धी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल एक श्रावित है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पचवन पल्य है। पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका मंग श्रीपके समान है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है। हास्य श्रीर रिवर्की उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है। हास्य श्रीर रिथित कहनी चाहिए। तथा इनमे हास्य श्रीर रिवर्का मंग नारिकयोके समान है। सहस्रारमे हास्य श्रीर रिविका भग श्रीपके समान है। सवनवासी, उत्वत्त श्रीर उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका भंग श्रीपके समान है। सवनवासी, उत्वत्त श्रीर उपीतिष्ठ समान है। सवस्रारमे हास्य श्रीर रिविका भग श्रीपके समान है। सवनवासी, उत्वत्त श्रीर उपीतिष्ठ समान है। सवस्रारमे हास्य श्रीर रिविका भग श्रीपके समान है। सवस्रारमे हास्य श्रीर रिविका भग श्रीपके समान है। सवस्रारमे हास्य श्रीर रिविका भग श्रीपके समान है। सवस्रारमे हास्य श्रीर रिविका भग श्रीर स्थातिउदीरणाका जवन्य काल एक समय

तिण्णि पलिदोवमाणि पलिदोवमसादिरेयाणि पलिदोवमसादिरे० । सोहम्मीसाणे इत्थिवेद ० देवोघं । उवरि इत्थिवे० णित्थ ।

१ ४३९. त्राणदादि णवगेवजा ति मिच्छ० उक्क० द्विदिउदी० 'जह० उक्क० एयम० । त्रण्० जह० अंतोमु०, उक्क० मगद्विदी । सम्मा० उक्क० द्विदिउदी० जहण्णु० एयस० । त्रणुक० जह० एयसमत्रो, उक्क० सगद्विदी । सम्मामि० त्रोघे । सीलसक०- छण्णोक० उक्क० द्विदिउदी० जहण्णुक० एयम० । त्रणुक० जह० एयस०. उक्क० अंतोमु० । पुन्तिवेद० उक्क० द्विदिउदी० जहण्णुक० एयम० । त्रणुक० जहएणुक० एयम० । त्रणुक० जहएणुक०- द्विदी ।

१ ४४०. अणुहिसादि सन्बद्धा ति सम्म० उक्क० हिदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० सगद्धिदी। बारसक०-इएएएक० उक्क० हिदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। पुरिसवै० उक्क० हिदिउदी० जहण्णुकक० एयस०। अणुक्क० जहण्णुकक० जहएणुकक० जहएणुकक० जहएणुकक० जहएणुकक० जहएणुकक० जहएणुकक० जहएणुकक० एयस०। एवं जाव०।

है और उत्क्रष्ट दाल क्रमसे तीन पल्य, साधिक एक पत्य और साधिक एक पत्य ई । सीयमें क्रीर ऐशानकल्पमें रत्रीवेदका भंग सामान्य देवोक समान हैं। आगे स्त्रीवदका उपारणा नहीं हैं।

११३८. त्रानतकलपसे लंग्ग में प्रेययकतकके देवाम निष्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय हैं। श्रानुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका अघन्य काल श्रम्तमुहूर्त हैं श्रीर उत्कृष्ट काल श्रम्पता-श्रमा निर्मातश्रमाण है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रम्मय हैं। श्रानुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय हैं। श्रानुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर श्राचक समान हैं। निलंह कपाय श्रीर छह नाकषायोकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय हैं। श्रानुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रम्मय हैं। पुक्रमें देकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रममें हैं। श्रमुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रममें हैं। श्रमुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट स्थिति अस्ति स्थिति अस्ति स्थिति अस्ति स्थिति समाण है।

१ ५४० अनुदिशसे लेकर सर्वाधिसिद्धितकके देवोमे स्मयक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपना स्थितियमाण है। बारह कपाय और छह नाकपायोका उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल घन्य और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

प्रश्र. जह० पयदं । दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ० जह० द्विदिउदी० जह० उक० एयस० । श्रज० तिण्णि भंगा । तत्थ जो सो सादिश्रो सपजनिसदो तस्स जह० अंतोम्र०, उक्क० श्रद्धपोग्गलपरियष्ट्रं देस्णं । सम्म० जह० द्विदिउदी० जहण्णु० एयम० । श्रज० जह० अंतोम्र०, उक्क० छान्नद्विमागरोनमाणि देस्णाणि । सम्मामि० जह० द्विदिउदी० जह० एयस० । श्रजह० जह० उक्क० श्रंतोम्र० । बारसक०-भय-दुगुंछ० जह० श्रज० द्विदिउदी० जह० एयसमश्रो, उक्क० श्रंतोम्र० । चदुसंज० जह० द्विदिउदी० जह० एयस० । श्रज० जह० प्रसिक् , उक्क० श्रंतोमुह्तं । इत्थिवे०-पुरिसवे०-पनुंस० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस० । श्रज० जह० एयस०, पुरिसवे०-पनुंस० जह० द्विदिउदी० जह० प्रका मागगेनमसदपुधत्तं श्रणंतकालमसंखे० पोग्गलपरियष्टं । हस्म-रिद० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस० । श्रज० जह० प्रस०, उक्क० छम्मासं । श्ररिद-सोग० जह० जह० उक्क० एयस० । श्रज० जह० एयस०, उक्क० विसे सागरो० सादिरेयाणि ।

८ ४४१ जघन्यका प्रकरण है। निर्देश टा प्रकारका है-श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्राघसे मिध्यात्वकी जघन्य स्थिति उदारमाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थिति उदीरणाके तीन भंग है। उनमेसे जो सादि-सपर्य रसित भंग है उसका जयन्य काल अन्तर्मुहर्त हे और उत्कृष्ट कान कुछ कम अर्धपुद्रलपरिवर्तनप्रमाण है। अस्यक्त्वकी जघन्य स्थिति व्हारमाका जधन्य आर उत्कृष्ट काल एक समय है। अजधन्य स्थिति उदीरमाका जबन्य काल अन्तर्महत है और उत्कृष्ट काल कुछ कम छुचामठ सागर है। सम्यागिध्यात्त्रभी जघन्य विश्वतिवर्दारमाका जघन्य स्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। स्रजघन्य स्थितिवदारमाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुन्ते हैं। बारह कपाय, भय श्रीर जुगुप्साकी जवन्य श्रीर अजघन्य स्थिति उदीरमाका जवन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहते हैं। चार सज्बलनकी जबन्य स्थितिउदीरणाका जबन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजबन्य स्थितिउदीरणाका ज न्य काल एक समय है आर उत्कृष्ट काल भन्तर्मृहर्त है। स्त्रीवंद, पुरुषवंद और नपंसक बदकी जवन्य स्थितिवदीरणाका जवन्य श्रार व्हिक्ट काल एक समय है। श्रजवन्य स्थिति-उदारमाका जघन्य काल एक समय है, पुरुषवद्का अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट काल कमसं सौ पल्यप्रथक्त्व, सो सागरप्रथक्त्व तथा असंख्यात पुद्रलपरिवर्तनप्रमाण अनन्त काल है। हास्य श्रार रतिकी जघन्य रिथात उदारणाका जघन्य श्रार उत्कृष्ट काल एक समय ह । श्रजघन्य म्थिति उदारणाका जधन्य काल एक समय है आर उत्कृष्ट काल छह महीना है। अरित भौर शांककी जघन्य स्थिति उदीर तका जघन्य और उत्कृष्ट कान एक समय है। अजघन्य स्थित-उदीरगाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तेतास सागर है।

विशेषार्थ— जो मिथ्याद्याण्ट जीव उत्तरामसम्यक्तके अभिमुख हो एक समय अधिक एक आविलियमाण प्रथम स्थितिके रहनेपर उपरितन एक स्थितिका उदीरणा करता है उसके मिथ्यात्वकी जधन्य स्थितिउदीरणा मात्र एक समय तक प्राप्त होतेके कारण इसका जधन्य आर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। उसकी अज्ञ नन्य स्थितिउदीरणाके तीन मंग प्राप्त होते है—अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त आंग सादि-सान्त। उनमेसे सादि-सान्त भंगका जो जधन्य और

५४२. त्रादेसेण ऐग्इय० मिच्छ०-णवुंस०-ऋरदि-सोग० जह० द्विदिउदी० जह० उक्त० एयस०। अज० जह० अंतोमु०, ऋरदि-सोग० जह० एयसमश्रो, उक्त० तेत्तीसं सागरोवमाणि। सम्म० जह० द्विदिउ० जह० उक्त० एयस०। अज० जह० एयसमश्रो, उक्त० तेत्तीमं यागरो० देख्णाणि। सम्मामि० श्रोघं। सोलसक०-हस्स-रदि-भय-दुगुंछा० जह० द्विदिउदी० जह० उक्त० एयसमश्रो। अज० जह० एयस०,

उत्कृष्ट काल मुलमे बतलाया है वह सुगम है, क्योंकि जो सम्यग्दृष्टि जीव भिश्यात्वमें जाकर अन्तर्महर्त कालतक मिथ्यादृष्टि बना रहकर पुनः सम्यग्दृष्टि हो जाता है उसके मिथ्यात्वकी श्चजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल श्वन्तर्मुहर्त प्राप्त होता है श्चीर जो श्वर्धपृद्रलपरिवर्तन-प्रमाण कालके शेप रहने पर सम्यग्दृष्टि होकर पुनः अन्तर्मुहर्तमे मिन्यादृष्टि हो जाता है श्रीर मुक्ति लाभ करनेके कुद्र काल पूर्व सम्यग्द्यष्टि होता है उसके मिध्यात्वकी अजधन्य स्थितिउदी-रणाका उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्रलपरिवर्तनप्रमाण प्राप्त होता है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा अपने स्वामित्वके अनुसार ज्ञायिक सम्यक्त्वको प्राप्त करते समय एक समय ऋधिक एक आविलिप्रमाण स्थितिके शेप रहनेपर एक समय तक उपरितन स्थितिकी होती है, इमलिए इमका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा वेदकसम्यक्त्वकं जघन्य श्रीर उत्कृष्ट कालको ध्यानमें रखकर इसकी श्रजघन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य काल श्रन्तर्महर्न श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम छ्यासठ सागर कहा है। अपने रवामित्वके श्रनुसार सम्यग्नि ध्यात्वकी जघन्य मिथनि उदीरमा सम्यग्मिश्यात्य गुगाम्थानके ऋन्तिम समयमे प्राप्त होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा इस गुणस्थानके जघन्य श्रीर उत्क्रष्ट काल अन्तर्मृहर्तको ध्यानमे रखकर इसकी श्रजधन्य स्थितिउदीरमाका जधन्य श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त कहा है। बारह कपाय, भय श्रीर जुगुरसाकी जघन्य स्थिति उदीरगाका जो स्वामित्व बतलाया है उसे ध्यानमे रखकर इनकी जघन्य स्थितिउद रागाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल घटित कर लेना चाहिए। श्रजघन्य स्थिति उदीरणाका काल सगम हैं। कालका निर्देश मुलमें किया ही हैं। चार संज्वलनोकी जघन्य स्थिति दोनो श्रेणियोंमें विवित्ति क्यायसे चढ़े हुए जीवक एक समयतक होती है, इसलिए इनकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्न है यह स्पष्ट ही है। इसीप्रकार श्रागे भी स्वामित्वका विचारकर काल घटित कर लेना चाहिए। सुगम होनेसे पृथक पृथक स्पष्टी-करण नहीं किया। यही बात गतिमार्गणाके सब उत्तर भेदोंमें जाननी चाहिए। जहाँ कुछ विशेषता होगी उमका स्पष्टीकरण ऋलगसे करेंगे।

§ ४४२. त्रादेशसे नागिकयोंमें भिध्यात्व, नपुंसकवेद, श्राति श्रोर शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। श्राजघन्य स्थितिउदीरणाका मिध्यात्व श्रोर नपुंसकवेदकी श्रापेचा जघन्य काल श्रात मुहूर्त, श्राति श्रोर शोककी श्रापेचा जघन्य काल एक समय तथा सबका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। सम्यत्कवकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्राजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। सम्यग्मिध्यात्वका मंग श्रोघके समान है। सोलह कथाय हास्य, रित, भय श्रोर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट

१, ता०प्रती श्रंतोमु०। ""श्ररिद-सोग० इति पाठः।

उक्क० अंतोमु० । एवं पडमाए । एावरि सगद्विदी । ऋरदि-मोग० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० एयस०, उक्क० अतोमु० ।

१ ५४३. बिदियादि जाव छट्टि ति मिच्छ० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम० । अज० जह० अंतोमु०. उक्क० मगद्विदी । सम्म० जह० जह० उक्क० एयममञ्जो । अज० जह० अंतोमु०, उक्क० मगद्विदी देखणा । सम्मामि० अंघि । वारमक०-छण्णोक० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम० । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अणंताणु०४ जह० अजह० द्विदिउदी० जह० एयम०, उक्क० अंतोमु० । णवुंस० जह० द्विदिउ० जह० उक्क० एयस० । अज० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्म-द्विदी भाणियच्या ।

ः ५४४. सत्तमाए मिच्छत्त-एावुंम०-त्रारदि-सोग-सम्मामि०-हस्स-रदि० णिरयोघं। सम्म० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अज० जह० अंतामु०, उक्क०

काल एक समय है। श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहृत है। इमीप्रकार प्रथम पृथिवीम जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रपनी स्थित कहनी चाहिए। श्रर्रात श्रोर शाककी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक रामय है और उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहृते है।

निशोपार्ध — अरित और शांककी अज्ञचन्य स्थितिउदीरणा प्रथमादि छह पृथितियोंमे अधिक से अधिक अन्तर्मुहर्त कानतक ही हाती है। यही कारण है कि प्रथम पृथिवीमे उक्त प्रकृतियोंकी अज्ञचन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त कहा है।

१४९:. दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारिकयोंसे मिध्यात्वका जघन्य स्थिति उद्रिगाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउद्रिगाका जघन्य काल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्तकी जघन्य स्थिति उद्रिगाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउद्रिगाका जघन्य काल अन्तमुंहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यग्निध्यात्वका भंग आघके समान है। बाग्ह कपाय और छह नोकवायोकी जघन्य स्थितिउद्रीगणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तमुंहूर्त है। अनन्तानुश्वन्धीचतुष्कका जघन्य और अजघन्य स्थितिउद्रीगणाका जघन्य स्थित उद्रीगणाका जघन्य स्थित उद्रीगणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तमुंहूर्त है। नपुंसकवेदका जघन्य स्थिति उद्रीगणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउद्रागणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउद्रागणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउद्रागणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थिति उद्रागणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थिति उद्रागणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

विशेषार्थ—इन नारिकयोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कके स्वामित्वको ध्यानमें लेनेपर इनकी जघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बन जाता है, इस्रलए यह उक्त कालप्रमाण कहा है।

६ ५४४. सातवीं पृथिवीमें मिण्यात्व, नपुंसकवेद, श्रारति, शोक, सम्यग्मिण्यात्व, हास्य श्रार रतिका भंग सामान्य नारिकयोंके समान है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका तेत्तीसं मागरो० देस्रणाणि । सोलसक०-भय-दुगुंञ्च० जह० श्रजह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० त्रंतोमु० ।

४४४. तिरिक्खेस मिच्छ०-णवुं म जह० द्विदिउदी० जह० उक० एयस०। अज० जह० खुद्दाभव०, उक्क० अणंतकालमसंखे०पोग्गलपरियट्टा। मम्म० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम०। अज० जह० एयम०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देखणाणि। सम्मामि०-सोलमक०-भय-दुगुंछाणं सत्तमपुद्धविभंगो। इतिथवे०-पुरिमवे० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम०। अज० जह० अंतोसु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुन्वकोडिपुधत्तेणब्मिहियाणि। हस्य-रिद-अरिद-सोग० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस०, उक्क० अंतोसु०।

्र ४४६. पंचिदियतिग्विखतिय० मिच्छ० जह० द्विदिउदी० जह० उक० एयम०, अज० जह० खुडाभव० अंतोमु०, इत्थिवेद०-पुग्मिवे० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस०, अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तिएहं पि सगद्विदी। सम्म०-

जघन्य श्रीर उत्कृष्ट कात एक समय है। अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल अन्तर्भुहूर्त श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम नतीस सागर है। सोलह कपाय, भय श्रीर जुगुप्साकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्भुहर्त है।

विशोषार्थ — यहाँ सोलह् कपाय, भय श्रीर जुगुष्याकी जघन्य श्रीर अजघन्य स्थिति-उदीरागांक जघन्य श्रीर उरकृष्ट कालका खुलासा श्रीघको ध्यानमें रखकर लेना चाहिए।

§ ५४५. तिर्यक्कोंमं मिण्यात्व श्रोर नपुंसकवेदकी जयन्य स्थितिउद्दारणाका जयन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय हं। श्रज्ञयन म्हर्थान उद्दारणाका जयन्य काल जुल्लक भवमह्णप्रमाण् है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रमन्तवाल है जो असंख्यात पृहलपरिवर्तनप्रमाण है। सम्यक्त्वकी जयन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रज्ञयन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय हे और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्यप्रमाण है। सम्यग्मिण्यात्व, सोलह कपाय, भय श्रोर जुगुष्साका भंग मातवों पृथिवीके समान है। स्त्रीवेद श्रोर पुरुववेदका जयन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रज्ञयन्य स्थिति उदीरणाका जयन्य काल श्रम्तर्मृहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट काल पृवेकाटिप्रथक्तव श्रियिक तीन पल्य है। हास्य, रित, श्रारति श्रोर शोकको जयन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रज्ञयन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य श्रोर अक्षर काल एक समय है। श्रज्ञ्यन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य श्रोर उत्कृष्ट काल श्रम्तर्मूहर्त है।

विशेषार्थ — तिर्यक्षोंमें कृत्यकृत्यवेदक सम्यग्द्ध जीव भी मरकर उत्पन्न होते हैं, इसिलए इनमें सम्यक्त्वकी स्रज्ञचन्य स्थिति उत्तीरण।का जघन्य काल एक समय बन जाता है। इसीप्रकार सामान्यसे नारिकयोंमे और प्रथम पृथिवीमें भी जान लेना चाहिए। आगे भी यह विशेषता यथायोग्य समक्ष लेनी चाहिए।

१४४६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकमें मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है, श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल सामान्य पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें जुल्लक भवमहणप्रमाण श्रीर शेष दोमें श्रन्तमु हुर्त है, स्त्रीवेद श्रीर श्रीर पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है, श्रजघन्य

सम्मामि० निरिक्खोघं। मोलमक०-छएगोक० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम०। अज० जह० एयम०, उक्क० अंतोमु०। णवुंम० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अज० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पुन्वकोडिपुधत्तं। णविर पज्ज० इत्थिवे० गित्थि। जोणिणीसु पुरिसवे०-गावुंस० णित्थि। जोणिणी० सम्म० अज० जह० अंतोमु०।

ः ४४७. पंचि०तिरिक्खअपञ्च०-मणुमअपञ्च० मिच्छ० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम० । अज० जह० आविलया ममयूणा, उक्क० अंतोमु० । सोलसक०- इएणोक० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमुहुनं । णवुंम० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० उक्क० अंतोमु० ।

े १४८. मणुसितय० पंचिदियतिरिक्सभंगो । णवरि सम्म० अज० जह० अंतोमु० । तिण्णिवेद० अज० जह० एयम० । पञ्ज० इत्थिवेदो णित्थ । सम्म०

स्थितिउदीरणाका जघन्य काल ध्रन्तमृहते है श्रीर उत्कृष्ट वाल मिश्यात्व श्रादि तीनोंका ही अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त श्रीर सम्यगिष्यात्वका भंग सामान्य तिर्यक्षोंक समान है। सोलह कपाय श्रीर छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। ध्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहर्त है। नपुंसकवेद भी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल श्रन्तर्मृहर्त है श्रीर उत्कृष्ट काल पृवकोटिपृथक्त्वण्रमाण है। इन्ता विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्थेख्न पर्याप्तकोंमे स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनींमें पृक्षपवेद श्रीर नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा योनिनी तिर्येख्नोंमे सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणावा जघन्य काल श्रन्तर्मुहर्त है।

तिशोपार्थ —कृतकृत्यवेदक सम्यग्हिष्ट मनुष्य मरकर योनिनी तियञ्चोमें नहीं उत्पन्न होतं, श्रतः इनमे सम्यक्तको श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय न बन सकनेके कारण वह श्रन्तर्मुहर्त कहा है जो वेदकसम्यक्त्वकी श्रपेचा बन जाता है।

१४४७ पद्म्वेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकांमें मिध्यात्वकी जघन्य मिथितिउदीरणाका जघन्य आर उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय कम एक आर्थाल है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सोलह कषाय और छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

े ५४८. मनुष्यित्रिकमे पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वकी अजधन्य स्थितिउद्दारणाका जधन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। तानों वेदोंकी अजयन्य स्थितिउदीरणाका जधन्य काल एक समय है। मनुष्य पर्याप्तकोमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है।

अज० जह० एयसमञ्जो । मणुसिणीसु पुरिसवेद०-एवुं स० रात्थि ।

१४८९. देवेसु मिच्छ० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम०। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० एकत्तीसं सागरोवमं। मम्म०-पुरिमवे० जह० द्विदिउ० जह० उक्क० एयम०। अज० जह० एयम०, पुरिमवे० अंतोमु०, उक्क० दोण्हं पि तेत्तीसं सागरोवमं। सम्मामि०-सालमक०-छण्णोक० पढमपुढविभंगो। णवि हस्य-गिद्० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एगसम्यो। अज० जह० एगम०, उक्क० छम्मासं। इत्थिवे० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एगम०। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० पणवएणं पिलदोवमं०। एवं भवण-वाणवें०। णविर मगद्विदी। सम्मत्त० अज० जह० अंतोमु०, उक्क० पिण्ण पिलदो० पिलदो० सादिरेयाणि। हस्य-रिद० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम०। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० विण्ण पिलदो० पिलदो० सादिरेयाणि। हस्य-रिद० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयम०। अज० जह० एयसमञ्जो, उक्क० अंतोमुक्तं।

तथा इनमें सम्यक्तकी श्रजवन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है। मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद श्रीर नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है।

विशेषार्थ— मनुष्योमे चायिक सम्यक्त्वकी उत्पत्ति उक्त तीनो प्रकारके मनुष्योमे ही सकती है। इसिलए चायिक सम्यक्त्वको उत्पन्न करनेवाली जो कृतकृत्यवेदक सम्यक्तिको मनुष्यमा मरकर उत्तम भोगभृभिमे उत्पन्न होती है वह भी मनुष्य पर्योप्रकोमे ही उत्पन्न होती है। इसी बातको ध्यानमे रखकर यहाँ मनुष्य पर्याप्तकोमें सम्यक्त्वकी अज्ञचन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय बन जानेसे वह तत्त्रमाण कहा है। शेप कथन सुगम है।

१ ४४६. देवोंमे भिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रजधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य काल अन्तर्मृहतं है श्रीर उत्कृष्ट काल इकतीस सागर है। सम्यक्त्व श्रीर पुरुषवेदकी जवन्य स्थिति उदीरणाका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय हैं। अजधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य काल एक समय है, पुरुषवेदका अन्तर्मुहर्त है श्रीर दानाका उत्कृष्ट काल नेनीस सागर है। सम्याग्निध्यात्व, सोलह कषाय श्रार छह नांकपायोका भंग प्रथम प्रथिवीके समान है। इतनी विशेषता है कि हास्य श्रीर र्रातकी जघन्य स्थितिउर्दारणाका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रजघन्य स्थितिउर्दारणाका जघन्य काल एक समय हे ऋौर उत्कृष्ट काल छह महीना है। स्त्रीवेदकी जधन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रजयन्य स्थिति उदीरणाका जयन्य काल अन्तर्मृहत हैं स्त्रीर उत्कृष्ट काल पचवन पल्य हैं। इसीप्रकार भवनवासी स्त्रीर व्यन्तरदंवांमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। सम्यक्तवकी अजयन्य स्थितिउदीरगाका जघन्य काल अन्तर्भुहर्न है और उत्कृष्ट काल कुछ कम ऋपनी-ऋपना स्थिति-प्रमाण है। स्त्रीवंदकी श्रजधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य काल अन्तर्मुहत है श्रीर उत्कृष्ट काल क्रमसे तीन पत्य ऋोर साधिक एक पत्य हैं । हास्य-रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य भीर उत्कृष्ट काल एक समय है। अजयन्य स्थिति उद्देशियाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल भन्तर्महर्त है।

१४४०. जोदिसियादि जाव सहस्सार ति मिन्द्र० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अजह० अंतोग्रहुत्तं, उक्क० समिट्टिदी । सम्मामि०-सोलमक०-द्रण्णोक० विदियपुढविभंगो । इत्थिवे० जह० द्विदीउदी० जह० उक्क० एयम० । अज० जह० पिलदो० अट्टमागो पिलदो० मादिरेयं, उक्क० पिलदो० सादिरेयं पणवण्णं पिलदोवमाणि । पुरिसवे० जह० द्विदिउदी० जह० एयस० । अर्ज० जहण्णुक० जहण्णुकस्मिट्टिदीओ । णविर जोदिमि० सम्म० अज० जह० अंतोग्र०, उक्क० पिलदो० मादिरेयं । सहस्सारे हस्म-रिद ओघं । आणदादि एविगेवजा ति मणकुमारमंगो । णविर समिट्टिदी । अणंताणु०४ जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयसम्ब्रो । अज०

विशेषार्थ — सामान्यकी अपंत्ता देवोमे भी कृतकृत्यवेदक सम्यक्त्वकी अपंत्ता सम्यक्त्वकी अज्ञजन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय बन जानेसे यह काल तत्त्रमाण कहा है। किन्तु भवनत्रिकमे सम्यग्दिष्ट जीव मरकर नहीं उत्पन्न होने, इसिलए इनमें सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहृतीसे कम नहीं प्राप्त होनेसे यह अन्तर्मुहृते कहा है। पुरुपवद और स्त्रीवदकी जघन्य स्थितिउदीरणा जो हतसमुदात्तिक असंज्ञी जीव मरकर देवोमे उत्पन्न होना है उसके उत्पन्न होनेक अन्तर्मुहृते होनेपर होती है, इसिलए सामान्य देवोमे पुरुपवेद और रत्रीवदकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहृते कहा है। इसीप्रकार स्वामित्व और भवस्थित आदिको जानकर अन्य सब प्रकृतियोकी जघन्य और अजघन्य स्थितउदीरणाका काल घटित कर लेना चाहिए।

६ ४४०. ज्योतिपी देवांसे लकर सहस्रार कल्पतकके दवामे निध्यात्वकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय हैं। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्भेहर्त हैं और उत्कृष्ट काल अपनी श्रपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्तारकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रपनी-श्रपनी स्थितिप्रमाग ह । सम्यग्मिध्यत्व, सोलह कपाय श्रौर छह नोकषायोका भग दृश्शी पृथिवीकं समान है। स्त्रीवेरका जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थिति उदीरगाका जघन्य वाल ज्योतिषियोम एक पल्यका बाठवाँ भागप्रमाण और सीधर्म-एशानकल्पम साधिक एक पल्यप्रमाण है तथा उत्कृष्ट काल ज्योतिषयोमे साधिक एक पल्यप्रमाण और सौधर्म-ऐशानकल्पमे पचवन पल्य-प्रमाण है। पुरुषवेदकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है। अजघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल अपनी श्रपनी जघन्य श्रीर उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इतनी विरोषता है कि ज्योतिषियोमे सम्यक्त्वकी अज्ञ चन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल श्रन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक एक पत्य है। सहस्रार कल्पमे हास्य और रतिका भंग श्रोघके समान है। श्रानत कल्पसे लेकर नो प्रैवेयक तकके देवोमे सनत्कुमारकल्पके समान भंग हैं। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थित कहनी चाहिए। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय हैं। श्रजघन्य स्थिति उदीरणाका

श्राव्यतौ एयस० श्रज्ञ० इति पाटः ।

जह० एयस०, उक० अंतोमु०।

४४१. ऋणुहिमादि सन्बद्घा त्ति सम्म० जह० द्विदोउदी० जह० उक्क० एयस०। अज० जह० एयस०, उक्क० सगद्विदी। पुरिसवेद० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अजह० जहण्णुक० जहण्णुकस्मद्विदी। वारसक०-छण्णोक० जह० द्विदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अज० जह० एयस०, उक्क० अंतामु०। एवं जाव०।

जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त है।

विशेषार्थ— ज्योतिषियोमे सम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न नहीं होत, इसलिए इनमें सम्यक्तव की आजधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य काल अन्तर्भुहृतसे कम नहीं प्राप्त होता. इसलिए वह अन्तर्भुहृत कहा है। तथा ज्योतिषियोक्ती उत्कृष्ट स्थिति साधिक एक पत्य हैं, इसे ध्यानमें रखकर इनमें सम्यक्तवकी आजधन्य स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट काल तत्प्रमाण कहा है। किन्तु इसे कुड़ कम ही जानना चाहिए। कारण स्पष्ट है। सहस्रार कल्पमें हाम्य और रितकी जधन्य और अजधन्य स्थिति उदीरणा आपके समान अन जाती हैं इस बातको ध्यानमें रखकर इस कल्पमें हास्य और रितका भंग आधके समान कहा है। आन्तकल्पसे लेकर नो पैवेयक तकके देवोमे स्वामित्वके अनुसार सब शक्तियोंकी जधन्य आर आजधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य और उत्कृष्ट काल सनत्कृमारकल्पके देवोके समान बन जाता है। मात्र यहा अपनी-अपनी स्थिति जाननी चाहिए। साथ ही इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी आन्तर्या स्थिति उदीरणाका जधन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी आन्तर्य स्थिति उदीरणाका जधन्य और उत्कृष्ट काल एक समय आर उत्कृष्ट काल अन्तर्भुहृत्ते स्पष्ट ही है। शेष कथन सुगम है। मात्र अपने-अपने स्वामित्वको जानकर काल घटित करना चाहिए।

\$ ४५१ अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्वितक के देवांमे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा-का जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय हैं। अजघन्य स्थिति उदीरणा जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। पुरुषवेदकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय हैं। अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण हैं। बाग्ह कपाय और छह नोकपायोकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय हैं। अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय हैं और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

तिश्रीपार्थ — इन देवोमे कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि जीव भी उत्पन्न होता है, इसलिए इनमें सम्यक्त्वकी ज्ञचन्य स्थितिउदीरणाका ज्ञचन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय तथा श्रजचन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय वन जानसे वह उक्तप्रमाण कहा है। इनमें सम्यक्त्वकी श्रजचन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल श्रपना-श्रपनी उत्कृष्ट भवस्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। श्रपने स्वामित्वक श्रनुसार इनमें पुरुपवदका ज्ञचन्य स्थितिउदीरणा भवके श्रान्तिम समयमे प्राप्त होती है, इनलिए इनमें पुरुपवेदकी ज्ञचन्य स्थितिउदीरणाका ज्ञचन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। इनमें पुरुपवेदकी श्रजचन्य स्थितिउदीरणाका ज्ञचन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। इनमें पुरुपवेदकी श्रजचन्य स्थितिउदीरणाका ज्ञचन्य

१४२० श्रंतरं दुविहं — जह० उक० । उक्तस्ते पयदं । दुविहो णि० — श्रोघेण श्रादेसेण य । ओघेण मिच्छ०-श्रणंताणु०४ उक्त० द्विदीउदी० जह० अंतोग्रु०, उक्त० श्रणंतकालमसंखेजा पोग्गलपियद्वा । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० बेद्धावद्विसागरो० देखणाणि । सम्म०-सम्मामि० उक्त० श्रणुक्क० द्विदिउदी० जह० श्रंतोग्रुहुत्तं, णविर सम्म० अणुक्क० जह० एयस०, उक्त० उवहृषो०पियद्वं । श्रह्ठक० उक्क० द्विदिउदी० जह० अंतोग्रु०, उक्क० श्रणंतकालममंखे०पोग्गलपियद्वं । श्रणुक्क० जह० एयसम्श्रो, उक्क० पुन्वकीडी देखणा । एवं चदुसंजल० । णविर श्रणुक्क० जह० एयम०, उक्क० श्रंतोग्रु० । इत्थिवे०-पुग्मिवे० उक्क० श्रणुक्क० द्विदिउदी० जह० एयसमश्रो, उक्क० श्रणंतकालमसंखेजा पोग्गलपियद्वा । एवं णवुस० । णविर श्रणुक्क० जह० एयस०, उक्क० मागरोवममदपुधत्तं । एवं हस्स-रदीणं । णविर श्रणुक्क० जह० एयसमओ, उक्क० तेत्तीसं मागरोवमं सादिरेयं । एवमरदि-योग० । णविर श्रणुक्क० जह० एयस०,

श्रोर उत्कृष्ट काल श्रपनी-श्रपनी जघन्य श्रोर उत्कृष्ट भविश्वित्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इनमें बारह कपाय श्रोर छह नोकपायं की जघन्य स्थितिउदीरणा श्रपने स्वामित्वक श्रनुसार भवके श्रीन्तम समयमें ही प्राप्त होती है, इसलिए यहा इनकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

१४४२. श्रन्तर दो प्रकारका है – जघन्य श्रीर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है-- अगेष श्रीर श्रादेश। श्रोधसे विषयात्व श्रीर श्रानन्तानुबन्धीचतुरूककी उत्कृष्ट स्थित उद्। रागा का जघन्य अन्तर काल अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तरवाल अनन्त काल है जो अभेख्यात पुत्रलपरिवर्तनप्रमाण है । अनुस्कृष्ट स्थितिउदीरगाका जपन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छुचासठ सागरप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यक्तिश्यास्वकी उत्कृष्ट और अनुस्कृष्ट स्थिनिउदीरणाका जयन्य अन्तर काल अन्तर्सहर्त हैं। इतनी विरोपता है कि सम्यक्त्वकी अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरगाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। श्राठ कपायोकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्महत् हे स्रोर उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल हे जो श्रसंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदारणका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है। इसीप्रकार चार संज्वलतांका जानना चाहिए। इननी विशेषना है कि इनका अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जवन्य अन्तरकाल एक समय है ज्योर उत्कृष्ट ज्यन्तरकाल अन्तर्महर्त है। खीवेद ज्योर पुरुषवेद की उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट रिथतिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल श्रनन्त काल हे जो असंख्यान पुरुगलपरिवर्तनप्रमाण है। इमीप्रकार नपुंसक वेदके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी श्रमुत्कुष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्क्रष्ट अन्तरकाल सौ सागर पृथक्तवप्रमाग् है। इसीपकार हास्य और रतिके विषयमे जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसकी अनुस्कृष्ट रियांन उदीरमाका जपन्य अन्तर हाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक ननीस सागर है। इसीप्रकार ऋरति श्रीर शोकंक विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुस्कृत्व स्थिति उदीरणा हा जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृत्व अन्तरकाल उक्कः छम्मामा । एवं भय-दुगुंछाणं । णविः श्राणुक्षः जहः एयमः, उक्कः श्रंतोमुः ।

छह महीना है। इसीप्रकार नथ और जुगुप्साके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृत्ट स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्भृहर्त है।

विशेषार्ध -- मिश्यात्व श्रीर श्राननतानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धके योग्य बत्कृष्ट संक्लेश परिणाम जघन्यसे अन्तर्भृहर्तके अन्तरसे और उत्कृष्ट्रसे अनन्त कालके अन्तरसे होते हैं. क्योंकि मंजी पञ्चीन्द्रय पर्याप्तका उत्कृष्ट बन्तरकाल अनन्त काल आगममें बतलाया है और ऐसे परिगाम उक्त जीवके ही होते हैं। यही कारण है कि यहाँ उक्त प्रकृतियोंकी उस्कृष्ट स्थिति इतीरमा का जधन्य अन्तरकाल अन्तर्महर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त कालप्रमाम कहा है। यहाँ अनन्त कालसे असंख्यान पहलपरिवर्तनप्रमाण कालका प्रहण हुआ है। इसलिए उसके स्पृष्टीकरणके रूपमे अनन्त कालको असंख्यात पुरुलपश्वितन्त्रमाण कहा है। उक्त प्रकृतियोका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कमसे कम एक समयतक भा होता है, इसलिए इन प्रकृतियोंकी श्रमुक्तुष्ट स्थितिउदीरमाका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय बन जाता है। तथा जो सम्बन्हांष्ट्र जीव वीत्रमे अन्तर्महर्त कालतक सम्बन्धियात्वको प्राप्त कर सम्बन्त्वके साथ कुछ कम दो छवासठ सागर कालनक रहकर पुनः मिध्यादृष्टि हो जाता है उसके उक्त कालतक उक्त प्रकृतियोंकी उदीरणा नहीं होती, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छत्यासठ सागरप्रमाण कहा है। जो मिध्यादिक जीव मिध्यात्वकी उत्कट्ट स्थितिका बन्ध कर उसका स्थितिघात किये बिना वेदकसम्यग्द्रिट बनता है उस वेदकसम्यग्द्यांटिके दुन्ते समयमें सम्यक्तको उत्कृष्ट स्थिति उदीरणा होती है तथा आगे अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरेगा होती है। तथा अन्तर्मुहर्तमें उसीके कराचित् मिश्रगुणस्थानको प्राप्त होनेपर उनके प्रथम समयमे सम्यग्निध्यात्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है श्रीर आगे उसीकी अनुस्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। इसके बाद श्रन्तर्महर्तमें उसके मिथ्या-दृष्टि हो जानेपर तथा उसी प्रकार पुनः श्रन्तर्भृहर्तमे वही सब क्रिया करनेपर सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्त्रीर स्त्रनुत्कृष्ट म्थितिउदीरगाका जधन्य स्नन्तरकाल स्नन्तमूहर्न प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है। इतनी विशेषता है कि ऐसा जीव वेदकसम्यक्तको प्राप्त कर प्रथम समय और तृतीय श्रादि समयोंमे सम्यक्तकी श्रनुत्कृष्ट स्थितउदीरणा करता है श्रीर दूसरे समयमे उसकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा करता है, इसलिए इसकी अनुत्कृष्ट स्थिति-उदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है। इनकी उक्त दोनों उदीरणात्रोका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल उपार्ध पुद्रलपरिवर्तनप्रमागा है यह स्पष्ट ही है। श्राठ कपायोकी उदीरणा क्रमसे पाँचवें और छठे आदि गुणास्थानोंमें नहीं होती और पाँचवें नथा छठे आदि गुणास्थानोंका जुदा-जुदा उन्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकाटि हैं, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि कहा है। यहाँ ऐसा समभाना च।हिए कि इनकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जो उत्कृष्ट अन्तरकाल बतलाया है वह इनकी अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका नहीं घटिता होता, क्योंकि मिथ्यात्वमें इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा उत्क्रघ्ट स्थितिउदीरणा-के कालको छोड़कर यथासम्भव होती रहती है। चार संज्वलनकी उदीरणा उपशमश्रेणिमें उदीरणा व्यक्छित्तिके बाद पून: उम स्थानके प्राप्त होनेनक मध्यकालमें नहीं होती। यदि ऐसा जीव एक समयतक अनुदीरक होकर दूसरे समयमें मरकर देव हो जाय ता एक समयके ४४३. श्रादेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्मामि०-श्रणंताणु०४ उक्क० द्विदिउदी० जह० श्रंतोमु०, श्रणुक्क० जह० एयस०, सम्मामि० उक्क० श्रणुक्क० जह० श्रतोमु०, हस्स-रिद० उक्क० श्रणुक्क० जह० एयमे०, उक्क० सन्वेसि तेनीसं मागरोवमाणि देख्रणाणि। बारसक० उक्क० द्विदिउदी० जह० श्रंतोमु०, उक्क० तेनीसमागरो० देख्रणाणि। श्रणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। एवं एवुं स०-अम्दि-सोग-भय-दुगुंछा०। एवरि उक्क० द्विदिउदी० जह० एयस०। एवं मन्तमाए। एवं एटमाए जाव छट्टि नि। णवरि सगद्विदी देख्रणा। हस्म-रिद० श्रणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०।

४४४. तिरिक्खेसु मिच्छ०-त्र्रागंताणु०४ स्रोघं। णत्ररि श्रणुकः० जह०

अन्तरके बाद भी इनकी उदीरणा होने लगती है। यही कारण है कि यहाँ इनकी अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्भुं हर्त कहा है। शेष कथन सुगम है। नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य कान एक समय है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय कहा है। इन नौ नोकपायों में भय और जुगुएमाको छोड़ कर शेष सात सप्रतिपन प्रकृतिया है और इनका जघन्य बन्ध काल एक समय है, इमलिए इनकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय बन जानेसे वह उक्त काल प्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है। आगे गित मार्गणाक सम भेदों में स्वान्ति अभीर उक्त विशेषार्थ तथा अपनी-अपनी स्थात आहिको ध्यानमें स्वकर स्पष्टी करण कर लेना चाहिए। यदि कही कोई विशेषता होगी तो उसका संकेत करेंगे।

५५३. आदेशसे नारिकयोम मिथ्यात्म, सम्यमिग्ध्यात्व और अन्नानुबन्धाचतुष्किकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्महूर्त है, अनुत्कृष्ट स्थितउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्महूर्त है, अनुत्कृष्ट स्थितउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्म हुर्त है, सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्म हुर्त है, हास्य और रिक्श उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल सबका कुछ कम तेनीस सागर है। बारह कपायकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल क्रन्तर्म हुर्त है और उत्कृष्ट अन्तरमाल कुछ कम तेतीस सागर है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्म हुर्त है। इसीप्रकार नपु सकवेद, अरित, शाक, भय और जुगुष्साके सम्बन्धमें जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी उत्कृष्ट स्थितउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है। इसीप्रकार सानवी पृथिवाम जान लेना चाहिए। इसीप्रकार प्रथम पृथिवासे लेकर छठी पृथिवी तक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जुकु कम अपनी-अपनी स्थित कहनी चाहिए। इन पृथिविवोमें हास्य आर रितकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्म हुर्त है।

§ ४५४. तियेख्वोंमं भिष्यात्व श्रीर श्रमन्तानुबन्धोचतुष्कका भंग श्रोघके समान है।

१. ता॰प्रती हस्य-रदि० भ्रगु० जह० ग्यस० इति पाठः ।

२. ता॰प्रतौ सगट्टिदी देसूणा। उनकः श्रंतोमु०। तिरिक्खेसु इति पाठः।

एयस०, उक्क० तिण्णि पिलदो० देख्णाणि । सम्म०-सम्मामि०-अपचक्खाण०४इत्थिवे०-पुरिसवे० श्रोघं । श्रद्धक० श्रोघं । णविर श्रणुक्क० जह० एयस०, उक्क०
अंतोमु० । णवुं सबे० श्रोघं । णविर श्रणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पुन्तकोडिपुधत्तं ।
छण्णोक० उक्क० श्रोघं । श्रणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । एवं पंचिदियतिरिक्खितिय० । णविर सन्त्रपयडी० उक्क० द्विदिउदी० उक्क० पुन्तकोडिपुधत्तं ।
सम्म०-सम्मामि० श्रणुक्क० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पिलदो० पुन्तकोडिपुध० । तिण्णिवेद० उक्क० श्रणुक्क० जह० एयम०, उक्क० पुन्तकोडिपुध० । प्जन्त०
इत्थिवे० एत्थि । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुं म० णिल्थ । इत्थिवे० श्रणुक्क० जह० एयम०, उक्क० श्रावित्या ।

े ४४४, पंनिदियतिगिक्खत्रपञ्ज० - मगुसन्त्रपञ्ज० - मिच्छ० - णवुं स० उक्क० न्त्रणुक्क० द्विदिउदी० णित्थि अंतरं । सेमपयडी० उक्क० द्विदिउदी० णित्थि अंतरं । त्रणुक्क० द्विदिउदी० जहण्णुक० अंतोम्र० ।

इननी विशेषता है कि अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पत्य है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, अप्रत्याख्यानावर्शा चार, स्त्रीवेद ऋौर पुरुषवेदका भंग श्रोघके समान है। श्राठ कपायका भंग श्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है श्रीर रुत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्महुर्त है। न्युंसकवेदका भंग श्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जवन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। छह नोकषायोकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका भंग श्रोघके समान है। श्रानुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रान्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रन्तर्मेहुर्त है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्येक्वत्रिकमे जानना चाहिए। इतनी विशेषना है कि सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकांटि-पृथक्तवप्रमाण है। सम्यक्तव श्रीर सम्यग्निध्यात्वकी श्रानुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्चन्तरकाल कमसे एक समय चौर अन्तर्महर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिप्रथक्त्व श्रिधिक तीन पल्य है। तीन वेदोंकी उत्कृष्ट और श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्छ श्चन्तरकाल एक समय है श्चीर उत्कृष्ट श्चन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनीतिर्यक्षोंमें पुरुषवेद श्रीर नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। स्त्रीवेदकी स्नन्दकृष्ट स्थिति उदीरगाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तरकाल एक आविलिप्रमाण है।

विशेषार्थ — यहाँ योनिनीतिर्यक्रोंमें स्नीवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जो उत्कृष्ट अन्तरकाल एक आविल बतलाया है उसे स्थितिविभक्ति भाग ३, पृ० ३२० को देखकर घटित कर लेना चाहिए। तथा इसीप्रकार अन्य बिरोषता भी जाननी चाहिए।

े ४५४. पंचेन्द्रिय तिर्यक्ष अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसक्वेदकी उच्छुष्ट और अनुत्कुष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। शोष प्रकृतियोंकी उत्सुष्ट स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कुष्ट स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कुष्ट स्थिति उदीरणाका जयन्य और उत्सुष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

९ ५५६. मणुमतिए पंचिदियतिरिक्खभंगो । णवरि मणुमिणी० इत्थिवेद०
 श्रणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

४५७. देवगदीए देवेसु मिच्छ०-सम्म०-अणंताणु०४-सम्मामि० उक्क० द्विदिउदी० जह० अंतोस्र०, उक्क० अहारम मागरो० सादिरेयाणि । अणुक्क० जह० एयम०, सम्मामि० अणुक्क० जह० अंतोस्र०, उक्क० मन्वेसिमेक्कत्तीसं सागरो० देखुणाणि । बारसक० उक्क० द्विदिउदी० जह० अंतोस्र०, उक्क० अहारममागरो० सादिरेयाणि । अणुक्क० जह० एगम०, उक्क० अंतोस्र० । एवं छण्णोक० । णविर उक्क० जह० एयम०, अरदि-सोग० अणुक्क० जह० एगम०, उक्क० छम्मासं । इत्थिवे० उक्क० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० पणवण्णं पितदो० देखुणं । अणुक्क० जह० एयम०, उक्क० आविष्या । एवं पुरिमवे० । णविर उक्क० हिदिउदी० जह० एयम०, उक्क० हिदिउदी० जह० एयम०, उक्क० क्रिंदिउदी० जह० एयम०, उक्क० तिण्णि पितदो० देखुन

विशेषार्थ—उपशमश्रेणिका अपेता मनुष्यिनियोमें स्नीवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा-का उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त बन जानसे वह उक्त कालप्रमाण कहा है।

§ ४४७. देवगतिमे देवोमे मिध्यात्व, सम्यक्त्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क श्रौर सम्यग्मिध्यात्व-की उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक श्रठारह सागर है। श्रतुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है, सम्यामध्यात्वकी अनुतकृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मृहर्त है और सबका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुछ कम इकतीस सागर है। बारह कषायोकी उत्कृष्ट स्थिति उत्रीरणाका जधन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अठारह सागर है। अनुत्कृष्ट श्थितिउदोरमाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्महर्त है। इसीप्रकार छह नोकपायोंके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी उत्कृष्ट स्थिति उदीर लाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है। अरित और शोककी अनुस्कृष्ट स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उरकृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थिति उदीर ए।का जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम पचवन पल्य है। अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक आविल है। इसीप्रकार पुरुपवेदके विषयमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल साधिक अठारह सागर है। इसीप्रकार भवनवासियोसे लेकर सहस्रार व ल्पतकक देवोमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। इतनी विशेषता है कि भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म-ऐशानकल्पके देवोंमे स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थिति-

णाणि, पित्तदो० सादिरे०, पित्तदो० मादिरे०, पणवण्णं पित्तदो० देख्णं । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० आवित्या । उविर इत्थिवेद० अणुदीरगा । सन्वेसिमरिद-सोग० अणुक्क० जह० एयसमञ्जो, उक्क० अंतोग्रु० । एविर सहस्सारे अरिद-सोग० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अम्मासा ।

१ ४४८. श्राणदादि उनिरमगेनआ ति सन्वपयडीणमुक्क० द्विदिउदीरणा णित्य श्रंतरं । मिन्छ०-मम्म०-सम्मामि०-स्राणंताणु०४ अणुक्क० जह० श्रंतोमु०, उक्क० सगद्विदी देख्णा । बारसक०-छण्णोक० श्रणुक्क० जह० उक्क० श्रंतोमु० । पुरिसवे० उक्क० श्रणुक्क० णित्थ श्रंतरं । अणुद्दिसादि सन्बद्घा ति मम्म०-पुरिसवे० उक्क० अणुक्क० द्विदिउदी० णित्थ अंतरं । बारसक०-छण्णोक० उक्क० द्विदिउदी० णित्थ अंतरं । अणुक्क० जहण्णुक्क० अंतोमु० । एवं जान० ।

ह ४४९. जह० पयदं । दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ० जह० द्विदिउदी० जह० पितदो० श्रसंखे०भागो, उक्क० उवह्वपोग्गलपरियट्टं । श्रजह० जह० अंतोम्च०, उक्क० वेद्यावद्विमागरो० देस्रणाणि । एवं सम्मामि० । एवरि श्रजह०

उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तरकाल कमसे कुछ कम तीन पल्य, साधिक एक पल्य, साधिक एक पल्य और कुछ कम पचवन पल्यप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक श्राविल है। आगेके देव स्त्रीवेदके अनुदीरक हैं। सबमें अरित और शांककी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मृहत है। इतनी विशेषता है कि सहस्रार कल्पमें अरित और शांककी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक

ई ४४८ श्रानतकल्पसे लेकर उपिरम ग्रैवेयकतकके देवोमे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका श्रन्तरकाल नहीं है। मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यिगध्यात्व श्रीर श्रनन्तानु- बन्धीचतुष्ककी श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल श्रन्तर्मृहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुछ कम श्रपनी-श्रपनी स्थितिप्रमाण हैं। बारह कपाय श्रीर छह नोकषायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रन्तर्मृहूर्त है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका श्रन्तरकाल नहीं है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका श्रन्तरकाल नहीं है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका श्रन्तरकाल नहीं है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रित्विउदीरणाका श्रन्तरकाल नहीं है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रन्तर्मृहूर्त है। इसीप्रकार श्रनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रन्तर्मृहूर्त है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

६ ४४६. जघन्य प्रकृत है। निर्देश दो प्रकारका है—स्रोघ स्रीर श्रादेश। स्रोघसे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल पल्यके स्थांख्यातवें भागप्रमाण है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल उपार्धपुद्रलपरिवर्तनप्रमाण है। श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल श्रन्तरकाल श्रन्तर्मुहूर्त है स्रोर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुळ कम दो छ्राध्यास्य सागरप्रमाण है। इसीप्रकार सम्यग्निथ्यात्वके विषयमे जानना चाहिए। इतनो विशेषता है कि इसकी स्रजघन्य

जह० श्रंतोग्रु०, उक्क० उबहुपोग्गलपरियट्टं। एवं सम्म०। णवरि जह० द्विदिउदी० णित्थ अंतरं। अथवा सम्म० जह० द्विदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० उबहु-पोग्गलपरियट्टं। अणंताणु०४ जह० द्विदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० असंखेजा लोगा। अजह० जह० एयस०, उक्क० बेबाविद्वमागरो० देस्पणणि। एवमट्टक०। एवरि अज० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडी देस्पणा। एवं भय-दुगुंबा०। णवरि अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। चदुसंजल० जह० द्विदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० उबहुपोग्गलपरियट्टं। अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। इत्थिवे०-पुरिमवे० जह० द्विदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० उबहुपोग्गलपरियट्टं। अज० जह० प्रयस०, उक्क० अंतोमु०। प्रयस०, उक्क० उबहुपोग्गलपरियट्टं। अज० जह० प्रयस०, उक्क० उबहुपोग्गलपरियट्टं। अज० जह० अंतोमु०, पुरिसवे० एयस०, उक्क० अणंतकालमसंखेजा पोग्गलपरियट्टा। एवं एवं एवं एवं एवं एवं प्रवास०। प्रविद्वदी० जह० पित्रिदे। अक्क० असंखे०भागो, उक्क० आणंतकामसंखे० पोग्गलपरियट्टा। अज० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं मागगे०

स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्रलपरिवर्तन-प्रमाण है। इसीप्रकार सम्यक्त्वकं विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अथवा सम्यक्टवकी जघन्य म्थितिउदीरणाका जघन्य श्चन्तरकाल बान्तर्महर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल उपार्धपदलपरिवर्तनप्रमास है। श्रनन्तानु-बन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिवर्शरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट श्चन्तरकाल श्रासंख्यात लांकप्रमाण है। श्राज्यन्य स्थितिउदीरमाका जवन्य श्चन्तरवाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छचासठ सागरप्रमाण है। इसीप्रकार आठ कषायोके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अजबन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकाटिप्रमाण है। इस्रीप्रकार भय श्रीर जुगुप्ताके विषयमं जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि श्रजघन्य स्थिति उदीरगाका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उरकृष्ट श्रन्तरकाल अन्तर्मुहर्त है। चार संज्वलनकी जधन्य स्थितिउदीरणाहा जधन्य अन्तरकाल अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध-पदलपरिवर्तनप्रमाण है। श्रजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्भहर्त है। स्त्रीवेद श्रोर पुरुपवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्चन्तरकाल श्रन्तमु हुर्त है श्रीर उन्कृष्ट श्रन्तरकाल उपार्धपुदुगलपरिवर्तनप्रमाण है। अजयन्य स्थिति उदीर एक जपन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहर्त है श्रीर पुरुषवेदका एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल दोनोंका श्रनन्तकाल है जो श्रमंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। इसीप्रकार नप् सकवेदके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तम् हर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तरकाल सी सागर पृथक्त्वप्रमाण है। हास्य श्रीर रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है श्रीर उत्क्रब्ट श्रान्तरकाल श्रान्तकाल है जो असंख्यात पुरुलपरिवर्तनप्रमाण है। श्राज्ञघन्य स्थिति-उदीरगाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तेतीस सागर

सादिरेयाणि । एवमरदि-सोग० । णवरि अज० जह० एयस०, उक्क० झम्मासं ।

है। इसीप्रकार ऋरति ऋौर शोकके विषयमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अजवन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है ऋौर उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है।

विशेषार्थ-प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी द्वितीय बार प्राप्ति कमसे कम पत्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके अन्तरके पूर्व नहीं होती, इसीलिए मिध्यात्वकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अपने स्वामित्वके अनुसार उक्त कालप्रमाण कहा है। इसकी जयन्य स्थिति-उदीरणाका उत्झब्ट अन्तरकाल उपार्धपुदुगलपरिवर्तनप्रमाण है। मिथ्यात्व गुणस्थानके जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकालको ध्यानमें रखकर इसकी श्रजवन्य स्थिति उदीरणाका जवन्य श्रन्तर-काल अन्तर्मुहर्न और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छचामठ सागरप्रमाण कहा है। मिश्र गुणस्थानके अन्तरकालका ध्यानमें रखकर सम्यग्निध्यात्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा हैं । सम्यक्त्वकी जबन्य स्थिति उदीराणा दर्शनभोहनीयकी चपाणक समय एक समय श्रधिक एक श्रावितप्रमाण स्थितिके शेष रहने पर होती है, इसिलए इसके अन्तरकालका निषेध किया है। किन्तु द्वितीयोपशम सम्यक्त्वके अन्तरकालकी अपेत्ता इसका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमास कहा है। बादर एकन्द्रियोंक श्रन्तरकाल-को ध्यानमे रखकर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जधन्य स्थितिउदीरणाका जधन्य और उत्कृष्ट अप्रतरकाल कहा है। अप्रतरकालका निर्देश मूलमें है ही। जयन्य स्थिति उदीरणाका जयन्य काल एक समय है, इसलिए तो इसकी श्राजवन्य स्थिति उदीरणाका जवन्य श्रान्तरकाल एक समय कहा है तथा मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अन्तरकालको ध्यानमे रखकर इसकी अजधन्य स्थिति उदीरणाका उन्दृष्ट ऋन्तरकाल कुछ कम दो छ्रचासठ सागरप्रमाण कहा है। संयमासंयम श्रीर संयमका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटि है। श्रीर इनके क्रमशः श्रप्रत्याख्यानावरण-चतुष्ककी तथा प्रत्याख्यानावरण्चतुष्ककी उदीरणा नहीं होती, इसलिए इनकी श्रजघन्य श्थित उदीरणाका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल उक्त कालप्रमाण कहा है। चार संज्वलनकी उपशम श्रेणिके जघन्य श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तरकालको ध्यानमे रखकर जघन्य स्थिनि उदीरणाका जघन्य श्चन्तरकाल श्चन्तर्मुहर्त श्चौर उत्कृष्ट श्चन्तरकाल उपार्धपृद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है। तथा उपशमर्श्राणमे चढ़ते समय श्रपनी-श्रपनी उदीरणाव्युच्छित्तिसे लेकर उतरते समय पुनः उदीरमा प्राप्त होनेके कालतक इसकी अनुदीरमा है। यह काल अन्तर्मुहर्त है, इसलिए इसकी अजवन्य स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा है। भय श्रीर जुगुप्ताका श्चन्य सब विचार श्राठ कषायके समान ही हैं। मात्र इनकी कमसे कम एक समय तक श्रीर श्राविकसे श्राधिक श्रान्तर्सुहूर्त कालतक उदीरागा नहीं होती, क्योंकि ये सान्तर उदय प्रकृतियाँ हैं, इसलिए इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाज एक समय और उत्कृष्ट श्चन्तरकाल श्चन्तमु हूर्न कहा है। उपशामक श्रीर चपकके अपने-अपने स्वामित्वके श्रनुसार ही स्त्रीवेद स्त्रीर पुरुषवंदकी जघन्य स्थिति उदीरणा होती है, इस्रालिए उपशामकर्का श्रापेत्ता इनकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल श्रन्तर्मु हुर्त शप्त होनेमं वह उक्त कालप्रमाण कहा है। स्पष्टीकरण सुगम है। उपशमश्रेणिमं स्त्रीवेदा मरकर देव होता है पर उसका वेद बदलकर पुरुषवेद हो जाता है, इसलिए तो इसकी श्राज्यन्य स्थिति उदीरण।का जवन्य श्रान्तर-काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। मात्र पुरुपवेदका मरणकी अपेत्ता यह अन्तरकाल एक समय बन जाता है, इसलिए वह एक समय कहा है। इन दोनोकी अजधन्य स्थिति उदारणाका उत्कृष्ट प्रद०. आदेसेण ऐरइय० मिच्छ०-सम्मामि० जह० द्विदिउदी० जह० पिलदो० श्रसंखे०भागो, अज० जह० अंतोमु०, उक्क० दोण्हं पि तेत्तीसं सागगे० देस्रणाणि। एवं सम्म०। एवरि जह० णित्थ अंतरं। अणंताणु०४-हम्स-रिद० जह० द्विदिउदी० एत्थि अंतरं। अज० जह० एयम०, उक्क० तेत्तीमं सागगे० देस्रणाणि। वारमक०-अरिद-सोग०-भय-दुगुंछा० जह० द्विदिउदी० णित्थ अंतरं। अज६० जह० एयम०, उक्क० अंतोमु०। एवं म० जह० णित्थ अंतरं। अज० जह० उक्क० एयम०, उक्क० अंतोमु०। एवं सगिद्विदी देस्रणा। हम्स-रिद० अज० जह० एगस०,

धन्तरकाल सुगम है। नपुंसकवेदकी अजधन्य स्थिति उदीरण।के जधन्य अन्तरकालका स्पष्टी-करण स्त्रीवेदके समान कर लेना चाहिए। सौ सागरप्रथक्त कालतक नपु सकवेदका उदय न हो यह सम्भव हैं, इसलिए इसकी ऋजधन्य स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल सौ सागर-पृथक्त्वप्रमाण कहा है। हास्यादि चारकी जघन्य स्थिति उदीरणा श्रपने स्वामित्वको देखते हुए दुमरी बार वह कमसे कम पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके पूर्व नहीं प्राप्त हो सकती है, इसिलए इनकी श्रजधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य श्रन्तरक ल पत्यके श्रमंख्यातर्वे भागप्रमाण कहा है। तथा जो बादर एकेन्द्रिय जीव हत नमूत्पत्तिक होकर संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंने उत्पन्न होनेक अन्तम् हर्त बाद इनकी जघन्य स्थिति उदीरणा करता है वह पुनः इम अवस्थाको अधिकसे श्रधिक काल बाद यदि प्राप्त करे तो श्रानन्तकाल बाद ही प्राप्त कर सकता है, क्योंकि मंज्ञी पठचेन्द्रियका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रनन्तकाल है, इसलिए इनकी श्रजवन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त कालप्रमाण कहा है। इनका अजधन्य स्थितिउदीरणाका जधन्य अन्तरकाल एक समय है यह तो स्पष्ट ही है। मात्र उत्कृष्ट अन्तरकाल जुदा-जुदा है। कारण कि हास्य-रतिका उत्कृष्ट श्रनुदीरणाकाल साधिक नेतीस सागर है और श्ररति-शाकका उत्कृष्ट श्रनुदीरणाकाल छह महीना है। यही कारण है कि हास्य-रितकी श्रजवन्य स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल साधिक तेतीस सागर कहा है तथा अरति-शांककी अजधन्य स्थिति-उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना कहा है। शेष कथन सुगम है। आगे गृतिमार्गणाके भेदोंमे अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार इसे समसकर अन्तरप्ररूपणा घटित कर लेनी चाहिए।

§ ४६०. त्रादेशसे नारिकयोंमें मिथ्याद्य श्रीर सम्यग्निध्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है, श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल श्रन्तमुँ हुत है श्रोर दोनोका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुछ कम तेनीस सागर है। इसीप्रकार सम्यक्तके सम्यन्धमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका श्रन्तरकाल नहीं है। श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जपन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुछ कम तेनीस सागर है। बारह कषाय, श्रर्रात, शोक, भय श्रीर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रम्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रक्त कुछ कम तेनीस सागर है। श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रम्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रम्तमुँ हुत है। नपुंसक्ष्यदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका श्रम्तरकाल नहीं है। श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जपन्य श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल एक समय है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। हारय श्रीर रतिकी श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य

उक्क० अंतोमु० ।

१६१. बिदियादि जात्र छद्वि ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० जह० द्विदीउदी० जह० पिलदो० असंखे०भागो, अज० जह० अंतोग्र०, उक्त० दोण्हं पि सगद्विदी देख्णा । बारमक०-छण्णोक० जह० णित्थ अंतरं । अजह० जह० एयस०, उर्के० अंतोग्र० । अणंताणु०४ जह० णित्थ अंतरं । अज० जह० एयम०, उक्क० सगद्विदी देख्णा । णवुंम० जद० अजह० द्विदीउदी० णित्थ अंतरं । सत्तमाए णिरयोघं । णविर सम्म० सम्मामिच्छत्तभंगों ।

४६२. तिरिक्खेसु मिच्छ० सम्म०-सम्मामि०-त्रणंताणु०४ श्रोघं। एत्रिरि श्रणंताणु०४ अजह० जह० एयस०, मिच्छ० श्रजह० जह० अंतोमु०, उक्क० दोण्हं पि तिण्णि पित्तदो० देस्रणाणि। श्रपचक्खाण०४ श्रोघं। श्रद्धक०-भय-दुगुंछा० जह० द्विदिउदी० जह० श्रंतोमु०, उक्क० श्रसंखेजा लोगा। श्रज० जह० एयम०, उक्क० अंतोमु०। इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० द्विदिउदी० जह० पित्तदो० श्रसंखे०भागो,

अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मु हूर्त है।

६ ५६१. दृगरीमं लंकर छठी पृथवीनकके नारिकयों में मिण्यात्व, सम्यक्त्व श्रीर सम्यिनिश्यात्वकी जवन्य स्थितिउदीरणाका जवन्य श्रन्तरकाल पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हं, श्रज्ञ घन्य स्थितिउदीरणाका जवन्य श्रन्तरकाल श्रन्तमुँ हूर्त है श्रीर दोनोंका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुछ कम श्रपनी-श्रपनी स्थितिप्रमाण है। बारह कपाय श्रीर छह नोकपायोंकी जघन्य स्थिति उदीरणाका श्रन्तरकाल नहीं है। श्रज्ञचन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रन्तरकाल श्रन्तरकाल कुछ कम श्रपनी स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल नहीं है। श्रज्ञचन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल कुछ कम श्रपनी स्थितिप्रमाण है। नपुंसकवेदकी जघन्य श्रीर श्रज्ञचन्य स्थिति उदीरणाका श्रन्तरकाल एक समान मंग है। इननी विशेषता है कि सम्यक्त्वका भंग सम्यग्निश्यात्वके समान है।

५५२. तिर्यक्चोंमें मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यिमध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारका भंग आघके समान है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चारकी अजधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तरकाल एक समय है, मिध्यात्वकी अजधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तरकाल एक समय है, मिध्यात्वकी अजधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और दानोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य है। अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कका भंग आधके समान है। आठ कषाय, भय और जुगुष्साकी जधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण है। अजधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। श्लीवेद और पुरुषवेदकी जधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। श्लीवेद और पुरुषवेदकी जधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। श्लीवेद और पुरुषवेदकी जधन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तर

१. ता०-म्रा०प्रस्योः अह० उक्क० इति पाटः ।

२. ता०-न्ना०प्रत्योः खबरि सम्मामिच्छ्तभंगो इति पाठः ।

उक्क० त्रणं तकालमसंखे० पो० । स्रज्ञ० जह० एयम०, उक्क० अर्णतकालमसंखेजा पोग्गलपियट्टा । एवं हस्म-रिद-स्ररिद-स्रोग० । णविर स्रज्ञ० जह० एयस० उक्क० अंतोम्रु० । एवं णवुं म० । राविर स्रज्ञ० जह० एयस०, उक्क० पुन्त्रकोडिपृधत्तं ।

. ५६३. पंचिदियतिरिक्खातिए मिच्छ० जह० द्विदिउदी० जह० पलिदो० यसंखे०भागो, उक्क० मगद्विदी देखणा। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तिणिण पिलदो० देखणाणि। एवं मम्मामि० । णविर अज० जह० अंतोमु०, उक्क० मगद्विदी। एवं मम्म०। णविर जह० णित्थ अंतरं। अणंताणु०४ जह० द्विदिउदी० णित्थ अंतरं। अज० जह० एयस०, उक्क० तिणिण पिलदो० देखणाणि। अपच्च-क्खाण०४ जह० णित्थ अंतरं। अज० जह० एयम०, उक्क० पुच्चकोडी देखणा। अद्वक०-अण्णोक० जह० द्विदिउदी० णित्थ अंतरं। अज० जह० एयम०, उक्क० अंतोमु०। तिएहं वेदाणं जह० द्विदिउदी० णित्थ अंतरं। अज० जह० एयम०, उक्क० अंतोमु०। तिएहं वेदाणं जह० द्विदिउदी० णित्थ अंतरं। अज० जह० एयस०, उक्क० पुच्चकोडिपुधत्तं। एवरिर पुछ्च० इत्थिवे० एत्थि। जोणिणी० पुरिसवे०-

वाल पल्यके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। इसीप्रकार हास्य, रति, अरित और शोकके विषयमें जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहर्त है। इसीप्रकार नपुंसकवेदके विषयमें जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक ममय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिप्रथक्तवप्रमाण है।

\$ ५६३. पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्चित्रिकमे मिध्यात्वकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल पल्यके असंख्यात में भागप्रमाण हे और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुत्र कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मृहर्त हे और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य है। इसीप्रकार सम्यग्मिध्यात्वके विषयमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अपनी स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार सम्यक्त्वके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी जघन्य स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य है। अप्रत्याख्यानावरण चतुष्ककी जघन्य स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य है। अप्रत्याख्यानावरण चतुष्ककी जघन्य स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि है। आठ कपाय और छह नोकपायकी जघन्य स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि है। आठ कपाय और छह नोकपायकी जघन्य स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि है। आठ कपाय और छह नोकपायकी जघन्य स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मा अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मा अन्तरकाल जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटि इथक्त्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटि इथक्त्य स्थान विशेषता है कि पर्याप्तकों में

णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अज० जहण्णक्क० एयस० । सम्म० सम्मामिच्छत्तभंगो ।

६ ५६४. पंचिं०तिरिक्खश्रपञ्ज०-मणुमश्रपञ्ज० मिच्छ०-णवुंस० जह० स्रात्थ श्रंतरं । श्रज० जह० उक० एयस० । सोलसक०-छण्णोक० जह० स्रात्थि अंतरं । श्रज० जह० एयस०, उक० अंतोम्र० ।

१५६४. मणुसतिए मिच्छ० - सम्मा० - सम्मामि० - अर्णताणु०४ - छएणोक० पंचि० तिरिक्खभंगो । अध्वा सम्म० जह० जह० अंतोगु०, उक्क० पुन्तकोडिपुधत्तं । अहरू जह० परिथ अंतरं । अत० जह० एयस०, उक्क० पुन्तकोडी देखणा । चदुसंज० जह० जह० अंतोगु०, उक्क० पुन्तकोडिपुधत्तं । अज० जह० एयसमञ्जो किट्टीवेदयस्य, उक्क० अंतोगु० । तिण्णिवेद० जह० अजह० जह० अंतोगु०, उक्क० पुन्तकोडिपुधत्तं । णत्ररि प्रज० इत्थिवेद० णित्थ । मणुसिणी० पुरिस०-णवुंस० णित्थ । इत्थिवेद० अज० जह० उक्क० अंतोगु० ।

४६६. देवेसु मिच्छ०-सम्मामि० जह० द्विदिउदी० जह० पिलदो० असंखे०-भागो । अज० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्त० दोण्हं पि एकत्तीसं सागरी० देसूणाणि । स्त्रांवेदकी उदीरणा नहीं है श्रीर योनिनीतिर्यक्वोंमें पुरुषवेद श्रीर नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। स्त्रांवेदकी अजधन्य स्थितिउदीरणाका जधन्य और उत्कृष्ट श्रन्तरकाल एक समय है। सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है।

५ ५६४. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपयोप्त और मनुष्य अपयोप्तकांमें मिथ्यात्व और नपुंसक-वेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। सोलह् कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्भुष्ट्र है।

\$ १६५. मनुष्यित्रिकमें मिश्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्निश्यात्व, श्रनन्तानुबन्धी चार खौर छह नोकषायका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्षोंके समान है। श्रथवा सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मृहर्त है श्रोर उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिप्रथक्त्वप्रमाण है। आठ कषायोंकी जघन्य स्थिति उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है। चार संज्वलनोंकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल पूर्वकोटिप्रमाण है। अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल कृष्टिवेदक एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुह्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कृष्टिवेदक एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुह्त है। तीन वेदोंकी जघन्य और अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुह्त है। तीन वेदोंकी जघन्य और अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुह्त है। तीन वेदोंकी जघन्य और अजघन्य स्थिति उदीरणा नहीं है तथा मनुष्यितियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवदकी उदीरणा नहीं है। तथा स्त्रीवेदकी अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुह्त है। तथा स्त्रीवेदकी अजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुह्त है। तथा स्त्रीवेदकी अजघन्य सिथिति उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुह्त है। तथा स्त्रीवेदकी अजघन्य सिथिति उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुह्त है।

६ ४६६. देवोंमें मिध्यात्व श्रीर सम्यग्निध्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है, श्राजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल एवं सम्म० । जबिर जह० णित्थ श्रंतरं । श्रणंताजु०४ जह० णित्थ अंतरं । श्रज० जह० एयस०, उक० एकत्तीसं सागरो० देख्रणाणि । वारसक०-अण्णोक० जह० णित्थ श्रंतरं । श्रजह० जह० एयम०, उक० अंतोम्रहुत्तं । एविर श्ररिद-सोग० श्रज० जह० एयस०, उक० अम्मामं । इत्थिवे०-पुरिस० जह० णित्थ अंतरं । श्रज० जहण्णुक० एयस० । एवं भवण०-वाणवें० । एविर सगद्विदी । जबिर सम्म० सम्मामि०भंगो । श्ररिद-सोग० श्रज० जह० एयस०, उक्क० अंतोम्र० ।

१ ४६७. जोदिसि० दंसणितय - श्रणंताणु०४ वाणवेंतरभंगो । बारसक०-छण्णोक० जह० रणित्थ अंतरं । श्रज्ञ० जहण्णुक्क० अतोम्र० । इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० श्रजह० रणित्थ अंतरं ।

१५६८. सोहम्मादि जाव णवगेवजा त्ति दंसणितय-अणंताणु०४ देवोघं।
 एाविर सगिट्टिदी देख्रणा। बाग्मक०-छएणोक० जह० णित्थ अंतरं। श्रज० जह०
 उक्क० अंतोमु०। एाविर सहस्सारे श्रगदि-सोग० श्रज० जह० श्रंतोमु०, उक्क०
 उक्क० अंतोमु०। राविर सहस्सारे श्रगदि-सोग० श्रज० जह० श्रंतोमु०, उक्क०
 उक्क० अंतोमु०।

अन्तर्मुहूर्त हे और उत्कृष्ट अन्तरकाल दोनोंका कुछ कम इकतीस सागर है। इसीप्रकार सम्यक्त्वके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम इकतीस सागर है। बारह कषाय और छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्महर्त है। इतनी विशेषता है कि अरित और शोककी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अघन्य कान्य स्थितिउदीरणाका अघन्य कान्य स्थितिउदीरणाका अघन्य कान्य स्थितिउदीरणाका अघन्य कार्य स्थितिउदीरणाका अघन्य कार्य स्थितिउदीरणाका अघन्य कार्य स्थितिउदीरणाका जघन्य कार्य स्थितिउदीरणाका अघन्य कार्य स्थितिउदीरणाका जघन्य कार्य स्थितिउदीरणाका जघन्य कार्य स्थितिउदीरणाका जघन्य कार्य स्थितिउदीरणाका जघन्य कार्य स्थिति अधित कहनी चाहिए। इतनी और विशेषता है कि सम्यक्तका मंग सम्यिग्धियात के समान है। अरित और शोककी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य है कि सम्यक्तका मंग सम्यिग्धियात के समान है। अरित और शोककी अजघन्य (स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्महर्त है।

१५६७. ज्योतिषी देवामे तीन दर्शनमाह्नीय और अन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग व्यन्तर देवोंके समान है। बारह कपाय और छह नोकपायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्भृहूर्त है। स्नीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है।

११६८. सींधर्म कल्पसे लेकर नी भैवेयक तकके देवोंमें तीन दर्शनमोहनीय श्रीर अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। बारह कपाय श्रीर छह नोकषायोंकी जघन्य स्थिति- चदीरणाका श्रन्तरकाल नहीं है। श्रजघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट अन्तरकाल श्रन्तर्मृहूर्त है। इतनी विशेषता है कि सहस्रार कल्पमें श्ररित श्रीर शोककी श्रजघन्य स्थिति- उदीरणाका जघन्य श्रन्तरकाल श्रन्तर्मृहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। स्त्रीवेद

छम्मासं । इत्थिवेद-पुग्सिवे० जह० त्रजह० णित्थि श्रंतरं । मोहम्मीसाण० इत्थिवे०-पुग्सिवे० त्रप्रतिथ । उत्ररि पुरिसवेदो चेत्र श्रात्थि । णत्ररि श्राणदादि णत्रगेत्रजा ति श्राणंताणु०४ अज० जह० अंत्रोमु०, उक्क० समद्विदी देस्रणा ।

ह ४६९. ऋणुद्दिसादि सन्बद्घा त्ति सम्म०-पुरिसवे० जह० ऋज० णस्थि ऋंतरं । बारसक०-छण्णोकसाय० जह० णह्यि अंतरं । ऋज० जह० उक० अंतोम्र० । एवं जाव० ।

४७०. सिण्णयासो दुविहो — जह० उक्क० । उक्कम्से पयदं । दुविहो णि० त्रोघेण त्रादेसेण य । त्रोघेण मिच्छ० उक्क० द्वितिमुदीरेंनो मोलमक० सिया उदीर० सिया त्रणुदीर० । जिद उदीर० उक्कस्मा वा त्रणुक्तस्मा वा । उक्कस्सादो त्रणुक्तस्मा समयूणमादि कादृण जाव पिलदोवमस्म त्र्रसंखेजिदिभागेण्णा ति । इत्थिवेद०-पुरिसवे०-हस्स-रिद० मिया उदीर० सिया त्रणुदीर० । जिद उदीर० णियमा त्रणुक्तस्मा अंतोमुहुत्तृणमादि कादृण जाव त्रंतोकोडाकोडि ति । एवं म०-त्र्रसदि-सोग०-भय-दुगुंछा० मिया उदीर० सिया त्रणुदीर० । जिद उदीर० उक्कस्मा वा त्रणुक्कस्सा वा । उक्कस्मादो त्रणुक्कस्मा समयूणमादि कादृण जाव वीसं सागरोवम-

श्रीर पुरुषवेदकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिउदीरणाका श्रन्तरकाल नहीं है। सौधर्म श्रीर ऐशानकलपमें स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी उदीरणा दोनों है। श्रागे पुरुषवेदकी ही उदीरणा है। उतनी विशेषता है कि श्रानत रूलपसे लेकर नो ग्रेवियक तकके देवामें श्रनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अजघन्य स्थितिउदीरणा जघन्य श्रन्तरकाल श्रुव कम श्रपनी-श्रपनी स्थितिग्रमाण है।

§ ४६६. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धितककं देवांमें सम्यक्त्व और पुरुपवेदकी जघन्य और अजयन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। बारह कपाय और छह नोकपायोंकी जयन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजयन्य स्थितिउदीरणाका जयन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मृहर्त है। इसीप्रकार अनादारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

५७०. सिन्निकर्ष दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—आप और आदेश । ओघसे मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव सोलह कपायका कदाचित् उदीरक होता है और कदाचित् अनुदीरक होता है । यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टसे एक समय कमसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग कम तक अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, और रितका कदाचित् उदीरक होता है और कदाचित् अनुदीरक होता है । यदि उदीरक होता है तो नियमसे अन्तर्भुहूर्त कम स्थितिसे लेकर अन्तरकोड़ीकाड़ीप्रमाण स्थिति तक अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । तपु सकवेद, अरित, शोक, भय, और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है । यदि उदीरक होता है ता उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितका उदीरक होता है तो उत्कृष्ट सं एक समय कमसे लेकर पल्यका

कोडाकोडीश्रो पलिटो० श्रसंखे०भागेण ऊणाश्रो।

ः ५७१. सम्म० उक्क० द्विदिउदी० बारसक०-छण्णोक० सिया उदी०। जिद उदी० णियमा ऋणुकस्सा अंतोम्रहुनृणमादिं कादृण जाव पिलदो० ऋसंखे०भागेण्णा ति । एवं सम्मामि०।

१५७२. अणंताणु०-कोध० उक्क० द्विदिउदी० मिच्छ० तिण्हं कोहाएां िएयमा उदी०, उक्क० अणुक्क० । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा ममयूणमादि कादूण जाव पिलदो० असंखे०भागेएएगा । एवं पण्णारम-कसाय० ।

१५७३. इत्थिवेद० उक्क० द्विदिमुदी० मिच्छ० णिय० उदी० णिय० अणुक्कस्मा समयूणमार्दि काद्ण जाव पिलदो० अमंखे०भागेण्णा ति । सोलभक० मिया उदी०। णिय० अणुक्क० ममयूणमार्दि काद्ण जाव आवित्तयणा ति । हस्स-रिद० सिया उदी०। जिद उदी० उक्क० अणुक्क० वा । उक्क० अणु० समयूणमार्दि काद्ण जाव अंतोकोडाकोडि ति । अरिद-मोग० मिया उदी०। जिद उदी० उक्क० अणुक्क० वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा ममयूणमार्दि काद्ण जाव वीसं सागरो० कोडाकोडी आ पिलदो०

श्रसंख्यातवाँ भाग कम बीस कोड़ाकंड़ी सागरप्रमाग श्रातुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है।

[े] ५७१. सम्यक्त्वको उत्कृष्ट म्थितिका उदीरक जीव बारह कपाय और छह नोकपायका कदाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो नियमसे अन्तमुहूर्त कमसे लेकर पल्यक असंख्यातर्वे भाग कम तक अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीप्रकार सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकको विविद्यत कर सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

[ै] ४७२. श्रनन्तानुबन्धी को घकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव िश्यात्व श्रोर तीन कोधका नियमसे उदीरक होता है जो उत्कृष्ट या श्रनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेत्वा एक समय कमस लेकर पत्यके श्रसंख्यातवें भाग कम तककी श्रनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। नो नोकपायोंका सिश्रकर्प जैसे मिश्यात्वके साथ ले गये है वैसे ले जाना चाहिए। इसीप्रकार पन्द्रह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिक उदीरककी मुख्यतासे सिश्रकर्प जानना चाहिए।

१ ५७३. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिश्यात्वका नियमसे उदीरक होता है जो नियमसे उत्कृष्टकी ऋपेचा एक समय कमसे लेकर पल्यका ऋसंख्यातवाँ भाग कम तककी ऋनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। सोलह कपायोंका कटाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ऋपेचा एक समय कमसे लेकर एक आविल कम तककी ऋनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। हास्य और रितका कदाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी ऋपेचा एक समय कमसे लेकर अन्तःकोझाकोझी तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्ट अपेचा एक समय कमसे लेकर पल्यका ऋसंख्यातवाँ भाग कम बीस को झाकोड़ी

असंखे० भागेणूणाश्रो । भय-दुगुंछ० सिया उदी० । जिंद उदी० णियमा उक्कस्सा । एवं पुरिसवेद० ! एवं हस्स० । णवरि अरिद-सोग० णित्य । इत्थिवे०-पुरिसवे० सिया उदी० । जिंद उदीर० उक्क० अणुक० वा । उक्क० अणु० अंतोम्रहुत्तूणमादिं काद्ण जाव अंतोकोडाकोडि ति । णवुंस० सिया उदी० । जिंद उदी० उक्क० अणुकक्सा वा । उक्कस्सादो अणुकक्सा समयूणमादिं काद्ण जाव वीसं सागरोवम-कोडाकोडीओ पित्वदो० असंखे०भागेणूणाश्रो । रिद० णियमा उक्कस्सा । एवं रदीए ।

१५७४. णवुंस० उक्क० द्विदिमुदीरेंतो० मिच्छ० खिय० उदीर०, उक्क० अणुक्क० वा । उक्क० अणुक्क० समयूणमाद कादण जाव पितदो० असंखे०भागेण्ला । सोलसक० सिया उदीर० । जदि उदीरे० उक्क० अणुक्क० वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा ममयूणमादिं काद्ण जाव आविलयूणा ति । हस्स-रिद-अरिद-सोग-भय-दुगुंछा० जहा इत्थिवेदेण णोदं तहा खेदव्वं । एवमरदीए । णविर हस्स-रदी० णिथ । तिण्णि वेद०

सागरप्रमाण तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। भय और जुगुप्साका कदावित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो नियमसं उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकको विविच्चित कर सिक्कर्प जानना चाहिए। इसीप्रकार हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवको विविच्चित कर सिक्कर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके अरित और शासकी उदीरणा नहीं होती। वह स्त्रीवंद और पुरुषवेदका कदाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्ट श्री अपेचा अन्तर्भुहूर्त कमसे लेकर अन्तः कोझकोड़ी सागर तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। नपुंसकवेदका कदाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीप्रका एक समय कमसे लेकर पत्थका असंख्यातवाँ भाग कम बीस कोझकोड़ी सागर तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। रितकी नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीप्रकार रितकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। रितकी नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीप्रकार रितकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है।

§ ४७४. नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक होता है जो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यहाँ हास्य, रित, अस्ति, शोक, भय और जुगुप्साका भंग जिस प्रकार स्त्रीवेदके साथ ले गये उस प्रकार ले जाना चाहिए। इसीप्रकार अरितकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको विविद्यत कर सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके हास्य और रितकी उदीरणा नहीं है। इसके तीन वेदीका भंग जिस प्रकार हास्य और रितके साथ ले गये

जहा हस्म-रदीहिं तहा रोपच्यं । सोग० णिय० उदी०, णिय० उक्तस्सं । एवं सोग० ।

१ ४७४. भय० उक्क० द्विदिमुदी० मिच्छ०-सोत्तमक०-हस्स-रिद-च्रगिद-मोग० णवुं म० भंगो । तिरिएणवेद० हस्सभंगो । दुगुंछं सिया उदी० । जिद उदी० एिय० उक्क० । एवं दुगुंछ० । एवं सच्चऐरह्य० । णविर णवुंस धुवं कादच्वं ।

§ ५७६. तिरिक्ख०-पंचिदियतिरिक्खितिये ओघं । णवरि पञ्ज० इत्थिवे० णित्थि । जोणिणीसु इत्थिवेदं धुवं काद्व्वं । मणुसतिय० पंचि०तिरिक्खितियभंगो । देवाणमोघं । एवरि णवुंस० णित्थि । एवं भवएए०-वाएवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाणा ति । एवं सणकमारादि जाव सहस्सारे ति । एवदर पुरिसवे० धुवं कायव्वं ।

१ ५७७. पंचिंवितिरिव्यपञ्च विष्ठ उक्क विदि उदी सोलसक विष्णोक मिया उदी । जिद उदी उक्क यणक वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादि कादृण जाव पलिदो असंखे भागेण्णा नि । एवं णवुं सव । णविर

 समयूणमादि कादृण जाव पलिदो असंखे भागेण्णा नि । एवं णवुं सव । णविर

 स्वित्र स्वाद्य स्वाद्य स्वाद्य स्वाद्य स्वाद्य स्वित्र स्वाद्य स्वा

उस प्रकार ले जाना चाहिए। यह शोकका नियमसे उदीरक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीप्रकार शोककी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको विवित्तित कर सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

५७४. भयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवका मिण्यात्व, सोलह कपाय, हास्य, रित, अरित और शोकके साथ सन्निकर्षका भंग नपुं मकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवको विविद्यत कर इन प्रकृतियोंके साथ कहे गये भंगके समान है। तीन वेदका भंग हास्य प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवको विविद्यत कर इन प्रकृतियोंके साथ कहे गये भंगके समान है। यह जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इमीप्रकार जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको विविद्यत कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। इतनी विरोपता है कि इनमे नपुं सकवेदकी उदीरणाको धुत्र करना चाहिए।

् ४७६ तिर्यब्च श्रीर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकमें श्रोघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें खीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनियोंमें खीवेदकी उदीरणाको ध्रुव करना चाहिए। मनुष्यित्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकके समान भंग है। देवोमें श्रोघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। इस्राप्तकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म श्रीर ऐशानकल्पके देवोंमें जानना चाहिए। इस्राप्तकार सनत्कुमारकल्पसे लेकर सहास्रारकल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी उदीरणाको ध्रुव करना चाहिए।

१५७७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकों में मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषाय और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुकृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी अपेचा एक समय कम स्थितिसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग कम तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीपकार नपुंसकवेदकी अपेचा भंग जान होना चाहिए।

णिय० उदी० ।

१ ५७८. अणंताणु०कोघ० उक्क० द्विदिमुदीरें० तिण्हं कोघं एावुंम० एाय० उदी० णिय० उक्करसं । अण्णोक० सिया उदी०, जदि उदी० णियमा उक्करसं । मिच्छ० णिय० उदी० उक्क० अणुक्क० वा । उक्क० अणुक्क० समयूणमादिं काद्ण जाव पिलदो० असंखे०भागेणुणा । एवं पण्णारसक० ।

१ ४७९, हस्स० उक्क० हिदिग्रुदीरें० मोलसक०-भय-दुर्गुञ्च० सिया उदीरे०। जिद्द उदी० णिय० उक्कस्सं । मिच्छ० अणंताणु०चउक्कमंगो । रदि-णवुंम० णिय० उदी० णिय० उक्क० । एवं रदीए ! एवमरदि-सोगाणं ।

ह प्रद०. भय-उक्क० द्विदिमुदीरें० मिच्छ०-णवुंस० हस्सभंगो । सोलसक०-पंचणोक० मिया उदी०। जदि उदी०, शिय० उक्क०। एवं दुगुंछाए।

ह्मद्रश्. णवुंम० उक्क० द्विदिमुदी० मिच्छत्त० हस्सभंगो । सोलमक०० छण्णोक० मिया उदी०। जदि उदी०, णिय० उक्क०। एवं मणुमश्रपञ्ज०।

इतनी विशेषना है कि वह इसका नियमसे उदीरक होता है।

§ ५७८ श्रान्तानुबन्धी क्रोधकी उत्तृष्ट स्थितिका उदीरक जीव तीन क्रोध श्रीर नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है । यदि उदीरक होता है । यह उदीरक होता है । यह उदीरक होता है । यह उदीरक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । यथ्यत्वका उदीरक होता है जो उत्कृष्ट या श्रानुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । विध्यात्वका नियमसे उदीरक होता है जो उत्कृष्ट या श्रानुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । यदि श्रानुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी श्रापेचा एक समय कम स्थितिसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम तककी श्रानुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । इसीप्रकार पन्द्रह कपायकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको सुख्य कर सिश्वकर्ष जानना चाहिए।

६ ५७६. हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सोलह कपाय, भय घीर जुगुप्साका कदाचित उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। मिध्यात्वका भंग अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान है। रित श्रीर नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीप्रकार रितकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सित्रकर्ष जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार घरित घोर शोककी उत्कृष्ट स्थितिका सुख्य कर सित्रकर्ष जानना चाहिए।

६ ४८०. भयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवके मिध्यात्व और नपुंसकवेदका भंग हास्यके समान है। सोलह कषाय और पाँच नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको सुरूप कर सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

§ ४८.४. नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्वका भंग हास्यके समान
है। सोलह कपाय श्रीर छह नोकषायकी उत्कृष्ट स्थितिका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक
हे तो नियमसं उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए।

- १ ४८२. श्राणदादि एवगेवजा ति मिच्छ० उक्क० द्विदिमुदी० सोलसक०-भय-दुगुं छा सिया उदी० । जदि उदी०, णियमा उक्क० । हस्स-रदि-पुरिसवेद० णियमा उदीरेदि, णिय० उक्क० । एवं सम्म० । णवरि अर्णताणु०च उक्कं स्टिय ।
- १ ४८३. सम्मामि० उक्क० द्विदिमुदीर० वारसक०-छण्णोक० सिया उदीर०। जिद उदी०, िएय० अणुक्क० असंखे०भागहीएं। पुरिसवे० िएय० उदी०, िणय० अणुक्क० असंखे०भागहीएं।
- १ ४८४. श्रणंताणु०कोध० उक्क० द्विदिमुदीरें० मिच्छ०-तिण्णिकोध-हस्स-रिद-पुरिसवे० णिय० उदी०, णिय० उक्क० । भय-दुगुंछ० मिच्छत्तभंगो । एवं तिण्हं कसायाणं ।
- १ ४८४. अपचक्खाण०कोध० उक्क० द्विदिमुदी० मिच्छ०-सम्म०-त्र्रणंताण०-कोध-भय-दुगुंछ० मिया उदी०। जिद् उदी० णियमा उक्कस्सा। दोग्हं कोधाणं हस्स-रिद-पुरिसवे० णिय० उदी०, णिय० उक्क०। एवमेकारसक०।
 - १५८६. हस्सस्य उक्क० द्विदिग्रुदी० मिच्छ०-सम्म०-सोलमक०-भय-दुगुंछ०
- § ४८२. त्रानतकल्पसे लेकर नो प्रैवेयक तकके देवोंमें मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषाय, भय श्रीर जुगुष्याका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। हास्य, रित श्रीर पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इमीप्रकार सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरणाको मुख्य कर सन्तिकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके श्रानन्तानुबन्धीचतुष्ककी उदीरणा नहीं है।
- ६ ४८३. सम्यग्मिण्यात्वकी उत्कष्ट स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय श्रीर छह नोकपायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे श्रसंख्यातवें भागहीत श्रमुत्कुष्ट स्थितिका उदीरक है। पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जा नियमसे श्रसंख्यातवें भागहीन श्रमुत्कुष्ट स्थितिका उदीरक है।
- १ ४८४. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व, तीन क्रोध, हास्य, रित और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसके भय और जुगुप्साका भंग मिथ्यात्वके समान है। इसीप्रकार मान आदि तीन कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको सुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- - § ४८६. हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय,

सिया उदी० । जिंद उदी० णिय० उक्त० । रिद-पुरिसवे० णिय० उदी०, णिय० उक्तस्सं । एवं रदीए ।

१४८७. अरदि० उक्क० द्विदिमुदी० मिच्छ०-सम्मा०-सोलसक०-भय-दुगु० सिया उदी०। जदि० उदी०, णिय० अणुक्क० असंखे०भागही०। पुरिसवे० णिय० उदी०, णिय० अणुक्क० असंखे०भागही०। सोगं णिय० उदी०, णिय० उक्क०। एवं मोग०।

१ ४८८. भय० उक० द्विदिमुदी० मिच्छ०-सम्म०-सोलसक०-हस्स-रदि-पुरिसवे० अपचक्ताणमंगो । दुगुंछा० मिया उदी०। जदि उदी०, णिय० उकस्सं। एवं दुगुंछाए।

ह प्रद्रः. पुरिसवेद० उक्क० द्विदिमुदी० मिच्छ०-सम्म०-सोलमक०-भय-दुगुं छा० सिया उदी०। जिद्द उदी०, णिय० उक्कस्सं। हस्स-रिद० णिय० उदी०, णिय० उक्कस्सं।

१४९०. ऋणुहिमादि सन्बद्घा ति सम्म० उक्क० द्विदिमुदीरे० बारसक-०भय-दुगुं छा० सिया उदी०। जदि उदी० शिय० उक्क०। हस्स-रदि-पुरिसवे० णिय० उदी०, णिय० उक्कस्सं।

भय श्रोर जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। रित श्रोर पुरुपवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार रितकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्प जानना चाहिए।

§ ४८०. घरितकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कपाय,
भय और जुगुष्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे घसंख्यातवें भागहीन
अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। पुरुपवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातवें
भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। शोकका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट
स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार शोककी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्प
जानना चाहिए।

५ ५८८. भयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवके मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय, हास्य, रित श्रीर पुरुषवेदका भंग श्रप्रत्याख्यानावरणके समान है। जुगुष्साका कद चित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुष्साकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्प जानना चाहिए।

ु ४८९. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, स्रोलह कपाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। हास्य और रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है।

६ ५६०. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्तवकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव बारह कथाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। हास्य, रित और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक हैं।

- ४९१. ऋपच्च क्खाणकोह० उक्कस्म० द्विदिमुदी० सम्म०-दोकोध-हस्स-रदि-पुरियवेद० णिय० उदी०, णिय० उक्कस्मं । भय-दुगुं झा० सम्मत्तभंगो । एव-मेक्कारमक० ।
- ^९ ४९२. हस्यस्स उक्क० द्विदिमुदी० सम्म०-रदि-पुरिसवेद० णिय० उदीर०, ग्गिय० उक्करमं । वारसक०-भय-दुगुं छा० सम्मत्तभंगो । एवं रदीए ।
- १५९३. अरदि उक्क० द्विदिमुदी० सम्म०-पुरिसवे० शिय० उदीर०, णिय० अशुक्क० असंखे०भागद्दी० । बारसक०-भय-दुर्गु छा० सिया उदी० । जदि उदी० णिय० अशुक्क० असंखे०भागद्दीशां । सोगं णिय० उदी०, णिय० उक्करसं । एवं सोग० ।
- ४९४. भय० उक्क ब्रिदिमुदीरे० सम्मा०-हस्स-रिद-पुरिसवे० णिय० उदी० णिय० उक्कस्मं । वारसक०-दुगुं छा० मिया० उदी० । जिद्द उदी०, णिय० उक्क० । एवं दुगुं छा० ।
- ध्रथ. पुरिस० उक्क० द्विदिमुदी० सम्म०-हस्स-रदि० णिय० उदी०, णिय० उक्स्सं० । वारसक्क०-भय-दृगुं झा० मिया उदी० । जदि० उदी०, णिय० उक्क० ।
- ५८१. द्यप्रत्याख्यानावरण कोधकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सम्यवत्व, दो कोध, हास्य, रित द्यार पुरुषवेदका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक हैं। इसके भय श्रोर जुगुष्साका भंग सम्यवत्वके समान हैं। इसीप्रकार खारह कपायकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरणाको मुख्य कर सिन्नकर्प जानना चाहिए।
- § ५६३ त्रातिकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सम्यक्त त्रौर पुरुपवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे त्रसंख्यानवें भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। बारह कपाय, भय त्रौर जुगुष्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे त्रसंख्यातवें भागहीन त्रानुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। शोकका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार शोककी उत्कृष्ट स्थितिको उदीरणाको मुख्य कर सिन्नकर्ष कहना चाहिए।
- ६ ५२४. भयकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सम्यक्त्व, हास्य, रित श्रीर पुरुषवेदका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। बारह कषाय श्रीर जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको सुख्य कर सन्निकर्प जानना चाहिए।
- < १६४. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सम्यक्त्व, हास्य और रितका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। बारह कवाय, भय और जुगुप्साका कराचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है।

एवं जाव० ।

\$ ५९६. जहण्णए पयदं । दुविही णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ० जह० द्विदिउदी० बारसक०-छण्णोक० मिया उदी० । जदि उदी०, णिय० श्रजह० संखे०गुणबमहियं । चदुसंजल०-तिण्णिवे० मिया उदी०, जदि उदी०, णिय० श्रज० श्रसंखे०गुणबभहियं । एवं सम्म०-सम्मामि० । एवरि श्रणंताणु० चउकं णित्थ ।

१ ४९७. अणंताणु०कोध० जह० द्विदिउदी० मिन्छ०-कांधमंजल०-सावुंम० स्थिप० उदी०, णिय० अज० असंखे०गुणन्म० । दोण्हं कोधार्स स्थिप० उदी०, जहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा समयुत्तरमादि काद्स जाव पिलदो० असंखे०भागन्महियं । हस्म-रिद-अरिद-सोग० सिया उदी० । जिद उदी०, स्थिप० अज० असंखे०भागन्महियं । भय-दुगुछा० मिया उदी० । जिद उदी०, जहरूसा अजहरूसा वा । जहरूसादो अजहरूसा समयुत्तरमादि काद्ण जाव आवल्यिक्भहियं । एवमेकारसक० ।

४९८ कोहमंज० जह० द्विदिउदी० सेसाणमणुदीरगो । एवं तिण्हं संजलगाणां । इसीवकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

१ ५६६. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है— ग्रोघ ग्रोर श्रादेश। श्रोघमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कथाय श्रोर छह नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी श्रिधिक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। चार संज्वलन श्रोर तीन वेदका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे श्रमंख्यातगुणी श्रिधिक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता ह कि इनके उदीरकके श्रनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उदीरणा नहीं है।

५६७. श्रनन्तानुबन्धी कोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व, काधसंज्यलन श्रोर नपुसं कवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे श्रसंख्यातगुणी श्रधिक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। दो कोधोका नियमसे उदीरक है जो जघन्य या श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि श्रजघन्य स्थितका उदीरक है। हास्य, रित, श्ररति श्रीर शाकका कदाचिन उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्य या श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्य हिथितका उदीरक है तो जघन्य स्थितिका उदीरक है । इसीप्रकार स्थारह कपायकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सिश्वतका उदीरक है । इसीप्रकार स्थारह कपायकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सिश्वतका जानना चाहिए।

५ ४६८. क्रोधसंज्वलनकी जधन्य स्थितिका उदीरक जीव शेष प्रकृतियोका अनुदीरक

१ ४९९, इत्थिवे॰ जह॰ द्विदिउदी॰ चदुसंज॰ मिया उदी॰। जदि॰ उदी॰, णिय॰ अज॰ असंखे॰गुणब्भ॰। एवं पुरिसवे॰।

\$ ६०० हस्सस्स जह० द्विदिमुदी० मिच्छत्तं णिय० उदी०, णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। बारसक०-भय-दुगुं छा० मिया उदी०। जिद्द उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भिह्यं। चदुसंजलण-तिरिणवे० मिया उदी०। जिद्द उदी०, णिय० अजह० असंखे०गुणब्भै०। रिद० णिय० उदी०, णिय० जहरणं। एवं रदीए। एवमरदि-सोग०।

६६०१. भय० जह० द्विदिउदी० मिच्छ०-णवुंम० णिय० उदी०, खिय० अजहएणा असंखे०गुणब्भ०। बारमक० मिया उदी०। जिद उदी०, जह० अजहण्णा वा। जहण्णादो अजहण्णा समयुत्तरमादिं कादृण जाव पिलदो० असंखे०भागब्भ०। चदुसंजल० मिया उदी०। जिद० उदी०, णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। हस्म-रिद-अरिद-सोग० मिया उदी०। जिद० उदी०, णिय० अज० असंखे०भागब्भ०। द्गुं छा० मिया उदी०। जिद० उदी०, खिय० जहण्णा। एवं दुगुं छाए।

है। इसीप्रकार तान मंज्यलनकी जघन्य स्थितिष्ठदीरणाको मुख्य कर सन्तिकर्ष जानना चाहिए। १४९६ मंत्रीयेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव चार संज्यलनोका कटाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार पुरुषवदकी जघन्य स्थितिष्ठदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६०० हास्यकी जघन्य रिथितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसं उदीरक है जो नियमसं असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। बारह वपाय, भय और जुगुष्साका कटाचित उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। चार संज्वलन और तीन बेदका कदाचित उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। रितका नियमसे उदीरक हैं जा नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक हैं। इसीपकार रितकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सिन्नकर्प जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार अरित और शोककी जघन्य स्थिति-उदीरणाको मुख्य कर सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

§ ६०५ भयकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिण्यात्व श्रोर नपु सक्वेदका नियमसं उदीरक है जो नियमसं असंख्यात गुणी अधिक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। बारह कपायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। वार सज्बलनका कदाचित् उदीरक है। बार उदीरक है तो नियमसं श्रसंख्यात गुणी श्रिष्ठ श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। हाम्य, रिश्वत श्रोर शाक्का कदाचित उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसं श्रसंख्यात गुणी श्रिष्ठ श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। हाम्य, रिश्वत श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। जुगुण्याका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसं श्रसंख्यात गुणी श्रप्तिका उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसं श्रसंख्यात हो। जुगुण्याका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसं श्रसंख्यात हो। इसीप्रकार जुगुण्याका जघन्य स्थितिन

१. श्राव्यतो संखेवगुराट्भव इति पाटः।

§ ६०२. त्रादेसेण ऐरहय० मिच्छ० जह० द्विदिउदी० सोलसक०-छण्णोक० सिया उदी०। जिद उदी०, णिय० ऋज० संखे०गुणब्भ०। णवुंस० िएय० उदी०, णिय० ऋजह० संखे०गुणब्भ०। एवं सम्म०। णविर ऋणंताणु०४ एत्थि। एवं सम्मामि०।

६०३. अणंताणु०कोध० जह० द्विदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी०, णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। तिण्हं कोधाणं जहण्णा वा अजहण्णा वा। जहण्णादो अजहण्णा समयुत्तरमादिं कादृण जाव पिह्नदो० असंखे०भागब्भ०। अरिद-सोग- एवुं स० णिय० उदी०, णिय० अजह० असंखे०भागब्भ०। भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। एवं पण्णारमकसायाणमण्णमण्णस्म।

६०४. णवुं मयवेद० जह० द्विदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी०, णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। सोत्तसक०-भय-दृगुंछा० मिया उदी०। जिद उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भ०। हस्स-रिद-अरिद-मोग० मिया उदी०। जिद उदी०, णिय० अजह० विद्वाणपिददा असंखे०भागब्भ० संखेजगुणब्भिहयं वा।

उदीरगाको मुख्य कर सन्निकर्प जानना चाहिए।

६६०२. श्रादेशसे नारिकयोंमें मिश्यात्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सोलह कपाय श्रीर छह नोकपायोंका कदावित उदीरक हैं। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी श्रिष्ठिक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे संख्यातगुणी श्रिष्ठिक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। इसीप्रकार सम्यक्तकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्यकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके श्रनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी उदीरणा नहीं होती। इमीपकार सम्यग्निक्यात्वकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१६०३ आनन्तानुबन्धी कोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिण्यात्वका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक आजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। तोन कोधोंकी जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक हैं तो जघन्यकी अपेचा एक समय अधिकसे लेकर पल्यके आसख्यातवें भाग अधिक तककी आजघन्य स्थितिका उदीरक हैं तो जघन्यकी अपेचा एक समय अधिकसे लेकर पल्यके आसख्यातवें भाग अधिक तककी आजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। अरित, शोक और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे आसंख्यातवें भाग अधिक आजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। यदि उदीरक हैं। यदि उदीरक हैं। यदि उदीरक हैं। इसीप्रकार पन्द्रह क्यायकी जघन्य स्थितिउदीरणाको सुख्य कर परस्पर सन्तिकप कहना चाहिए।

१६०४. नपुंस स्वेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिध्यात्वका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजवन्य स्थितिका उदीरक हैं। सोलह कषाय, भय और जुगुष्साका कदाचिन उदीरक हैं। यदि उदीरक हैं तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। हास्य, रित, अरित और शोकका कदाचिन उदीरक हैं। यदि उदीरक हैं तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इसप्रकार द्विस्थानपतित अजघन्य स्थितिका उदीरक हैं।

६ ६०५. हस्मस्म जह० द्विदिमुदी० मिच्छ०-मोलसक०-भय-दुगुंछ० णबुंसय-भंगो । णवुंस० णिय० उदी० णिय० श्रज० मंखे०गुणब्भ० । रदिं णिय० उदी० णिय० जहण्णा । एवं रदीए । एवमरदि-मोगाणं ।

६०६. भय० जह० द्विदिउदी० मोलसक० सिया उदी०। जदि० उदी०, जहण्णा अजहण्णा वा। जहण्णादो अजहण्णा विद्वाणपदिदा असंखे०भागव्भ० संखे०भागव्भ० वा। मिच्छ०-अरिद-सोग०-णवुंम० अणंताणु०बंधिभंगो। दुगुंछा० मिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। एवं दुगुंछाए। एवं पढमाए पुढवीए णेदव्वं।

६०७. विदियादि जात्र ब्रिडि ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० शिरयोघभंगो । अर्णताणु०कोध० जह० द्विदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी० शिय० अजह० असंखे०-गुशक्म० । तिण्हं कोधार्णं णवुंसय० णिय० उदी० णिय० अजह० असंखेअभागव्म० । व्रश्लोक० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अजह० अर्मखे०भागव्म० । एवं तिण्हं कमायाणं ।

६६०८. ऋपचक्खाणकोध० जह० द्विदिउदी० दोण्हं कोधाणं सावुंम० णिय०

१ ६०८. अप्रत्याख्यान क्रापकी जपन्य स्थितिका उदीरक जीव दो क्रोव श्रीर नपुंसकवेद-

[§] ६०५. हास्यकी जबन्य स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यास्व, सोलह कवाय, भय श्रोर जुगुप्माका भग नपुंमक्वेदके समान हैं। नपुंसक्वेदका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे संक्यातगुर्णा श्राधक श्रजबन्य स्थितिका उदीरक हैं। रितका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे जबन्य स्थितिका उदीरक हैं। इमाप्रकार रितका जबन्य रिथितिकी उदीरणाको सुख्य कर सन्तिकर्प जानना चाहिए। इसीप्रकार श्रारति श्रीर शोककी जबन्य स्थितिकी उदीरणाको सुख्य कर सन्तिकर्प जानना चाहिए।

६०६ भयकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सोलह कपायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातवें भाग अधिक विस्थानपतित अजपन्य स्थितिका उदीरक है। सिध्यात्व, अरित, शोक और नपुंसकवेदका मंग अनन्तानुबन्धीके समान है। जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थितिकी उदिरणाको मुख्य कर सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमे सिन्नकष जानना चाहिए।

[§] ६०७ दूसरीसे लंकर छटी पृथिवी तकके नारिकयोंमे मिण्यात्व, सम्यक्त्व झार सम्यग्निश्यात्वका भग मामान्य नारिकयोंके समान है। श्रानन्तानुबन्धी कांधर्का जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिण्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे श्रासंख्यातगुणी श्रधिक झजघन्य म्थितिका उदीरक है। तीन कोंध झोर नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे झसंख्यातवें भाग श्रिवक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। छह नोकपायोंका कदाचित उदीरक है। यदि उदीरक है ना नियमसे असंख्यातवें भाग श्रिविक झजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार तीन कपौयोंकी जघन्य स्थिति उदीरणाको मुख्य कर सिक्नकर्ष जानना चाहिए।

उदी० णिय० जहण्णा । छण्णोक० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० जहण्णा । सम्म० णिय० उदी० णिय० अज० संखे०गुणव्म० । एवमेकारसकसा० ।

६०९. हस्सस्म जह० द्विदिउदी० बारसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी०।
 जिद उदी०, शिय० जहण्णा। रिद-शावुंस० णिय० उदी० शिय० जहण्णा। सम्मा०
 अपचक्खाराभंगो। एवं ग्दीए। एवमरिद-सोगार्था।

६६१०. भय० जह० द्विदिमुदी० सम्मा०-एानुंस० हस्सभंगो । बारसक०-पंचणोक० सिया उदी० । जिद उदी०, णिय० जहण्णा । एवं दुगुंछाए ।

§ ६११. खबुंस॰ जह॰ द्विदिउदी॰ सम्म॰ हस्मभंगो । बारसक०-छएणोक० सिया उदी॰। जदि उदी॰, णिय॰ जहण्णा।

्र६१२. सत्तमाए मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० णिरयोघं। ऋणंताणु०कोघ० जह० द्विदिउदी० मिच्छ०-पण्णारमक०-सत्तणोक० णिरयोघं। एवरि भय-दुगुंछा० मिया उदी०। जदि उदी० जहण्णा वा श्रजहण्णा वा। जहण्णादो ऋजहण्णा

का नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है ता नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। सम्यक्त्वका नियमसे उदीरक ह जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार ग्यारह कपायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

५६१०. भयकी जघन्य स्थितिक उदीरक जीवके सम्यक्त्व श्रीर नपुंसकवेदका भंग हास्यके समान है। वह बारह कषाय श्रीर पाँच नाकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक हे तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थिति-उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

५६११. नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके सम्यक्तका मंग हास्यके समान है। वह बारह कपाय श्रीर छह नोकपायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है।

१६१२. सातवीं पृथिवीमें मिध्यात्व, सम्यक्तव और सम्यग्मिध्यात्वका भंग सामान्य नारिकयोंके समान है। अनन्तानुबन्धी कांधकी जघन्य स्थितिके उदीरकके मिध्यात्व, पन्द्रह कथाय और सात नोकपायका भंग सामान्य नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है। सम्या अधिका स्थितिका उदीरक है। स्थितिका स्

समयुत्तरमादि कादृण जाव त्राविषव्भिहिया । हस्स-रिद-श्ररिद-सोग० मिया उदी० । जिद उदी०, णिय० त्रजह० त्रमंखे०भागव्म० । एवं पण्णारसक० । एवुं मयवेद-हस्स रिद-अरिद-सोग० णिरयोघं । भय-दुगुंद्धा० णिरयोघं । णविर सोलसक० सिया उदी० । जिद उदी०, जहण्णा वा त्रजहण्णा वा । जहण्णादो त्रजहण्णा तिहाणपिद्दा त्रसंखे०भागव्भ० संखे०भागव्भ० संखे०गुणव्भिहया वा ।

्र ६१३. तिरिक्खेसु मिच्छ० जह० द्विदिउदी० सोलसक०-णवणोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भ०। एवं सम्मामि०। णवरि अणंताणु०चउकं रणिय। एवं सम्मत्तं। एवरि पुरिसवेदं धुवं कायव्वं। सोलमक० सत्तमाए भंगो।

इ ६१४. इत्थिवेद० जह० द्विदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी० णिय० ऋजह० ऋसंखे०गुणब्भ० । सोलसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी० । जदि उदी०, णियमा ऋजह० संखेअगुणब्भ० । इस्स-रदि-ऋरदि-सोग० मिया उदी० । जदि उदी०, णिय० ऋजहण्णा संखे०गुणब्भिहिया । एवं पुरिसवे० ।

आवित श्रिधिक तककी श्रजवन्य स्थितिका उदीरक हैं। द्वास्य, रित, श्रामि श्रीर शोकका कदाचित उदीरक हैं। यदि उदीरक हैं तो नियमसे श्रासंख्यातवें भाग श्रधिक श्रजवन्य स्थितिका उदीरक हैं। इसीप्रकार पन्द्रह कषायकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सिन्तकों जानना चाहिए। नपुं सकवेद, हास्य, रित, श्रामि श्रीर शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सिन्तकोंका भंग सामान्य नारिकयोंके समान है। भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सिन्तकोंका भंग सामान्य नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि सोलह कषायका कदाचित उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेत्रा श्रसंख्यातवें भाग अधिक, संख्यातवें भाग श्रधिक या संख्यातगुणा श्रिधक त्रिस्थानपतित श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है।

- ६ ६१३. तिर्यक्चोंमें मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार सम्यिग्मध्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उदीरणा नहीं है। इसीप्रकार सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके पुरुषवेदकी उदीरणाको भुव करना चाहिए। सोलह कषायकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर भंग सातवीं पृथिवांके समान जानना चाहिए।
- ह ६१४. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिध्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। द्वास्य, रित, अरित और शोकका कदाचित उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

६१४. हस्स० जह० द्विदिउदी० मिच्छ० इत्थिवेदभंगो। सोलसक०-णवुंस०भय-दुगुंछा० मिया उदी०। जदि उदी०, णिय० श्रजह० संखे०गुणब्म०। इत्थिवे०पुरिसवे० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० श्रजह० विद्वाणपदिदा श्रसंखे०भगव्म०
संखे०गुणब्महिया वा। रिद णियमा जहण्णा। एवं रदीए। एवमरदि-सोगाणं।
भय-दुगुंछा० श्रणांताणु०भंगो। णविर मोलसक० सिया उदी०। जदि उदी०,
जह० श्रजह०। जह० श्रजहण्णा समयुत्तरमादि कादृण जाव पलिदो० श्रसंखे०भागब्भ०। णवुंसवे० मत्तमपुढिविभंगो।

\$ ६१६. पंचिं वितिनिक्खितिये मिच्छ०-सम्मानि सत्ताणोक० तिरि-क्खोषं । ऋणांताणु कोष जह द्विदिउदी वित्व पियव उदी विषय अजह व ऋसंखे व गुण्य मा । तिण्हं कोषाणं णियव उदी वित्व अजह वित्व अजह वित्व ममयुत्त गादि काद्ण जाव पिलदो विश्व असंखे व भाग मय-दुगुं छाव सिया उदी विश्व । स्व उदी वित्व कि स्व उदी वित्व कि स्व अजि असंखे व भाग स्व वित्व कि स्व उदी वित्व कि स्व अजि असंखे व भाग स्व वित्व कि स्व कि स्व वित्व कि स्व वित्व कि स्व कि स

६६१६. पञ्जेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकमें मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व श्रीर सात नोकषायका मंग सामान्य निर्यञ्चोंक समान है। श्रनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिण्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे श्रसंख्यातगुणी श्रधिक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। वह तीन क्रोधका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य या श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है। भय श्रीर जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। सात नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे श्रमसंख्यातवें भाग श्रिषक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। सात नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे श्रमसंख्यातवें भाग श्रिषक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार पन्द्रह कपायकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सिश्वकर्ष जानना चाहिए। भय श्रीर जुगुप्साका भंग सामान्य

६ १११. हास्यकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्वका मंग स्त्रीवेदके समान है। वह सोलह कषाय, नपुं सकवेद, भय श्रोर जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी श्रिधिक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। स्त्रीवेद श्रोर पुरुपवेदका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे श्रसंख्यातवें भाग श्रिधिक या संख्यातगुणी श्रिधिक द्विस्थानपतित श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। रितका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार रितकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सित्रकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार श्रात श्रीर शाककी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सित्रकर्ष जानना चाहिए। स्थीप्रकार श्रात श्रीर शाककी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सित्रकर्ष जानना चाहिए। भय श्रीर जुगुप्साका मंग श्रनन्तानुबन्धीके समान है। इतनी विशेषता है कि वह सोलह कपायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। वपुं सकवेदका कर पत्रके श्रसंख्यातवें भाग श्रिषक तककी श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। नपुं सकवेदका भंग सात्रवी प्रथिविके समान है।

सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० असंखे०भागब्म०। णवरि पञ्ज० इत्थिवेद० णित्थि। जोणिणीसु इत्थिवेदो धुवो कायन्वो।

ई ६१७. पंचिदियतिरिक्खअपञ्ज०-मणुसअपञ्ज० मिच्छ० जह० द्विदिउदी० सोलसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, जहण्णा वा अजहएणा वा। जह० अजह० समयुत्तरमादिं कादूण जाव पिलदो० असंखे०भागब्भ०। हस्स-रिद-अरिद-सोग० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० असंखे०भागब्भ०। एवं णवुंस०। णवरि णिय० उदी०।

ई ६१८. श्रणंताणु०कोध० जह० द्विदिउदी० मिच्छ०-तिण्हं कोधाणं णिय० उदी०, जह० श्रजह० । जह० श्रजह० समयुत्तरमादिं कादृण जाव पिलदो० श्रसंखे०-मागब्म० । भय-दुगुं छा० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० जहण्णा । चदुणोक०-णवुंस० मिच्छत्तभंगो । एवं पण्णारसक० ।

§ ६१९. इस्सस्स जह० द्विदिउदी० मिच्छ०-णवुंस० णिय० उदी० णिय० अजह० संखे०गुणब्भ० । एवं सोलसक०-भय-दुगुंछा० । णवरि सिया उदी० । रिद

तिर्यक्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि वह सात नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक आजवन्य स्थितिका उदीरक है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा मुव करना चाहिए।

१६९७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकों मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सोलह कपाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेत्ता एक समय अधिकसे लेकर पत्यंक असंख्यातवें भाग अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है। हास्य, रित, अरित और शोकका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेत्ता जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसका नियमसे उदीरक है।

६ ६१८. धनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व धौर तीन क्रोधोंकी नियमसे जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि धजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा एक समय अधिकसे लेकर पत्यके असंख्यातवें भाग अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है। भय और जुगुष्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। चार नोकषाय और नपुंसकवेदका भंग भिथ्यात्वके समान है। इसीप्रकार पनद्रह कषायकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

६६९८. हास्यकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिध्यात्व और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे संख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी अपेचा कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनका कदाचित उदीरक है। रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है।

णिय० उदी० खिय० जहण्णा । एवं रदीए । एवमरदि-सोग० ।

६२१. एावुंस० जह० द्विदिउ० मिच्छ०-सोलमक०-भय-दुगुंछा० हस्सभंगो ।
 हस्म-रिद-च्रारिद-सोग० सिया० उदी० । जिद उदी०, एाय० च्रजह० बिट्ठाएापिददा
 असंख०भागब्म० संखे०गुणब्म० वा ।

६२२. मणुमतिए स्रोघं । णवि बारसक०-छण्णोक०-पंचि ०तिरिक्खभंगो ।पञ० इत्थिवे० णित्थ । मणुसिणीस इत्थिवेदो धुवो कायव्यो ।

§ ६२३. देवेसु मिच्छ• जह० द्विदिउ० सोलमक०-श्रद्वणोक० सिया उदी०। जिद उदी०, णिय० अज० संखे०गुणा। एवं सम्मामि०। णविर अणंताणु०४ णित्थ। सम्म० पंचिदियतिरिक्खभंगो।

१६२४. श्रगांताणु ॰ कोघ॰ जह॰ द्विदिउदी॰ मिच्छ० गिय० उदी० गिय० श्रजह॰ संखे॰गुण=भ०। तिण्हं कोधाणं णिय० उदी०, जह० श्रजह०। जह० श्रजह०

इसीप्रकार रितकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्तिकर्ष कहना चाहिए। तथा इसी-प्रकार अपरित और शोककी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्तिकर्ष कहना चाहिए।

६२०. भयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके मिध्यात्व, चार नोकषाय श्रौर नपुंसक-वेदका भंग श्रमन्तानुबन्धीके समान है। सोलह कपायका भंग मिध्यात्वकं समान है। जुगुप्सा-का कदाचित् उदीरक है यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

५६२१. नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय श्रोर जुगुप्साका भंग हास्यके समान है। हास्य, रित, श्रारति श्रोर शोकका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे श्रसंख्यातवें भाग श्राधिक या संख्यातगुणी श्राधिक श्राजघन्य स्थितिका उदीरक है।

§ ६२२. मनुष्यत्रिकमें श्रोघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि बारह कपाय और छह नोकषायका भंग पश्चेन्द्रिय तिर्यक्षोंके समान है। पर्याप्तकोंमें कीवेदकी उदीरणा नहीं है श्रौर मनुष्यिनियोंमें कीवेदकी ध्रव करना चाहिए।

६२३. देवोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषाय और आठ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी श्रिधिक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार सम्यिग्धियात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके श्रनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उदीरणा नहीं है। सम्यक्त्वका भंग पक्षेन्द्रिय तिर्थव्चोंके समान है।

§ ६२४. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव भिध्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। तीन क्रोधोंकी

समयुत्तरमादिं कादृ्ण जात्र पिलदो० श्रसंखे०भागन्म० । भय-दुगुंछा० सिया उदी० । जिद उदी०, णिय० जहण्णा । इत्थिवे०-पुरिसवे० मिया उदी० । जिद उदी०, णिय० श्रजह० श्रसंखे०भागन्म० । हस्स-रदिं णिय० उदी० णिय० श्रजह० श्रसंखे०-भागन्म० । एवं पण्णारसक० ।

६ ६२४. इत्थिवे० जह० द्विदिउदी० मिच्छ० ऋणंताणु०भंगो । सोलसक०-भय-दुगुंछा०-चदुर्णोक० मिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भ०। एवं पुरिसवेद०।

६ ६२६. हस्सस्स जह० द्विदिउदी० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० इत्थि-वेदभंगो । इत्थिवेद०-पुरिसवे० मिया उदी० । जदि० उदी०, णिय० अजह० बिद्वाण-पदिदा असंखे०भागवभ० संखे०गुणवभ० । रिद० शिय० उदी० शिय० जहण्णा । एवं रदीए । एवमरिद-सोग० ।

६२७. भय० जह० द्विदिउदी० मिच्छ०-इत्थिवेद०-पुरिसवे०-हस्स-गिद०
 छणंताणु०भंगो । सोलमक० मिया उदी० । जिद उदी०, जहण्णा वा अजह० वा ।

जघन्य या श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता एक समय श्रिधिकसे लेकर पल्यके श्रसंख्यातवें भाग श्रिधिक तककी श्रजपन्य स्थितिका उदीरक है। भय श्रीर जुगुष्माका कदाचित उदीरक है। यदि उदीरक हैं वित्त नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक हैं। श्रीवद श्रीर पुरुषवदका कदाचित् उदीरक हैं। यदि उदीरक हैं। यदि उदीरक हैं। हास्य श्रीर पुरुषवदका उदीरक हैं। हास्य श्रीर रितका नियमसे असंख्यातवें भाग श्रिषक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। हास्य श्रीर रितका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे असंख्यातवें भाग श्रिषक श्रजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। इसीप्रकार पन्द्रह कपायकी जघन्य स्थिति उदीरणः को मुख्य कर सन्निकर्प जानना चाहिए।

१६२४. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवक मिध्यात्वका भग श्रमन्तानुबन्धीके समान है। सोलह कषाय, भय, जुगुप्मा ख्रार चार नाकपायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यानगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार पुरुष वेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६ ६२६. हास्यकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय स्रोर जुगुष्माका भंग स्त्रीवेदके समान है। स्त्रीवेद स्रोर पुरुषवेदका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे स्रमंख्यातवें भाग स्राधिक या संख्यातगुणी र्द्राधक द्विस्थानपतित स्रज्ञचन्य स्थितिका उदीरक है। रितका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार रिवकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए तथा इसीप्रकार स्रगति स्रोर शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्प जानना चाहिए।

१६२७. भयकी जघन्य स्थितिके उद्रीक जीवके मिश्यात्व, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य श्रीर श्ररतिका भंग श्रनन्तानुबन्धीके समान है। सोलह कषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि श्रजघन्य स्थितिका उदीरक है तो नियमसे जहराणादो श्रजहण्णा बिट्टाणपदिदा श्रसंखे०भागन्भ० संखे०भागन्भिह्या वा । दुगुं छा० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० जहण्णा । एवं दुगुं छा० ।

६२८. एवं भवण०-वाणवें०। णविर सम्म० सम्मामिच्छत्तभंगो।

- ६ ६२९. जोदिसि० मिच्छ०-सम्मत्त-सम्मामि०भवणवासियभंगो । अणंताणु०-कोघ० जह० द्विदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी० णिय० अजह० असंखे०गुणुडमहियं। तिण्हं कोघाणं णिय० उदी० णिय० अजह० असंखे०भाग्डम० । अट्टणोक० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अज० असंखेजभाग्डम० । एवं तिण्हं कसायाणं।
- १६३०. अपचक्खाणकोह० जह० द्विदिउदी० दोण्हं कोधाणं णिय० उदी०
 णिय० जहण्णा । अद्वरणोक० मिया उदी० । जिद उदी०, शिय० जहण्णा । सम्म०
 णिय० उदी० णिय० अज० संखे०गुणन्म० । एवमेकारसक० ।
- ६३१. इस्सम्म जह० द्विदिउदी० बारसक०-भय-दुगुंछा०-इत्थिवे०-पुरिसवे०
 सिया उदी० । जदि उदी०, ि्यय० जहण्णा । सम्म० अपचक्खाएाभंगो । रदिं िणय०
 उदी० िणय० जहण्णा । एवं रदीए । एवमरदि-सोग० ।

असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातवें भाग अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य स्थितिका उदीरक है। जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है ता नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाको सुख्य कर सन्निकर्प जानना चाहिए।

९६२८ इतीप्रकार भवन्वासी श्रीर व्यन्तर देवीमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्तका भंग सम्याग्मध्यात्वके समान है।

६ ६२८. ज्योतिर्धा देवों में मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्निथ्यात्वका भंग भवनवासियों के समान है। इनमें अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे अमंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। तीन क्रोधोंका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। आठ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक हैं। यदि उदीरक हैं तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक हैं। इसीप्रकार तीन कषायोंकी जघन्य स्थिति उदीरणाको मुख्य कर सिक्षकर्ष जानना चाहिए।

६३०. अप्रत्याख्यान कोधकी जपन्य स्थितिका उदीरक जीव दो कोधोका निययसे उदीरक हैं जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक हैं। आठ नोकपायोंका कदाबिन उदीरक हैं। यदि उदीरक हैं तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक हैं। सम्यक्त्वका नियमसे उदीरक हैं जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक हैं। इसीप्रकार ग्यारक कपायोंकी जघन्य स्थितिका उदीरक हैं। इसीप्रकार ग्यारक कपायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सिन्नकर्प जानना चाहिए।

§ ६३१ हास्यकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कपाय, भय, जुगुप्सा, स्नीवंद श्रोर पुरुपवेदका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसके सम्यक्तवका भंग श्रप्रत्याख्यानके समान है। रितका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार रितकी जयन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सिन्नकर्प

- ६३२. भय० जह० द्विदिउदी० बारसक०-सत्तरणोक० सिया उदी०। जिद उदी०, णिय० जहण्णा। सम्मत्तं इस्सभंगो। एवं दुगुंछाए।
- ६३३. इत्थिवे० जह० द्विदिउदी० बारसक०-छण्णोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। सम्ब० हस्सभंगो। एवं पुरिसवे०।
- ६ ६३४. सोहम्मीमाणेसु मिच्छ०-सम्मामि० देवोघं। सम्म० जह० द्विदिउदी० बारसक०-छण्णोक० मिया उदी०। जदि० उदी०, णिय० ख्रजह० विद्वाणपदिदा संखे०भागब्भ० संखे०गुणब्भहिया वा। एवं पुरिसवे०। एवरि णिय० उदी०।
- ६३५. अर्णताणु०कोघ० जह० द्विदिउ० मिन्छ० णिय० उदी० णिय० अजह० अमंखे०गुणन्म० । तिण्हं कोघाणं पुरिसवे० णिय० उदी० णिय० अज० संखे०गुणन्म० । छण्णोक० मिया उदी० । जिद उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणन्म०। एवं तिण्हं कसायाणं ।
 - ६६३६. त्रपचक्खाणकोह० जह० द्विदिउदी० दोण्हं कोधाणं पुरिसवे० शिय०

जानना चाहिए। इसीप्रकार ऋरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

- ६६३२. भगकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बाग्ह कपाय और सात नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है ता नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसके सम्यक्तका भंग हास्यके समान है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जयन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सिन्नकर्ष जानना चाहिए।
- ६३३. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कपाय श्रीर छह नोकषायका कदाचित् उदीरक हैं। यदि उदीरक हैं तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक हैं। इसके समयक्तका भंग हास्यके समान है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सिन्नकर्प जानना चाहिए।
- § ६३४. सीयर्म और ऐशानकल्पमें मिथ्यात्त्र श्रीर सम्यग्निथ्यात्त्रका भंग सामान्य देवांके समान है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कथाय और छह नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसं संख्यातवें भाग श्रधिक या संख्यातगुग्गी श्रधिक द्विस्थानपतित श्रज्यन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसका नियमसे उदीरक है।
- ६ ६२५. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। तीन क्रोध और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। हि लाकपायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार तीन कषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाको सुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।
 - § ६३६. श्रप्रत्याख्यान क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव दो क्रोध श्रौर पुरुषवेदका

उदी० शिय० जहण्णा । छण्णोक० सिया उदी० । जदि उदी०, शिय० जहण्णा । एवमेकारसक० ।

५ ६३७. पुरिसवे० जह० द्विदिउदी० बारमक०-छण्णोक० सिया उदी० । जिद उदी०, णिय० जहण्णा ।

§ ६२८. इत्थिवे० जह० द्विदिउदी० सम्म० णिय० उदी० णिय० अज० असंखे०गुणब्म०। बारसक०-छण्णोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अज० संखे०गुणब्म०।

६३९. हस्सस्स जह० द्विदिउ० बारसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी० । जिद्
 उदी०, खिय० जहण्णा । पुरिसवे०-रिद० खिय० उदी० खिय० जहण्णा । एवं
 रदीए । एवमरिद-सोग० ।

§ ६४०. भय० जह० द्विदिउदी० बारसक०-पंचणोक० सिया उदी०। जिद उदी०, णिय० जहण्णा । पुरिसवे० शिय० उदी० शिय० जहण्णा । एवं दुर्गुछाए ।

§ ६४१. सणक्कुमारादि जाव णबगेवजा त्ति एवं चेव । एवरि ∫इत्थिवेदो णितथ । पुरिसवे० धुवो कायव्वो । ऋणुद्दिसादि जाव सव्वद्वा त्ति सम्म०-बारमक०-

नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार ग्यारह कषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६६३७. पुरुपवेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कपाय श्रीर छह नोकपायका कदाचित उदीरक हैं। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है।

§ ६३८. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सम्यक्त्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। बारह कपाय और छह नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है।

§ ६३६. हास्यकी जघन्य स्थितिका उद्दीरक जीव बारह कपाय, भय श्रीर जुगुप्साका कदाचित् चदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। पुरुषवेद श्रीर रितका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार रितकी जघन्य स्थितिउदीरण।को मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार श्रारति श्रीर शोककी जघन्य स्थितिउदीरण।को मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६४०. भयकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय श्रीर पाँच नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरण।को मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६४१. सनत्कुमारकल्पसे लेकर नौ मैवेयक तकके देवोंमें इसीप्रकार सिन्नकर्ष है। इसनी विशेषता है कि इनमें स्विवेदकी उदीरणा नहीं है। पुरुषवेदका ध्रुव करना चाहिए।

सत्तरणोकः व्यवनेवञ्जभंगो । एवं जाव ।

् ६४२. णाणाजीवेहि भंगितचओ दुविहो — जह० उक०। उकस्से पयदं। दुविहो णि० — त्रोघेण त्रादेसेण य। श्रोघेण सत्तावीसाए पयडी० उक०-त्ररणुक० द्विदिउदी० तिण्णि भंगा। सम्मामि० उक०-त्र्रणुक० द्विदिउदी० श्रष्ट भंगा ⊏। सन्व-गोरइय-सन्वतिरिक्ख-सन्वमणुस-सन्वदेवा ति जात्रो पयडीत्रो उदीरिजंति तासिमोघं। णवरि मणुमञ्जपञ्ज० चउवीसपय० उक०-त्र्रणुक० द्विदिउदी० श्रष्ट भंगा। एवं जाव०।

६ ६४३. जहएएए पयदं । दुविहो णि० — श्रोघेण श्रादेसेए य । श्रोघेण मिच्छ०-सम्म०-चदुसंजल०-तिण्णिवे०-चदुणोक० जह० श्रजह० द्विदिउदी० तिण्णि भंगा । सम्मामि० जह० श्रजह० द्विदिउदी० श्रद्ध भंगा । वारमक०-भय-दुगुछा जह० श्रजह० द्विदिउदी० णिय० श्रतिथ । सन्त्रणेरइय-सन्त्रपंचिदियतिरिक्ख-मन्त्रमणुस-सन्त्रदेवा ति उक्कस्मभंगो ।

६४४. तिरिक्खेसु सोलमक०-भय-दुगुंछा० जह० अजह० द्विदिउदी० णिय० अत्थि । दंसणातिय-सत्तरणोक० श्रोघं । एवं जाव० ।

१६४४. भागाभागाणु० दुविहो—जह० उक्त०। उक्तस्से पयदं। दुविहो

श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय श्रौर सात नोकपायका भंग नौ प्रैवेयकके समान है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

६६४२, नाना जीवोंकी अपेत्ता भंगविचय द। प्रकारका है—जवन्य श्रीर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर आदेश । श्रोवस सत्ताईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रातृत्कृष्ट स्थितियोंक उदीरक जीवोंके तीन भंग हैं । सम्यागिध्यात्वकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंके आठ भंग हैं । सब नारकी, सब तिर्यव्च, सब मनुष्य श्रीर सब देव जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा करते है उनका भंग श्रोदके समान है । इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपयीप्तकोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रातृत्कृष्ट स्थिति उदीरकोंके श्राठ भंग है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

् ६४३. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे मिध्यात्व, सम्यक्त्व, चार संज्वलन, तीन वेद श्रीर चार नोकषायके जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंके तीन भंग हैं। सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिउदीरकोंके श्राठ भंग है। बारह कषाय, भय श्रीर जुगुप्साकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सब मनुष्य श्रीर सब देवोमें उत्कृष्ठके समान भंग है।

§ ६४४. तिर्यव्नोंमें सोजह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। तीन दर्शनमोहनीय और सात नोकषायका भग ओचके समान है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

६४४. भागाभागानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकर्ण है ।

णि० — स्रोघेण स्रादेसेण य । स्रोघेण चउवीमाए पयडी० उक्तस्सिट्टिदिउदी० सन्वजी० केव० ? स्रणंतभागो । स्रणुक्क० स्रणंता भागा । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिये०-पुरिसवे० उक्क० द्विदिउदी० सन्वजी० केव० ? स्रसंखे०भागो । अणुक्क० द्विदिउदी० स्रसंखेजा भागा । एवं तिरिक्खा० ।

१६४६. सन्त्रणेरइय-सन्त्रपंचिं०तिरिक्ख-मणुसश्चपञ्च०-देवगदिदेवा भवणादि जाव श्रवराजिदा त्ति सन्त्रपय० उक्क०द्विदिउदी० सन्त्रजी० केव० १ श्रसंखे०० भागो । श्रणुक्क० श्रमंखेजा भागा ।

६४७. मणुसेसु चउवीसपय० उक्क० द्विदिउ० असंखे०भागो । अणुक्क०द्विदिउदी० असंखेजा भागा । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवेद०-पुरिसवेद० उक्क०
द्विदिउदी० संखे०भागो । अणुक्क० संखेजा भागा । एवं मणुसपज्ञ० । णविर संखेजं कायव्वं । इत्थिवेदो णित्थ । एवं चेव मणुसिणी० । णविर पुरिसवे०-णवुंस० णित्य । सव्बद्घे वीसं पय० उक्क०द्विदिउदी० संखे०भागो । अणुक्क० संखेजा भागा । एवं जाव० ।

६६४८. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—श्रोघेण श्रा**देसेण** य। श्रोघेण

निर्देश दो प्रकारका है — श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसं चोबीस प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीबोके कितने भागप्रमाण है ? श्रानन्तवं भागप्रमाण हैं। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव श्रानन्त बहुभागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व, स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीबोके कितने भागप्रमाण हैं ? श्रासंख्यातवें भागप्रमाण है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार तिर्यव्चोंमें जानना चाहिए।

१६४६. सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य श्रपर्याप्त, देवगतिके देव श्रौर भवनवासियोंसे लेकर श्रपराजित कल्पतकके देवांमे सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोके कितने भागप्रमाण हैं ? श्रसंख्यानवें भागप्रमाण हैं। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाण हैं।

\$ ६५७. मनुष्योमं चौबीस प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्तकों में जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए। इनके स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। इसीप्रकार मनुष्यिनियोमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें पुरुपवेद श्रीर स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। सर्वार्थितिके विशेषता है कि इसीप्रकार समुष्यिनियोमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें पुरुपवेद श्रीर स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। सर्वार्थितिके उदीरक जीव संख्यात स्थानमाण हैं तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है। इसीप्रकार श्रमाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

ु ६४८. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर आदेश। श्रोघसे

मिच्छ०-चदुमंज०-णवुंस०-चदुणोक० जह० द्विदिउ० मन्त्रजी० अर्णतभागो । अज० अर्णता भागा । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिने०-पुरिसने०-बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० असंखे०भागो । अजह० असंखेआ भागा । मन्त्रणेर०-सन्वपंचि०तिरिक्ख०-सन्व मण्य-सन्त्रदेना ति उक्कस्मभंगो ।

ः ६४९. तिरिक्खेसु मिच्छ०-णवुंसय०-चदुणोक० जह० श्रगांतभागो । श्रजह० अगांता भागा । सम्म०-सम्मामि०-सोलमक०-इत्थिवेद-पुरिसवेद-भय-दुगुंछा० जह० श्रसंखे०भागो । श्रजह० श्रसंखेजा भागा । एवं जाव० ।

६ ५०. परिमाणं दुविहं—जह० उक्त० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—श्रोधेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० द्विदिउदी० केत्तिया ? असंखेजा । श्रणुक्क० केत्ति० ? अर्णता । मम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पृग्मिवे० उक्क० अणुक्क० द्विदिउदी० केत्ति० ? अमंखेजा ।

इ ६५१. मन्वर्णरइय-सन्वर्पचिदियतिरिक्ख-मणुमश्रपञ्ज ०-देवगदिदेवा भवणादि जाव सहस्सारे ति सन्वपयडी० उक्त० श्रणुक्त० केत्तिया ? श्रमंखेज्जा । मणुसेसु चउवीमं पयडीणं उक्त० द्विदिउदी० संखेज्जा । श्रणुक्त० केत्ति० ? अमंखेज्जा । मिण्यात्व, चार संज्वलन, नपुंसकवेद श्रीर चार नोकपायकी जचन्य स्थितिकं उदीरक जीव सब जीवोंके श्रनन्तवें भागप्रमाण है । श्रज्ञचन्य स्थितिकं उदीरक जीव श्रनन्त बहुभागप्रमाण हैं । सम्यक्त्व, सम्याग्मण्यात्व, म्त्रांवेद, पुरुपवंद, बारह कपाय, भय श्रीर जुगुप्साकी जचन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाण है । श्रज्ञचन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सब मनुष्य श्रीर सब देवोमे भंग उत्कृष्टके समान है ।

६४८. तिर्यञ्चोंमं मिध्यात्व, नपुंसकवेद और चार नोकपायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रनन्त बहुभागप्रमाण् हैं। श्रजचन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रनन्त बहुभागप्रमाण् है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, सोलह कषाय, स्त्रीवेद, पुरुपवेद, भय और जुगुष्साकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाण् हैं। श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात बहुभागप्रमाण् हैं। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६५०. परिमाण दो प्रकारका है—जघन्य श्रोर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—श्राघ श्रोर श्रादेश । श्रोघसे मिध्यात्व, सोलह कपाय श्रोर सात नोकषायकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रासंख्यात हैं । श्रानुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रासंख्यात्व, स्त्रीवेद श्रोर पुरुषवेदकी उत्कृष्ट श्रीर श्रानुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रासंख्यात्व हैं ।

§ ६५१. सब नारकी, सब पठ्चेन्द्रिय तिर्यव्च, मनुष्य श्रापर्थाप्त, देवगतिके देव श्रीर भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । मनुष्योंमें चौबीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सम्यक्त्व,

सम्म०-सम्मामि०-इत्थि-पुरिस० उक्क० त्रणुक्क० केत्ति० १ संखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सन्बद्धदेवेसु सन्बपय० उक्क० त्रणुक्क० केत्ति० १ संखेज्जा । त्र्राणदादि जाव त्र्यवराजिदा ति सन्बपय० उक्क० केत्ति० १ मंखेज्जा । त्र्रणुक्क० केति० १ श्रसंखेजा । एवं जाव० ।

६ ५२. जहण्णए पयदं । दुविहो णि० — ख्रोघेण ख्रादेसेण य । ख्रोघेण मिच्छ०-चदुणोक०, जह० द्विदिउदी० केत्ति० ? असंखेजा । अजह० द्विदिउदी० केत्ति० अणंता । णवुंप०-चदुसंजल० जह० द्विदिउदी० केत्ति० ? संखेजा । अजह० केत्ति० ? अणंता । सम्म०-इत्थिवे०-पुरिम० जह० द्विदिउदी० केत्तिया ? संखेजा । अजह० असंखेजा । सम्मामि० जह० अजह० केत्ति० ? असंखेजा । वारसक०-भय-दृगुंद्या० जह० अजह० द्विदिउदी० केत्ति० ? अणंता ।

६ १२३. आदेसेण णेग्इय० मन्त्रपय० जह० अजह० केति० ? असंखेजा। णत्रित्सम्म० जह० केति० ? संखेजा। एवं पढमाए। बिदियादि जात्र छट्टि ति दंगणतिय० जह० अजह० असंखेजा। सेसपयडी जह० केतिया ? संखेजी। अजह० के० ? असंखेजा। सत्तमाए सन्त्रपय० जह० अजह० असंखेजा।

सम्याग्मध्यात्व, स्त्रीवेद ख्रोर पुरुषवेदकी उत्कृष्ट ख्रोर धनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात है। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी ख्रोर सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट ख्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात है। श्रानतकल्पसे लेकर श्रपराजिन विमानतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रसंख्यात है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६५२. जयन्यका प्रकरण हैं। निर्देश दो प्रकारका है— श्रोघ श्रांर श्रादेश। श्रांघसे मिध्यात्व श्रोर चार नाकषायकी जयन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? श्रमंख्यात है। श्राज्ञयन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? श्रमन्त हैं। नपुंसकवेद श्रोर चार संज्ञ्ञलनकी जयन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। श्राज्ञयन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? श्रमन्त है। सम्यक्त्व, स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। श्राज्ञयन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। सम्यग्मध्यात्वकी जयन्य श्रोर श्राज्यात हैं। सम्यग्मध्यात्वकी जयन्य श्रोर श्राज्यात हैं। बारह कपाय, भय श्रोर जुगुप्साकी जयन्य श्रोर श्राज्यात है। बारह कपाय, भय श्रोर जुगुप्साकी जयन्य श्रोर श्राज्यात है। क्षायह कपाय, भय श्रोर जुगुप्साकी जयन्य श्रोर श्राज्यात है। क्षायह कपाय, भय श्रोर जुगुप्साकी जयन्य श्रोर श्राज्यात है। क्षायह कपाय, भय श्रोर जुगुप्साकी

६५३. आदेशसं नारिकयोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रसंख्यात हैं । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । इसीप्रकार प्रथम पृथिकीमें जानना चाहिए । दूसरीसे लेकर छटी पृथिवी तकके नारिकयोंमें तीन दर्शनमोहनीयकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात हैं । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । स्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने सें स्थानके नारिकयोंमें सब

१. द्या॰प्रती श्रसंखेज्जा इति पाटः।

- ६५४. तिरिक्षेषु सोलमक०-भय-दुगुं छा० जह० अजह० केति० ? अणंता। मिच्छ०-णवुं स०-चदुणोक० जह० केति० ? असंखेआ। अजह० केति० ? अणंता। मम्म० श्रोघं। मम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० अजह० केति० ? असंखेआ। पंचिदियतिरिक्खतिय० सम्म० श्रोघं। सेमपयडी० जह० अजह० केति० ? असंखेआ। णवरि पज्जन० इत्थिवे० णिरथ। जोणिणीसु पुरिम०-णवुं स० णिरथ। सम्म० सम्मामि०भंगो। पंचिदितिरिक्खअपज्ञ०-मणुसअपज्ञ०-भवण०-वाणवें० सन्वपयडी० जह० अजह० संखेआ।
- १६४४. मणुसेसु मिच्छ०-णवुंस०-चदुसंज०-चदुणोक० जह० संखेआ। अज० केत्ति० १ असंखेआ। सम्म०-समामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० अजह० मंखेआ। बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० अजह० असखेआ। मणुसपअ०-मणुसिणी-सन्बद्घदेवेसु सन्वपय० जह० अजह० संखेआ।
- \$ ६५६. देवेसु सम्म० श्रोघं । संसपय० जह० श्रजह० केतिया ? श्रमंखेजजा । जोदिमियादि जाव णवगेवज्जा त्ति दंसणितयस्स देवोघं । सेसपय० प्रकृतियोंकी जवन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात हैं।
- § ६५४. तिर्यव्यों से सोलह कषाय, भय श्रोर जुगुण्साकी जघन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रमन्त हैं। मिश्यात्व, नपुंसकवेद श्रोर चार नोकपायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रमंख्यात हैं। श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रमंख्यात हैं। सम्यक्तिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रमंख्यात है। सम्यक्तिका भंग श्रोघके समान है। सम्यक्तिधात, म्ब्रांचेट श्रीर पुरुषवेदशी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रमंख्यात है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्यात के सम्यक्त्वका भंग श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रसंख्यात है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्रकोमें म्ब्रोवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा योनिनीतिर्यव्योगें पुरुषवेद श्रोर नपुंमकवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा श्रमे सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिध्यात्वके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्य श्रपर्याप्त, मनुष्य श्रपर्याप्त, भवनवासी श्रीर व्यन्तर देवामें सब प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं।
- १६५५ मनुष्योंमें मिथ्यात्व, नपुंसकवेद, चार संज्वलन श्रौर चार नोकषायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं। श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? श्रसंख्यात हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद श्रौर पुरुपवेदकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं। बारह कषाय, भय श्रौर जुगुष्साकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी श्रीर सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं।
- ६६५६. देवोंमे सम्यक्त्वका भंग स्त्रोचके समान है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्त्रोर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रसंख्यात हैं। ज्योतिषियोंसे लेकर नो प्रैवेयक तकके देवोंमें तीन दर्शनमोहनीयका भंग सामान्य देवोंके समान है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य

जह० केति० ? संखेज्जा । श्रजह० केति० असंखेज्जा । एवरि जोदिसि० सम्म० जह० श्रजह० द्विदिउदी० केतिया ? श्रमंखेज्जा । श्रणुहिसादि श्रवराजिदा ति सम्म०-बारसक०-सत्तरणोक० जह० संखेज्जा । श्रजह० श्रसंखेज्जा । एवं जाव० ।

६४७. खेत्तं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ग्रोघेण ग्रादेसेण य । ग्रोघेण मिच्छत्तं-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० द्विदिउदी० लोगस्स श्रसंखे०भागे । श्रणुक्क० सव्वलोगे । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० उक्क० ग्रणुक्क० लोग० ग्रसं०भागे । एवं तिरिक्ला० । सेसगदीसु सव्वपय० उक्क० श्रणुक्क० लोग० ग्रसंखे०भागे । एवं जाव० ।

§ ६४८. जहरूराए पयदं। द्विहो णि०—श्रोघेरा श्रादेसेरा य। ओघेरा

स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। श्राज्ञघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इतनी विशेषता हैं कि ज्योतिषियों सम्यक्त्वकी जघन्य श्रीर अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। अनुदिशसे लेकर अपराजित विमानतकके देवों से सम्यक्त्व, बारह कपाय और मात नोकपायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

६६५७. चेत्र दो प्रकारका है—जधन्य श्रोर उत्कृष्ट । उत्कृष्ट्या प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—शोव श्रोर श्रादेश । श्रोवमे मिध्यात्व, मोलह कपाय श्रोर सात नोकषायों की उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंका चेत्र लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण है । श्रमुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंका चेत्र सर्व लोकप्रमाण है । सम्यवत्व, सम्यग्मध्यात्व, स्त्रीवेद श्रीर पुरुपवेदकी उत्कृष्ट श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंका चेत्र लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार तिर्यव्योमे जानना चाहिए । शेष गतियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका चेत्र लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार श्रमाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

विश्रोपार्थ — जं। संज्ञी पञ्चेन्द्रिय मिण्यादृष्टि पर्याप्त जीव उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करते हैं व ही अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार मिण्यात्वादि प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करते हैं। यतः इनका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अतः वह उक्तप्रमाण कहा है। इन प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा एकेन्द्रियादि जीवोंमें भी होती है और उनका क्षेत्र सर्व लोक है, अतः इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण कहा है। रहीं सम्यक्त्व, सम्यिग्मण्यात्व, स्त्रीवंद और पुरुपवेद ये चार प्रकृतियाँ सो इनकी उदीरणा यथा-याय पञ्चेन्द्रिय जीवोंमें ही सम्भव है, यतः इन जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अतः उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

१६४८ जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है-श्रोघ और आदेश। श्रोघसे

१. ता०-श्रा०प्रत्योः मिच्छत इति पाटः नास्ति ।

श्रोघेण मिच्छ०-चदुसंज०-णवुंस०-चदुणोक० जह० द्विदिउदी० लोग० श्रसंखे०-भागे । श्रजह० सव्वलोगे । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिमवे० जह० श्रजह० लोगस्म असंखे० । बारसक०-भय-दुगुं० जह० लोगस्स संखेजजिदभागे । श्रजह० सव्बलोगे ।

६५९. तिरिक्खेसु मिच्छ०-णवुंस०-चदुणोक० जह० लोगस्य श्रसंखे०-भागे। श्रजह० मन्त्रलोगे०। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० जह श्रजह० लोग० श्रमंखे०भागे। सोलमक०-भय-दुगुंछा० जह० लोग० संखे०भागे। श्रजह०

मिण्यात्व, चार संज्वलन, नपुंसकवेद और चार नंकिपायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोका चेत्र लोककं असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोका चेत्र सर्व लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य और अजन्वय स्थितिके उदीरकोका चेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। बारह कषाब, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिके उदीरकोका चेत्र लोकके अरांख्यातवे भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोका चेत्र सर्व लोकप्रमाण है।

विशेषार्थ — मिध्यात्वकी उपशमसम्यक्तके द्यामसुख जीवक, चार संज्वलन और नपुंसकवेदकी गुण्स्थान प्रतिपन्न जीवके तथा चार नोकषायोकी जो हतसमुत्पत्तिक बादर एकेन्द्रिय जीव सर्जी पञ्चे निद्रयोमे उपन्न होता है उसके यथास्थान अपने-अपने स्वामित्वके अनुमार जयन्य रियित उदीरणा होती है, यतः ऐसे जीवोका चेत्र लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है, अतः उक्त प्रकृतियोकी जयन्य स्थितिके उदीरक जीवोका चेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। इनकी अजयन्य स्थितिके उदीरक जीवोका चेत्र सर्व लोकप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। सम्यक्तव आदि चार प्रकृतियोकी जयन्य और अजयन्य स्थितिकी उदीरणा अपने-अपन स्वामित्वके अनुसार पञ्चे निद्रय जीव ही करते है, यत इनका चेत्र लोकके असंख्यातवे भागप्रमाण है, अतः उक्त प्रकृतियोकी जयन्य और अजयन्य स्थितिके उदीरकोका चेत्र भा उक्तप्रमाण कहा है। बारह कपाय, भय और जुगुष्साकी जयन्य स्थितिके उदीरकोका चेत्र भा उक्तप्रमाण कहा है। बारह कपाय, भय और जुगुष्साकी जयन्य स्थितिके उदीरकोका चेत्र जीव करते है और इन जीवोका चेत्र लोकके सख्यातवे भागप्रमाण है, अतः उक्त प्रकृतियोकी जयन्य स्थितिके उदीरकोका चेत्र उक्तप्रमाण कहा है। इनकी अजयन्य स्थितिके उदीरकोका चेत्र सर्व लोकप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इसीप्रकार गितमार्गणाके सब मेदांम अपने अपने स्वामित्वको जानकर चेत्र घटित कर लेना चाहिए। सुगम होनेसे यहाँ निर्देश नहीं कर रहे हैं।

६५८. तिर्यक्रोमे मिण्यात्व, नपुं सकवेद श्रीर चार नोकपायोकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवोका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं। श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीवोका चेत्र सर्व लोकप्रमाण हैं। मन्यक्त्व, सन्यिमण्यात्व, स्वीवेद श्रीर पुक्रपवेदकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीवोका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। सोलह कपाय, भय श्रीर जुगुत्साकी जघन्य स्थितिक उदीरक जीवोका चेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। श्रजघन्य

१. भा०प्रती श्रमंखेञ्जदिभागे इति पाठः।

मन्त्रलोगे । सेसगदीसु सन्त्रपय० जह० श्रजह० लोग० श्रमंखे०भागे । एत्रं जात्र० ।

१६०. पोमणं दुविहं—जह० उक्त०। उक्तस्से पयदं। दुविहो णि०— श्रोघेण श्रादेसेण य। श्रोघेण मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक० उक्क० द्विदिउदी० लोग० श्रसंखे०भागो श्रद्ध-तेरहचोइस०। श्रणुक० सव्वलोगो । सम्म०-सम्मामि० उक्क० श्रणुक० लोग० श्रमंखे०भागो श्रद्धचोइम०। इत्थिवे०-पुरिसवे० उक्क० लोगस्म श्रसंखे० श्रद्धचोइस०। श्रणुक० लोग० श्रसंखे०भागो श्रद्धचो० सव्वलोगो वा। णवुंसय० उक्क० द्विदिउदी० लोग० श्रसंखे०भागो तेरहचोइम०। श्रणुक्क० सव्वलोगो।

स्थितिके उदीरक जीवोंका त्रेत्र सर्व लोकप्रमाण है। रोष गतियोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंका त्रेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६६०. स्पर्शन दो प्रकारका है—ज्ञाचन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेदा निर्देश दो प्रकारका है—आव और आदेश । आधिस मिध्यात्व सोलह, कपाय और छह नोकषायकी उत्कृष्ट स्थितिक उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम तरह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिक उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । सम्यक्त्व और अनुत्कृष्ट स्थितिक उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रिवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिक उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रिवेद लोकके असख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम तरह भागप्रमाण चेत्रका रपर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने सर्व लाकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है ।

विशेषार्थ—जो संज्ञी पख्नेन्द्रिय पर्याप्त मिध्यादृष्टि जीव मिध्याद्व श्रीर सोलह क्षायका उत्कृष्ट स्थित बन्धकर एक श्राविल काल बाद उक्त कमोंकी उदीरणा करते हैं उनके उक्त कमोंकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणा होती हैं। यतः ऐसे जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोक श्रे श्रमंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर श्रतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ श्रीर कुछ कम तेरह भागप्रमाण पाया जाता है, श्रतः उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन उक्तप्रमाण कहा है। इनकी अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरकोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण कहा है। इह नोकषायोंकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरकोंका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण कहा है। छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंकी श्रपेत्ता भी स्पर्शन उक्त प्रकारसे घटित कर लेना चाहिए। स्त्रामित्व सम्बन्धि विशेषता स्वामित्व श्रनुयोगद्वारसे जान लेनी चाहिए। यतः वेदकसम्यग्दृष्ट श्रीर सम्यग्मिध्यादृष्टिका वर्तमान स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर श्रतीत स्पर्शन श्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण है, श्रतः सम्यग्नत्व श्रीर श्रन्तित स्पर्शन उक्तप्रमाण कहा

- ६६१. आदेसेण रोग्इय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तरोक० उक्क० अणुक० लोग० असंखे०भागो छचोइस० । सम्म०-सम्मामि० उक्क० अणुक० खेत्तं। एवं विदियादि सत्तमा ति । एविर सग्योसएा कायव्वं । पढमाए खेतं।
- ५ ६६२. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरिद-सोग०-भय-दुगुंछा०
 उक्क० द्विदिउदी० लोग० असंखे०भागो छचोइस० । अणुक्क० सन्वलोगो । हस्म-रिद०
 उक्क० द्विदिउदी० लोग० असंखे०भागो । अणुक्क० सन्वलोगो । एविमित्थिवे०-पुरिसवे०।
 णविर अणुक्क० लोग० असंखे०भागो सन्वलोगो वा । सम्म० उक्क० द्विदिउदी०

६६१. त्रादेशसे नारिकयों में मिथ्यात्व, सोलह कषाय श्रीर सात नाकषायोकी उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीक चौदह भागोंमे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पशन किया है। सम्यवस्त्र श्रीर सम्यिग्भिध्यात्वकी उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इसीप्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवीतक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-श्रपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहिली पृथिवीमे चेत्रके समान भंग है।

६६२. तिर्यक्रोंमे मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय और जुगुण्याकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रयनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने सब लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। हास्य और रितकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने सब लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार स्थितेद और पुरुषवेदकी अपेता स्पर्शन जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें

है। खीवेद और पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा श्रपने स्वामित्वके श्रनुसार मनुष्य, तिर्यक्ष श्रीर देवगतिके जीव करते हैं। यतः इनका वर्तमान स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें मागप्रमाण श्रीर श्रतीत स्पर्शन त्रसनालीके चीदह भागोंमेंसे कुछ श्राठ भागप्रमाण ही बनता है, श्रतः इनकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उक्त प्रमाण स्पर्शन कहा है। किन्तु इन कर्मोंकी श्रनुत्कृष्ट स्थिति-उदीरणाकी श्रपेत्ता विचार किया जाता है तो उक्त स्पर्शनके साथ सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन भी बन जाता है, श्रतः इन कर्मोंकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चीदह भागोंमेसे कुछ कम श्राठ भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण कहा है। नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा श्रपनं स्वामित्वके श्रनुसार यतः वारों गतिके जीव करते हैं, श्रतः इस प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिउदीरकोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर श्रतीत स्पर्शन त्रसनालीके चीदह भागोमेसे मध्यलोकसे नीचे छह श्रीर उत्पर सात इसप्रकार कुछ कम तेरह भागप्रमाण बननेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। नपुंसकवेदकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सर्व लोकमें पाये जाते हैं, इसलिए वह सर्व लोकप्रमाण कहा है। श्रागे चारो गतियो श्रीर उनके श्रवान्तर भेदामे स्पर्शनका विचार श्रपने श्रवामित्व श्रीर स्पर्शनको जान कर घटित कर लेना चाहिए। सुगम होनेसे उसका हमने श्रवगसे निर्देश नहीं किया है।

सेतं । अणुक्क वोग विस्ति असंसे अभागो खचोहस । सम्मामि खेतं । एवं पंचिदिय-तिरिक्खितिए । णविर जिम्ह सन्वलोगो तिम्ह लोग विश्वसंसे अभागो सन्वलोगो वा । पज्जत इत्थिवेदो णित्थ । जोणिणीसु पुरिसवे ०-एग्वंम ० णित्थ । पंचिदियतिरिक्ख-अपज्ञ ०-मणुस अपज्ञ ० सन्वपय ० उक्क ० द्विदिउदी ० लोग ० असंसे ० भागो । अणुक्क ० लोग ० असंसे ० भागो सन्वलोगो वा ।

§ ६६३. मणुसतिए सम्म०-सम्मामि० खेत्तं । सेसपय० उक्क० खेत्तं । श्रणुक्क० लोग० श्रसंखे०भागो सन्त्रलोगो वा ।

६६४. देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक० उक० अणुक० द्विदिउदी० लोग० असंखे०भागो अष्ठ-एवचोद०। सम्म०-सम्मामि० उक० अणुक० द्विदिउदी० लोग० असंखे०भागो अष्ठचोद०। इत्थिवे०-पुरिसवे० उक० लोग० असंखे०भागो अष्ठचोद्म० दे०। अणुक० लोग० असंखे०भागो अष्ठ-एवचोद्दस० दे०। एवं सोहम्मीसाणे। भवण०-वाणवें०-जोदिसि० एवं चेव। एवरि सग्पोसणं।

भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण तेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन तेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण तेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यन्मिण्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्परान तेत्रके समान है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्षत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशोपता है कि जहाँ सर्व लोक कहा है वहाँ लोकका असंख्यातवां भाग और सर्व लोक कहना चाहिए। पर्याप्तकोंमें क्विवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनियोंमे पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्ष अपर्याप्त और सनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण तेत्रका स्पर्शन किया है।

६ ६६३. मनुष्यत्रिकमे सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्निध्यात्वकी उत्कृष्ट श्रीर श्रानुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन सेत्रके समान है। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन सेत्रके समान है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रासंख्यातवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण केन्नका स्पर्शन किया है।

\$ ६६४. देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट धौर अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ और नौ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्निभ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। खीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ और नौ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सौधर्म और ऐशानकल्पमें जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और उयोतिषी देवोंमें इसीप्रकार आनना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनान्त्रपना स्पर्शन कहना चाहिए।

§ ६६४. सणक्कुमारादि सहस्सार ति मन्त्रपयडी० उक्क० ऋणुक्क० द्विदिउदी० लोग० ऋसंखे०भागो ऋद्वचोद०। आणदादि ऋच्चुदा ति सन्त्रपयडी० उक्क० द्विदिउदी० खेत्तं। ऋणुक्क० लोग० श्रसंखे०भागो छचोदस०। उत्ररि खेत्तं। एवं जाव०।

इ ६६६. जहण्णए पयदं। दृविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य। श्रोघेण मिच्छ०चदुसंजल०-एावुंस०-चदुणोक० जह० श्रजह० खेत्रं। णविर मिच्छ० जह० लोग०
श्रसंखे०भागो श्रहचोद्दस०। बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० लोगस्स संखे०भागो ।
श्रजह० सन्वलोगो। सम्म० जह० खेत्रं। श्रजह० लोग० असंखे०भागो श्रहचोद्दस०।
सम्मामि० जह० श्रजह० लोग० श्रसंखे०भागो श्रहचोद्दस०। इत्थिवे०-पुरिसवे०
जह० खेत्रं। श्रजह० लोग० श्रसंखे०भागो श्रहचोद्दस० दे० सन्वलोगो वा।

\$ ६६५. सनत्कुमारकल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी चत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागत्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानतकल्पसे लेकर श्रच्युत कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग-प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। अपर स्पर्शन चेत्रके समान है। इस्राप्रकार श्रनाहारक मार्गणा-तक जानना चाहिए।

§ ६६६. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—भोघ श्रीर आदेश। श्रोघसे मिध्यात्व चार संज्वलन, नपु सकवंद श्रीर चार नाकषायों की जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरकों का स्पर्शन मेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भाग-प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। बारह कषाय, भय श्रीर जुगुष्साकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके संख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने सर्व को श्रमण श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्वर्शन किया है। स्वितके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्वर्शन किया है। स्विवेद श्रीर पुक्षवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्वर्शन किया है। स्विवेद श्रीर पुक्षवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

विश्रोषार्थ-चार संज्वलन और नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा उपशमश्रेणि या चपकश्रेणिमें अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार होती है तथा हास्यादि चारकी जघन्य स्थितिउदीरणा अपने स्वामित्वके अनुसार संज्ञी पक्ष्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंके होती है। यतः इनकी

१, आ०प्रतौ असंखे०भागो इति पाठः।

§ ६६७. श्रादेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० जह० अजह० लोग० असंखे०भागो छचोइस० । सम्म०-सम्मामि० जह० अजह० खेत्तं । एवं

जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन मात्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। तथा इनकी अजधन्य स्थिति उदीरणा एकेन्द्रियादि जीवों के भी होती है, इसिकए इनकी अजधन्य स्थितिके उदीरकोंका सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन प्राप्त होता है। इनकी जघन्य और श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंका चीत्र भी कमसे लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्व लोक है, अतः यहाँ इनकी जचन्य और अजचन्य स्थितिके उदीरकींका स्पर्शन चेत्रके समान कहा है। मिध्यात्व-की अज्ञज्ञज्ञ स्थितिके उदीरकांका स्पर्शन तो उनके त्रेत्रके समान सर्व लोक ही है। मात्र जघन्य स्थितिके उदीरकोंके स्पर्शनमें फरक है। बात यह है कि मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा उपशमसम्यक्त्वके सन्मुख हुन्चा जीव प्रथम स्थितिमें एक समय श्रधिक एक श्रावलिप्रमाए स्थितिके शेष रहनेपर करता है. यतः ऐसे जीवोंका ऋतीत स्पर्शन बसनालीक चौदह भागोंमेंसे कुछ कम त्राठ भागप्रमाण प्राप्त होता है अतः मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके ऋसंख्यातवें भागप्रभाग और ऋतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम त्राठ भागप्रमाण कहा है। बारह कषाय, भय श्रीर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा श्रपने स्वामित्वके अनुसार बादर एकेन्द्रिय जीव करते हैं, यनः इनका स्पर्शन लोकक संख्यातवें भागप्रमाण है, अतः उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन लोकके संख्यातवें भागप्रमाण कहा है। इनकी श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। सम्यक्त्वकी जयन्य स्थिति उदीरणा दर्शनमोहनीयका चपक जीव सम्यक्त्वकी स्थितिके एक समय श्रधिक एक आवित शेप रहनेपर करता है। यतः ऐसे जीवांका स्पर्शन लांकके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है, चेत्र भी इतना ही है, अतः इसे चेत्रके समान कहा है। वेदकसम्यादृष्टियोके स्पर्शनको देखते हुए सम्यक्त्वकी श्रजधन्य स्थितिके उदीरको का वर्तमान स्परीन लोकके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर श्रतीत स्परीन त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है। सम्यग्मिध्यात्वकी उदीरणा सम्यग्मिध्या-दृष्टि जी। करते है, श्रतः उनके स्पर्शनके श्रनुसार सम्यग्गिध्यात्वकी जधन्य श्रीर श्रजधन्य स्थितिके उदीरकोका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है। स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी जघन्य स्थिति उदीरणा उपशामक या ज्ञपकके यथासम्भव हाती है। यतः ऐसे जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान ही होता हं, अतः इनकी जघन्य स्थितिके उद्दीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान कहा है। तथा इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणा तिर्यक्रादि तीन गतिमें भी सम्भव है। इसी तथ्यको ध्यानमें रखकर इनकी श्राजवन्य स्थितिके उदीरकोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग श्रोर अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग श्रौर सर्व लोकप्रमाण कहा है। आगे चारों गतियोंमें और उनके अवन्तिर भेदोंमें अपने अपने स्वामित्वको भौर स्पर्शनको जानकर प्रकृतमें स्पर्शन घटिन कर लेना चाहिए। कोई विशेष न होनेसे यहाँ उसका श्रलगसे निर्देश नहीं किया है।

\$ ६६७. श्रादेशसे नारिकयोंमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय श्रोर सात नोकपायांकी जघन्य श्रोर श्र जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रोर त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्निध्यात्वकी जघन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इसीप्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर § ६६४. सणक्कुमारादि सहस्सार ति मञ्त्रपयडी० उक्क० ऋणुक्क० द्विदिउदी० लोग० ऋसंखे०भागो ऋहचोद०। आणदादि ऋच्चुदा ति सञ्त्रपयडी० उक्क० द्विदिउदी० खेत्तं। ऋणुक्क० लोग० श्रसंखे०भागो छचोदस०। उत्ररि खेत्तं। एवं जाव०।

\$ ६६६. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य। श्रोघेण मिच्छ०चदुसंजल०-एगवुंस०-चदुणोक० जह० श्रजह० खेत्रं। णविर मिच्छ० जह० लोग०
श्रसंखे०भागो श्रह्वचोह्स०। बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० लोगस्स संखे०भागो ।
श्रजह० सव्वलोगो। सम्म० जह० खेत्रं। श्रजह० लोग० असंखे०भागो श्रह्वचोह्स०।
सम्मामि० जह० श्रजह० लोग० श्रसंखे०भागो श्रह्वचोह्स०। इत्थिवे०-पुरिसवे०
जह० खेत्रं। श्रजह० लोग० श्रसंखे०भागो श्रह्वचोह्स० दे० सव्वलोगो वा।

ई ६६५. सनत्कुमारकल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागत्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानतकल्पसे लेकर श्रच्युत कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग-प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। उपर स्पर्शन चेत्रके समान है। इस्राप्रकार श्रनाहारक मार्गणा-तक जानना चाहिए।

§ ६६६. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है— भोघ श्रीर खादेश। श्रोघसे मिध्यात्व चार संज्वलन, नपुंसकवेद श्रीर चार नोकषायों की जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरकों का स्पर्शन सेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोमें से कुछ कम श्राठ भाग-प्रमाण सेत्रका स्पर्शन किया है। बारह कपाय, भय श्रीर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण सेत्रका स्पर्शन किया है। श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण सेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण सेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमें कुछ कम श्राठ भागप्रमाण सेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य श्रीर खजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमें कुछ कम श्राठ भागप्रमाण सेत्रका स्वर्शन किया है। स्विवेद श्रीर पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन सेत्रके समान है। श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमें कुछ कम श्राठ भागप्रमाण सेत्रका स्वर्शन किया है। स्विवेद श्रीर पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमें कुछ कम श्राठ भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण सेत्रका स्पर्शन किया है।

विश्रोपार्थ--चार संज्वलन श्रीर नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा उपशमश्रेणि या चपकश्रेणिमें श्रपने-श्रपने स्वामित्वके श्रनुसार होती है तथा हास्यादि चारकी जघन्य स्थितिउदीरणा श्रपने स्वामित्वके श्रनुसार संज्ञी पठनेन्द्रिय पर्याप्तकोंके होती है। यतः इनकी

१. घा०प्रती घ्रसंखे०भागी इति पाठः ।

§ ६६७. त्रादेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० जह० स्रजह० लोग० त्रसंखे०भागो बचोइस०। सम्म०-सम्मामि० जह० स्रजह० खेत्तं। एवं

जचन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन मात्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। तथा इनकी अजघन्य स्थिति उदीरणा एकेन्द्रियादि जीवों के भी होती है, इसिजए इनकी अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन प्राप्त होता है। इनकी जघन्य और अजधन्य स्थितिके उदीरकोंका चीत्र भी कमसं लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ख्रौर सर्व लोक है, अतः यहाँ इनकी जबन्य और अजबन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन च्रेत्रके समान कहा है। मिध्यात्व-की अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन तो उनके चेत्रके समान सर्व लोक ही है। मात्र जघन्य स्थितिके उदीरकोंके स्पर्शनमें फरक है। बात यह है कि मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा उपशमसम्यक्त्वके सन्मुख हुआ जीव प्रथम स्थितिमें एक समय श्रधिक एक श्रावलिप्रमाण स्थितिके शेप रहनेपर करता है. यतः ऐसे जीवोंका ऋतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम ब्राठ भागप्रमाण प्राप्त होता है ब्रातः मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकांका वर्तमान स्पर्शन लोकके ऋसंख्यातवें भागप्रभाग ऋौर श्वतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम त्राठ भागप्रभाण कहा है। बारह कपाय, भय श्रीर जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा श्रपने स्वामित्वके अनुसार बादर एकेन्द्रिय जीव करते हैं, यतः इनका स्पर्शन लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है, अतः उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन लोकके संख्यातवें भागप्रमाम कहा है। इनकी श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाम है यह स्पष्ट ही है। सम्यक्त्वकी जयन्य स्थिति उदीरणा दर्शनमोहनीयका चपक जीव सम्यक्त्वकी स्थितिके एक समय ऋधिक एक ऋावति शेप रहनेपर करता है। यतः ऐसे जीवोंका स्पर्शन लांकके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है, चेत्र भी इतना ही है, त्रातः इसे चेत्रके समान कहा है। वेदकसम्यग्दृष्टियोंके स्पर्शनको देखते हुए सम्यक्त्वकी श्रजधन्य स्थितिके उदीरकों का वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उदीरणा सम्यग्मिथ्या-दृष्टि जी। करते है, अतः उनके स्पर्शनके अनुसार सम्यग्गिध्यात्वकी जघन्य श्रीर अजधन्य स्थितिके उदीर होंका वर्तमान स्पर्शन लोकके आसंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोमसे कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है। स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी जघन्य स्थिति उदीरणा उपशामक या जपकके यथासम्भव होती है। यतः ऐसे जीवींका स्पर्शन चेत्रके समान ही हाता है, अतः इनकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान कहा है। तथा इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणा तिर्येख्वादि तीन गतिमें भी सम्भव है। इसी तथ्यको ध्यानमें रखकर इनकी अजयन्य स्थितिके उदीरकोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर श्रतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण कहा है। आगे चारों गतियोंमें और उनके अवान्तर भेटोंमें अपने अपने स्वामित्वको और स्पर्शनको जानकर प्रकृतमें स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए। कोई विशेष न होनेसे यहाँ उसका श्रलगसे निर्देश नहीं किया है।

\$ ६६७. श्रादेशसे नारिकयोंमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय श्रीर सात नोकपायोंकी जवन्य श्रीर त्र जवन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रासंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्निध्यात्वकी जघन्य श्रीर श्राज्ञचन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इसीप्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर बिदियादि जाव सत्तमा ति । णवरि सगपोसणं । पढमाए खेतं ।

§ ६६८. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक०-सम्मामि० जह० ऋजह० खेत्तं । इत्थिबे०-पुरिसवे० जह० खेत्तं । अजह० लोग० असंखे०भागो सन्वलोगो वा । सम्म० जह० खेत्तं । अजह० लोग० असंखे०भागो छ्वोइंस० ।

§ ६६९. पंचिदियतिरिक्खितिए सम्म०-सम्मामि० तिरिक्खोधं । सेमपय० जह० खेतं । श्रज्ज० लोग० श्रसंखे०भागो सन्वलोगो वा । पंचिदियतिरिक्खश्रपज्ज०-मणुमश्रपज्ज० सन्वपयडी० जह० खेतं । श्रजह० लोग० श्रसंखे०भागो सन्वलोगो वा । मणुमतिय० पंचिदियतिरिक्खितियभंगो । णविर सम्म० जह० श्रजह० लोग० श्रसंखे०भागो ।

६५०. देवेसु सोलसक०-श्रद्धणोक० जह० खेत्तं । अजह० लोग० असंखे०-भागो श्रद्ध-एवचोदस० । एवं मिच्छ० । एवरि जह० श्रद्धचोदस० । सम्म० जह० खेत्तं । अजह० लोग० असंखे०भागो अद्भवोदस० । सम्मामि० जह० श्रजह० लोग०

सातवीं पृथिवीतक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रपना-श्रपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली पृथिवीमें स्पर्शन चेत्रके समान है।

् ६६८ तिर्यक्कोंमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय, सात नोकपाय और सम्याग्मिथ्यात्वकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। स्निवेद श्रीर पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें माग श्रीर सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्तवकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें माग श्रीर श्रमान है। श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें माग श्रीर श्रसनालीके चोदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

\$ ६६६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्कित्रकमे सम्यक्त श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी जघन्य श्रीर श्रज्ञान्य स्थितिके उदीरकोंका भंग सामान्य तिर्यक्कोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। श्रज्ञघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। श्रज्ञघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्क श्रप्याप्त श्रीर मनुष्य श्रप्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। श्रज्ञघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यितिकमें पञ्चिन्द्रय तिर्यव्चित्रकके समान भंग हं। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी जघन्य श्रीर श्रज्ञचन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ६७०. देवोंमें सालह कपाय श्रोर श्राठ नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ श्रोर नो भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार मिध्यात्व-की श्रपेचा स्पर्शन जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने श्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्तकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोककं

त्रसंखे०भागो श्रद्धचोद्दस्य । एवं भवण०-वाणवें । णवरि सगपोसणं । सम्म० सम्मामि०भंगो । जोदिसि० भवण०भंगो । णवरि श्रणंताणु०४ जह० श्रद्धुट्ट-श्रट्ट-चोद्दस्य । श्रजह० लोग० श्रसंखे०भागो श्रद्धुट्ट-श्रट्ट-णवचोद्दस्य ।

§ ६७१. सोहम्मीसाणे देवोघं। णवरि श्रणंताणु०चउक्क० जह० श्रह चोहस० देसूणा। श्रजह० श्रह-णवचोदस० देसूणा।

६ ६७२. सणक्कुमारादि जाव सहस्सार ति भिच्छ०-सम्मामि०-अ्रणंताणु०-चउक्क० जह० अज० लोग० असंखे०भागो अट्टचोइस० देसूणा । सम्म०-बारसक०-सत्तणोक० जह० खेतं । अजह० लोग० असंखे०भागो अट्टचोइस० ।

१६७३, श्राणदादि जाव श्रच्चुदा ति सम्म०-सोलसक०-सत्तणोक० जह० खेत्तं । श्रजह० लोग० श्रसंखे०भागो छचोइस० । मिच्छ०-सम्मामि० जह० श्रजह०

श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार भवनवासी श्रीर व्यन्तर देवोंमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रपना-श्रपना स्पर्शन कहना चाहिए। तथा इनमें सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है। उपोतिषी देवोंमें भवनवासियोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें श्रनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमंसे कुछ कम साढ़े तीन भाग श्रीर श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमंसे कुछ कम साढ़े तीन भाग, श्राठ भाग श्रीर नी भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

्र ६७१. सौधर्म और एशानकल्पमें सामान्य देवोंके समान भंग हैं। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ भाग और नौ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ६७२. सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें मिध्यात्व, सम्यग्मिध्यात्व और अतन्तानुबन्धीचतुष्कको जधन्य श्रोर अजधन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण सेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व, बारह कप य और सान नोकपायोंकी जधन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन सेत्रके समान है। अजधन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

६६७३. त्रानतकल्पसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोंमें सम्यक्त्व, सोलह कपाय और सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीक चीदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग-प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। मिध्यात्व और सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रमनालीके चीदह भागोंमेंसे कुछ कम छह

लोग० श्रसंखे०भागो छचोइस० । उत्तरि खेत्तभंगो । एवं जाव० ।

६६७४. णाणाजीवेहि कालो दुविहो—जह० उक्क० । उक्कसे पयदं । दुविहो णि०—श्रोघेण त्रादेसेण य । श्रोघेण छन्त्रीसं पयडीणं उक्क० जह० एगस०, उक्क० पिलदो० श्रसंखे०भागो । श्रणुक्क० सन्बद्धा । सम्म०-सम्मामि० उक्क० जह० एग-ममग्रो, उक्क० श्रावित्व श्रसंखे०भागो । श्रणुक्क० सन्बद्धा । णवरि सम्मामि० श्रणुक्क० जह० श्रंतोसु०, उक्क० पिलदो० श्रसंखे०भागो ।

६६७४. मव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-देवा सहस्सारे ति जाश्रो पयडीश्रो उदीरिज्ञंति तासिमें घं। णवरि पचिंदियतिरिक्खश्रपज्ज० सव्वपय० उक्क० जह० मागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। ऊपर चेत्रके समान भंग है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६७४. नाना जीवोकी अपेद्या काल दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । श्रोघमं छडवीस प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय हे और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोका काल सर्वदा है । सम्यक्तव और सम्यग्मिध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोका काल सर्वदा है । इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिध्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल अन्तर्मुह ते है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

विशेषार्थ — पहले एक जीवकी आपंत्ता काल बतला आये हैं। उसमें सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकांका जघन्य काल बतलाया है। वह यहाँ नाना जीवांकी अपेत्ता भी बन जाता हें, अन उसका अलगसे खुलासा नहीं किया। अब रही उत्कृष्ट कालकी बात सो यदि नाना जीव अत्रुटत् सन्तानरूपसे उक्त प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणा करें तो छव्वीस प्रकृतियोकी पत्यके असंख्यानवें भागप्रमाण कालतक और सम्यक्त-सम्यिमध्यात्वकी आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक ही उत्कृष्ट स्थिति उदीरणा बनती है। यही कारण है कि यहाँ पर छ्ववीस प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोका उत्कृष्ट आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा सम्यक्त्व और सम्यिमध्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोका उत्कृष्ट आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण काल कहा है। अब रहा इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोके कालका विचार सो सत्ताईस प्रकृतियोकी निरन्तर उदीरणा सर्वदा सम्यिमध्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोके कालका विचार सो सत्ताईस प्रकृतियोकी निरन्तर उदीरणा सर्वदा सम्यिमध्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोके कालका विचार सो नाना जीवोकी अपेता सम्यिमध्यात्व गुणस्थानका ही उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। यही कारण है कि यहाँ सम्यिमध्यात्वकी अनुत्कृष्ट रिथितिके उदीरकोका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। जीवास सम्यिमध्यात्व गुणस्थानका ही अनुत्कृष्ट रिथितिके उदीरकोका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। जघन्य काल अन्तर्भुहत्ते है यह स्पष्ट ही है।

६६७५. सब नारकी, सब तिर्यक्च और सामान्य देवोसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोमे जिन प्रकृतियोकी उदीरणा होती है उनका काल खोषके समान है। इननी विशेषना है एयम०, उक्क० आवित्व असंखे०भागो । अणुक्क० सन्बद्धा ।

६ ६७६. मणुमतिए सम्म० उक्त० द्विदिउदी० जह० एगम०, उक्त० मंखेजा समया । ऋणुक्त० सन्तद्धा । एवं सम्मामि० । णविर ऋणुक्त० जह० उक्त० अंतोम्र० । सेसपय० उक्त० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्त० अंतोम्र० । ऋणुक्त० सन्तद्धा ।

१६७७. मणुमञ्चपन्जि० सन्वपय० उक्क० द्विदिउदी० जह० एयसमञ्ची, उक्क० स्नाविति० असंखे०भागी । श्रणुक्क० जह० एयम०, उक्क० पितदी० असंखे०भागी । णविर मिच्छ०-णवुंस० अणुक्क० जह० खुदाभवगहणं समयूणं, उक्क० पितदी० असंखे०भागी ।

कि पंचेन्द्रिय तिर्यक्क श्रपयोप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रावितके श्रसंख्यातवें भागप्रमाग है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है।

विशोषार्थ — पंचेन्द्रिय तिर्यक्क अपर्याप्तकोंका प्रमाण यद्यपि असंख्यात है, फिर भी इसमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा मात्र एक समयप्रमाण वनती है, इसिलए अनुटत् सन्तानकी अपेक्षा नाना जीवोंके उक्त कालका योग आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण ही बनता है। यही कारण है कि इनमें सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ६७६ मनुष्यत्रिकमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सम्यग्मिण्यात्व प्रकृतिकी अपेत्ता जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिण्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य स्रोर उत्कृष्ट काल अन्तर्भृहूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्भृहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है।

विशेषार्थ — मनुष्यत्रिकका प्रमाण संख्यात है इस तथ्यको ध्यानमें रम्बकर यहाँ सम्यक्त्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल वहा है। शेष कथन सुगम है।

६६७८. मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्व और नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय कम जुल्लकभवमहण्यमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

विश्रोषार्थ — मनुष्य अपर्याप्तकोंका प्रमाण यद्यपि असंख्यात है, फिर भी इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल भी एक समयमात्र है। यदि अतुटत् सन्तान रूपसे ऐसे जीव इनमें उत्पन्न हों तो आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक ही वे उत्पन्न होंगे। यहीं कारण है कि इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल आविलके असंख्तातवें भागप्रमाण कहा है। शेप कथन सुगम है।

ई ६७८. श्राणदादि जात्र एात्रगेवज्जा ति सन्त्रपय० उक्क० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। श्रणुक्क० सन्तद्धा। णत्रारे सम्मामि० श्रणुक्क० जह० अंतोग्रु०, उक्क० पत्तिदो० श्रसंखे०भागो। श्रणुद्धिसादि सन्त्रद्वा ति सन्त्रपय० उक्क० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। श्रणुक्क० सन्त्रद्वा। एवं जाव०।

६७९. जहण्णए पयदं । दुविहो णि० — ऋषिण आदेसेण य । ऋषिण मिच्छ० चदुणोक० जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक० श्राविति० असंखे०भागो, । अज० सन्बद्धा । एवं सम्मामि० । एगिर श्रजह० जह० अंगोमु०, उक० पिलदो० असंखे०भागो । सम्म०-चदुसंजल०-तिण्णिवेद० जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक० संखेज्जा समया । श्रजह० सन्बद्धा । वारसक० भय-दुगुंछा० जह० श्रजह० सन्बद्धा ।

§ ६७८. द्यानतकल्पसे लेकर नो प्रैवेयकतकके देशोम सब प्रकृतियोकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है चौर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिण्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देशोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—नौ प्रैवेयकसे लेकर उक्त सब देवोंमें मनुष्यित्रक ही मरकर जन्म लेते हैं श्रीर उनका प्रमाण संख्यात है। यहीं कारण है कि इनमें श्रपनी-श्रपनी उदीरणा प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल संख्यात समय प्राप्त होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ६७.६. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दां प्रकारका है—स्रोघ स्रौर सादेश। स्रोघसे भिश्यात्व स्रौर चार नोकपायोंकी जघन्य स्थितिके उदारकोंका जघन्य काल एक समय है स्रौर उत्कृष्ट काल स्रावलिके स्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। स्रजघन्य स्थितिके उदारकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सम्याग्मिण्यात्व प्रकृतिकी स्रपेत्तासे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी स्रजघन्य स्थितिके उदारकोंका जघन्य काल स्थन्तर्मृहूर्त है स्रौर उत्कृष्ट काल पल्यके स्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व, चार संज्वलन स्रौर तीन वेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है स्रोर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। स्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। बारह कषाय, भय स्रौर जुगुप्साकी जघन्य स्रौर स्रजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है।

विशेषार्थ—मिध्यात्व श्रीर चार नोकपायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाके स्वामित्वको ध्यानमें लेनेपर ऐसे नाना जीव लगातार यदि इनकी जघन्य स्थितिउदीरणा करें तो उस कालका योग श्रावितके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। यही कारण है कि इनकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल उक्तप्रमाण कहा है। इसीप्रकार सम्यग्निध्यात्व प्रकृतिके विषयमें जान लेना चाहिए। सम्यक्त्व, चार संज्वलन श्रीर तीन वेदोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा करनेवाले जीव ही श्रिथक-से-श्रिधक संख्वात हो सकते हैं। यदि श्रमुटत्

६६०. श्रादेसेण णेरइय० मिच्छ०-मोलपक०-मत्तणोकः जह० द्विदिउदी०
 जह० एयस०, उक्क० आवित्वि० श्रसंखे०भागो । श्रजह० सव्बद्धा । सम्म०-सम्मामि०
 श्रोघं । एवं पढमाए ।

§ ६८१. बिदियादि जात्र छट्टि ति सम्म०-मिच्छ० जह० जह० एयस०, उक० आत्राति० असंखे०भागो । अजह० सन्तद्धा । सम्मामि० ओघं । अणंताणु०४ जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अतोष्ठ० । अज० सन्तद्धा । बारसक०-सत्तणोक० जह० द्विदिउदी० जह० एयम०, उक्क० संखेआ समया । अजह० सन्वद्धा । सत्तमाए सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० पैलिदो० असंखे०-भागो । अज० सन्तद्धा । सम्मा०-मिच्छ०-पचणोक० जह० द्विदिउदीर० जह० एयस०, उक्क० आग्रां ।

सन्तानकी अपेत्ता भी विचार किया जाय तो उस कालका योग भी संख्यात समय होगा। यही कारण है कि इन प्रकृतियोकी जघन्य स्थितिके उदीरकोका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। रोष कथन सुगम है।

६८०. श्रादेशसे नारिकयोमें मिथ्यात्व, सांलह कपाय श्रीर सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्रजघन्य रिथितिके उदीरकोका काल सर्वदा है। सम्यक्तव श्रीर सम्यग्निध्यात्व- का भंग श्रोषके समान है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमं जानना चाहिए।

विशेषार्थ — सामान्यसे नारिकयोमे मिथ्यात्व, सोलह कपाय श्रीर सात नोकपायोंकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। यदि नाना जीवोकी श्रपेत्ता श्रपेत्ता श्रपेत्ता श्रपेत्ता श्रपेत्ता यह काल लिया जाय तो वह श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है। यही कारण है कि यहा उक्त प्रकृतियोकी जघन्य स्थितिके उदीरकोका उत्कृष्ट काल उक्तप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम हे।

६८१. दूसरी पृथिवीसं लेकर छटी पृथिवी तकके नारिकयोमं सम्यक्त्व श्रीर मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण है। श्राज्यान्य स्थितिके उदीरकोका काल सर्वदा है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग श्राघके समान है। श्रान्तानुबन्धी चारको जघन्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रान्तमुंहूर्त है। श्राज्यान्य स्थितिके उदीरकोका काल सर्वदा है। बारह कषाय श्रीर सात नोकपायोकी जघन्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्राज्यान्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पंख्यात समय है। श्राज्यान्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रासंख्यातवें भागप्रमाण है। श्राज्यान्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राद्यातवें भागप्रमाण है। श्राज्यान्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्राज्यान्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्राज्यान्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्राज्यान्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्राज्यान्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है।

१. भा०प्रती उक्क० संखेउजा समया पिलदो० इति पाठः ।

६ ६८२. तिरिक्लेसु मिच्छ०-सत्तणोक० जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० श्रावित श्रमंखे०भागो । श्रजह० सन्त्रद्धा । मोलमक०-भय-दुगुछा० जह० श्रजह० द्विदिउदी० मन्त्रद्धा । सम्म०-सम्मामि० श्रोघं । पंचि०तिरिक्खितिय० दंमणितयमोघं । सेमपय० जह० जह० एयस०, उक्क० आवित् श्रसंखे०भागो । श्रजह० सन्त्रद्धा । एविर जोणिणीसु सम्मत्त० मिच्छत्तभंगो । पंचि०तिरि०श्रपञ्ज० सन्त्रपय० जह० द्विदिउदी० जह० एयसमश्रो, उक्क० श्रावित् श्रसंखे०भागो । श्रजह० सन्द्धा ।

६ ६ २. मणुसेसु मिच्छ०-सम्म०-चदुसंजल०-सत्तणोक० जह० द्विदिउदी०
जह० एयस०, उक्क० असंखेङा समया। अजह० सन्बद्धा। बारसक०-भय-दुगुंङा०
जह० द्विदिउदी० जह० एयसमञ्रो, उक्क० आविल० असं०भागो। अजह० सन्बद्धा।
सम्मामि० जह० जह० एयस०, उक्क० संखेङा ममया। अज० जह० उक्क० अंतोमुद्दुत्तं। मणुसपङ्ज०-मणुसिणी० सन्वपयडी० जह० द्विदिउदी० जह० एगसमञ्रो,
उक्क० संखेङ्जा समया। अजह० सन्बद्धा। णविंग सम्मामि० मणुमोघं। मणुस-

विश्रीपार्थ—इसके पूर्व जो स्पष्टीकरण किया है उसे और साथ ही अपने-अपने स्वामित्वका ध्यानमें लेनेपर सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका नाना जीवोंकी जो अपेचा काल कहा है वह समभमें आ जाता है, इसलिए यहाँ और आगे अलगसे खुलासा नहीं किया।

§ ६८२. तिर्यक्कोंमें मिश्यात्व श्रीर सात नोकपायांकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रावितके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्राजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सोलह कपाय, भय श्रीर जुराप्सार्का जघन्य श्रीर श्राजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सम्यक्त्व श्रीर सम्यिग्धियात्वका भंग श्रीघके समान है। पञ्चित्रिय निर्यक्कित्रकमें दर्शनमोहनीयित्रकका भंग श्रीघके समान है। शेष प्रकृतियोक्ती जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य कालं एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रावितके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्राजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि योनिनियोमे सम्यक्त्वका भंग भिश्यात्वके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्क श्रपर्याप्तकोमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रावितके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्राजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है।

§ ६८३. मनुष्यों में मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, चार संज्वलन झोर सात नोकषायों की जघन्य स्थितिके उदीरकों का जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल झसंख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकों का काल सर्वदा है। बारह कपाय, भय और जुगुष्साकी जघन्य स्थितिके उदीरकों का जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविल के असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकों का काल स्वदा है। सम्यग्मिण्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकों का जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकों का जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्भुहूर्त है। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियों-में सब प्रकृतियोंको जयन्य स्थितिके उदीरकों का जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल

श्रपञ्ज । भिच्छ०-णवुंस० जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० आवित्वि० असंखे०मागो । अज० जह० आवित्विश समयुणा, णवुंस० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पितदो० असंखे०मागो । सोलसक०-छएणोक० एवं चेत्र । णविश्व अजह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० पितदो० असंखे०मागो ।

्रद्रिष्ठः देवेसु दंसणितयमोघं। सेमपय० जह० द्विदिउदी० जह० एयसमञ्जो, उक्क० त्रावित् त्रसंखे०भागो। श्रजह० सन्बद्धा। एवं भवण०वाणवें०। णविर सम्म० मिन्छनभंगो। जोदिसियादि जाव एवगेवज्जा त्ति दंमएतियमोघं। सेसपय० जह० द्विदिउदी० जह० एयसमञ्जो, उक्क० संखेजा समया। श्रजह० सन्बद्धा। णविर श्रणंताणु०चउक्क० जद० द्विदिउदी० जह० एयसमञ्जो, उक्क० अंतोसु०। एविर जोदिसि० सम्म० मिन्छत्तभंगो। श्राणदादि णविगेवजा ति श्रणंताणु०४ जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० संखेजा समया। श्रजह० सन्बद्धा। श्रणुहिसादि सन्बद्धा ति सन्वपय० जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० संखेजा समया। श्रजह० सन्बद्धा। एवं जाव०।

संख्यात समय है। श्राज्ञघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि इन्में सम्यग्निध्यात्वका मंग सामान्य मनुष्योंके समान है। मनुष्य श्रायपाप्तकोंमें मिध्यात्व श्रीर नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल खाविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्राज्ञघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल मिध्यात्वका एक समय कम एक खाविलप्रमाण है, नपुंसकवेदका श्रान्तर्मूहूर्त हैं श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। सोलह कपाय श्रीर छह नोकपायोंका इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि श्राज्ञघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है।

६८४. देवोंमें दर्शनमोहनीयत्रिकका भंग श्रोघके समान है। रोप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। श्राव्यन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार भवनवासी श्रोर व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्तका भंग मिध्यात्वके समान है। ज्योतिपी देवोंसे लेकर नौ प्रेवेयक तकके देवोंमें दर्शनमोहनीयत्रिकका भंग श्रीयके समान है। रोप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जवन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्राव्यन्य स्थितिके उदीरकोंका जवन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रान्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि ज्योतिषी देवोंमें सम्यक्तका भंग मिध्यात्वके समान है। तथा श्रान्तकल्पसे लेकर नो प्रेवेयक तकके देवोंमें श्रान्त्वानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जवन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्राव्यन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्राव्यन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। श्रात्रदिश लेकर सर्वार्थिखिदितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। श्रात्रदिश लेकर सर्वार्थिखिदितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्राव्यत्य समय स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्राव्यन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्राव्यन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार श्राहारक मार्गणातक

६८४. अंतरं दुनिहं —जह० उक० । उकस्से पयदं । दुनिहो णि० — स्रोघेण आदेसेण य । स्रोघेण सन्वपय० उक्त० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्त० अंगुलस्स असंखे०भागो । अणुक्त० णित्थ श्रंतरं । णविर सम्मामि० अणुक्त० जह० एयम०, उक्त० पिलदो० असंखे०भागो । आदेसेण सन्वर्णेरह्य०-मन्वतिरिक्ख-सन्वमणुस्स सन्वदेवा ति जास्रो पयडीस्रो उदीरिजंति तासिमोघं । णविर मणुस० अपज्ञ० सन्वामिमणुक्त० जह० एयस०, उक्त० पिलदो० श्रसंखे०भागो । एवं जाव० ।

६८६. जहण्णए पयदं। द्विहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य। श्रोघेण मिच्छ० जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। अजह० णस्थि अंतरं। सम्म०-लोभसंजल० जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० छम्मासं।

े ६८५. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—स्रोघ और आहेरा । स्रोधसे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिक उदीरकोंका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर काल स्राप्त के अमंख्यातवें भागप्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिश्यात्व की अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यक्ष, सब मनुष्य और सब देशमें जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है उनका भंग श्रीचके समान है । इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—नाना जीव यदि सम्यग्मिण्यात्व प्रकृतिके सिवा शेष सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा न करें तो कमसे कम एक समयतक श्रीर श्रधिकसे श्रधिक श्रंगुलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण कालतक नहीं करते। यहीं कारण है कि यहाँ श्रोधसे उक्त सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जयन्य श्रन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रंगुलके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। मात्र सम्यग्मिण्यात्व गुणस्थानका जयन्य श्रन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसलिए सम्यग्मिण्यात्व प्रकृतिकी श्रपेता उक्त प्रकारसे श्रन्तरकालका निर्देश श्रलगसे किया है। चारों गित्योंमे यह श्रन्तरकाल बन जाता है, इसलिए उसे श्रोधके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र मनुष्य श्रपर्याप्त यह सम्यग्यिण्यात्व गुणस्थानके समान सान्तर माग्रणा है, इसलिए इस बातको ध्यानमें रखकर इनमें सब प्रकृतियोंकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

§ ६८६. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर आदेश। श्रोघसे मिथ्यत्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य श्रान्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तरकाल सात रात्रि-दिवस है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका श्रान्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व श्रीर लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य श्रान्तरकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट

श्रजह० णित्थ अंतरं । सम्मामि० जह० डिदिउदी० जह० एयस०, उक० श्रंगुलस्स श्रसंखे०भागो । श्रजह० जह० एयस०, उक० पिलदो० श्रसंखे०भागो । बारमक०-भय-दुगुंबा० जह० श्रजह० णित्थ श्रंतरं । तिण्णिसंजल०-पुरिसवेद० जह० डिदिउदी० जह० एयस०, उक० वासं सादिरेयं । श्रजह० एत्थि अंतरं । इत्थिवेद-एवंस० जह० डिदिउदी० जह० एयसमश्रो, उक० वासपुधत्तं । श्रजह० णित्थ श्रंतरं । चदुणोक० जह० डिदिउदी० जह० एगममश्रो, उक० अंगुलस्स श्रसंखे०भागो । श्रजह० णित्थ अंतरं ।

अन्तरकाल छह महीना है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। सम्यिमिध्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। बारह कपाय, भय और जुगुष्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। तीन संज्वलन और पुरुपवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एक वर्षप्रमाण है। अजघन्य स्थितिक उदीरकोंका अवत्य अन्तरकाल कर समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एक वर्षप्रमाण है। अजघन्य स्थितिक उदीरकोंका अवत्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षप्रथक्तवप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। चार नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें नागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अम्तरकाल नहीं है। चार नोकषायोंकी अघन्य स्थितिके उदीरकोंका अघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है।

विशेषार्थ- उपशमसम्यक्त्यकी प्राप्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तरकाल सात दिन-रान है। इसलिए यहाँ भिश्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकांका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल सात दिन-रात कहा है। सम्यक्तवकी चपणा श्रीर चपकश्रिण्का जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है, इसलिए यहाँ सम्यक्त्व और लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थिति हे उदीरकोका जघन्य अन्तरकाल एक समय श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल छह महीना कहा है। ऐसे जीव जो सम्यग्निध्यात्वकी जधन्य स्थितिकी उदीरणा करते है उनका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण बन जाता है, इसांलए यहाँ सम्यग्निध्यात्व प्रकृतिकी श्रपेचा यह श्रन्तर-काल उक्त कालप्रमाण कहा है। बारह कपाय, भय श्रीर जुगुष्माकी जयन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाले जीव निरन्तर पाये जाते है, इसलिए इनकी अपंत्रा जघन्य स्थितिक उदीरकोंके श्रन्तरकालका निषेध किया है। तीन संज्वलन श्रीर पुरुषवेदके उदीरक जीव चपकश्रेणिपर न चढ़ें तो श्रिविकसे श्रिधिक साधिक एक वर्षतक नहीं चढ़ते, इसलिए यहाँ इनकी जधन्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य अन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल साधिक एक वर्ष कहा है। स्त्रीवेदी श्रोर नपुंसकवेदी जीवोंकी अपेजा ज्ञपकश्रीमका उत्कृष्ट श्रन्तरकाल वर्षप्रथक्त्वप्रमाण है, इसलिए यहाँ स्त्रीबेद श्रीर नप् सक्वंदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जधन्य अन्तरकाल एक समय श्रीर उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षप्रथक्त्व कहा है। चार नांकपायोंकी जयन्य स्थितिकं उदीरकांके जयन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकालका स्पष्टीकरण सम्यग्मिध्यात्वकी

६८७. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्मामि० ग्रोघं । सम्म० जह० द्विदिउदी० जह० एयसमन्त्रो, उक्क० वामपुधत्तं । श्रजह० णिव्ध अंतरं । सेसपयडी० जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० त्र्यंगुलस्स श्रमंखे०भागो । श्रजह० णित्थ अंतरं । एवं पढमाए । विदियादि जाव सत्तमा ति एवं चेव । एविंग सम्म० श्रएंताणु०भंगो ।

इद्रांद्धाः जहः अजहः णित्थ अंतरं । सत्तणोकः जहः द्विदिद्धाः जहः एयमम्यो, उकः अंगुलस्म असंखें भागो । अजहः णित्थ अंतरं । पंचिदियति रिक्खितयः दंसणित्यः जार्यभंगो । सेसपयडीः जहः द्विदिद्धाः जहः एयमः असंखें भागो । सेसपयडीः जहः द्विदिद्धाः जहः एयमः, उकः अंगुलस्म असंखें भागो । अजहः णित्थ अंतरं । एविदिद्धाः जहः एयमः, उकः अंगुलस्म असंखें भागो । अजहः णित्थ अंतरं । एविदिद्धाः जहः एयसः, उकः अंगुलस्स असंखें भागो । अजहः एदिय अंतरं । एवं मणुसअपञ्चः । णविर अजहः जहः

जवन्य स्थितिके उर्दारकोंके जवन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकालके समान है। शेष कथन सुगम है।

विशेषार्थ — श्रंाघप्ररूपणामें जो खुलासा किया है उसे और श्रपने-श्रपने स्त्रामित्त्रको समभक्तर यहाँ स्पष्टीकरण कर लेना चाहिए। श्रागे भी इसीप्रकार खुलासा कर लेना चाहिए।

\$ ६८८. तिर्यक्कोंमे मिण्यात्व, समयकत्व और समयिमण्यात्वका भंग सामान्य नारिकयोंके समान है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्कित्रकमें दर्शनमोहनीयित्रिकका भंग नारिकयोंके समान है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इतनी विशेषता है कि योनिनीतिर्यक्कोंमें समयक्त्वका भंग दूसरी पृथिवींके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्क अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इतनी

१६८७. आदेशसे नारिकयोमं मिश्यात्व और सम्यग्मिश्यात्वका मंग आंघकं समान है। सम्यक्त्वकी जघन्य म्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। शेष प्रकृतियोकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल ऋंगुलके असंख्यातवे भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार प्रथम पृथिकोंमें जानना चाहिए। दूसरीम लेकर साववीं पृथिवीतक इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उनमे सम्यक्त्वका भंग अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान है।

१. ता॰प्रतौ श्रंतरं । एवं जोगिगाीसु गाविर सम्म॰ इति पाटः ।

एयसमश्रो, उक्त० पत्तिदो० त्रमंखे०भागो।

६८६. मणुसतिए श्रोघं । स्त्रावित बारमक०-भय-दुगुंछ० पंचिदियतिरिक्ख-भंगो । णवरि पञ्जत्तएसु इत्थिवेदो णित्थ । मणुसिणी० पुरिस्तवेद०-सावुंस० णित्थ । जम्हि छम्मासं वासं सादिरेयं तम्हि वासपुधत्तं ।

१६९०. देवेसु दंसणितयं णारयभंगो । सेसपय० जह० द्विदिउदी० जह० एयसमञ्जो, उक्क० त्रंगुलस्स त्रसंखे०भागो । त्रजह० णित्थ त्रंतरं । एवं भवणादि जाव णवगेवज्ञा त्ति । णविर भवण०-वाणवें०-जोदिसि० सम्म० विदियपुढिविभंगो । त्र्रणादिसादि सन्बद्धा त्ति सम्म०-वारसक०-सत्तरणोक० त्राणदभंगो । णविर सन्बद्धे सम्म० जह० द्विदिउदी० जह० एयस०, उक्क० पिलदो० संखे०भागो । श्रजह० एएसथ श्रंतरं । एवं जाव० ।

९ ६९१. भावाणु० सन्वत्थ श्रोदइश्रो भावो ।

६९२. अप्पाबहुअं दुविहं—जीवप्पाबहुअं द्विदिअप्पाबहुअं चेदि । जीवश्रप्पाबहुअं दुविहं—जह० उक्त० । उक्तस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । अधेण मिच्छ०-सोलसक०-यत्तरणोक० सन्वत्थोवा उक्त० द्विदिउदी० जीवा । अणुक्त०

विशेषता है कि इनमें श्रज्ञघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य श्रन्तरकाल एक समय है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल पल्यके श्रसंख्यानवें भागप्रमाण हैं।

- ् ६८८. मनुष्यत्रिकमं क्रांचके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय, भय श्रोर जुगुष्साका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यचोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा मनुष्यिनियोमें पुरुषवेद श्रोर नषु सक्वेदकी उदीरणा नहीं है। जहाँ छह माह श्रोर साधिक एक वपे कहा है वहाँ वर्षप्रथक्त कहना चाहिए।
- ६६०. देवोंमें दर्शनमोहनीयत्रिकका भंग नारिकयोंके समान है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार भवनवासियोसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें सम्यक्त्वका भंग दूमरी पृथिवीके समान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कपाय और सात नोकषायोंका भंग आनतकल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।
 - 🖇 ६८१. भावानुगमकी अपेद्या सर्वत्र श्रीदियक भाव है।
- ् ६६२. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जीव अल्पबहुत्व श्रीर स्थितिअल्पबहुत्व । जीव अल्पबहुत्व दो प्रकारका है —जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है —ओघ और आदेश । श्रोधसे मिध्यत्व, सोलह कथाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट

हिदिउदी० जीवा श्रणंतगुणा। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सन्वत्थो० उक्क० हिदिउदी० जीवा। श्रणुक्क० हिदिउदी० जीवा श्रसंखेअगुणा। एवं तिरिक्खा०।

इ ६९३. मन्त्रणेरइय०-सन्वपंचिदियतिरिक्ख-मणुसग्रपञ्ज०-देवा जाव श्रवराजिदा ति सन्वपय० मन्त्रत्थोवा उक्क० द्विदिउदी० जीवा । श्रणुक्क० द्विदिउदी० जीवा
श्रमंखे०गुणा । मणुसेसु सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सन्वत्थोवा उक्क०
द्विदिउदी० जीवा । श्रणुक्क० द्विदिउदी० जीवा संखे०गुणा । सेसपयडीणं सन्वत्थोवा
उक्क० द्विदिउदी० जीवा । श्रणुक्क० द्विदिउदी० जीवा श्रमंखे०गुणा । मणुसपञ्च०मणुसिणी-सन्वद्वदेवेसु सन्वपय० सन्वत्थोवा उक्क० द्विदिउदी० । श्रणुक्क० द्विदिउदी०
जीवा संखे०गुणा । एवं जाव० ।

१६९४. जह० पयदं दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०चदुसंजल०-एवंस०-चदुणोकसाय० सन्वत्थोवा जह० द्विदिउदी० जीवा। श्रजह०
द्विदिउदी० जीवा श्रणंतगुणा। सम्म०-सम्मामि०-बारसक-०इत्थिवे०-पुरिस०-भयदुगुं० सन्वत्थोवा जह० द्विदिउदी० जीवा। श्रजह० द्विदिउदी० श्रसंखेजगुणा।
तिरिक्खेसु मिच्छ०-एवुंमय०-चदुणोक० सन्वत्थोवा जह० द्विदिउदी० जीवा। श्रज०
द्विदिउदी० जीवा श्रणंतगुणा। सम्म०-सम्मामि०-सोलमक०-भय-दुगुछ०-इत्थिवेद०स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसं श्रनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव श्रनन्तगुणे हैं।
सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व, स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे
स्तोक हैं। उनसे श्रनुकृष्ट स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार तिर्थश्चांमें
जानना चाहिए।

६ ६६३. सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्क, मनुष्य अपर्याप्त श्रीर सामान्य देवोंसे लेकर अपराजितविमानतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अनुष्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यानगुणे हैं। मनुष्योमें सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व, स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्ताक हैं। उनसे अनुष्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे थोड़े हैं। उनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६८४. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे मिश्यात्व, चार संज्ञलन, नपुंसकवेद श्रोर चार नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रनन्तगुणे हैं। सम्यक्त्व, सम्यिगिश्यात्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, भय श्रीर जुगुएसाकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। तिर्पश्चोंमें मिश्यात्व, नपुंसकवेद श्रोर चार नोकषायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे श्रजघन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रनन्तगुणे हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय,

पुरिसवे० सन्वत्थोवा जह० द्विदिउदी०। श्रजह० द्विदिउदी० जीवा श्रसंखे०गुणा। सेमगदीसु सन्वपयडीणं जह० अजह० उकस्मभंगो। एवं जाव०।

६९४. द्विदिअप्पाबहुअं दुविहं—-जह० उक्क० । उक्कस्से पयद । दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण सन्वत्थोवा णवणोक० उक्क० द्विदिउदी० । सोलसक० उक्क० द्विदिउदी० विसेमा० । सम्मामि० उक्क० द्विदिउदी० विसेमा० । सम्मामि० उक्क० द्विदिउदी० विसेमा० । सम्मामि० उक्क० द्विदिउदी० विसेमा० । एवं सन्ब-णेरइय० । णवि दित्थवे०-पुरिस० णित्थ । तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खतिए श्रोघं । णविर पञ्जत्तएस इत्थिवे० णित्थ । जोणिणीस पुरिस०-णवुंम० णित्थ । पंविदिय-तिरिक्खत्रपञ्ज०-मणुमश्रपञ्ज० सन्वत्थोवा मोलमक०-सत्तणोक० उक्क० द्विदिउदी० । मिन्छ० उक्क० द्विदिउदी० विसेसा० । मणुमतिए पंचिदियतिरिक्खतियभंगो ।

६९६. देवाणमोघं। णवरि णवुंस० णित्थ। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाऐ त्ति । सएक्कुमारादि सहस्सारे त्ति एवं चेव । एवरि इत्थिवे० णित्थ। त्रारादादि जाव णवगेवजा त्ति सन्वत्थोवा श्रारदि-सोग० उक्त० द्विदिउदी०।

भय, जुगुष्सा, स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीत्र सबसे स्तोक हैं। उनसे श्रजयन्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। शेष गतियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर त्रजुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका भंग उत्कृष्टके समान है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा-तक जानना चाहिए।

६ ६८५. स्थित चलपबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है — आघ और आदेश । आघसे नौ नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक हैं । उससे सोलह कपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं । उससे सम्यन्तिकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं । उससे सम्यन्तिकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं । उससे मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं । उससे मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं । इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता हैं कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उदीरणा नहीं हैं । तिर्यक्ष और पक्षेत्रिय तिर्यक्षित्रियों अधिक समान भंग हैं । इतनी विशेषता है कि तिर्यक्ष पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनी तिर्यक्कोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है । पक्षेत्रिय तिर्यक्र पर्याप्तकोंमें सोलह कषाय और सात नोकपायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक हैं । उससे मिण्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं । मनुष्यितकों पञ्चेत्रिय तिर्यक्किक समान भंग हैं ।

§ ६८६. देवोंमें श्रोघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें नपु सकवेदकी उदीरणा नहीं होती। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सीधर्म श्रीर ऐशान-कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। सनत्कुमारकल्पसे लेकर सहस्रार वल्पतकके देवोंमें इसी-प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। आनत-कल्पसे लेकर नी प्रैवेयक तकके देवोंमें अरित श्रीर शोककी उत्कृष्ट स्थितउदीरणा सबसे स्तोक

सोलमक०-पंचणोक० उक्त० द्विदिउदी० विसेमा०। मम्मामि० उक्त० द्विदिउदी० विसेमा०। सम्म०-भिच्छ० उक्त० द्विदिउदी० विसेमा०। अणुदिमादि सब्बद्घा ति सब्बत्थो० अरदि-मोग० उक्त० द्विदिउदी०। बारसक०-पंचणोक० उक्त० द्विदिउदी० विसेश। सम्म० उक्त० द्विदिउदी० विसेश। एवं जाव०।

६९.७. जहण्णए पयदं । दुविहो णि० — श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण सन्वत्थोवा मिच्छ०-सम्म०-चदुसंज०-तिण्णिवे० जह० द्विदिउदी० । जिद्वदिउदीर० श्रमंखे०गुणा । हस्स-रिद० जह० द्विदिउदी० श्रमंखे०गुणा । श्ररिद-सोग० जह० द्विदिउदी० विसेसा० । भय-दुगुंछा० जह० द्विदिउदी० विसे० । बारसक० जह० द्विदिउदी० विसेसा० । सम्मामि० जह० द्विदिउदी० संखे०गुणा ।

े ६९८. श्रादेसेण गोरइय० सन्बत्थोवा मिन्छ०-सम्म० जह० द्विदिउदी० । जिद्दिदिउदी० श्रसंखे०गुणा । सम्मामि० जह० द्विदिउदी० श्रमंखे०गुणा । हम्म-रिद० जह० द्विदिउदी० संखे०गुणा । श्ररदि-मोग० जह० द्विदिउदी० विसेसा० । णवुंस० जह० द्विदिउदी० विसेसा० । मोलयक०-भय-दुगुंछा० जह० द्विदिउदी० विसेसा० । एवं पढमाए ।

है। उससे सोलह कपाय और पाँच नोकपायकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं। उससे सम्यग्निश्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं। उससे सम्यक्त और मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोमें अरित और शोककी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक हैं। उससे बारह कषाय और पाँच नोकपायकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं। उससे सम्यक्तकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं। उससे सम्यक्तकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं। उससे सम्यक्तकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

\$ ६६७. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका हं—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे मिध्यत्व, सम्यक्त्व, चार संज्वलन श्रीर तीन वेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है। उससे यत्स्थितिउदीरणा श्रसंख्यातगुणी है। उससे हास्य श्रीर रितकी जघन्य स्थितिउदीरणा श्रसंख्यातगुणी है। उससे श्रार श्रोककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष श्रिषक है। उससे अरित श्रीर श्रोककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष श्रिषक है। उससे बारह कपायकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष श्रिषक है। उससे सम्यिमध्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है।

् ६६८. धादेशसे नारिकयोंमें मिथ्यात्व श्रीर सम्यक्त्वकी जवन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है। उससे यित्थितिउदीरणा श्रसंख्यातगुणी है। उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जवन्य स्थितिउदीरणा श्रसंख्यातगुणी है। उससे हास्य श्रीर रितकी जवन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है। उससे हास्य श्रीर रितकी जवन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है। उससे श्रात श्रीर शोककी जवन्य स्थितिउदीरणा विशेष श्रिषक है। उससे नपुंसकवेदकी जवन्य स्थितिउदीरणा विशेष श्रिषक है। उससे सोलह कषाय, भय श्रीर जुगुप्साकी जवन्य स्थितिउदीरणा विशेष श्रिषक है। इसीप्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिए।

६९९. बिदियादि जाव छट्ठि ति सन्त्रत्थोवा मिन्छ० जह० द्विदिउदी०। जिट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा। सम्मामि० जह० द्विदिउदी० असंखे०गुणा। सम्माभि० जह० द्विदिउदी० असंखे०गुणा। सम्म० जह० द्विदिउ० विसेमा०। बारसक०-सत्त्रणोक० जह० द्विदिउदी० संखे०गुणा। अर्णाताणु०चउक० जह० द्विदिउदो विसे०।

७००. सत्तमाए सन्वत्थोवा मिन्छ० जह० द्विदिउदी०। जद्विदि० असंखे०गुणा। सम्मामि० जह० द्विदिउदी० श्रमंखे०गुणा। सम्म० जह० द्विदिउदी०
विसेमा०। हस्म-रदि० जह० द्विदिउदी० मंखे०गुणा। श्ररदि-मोग० जह० द्विदिउदी०
विसे०। णवुंम० जह० द्विदिउदी० विसे०। भय-दुगुंछा० जह० द्विदिउदी०
विसेसा०। सोलसक० जह० द्विदिउदी० विसेमा०।

७०१. तिरिक्खेसु मन्वत्थोवा मिन्छ०-सम्म० जह० द्विदिउदी० । जद्विदि० असंखे०गुणा । पुरिसवे० जह० द्विदिउदी० असंखे०गुणा । इत्थिवेद० जह० द्विदिउदी० असंखे०गुणा । इत्थिवेद० जह० द्विदिउदी० विसेसा० । श्ररदि-मोग० जह० द्विदिउदी० विसेसा० । भय-दुगुंछा० जह० द्विदिउदी० विसेसा० । भय-दुगुंछा० जह० द्विदिउदी० विसेसा० । सम्मामि० जह०

५६९९. दूमरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारिकयोंमें मिश्यात्वकी जघन्य स्थिति-उदीरणा सबसे स्तोक हैं। उससे यित्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे सम्यिगिध्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे बारह कथाय और सात नोकपायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है। उससे अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है।

२ ७००. सातवी पृथिवीमें मिश्यात्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा भवसे म्तांक हैं। उससे यित्स्थिति उदीरणा श्रासंख्यात गुणी है। उससे सम्याग्मिश्यात्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा श्रासंख्यात गुणी है। उससे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष श्राधिक है। उससे हाम्य श्रीर रिविकी जघन्य स्थिति उदीरणा संख्यात गुणी है। उससे श्राति श्रीर शांककी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष श्राधिक है। उससे नपुंसक वेदकी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष श्राधिक है। उससे नपुंसक वेदकी जघन्य स्थित उदीरणा विशेष श्राधिक है। उससे सोलह कपायोंकी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष श्राधिक है।

६ ५०१. तियेक्चोंमे मिथ्यात्व श्रोर सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा सबसे स्तोक है। उससे यत्स्थित उदीरणा श्रसंख्यात गुणी है। उससे पुरुपवेदकी जयन्य स्थिति उदीरणा श्रसंख्यात गुणी है। उससे हास्य श्री के है। उससे हास्य श्री र रिक्ती जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष श्री के है। उससे हास्य श्री र रिक्ती जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष श्री के है। उससे ज्री र रोकिकी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष श्री के है। उससे नपुंसक विदेश जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष श्री के है। उससे स्थिति उदीरणा विशेष श्री के है। उससे स्थिति उदीरणा विशेष श्री के है। उससे सम्यिक है। उससे सम्यिक है। उससे स्थिति उदीरणा विशेष श्री के है। उससे सम्यिक है। उससे स्व सम्यिक है। उससे सम्यिक है। उ

हिदिउदी० मंखे०गुणा। एवं पंचिदियतिरिक्खेसु। णवरि सोलमक०-भय-दुगुं छा० जह० हिदिउदी० सरिसा विसेसाहिया। एवं पंचिदियतिरिक्खपञ्ज०। णवरि इत्थिवेदो णन्धि।

\$ ७०२. जोणिणीसु सन्बत्योवा मिन्छ० जह० द्विदिउदी०। जद्वि० उदी० असंखे०गुणा। इत्थिवेद० जह० द्विदिउदी० असंखे०गुणा। हस्म-रिद० जह० द्विदिउदी० विसेसा०। अरिद-सोग० जह० द्विदिउदी० विसेसा०। सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० द्विदिउदी० विसेसा०। सम्मामि० जह० द्विदिउदी० संखे०गुणा। सम्म० जह० द्विदिउदी० विसेसा०।

§ ७०३. पंचिदियतिरिक्ख अपज्ञ०-मणुस अपज्ञ० सन्तरथोत्रा हस्स-रदि० जह० हिदिउदी० । अरदि-सोग० जह० हिदिउदी० विसे०। णवुंस० जह० हिदिउदी० विसेसा०। मंग्लमक०-भय-दुगुंद्धा० जह० हिदिउदी० विसेसा०। मिच्छ० जह० हिदिउदी० विसेसा०। मिच्छ० जह० हिदिउदी० विसेसा०। मणुसतिए अोघं। एवरि बारसक०-भय-दुगुंद्धा० जह० हिदिउदी० सरिसा। पज्जत० इत्थिवेदो एवरिथ। मणुसिएगी० पुरिसवे०-णवुंस० एवरिथ।

१ ७०४. देवेसु सञ्बत्थोवा मिच्छ०-मम्म० जह० द्विदिउदी०। जद्विदिउदी० उदीरणा संख्यातगुणो है। इसीप्रकार पश्चिन्द्रिय तिर्यक्चोमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सोलह कषाय, भय धोर जुगुष्साकी जघन्य स्थिति उदीरणा सदृश होकर विशेष श्रधिक है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्येक्च पर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है।

§ ७०२. योनिनी निर्यक्वोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है। उससे यित्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे हास्य और रितकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे सोलह कषाय, भय और जुगुष्धाकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे सम्यिग्ध्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है। उससे सम्यक्तवकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है। उससे सम्यक्तवकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है।

§ ७०३. पञ्चेन्द्रिय तिर्य्व्व अपयोप्त और मनुष्य अपयोप्तकों होस्य और रितकी जघन्य स्थिति उदीरणा सबसे स्ताक हैं। उनसे अरित और शोककी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष अधिक हैं। उससे नपुंसकवेदकी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष अधिक हैं। उससे सोलह कषाय, भय और जुगुष्साकी जयन्य स्थिति उदीरणा विशेष अधिक हैं। उससे सोलह कषाय, भय और जुगुष्साकी जयन्य स्थिति उदीरणा विशेष अधिक हैं। उससे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष अधिक हैं। मनुष्यितिकमें आघिक समान भंग हैं। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय, भय और जुगुष्साकी जघन्य स्थिति उदीरणा सहश हैं। पर्याप्तकों स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं हैं तथा मनुष्यितियों पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं हैं।

७०४. देवोमे मिथ्यात्व और सम्यक्तवर्का जघन्य स्थिति उदीरणा सबसे स्तोक है।

त्रसंखे ॰ गुणा । सम्मामि जह ॰ द्विदिउदी ॰ श्रसंखे ॰ गुणा । पुरिसवे ॰ जह ॰ द्विदिउदी ॰ संखे ॰ गुणा । इत्थि वेद ॰ जह ॰ द्विदिउदी ॰ विसेसा ॰ । हस्स-रिद ॰ जह ॰ द्विदिउदी ॰ विसेसा ॰ । सोलसक ॰ भय-दुगुं छा ॰ जह ॰ द्विदिउदी ॰ विसेसा ॰ । सोलसक ॰ भय-दुगुं छा ॰ जह ॰ द्विदिउदी ॰ विसेसा ॰ ।

६ ७०४. भवण०-वाणवें व सन्वत्थोवा मिन्छ० जह० द्विदिउदी० । जिहिदि०उ० त्र्यमंखे०गुणा । सम्मामि० जह० द्विदिउदी० त्र्यसंखे०गुणा । सम्म० जह० द्विदिउदी० विसे० । पुरिमवेद० जह० द्विदिउदी० संखे०गुणा । उवरि देवोघं ।

६ ७०६. जोदिमि० सन्त्रत्थोत्रा मिच्छ० जह० द्विदिउदी० । जद्वि०उ० असखे०गुणा । सम्मामि० जह० द्विदिउदी० असंखे०गुणा । सम्म० जह० द्विदिउदी० त्रिसेमा० । बारसक०-अट्टणोक० जह० द्विदिउदी० संखे०गुणा । अणंताणु०४ जह० द्विदिउदी० विसेमा० ।

्र ७०७. सोहम्मीमाण० सन्वत्थोवा मिन्छ०-सम्म० जह० द्विदिउदी०। जड्वि०उ० इमसेंबे०गुणा । सम्मामि० जह० द्विदिउदी० असंखे०गुणा । बारसक-सत्तरणोक० जह० द्विदिउदी० संखे०गुणा । ऋणांताणु०४ जह० द्विदिउदी० संखे०गुणा । इत्थिवेद०

उससे यात्स्थिति उदीरणा असंस्थानगुणी है। उससे सम्पन्मिश्यात्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा असंस्थानगुणी है। उससे पुरुषवेदकी जघन्य स्थिति उदीरणा संस्थानगुणी है। उससे म्त्रीवेदकी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष अधिक है। उससे हास्य और रितकी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष अधिक है। उससे अरित और शोककी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष अधिक है। उससे अरित और शोककी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष अधिक है। उससे सोलह कपाय, भय और जुगुष्साकी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष अधिक है।

६ ०५. भवनवासी श्रीर व्यन्तर देवोंमें मिध्यात्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा सबसं स्तोक है। उससे यित्स्थिति उदीरणा श्रमंख्यात गुणी है। उससे सम्यग्निध्यात्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा श्रमंख्यात गुणी है। उससे सम्यन्त्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष श्रधिक है। उससे पुरुषवेदकी जघन्य स्थिति उदीरणा संख्यात गुणी है। इससे श्रागे सामान्य देवोंके समान भंग है।

५ ७०६. ज्योतिषी देवोंमें मिध्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक हैं। उससे यत्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी हैं। उससे सम्यग्यिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी हैं। उससे सम्यग्यिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी हैं। उससे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सिख्यातगुणी हैं। उससे अनन्तानुबन्धी- चतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणा सिख्यातगुणी हैं। उससे अनन्तानुबन्धी- चतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक हैं।

्र ५०७. सीयर्म श्रीर ऐशानकल्पमें निश्यात्व श्रीर सम्यक्तको जघन्य स्थिति उदीरणा सबसे स्तोक हैं। उससे यत्स्थिति उदीरणा श्रसंख्यातगुणी हैं। उससे सम्यग्निश्यात्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा श्रसंख्यातगुणी हैं। उससे बारह कपाय श्रीर सात नंकिषायकी जघन्य स्थिति- उदीरणा संख्यातगुणी हैं। उससे श्रानन्तानुष्किको जघन्य स्थिति उदीरणा संख्यातगुणी

ज॰िट्टिदिउदी॰ विसेसा॰ । एवं सएाक्कुमारादि जाव णवगेवजा त्ति । णवरि इत्थिवेदो णत्थि । अणुहिमादि सब्बद्धा त्ति सब्बत्थोवा सम्म॰ जह० द्विदिउदी० । जट्टि॰उ॰ असंखे॰गुणा । बारसक०-मत्तणोक० जह० द्विदिउदी० असंखेजगुणा । एवं जाव० ।

६ ७०८. भुजगारिहिदिउदीरणा ति तत्थ इमाणि तेग्स अणिश्रोगहाराणि— समुक्तिनणादि जात्र अप्पाबहुए ति । समुक्तिनणाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण त्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०-सम्म०-सोत्तसक०-णत्रणोक० अत्थि भुज०-अप्प०अबद्धि०-अवत्त०उदी० । सम्मामि० अत्थि अप्प०-अवत्त०द्विदिउदी० ।

६ ७०९. त्रादेमेण णेरइय० मिच्छ०-सम्म०-सोलसक०-छण्णोक० ऋत्थि भुज०-अप्प०-अवद्वि०-अवत्त ०उदी०। एवं म० ऋत्थि भुज०-अप्प०-अवद्वि०द्विद-उदी०। सम्मामि० ओघं। एवं सत्तसु पुढवीसु। तिरिक्खाणमोघं। एवं पंचिदिय-तिरिक्खितए। एवरि पजत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि। जोणिणीसु पृरिसवेद-णवुंम० णत्थि। इत्थिवे० अवत्त० एत्थि। पंचिदियतिरिक्खिअपज०-मणुमश्चपज्ञ० मिच्छ० एवुंस० अत्थि भुज०-अप्प०-अवद्वि०उदी०। मोलसक०-छण्णाक० ओघं। मणुस-

है। उससे स्त्रीवेदकी जघन्य स्थिति उदीरणा विशेष ऋधिक है। इसीप्रकार मनत्कुमारकल्पसे लेकर नी ऋवियकनकर्क देवोम जानना चाहिए। इननी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। अनुदिशम लेकर सर्वार्थसिद्धितक के द्वोमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति उदीरणा सबसे स्त्रोक है। उससे बारह कषाय श्रीर सात नोकषायकी जघन्य स्थिति उदीरणा असंख्यात गुणी है। उससे बारह कषाय श्रीर सात नोकषायकी जघन्य स्थिति उदीरणा असंख्यात गुणी है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

१७०८. भुजगार स्थितिउदीरणाका प्रकरण है। उसमें समुत्किर्तनासे लेकर श्रल्प-बहुत्वतक ये तरह श्रनुयोगद्वार है। समुत्किर्तनानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्राघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सोल्ह कपाय आर नौ नोकपायकी भुजगार, श्रल्पतर, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्यस्थितिक उदीरक जीव है। सम्यग्मिण्यात्वकी श्रल्पतर श्रीर श्रवक्तव्यस्थितिक उदीरक जीव है।

७०६. श्रादेशसं नारिकयोंमं मिश्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय श्रीर छह नोकषायकी मुजगार, श्रव्पतर, श्रवस्थित और श्रवक्तव्यस्थितिकं उदीरक जीव है। नपुंसकवेदकी मुजगार, श्रव्पतर श्रीर श्रवस्थितिकं उदीरक जीव है। सम्यग्मिश्यात्वका मंग श्रोषके समान है। इसीप्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए। सामान्य तिर्यक्रींका मंग श्रीषके समान है। इसीप्रकार पश्चेन्द्रिय तिर्यक्षितिकं जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवंदकी उदीरणा नहीं है, योनिनियोंमें पुरुषवेद श्रीर नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है तथा स्त्रीवंदकी श्रवक्तव्यस्थितिकं उदीरक नहीं हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्य श्रपयीप्त श्रीर मनुष्य श्रपयीप्तकोंमें भिथ्यात्व श्रीर नपुंसकवेदकी मुजगार, श्रव्यत्व श्रीर श्रवस्थितस्थितिकं उदीरक जीव है। सोलह कपाय श्रीर छह नोकषायका मंग श्रोषके समान है। मनुष्यत्रिकमं श्रोषके

तिए श्रोघं । एवरि पञ्ज० इत्थिवे० एात्थि । मणुमिणीसु पुरिसवे०-एावुंस० एात्थि ।

\$ ७१०. देवेसु मिच्छ०-सम्म०-ममामि०-मोलमक०-ग्रहणोक० ग्रोघं। णवरि इत्थिवे०-पुरिमवे० अवत्त० णित्य । एवं भवण०-वाणवें०-जोर्दिसि०-सोहम्मी-साणे ति । मणक्कुमारादि सहस्सार ति एवं चेव । णवरि इत्थिवे० णित्य । आणदादि णवरेवज्ञा ति मिच्छ०-सम्मामि०-मोलमक०-छण्णोक० ग्रत्थि ग्रप्प०-श्रवत्त० । पुरिमवे० श्रात्थि ग्रप्प०द्विदिउदी० । सम्म० ग्रात्थि भ्रुज०-ग्रप्प०-ग्रवत्त०-द्विदिउदी० । श्रणुद्दिमादि मन्त्रद्वा ति सम्म०-बारमक० छण्णोक० श्रात्थि श्रप्प०-ग्रवत्त० । पुरिमवे० श्रात्थि श्रप्प०द्विदिउदी० । एवं जाव० ।

\$ ७११. मामित्ताणु० दुविहो णि० — ख्रोघेण ख्रादेसेण य । ख्रोघेण मिच्छ०-श्रणंताणु०४ भुज०-ख्रप्प०-ख्रवद्वि०-अवत्त० कस्म ? ख्रण्णद० मिच्छाइद्विस्म । सम्मत्तस्स भुज०-ख्रप्प०-ख्रवद्वि०-ख्रवत्त० कस्म ? ख्रण्णद० सम्माइद्वि० । सम्मामि० ख्रप्प०-ख्रवत्त० कस्म ? ख्रण्णद० सम्मामिच्छादिद्वि० । बारसक०-णवणोक० भुज०-अवद्वि० कस्म ? ख्रण्णद० मिच्छाइद्वि० । अप्प०-ख्रवत्त० कस्म ? ख्रण्णद० मिच्छा-

समान भंग है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें म्बीवेदकी उदीरणा नहीं है और मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है।

१७१०. देवोंमे मिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्निण्यात्व, सोलह कपाय और श्राठ नोकपाय-का भंग श्रांघके समान हैं। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी श्रवक्तव्य-स्थितिक उदीरक जीव नहीं है। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्यांतिषी और सौधम ऐशान-कल्पके देवोंमे जानना चाहिए। सनत्कुमारकल्पसे लेकर सहस्रारकल्पतकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। श्रानन्तकल्पसे लेकर नौ प्रैवेयकतकके देवोंमे मिण्यात्व, सम्यग्निण्यात्व, सोलह कपाय श्रोर छह नोकपायकी श्रवण्यतर श्रीर अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव हैं। पुरुषवेदकी श्रवणतरस्थितिके उदीरक जोव हैं। सम्यक्त्वकी सुजगार, श्रवण्यतर श्रोर श्रवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव हैं। श्रनुदिशसं ,लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कपाय श्रीर छह नोकपायकी श्रवणतर श्रीर श्रवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव है। पुरुषवेदकी श्रवणतरस्थितिके उदीरक जीव हैं। इसीप्रकार श्रनहरूपक मार्गणातक जानना चाहिए।

५०११. स्वामित्वानुगमकी अपेता निर्देश दे। प्रकारका है—ओघ और आदेश। आघसे मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धीचनुष्ककी मुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवस्तव्यश्थितिके उदीरक जीव कौन हैं ? अल्पतर मिध्यादृष्टि जीव उदीरक हैं। सम्यक्त्वकी मुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवस्तव्यश्थितिके उदीरक जीव कौन हैं ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि जीव उदीरक हैं। सम्यग्मिध्यात्वकी अल्पतर और अवस्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कौन हैं ? अन्यतर सम्यग्मिध्याद्वकी अल्पतर और अवस्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कौन हैं ? अन्यतर सम्यग्मिध्यादृष्टि जीव उदीरक हैं। बारह कषाय और नौ नोक्रपायकी भुजगार और अवस्थित-स्थितिके उदीरक जीव कौन हैं ? अन्यतर मिध्यादृष्टि जीव उदीरक हैं। अल्पतर और

इद्विस्स सम्माइद्विस्स वा ।

६ ७१२. त्रादेसेण एरइय० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलमक०-सत्तरणोक० त्रोघं। णवरि णवुंस० अवत्त० णित्थ। तिरिक्खेसु श्रोघं। णवरि तिरिणवे० अवत्त० मिच्छ।इद्विम्स। एवं पंचिंदियितिरिक्खितिए। णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो एत्थि। जोणिणीसु पुरिसवे०-एवुंम० एत्थि। इत्थिवे० अवत्तव्यं च णित्थ। पंचिं०तिरि०अपज्ञ०-मणुसस्रपञ्ज० सव्वपयडी० सव्वपदा कस्स १ अण्णद०। मणुसतिए श्रोघं। णवरि पज्जत्तरसु इत्थिवेदो णित्थ। मणुमिणी० पुरिसवे०-एवुंस० णित्थ। इत्थिवे० अवत्त० कस्स १ अण्णद० सम्म।इद्विस्स।

§ ७१३. देवेसु सत्तावीसपयडी० श्रोघं। एवि इत्थिवे०-पुरिसवे० श्रवत्त० एत्थि। एवं भवए०-वाएवें०-जोदिमि०-सोहम्मीमाणा ति। एवं सएक्कुमारादि सहस्सारा ति। णविर इत्थिवे० एत्थि। श्राणदादि एविगेवज्जा ति मिच्छ०- श्रणंताणु०४ श्रप्प०-श्रवत्त० कस्म १ श्रण्णद० मिच्छाइहि०। सम्म० भ्रज०-श्रप्प०- श्रवत्त० कस्स० १ श्रण्णद० सम्मामि० श्रोघं। बारसक०-छण्णोक० अप्प०-

श्चवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कौन हैं ? श्चन्यतर मिध्यादृष्टि श्रार सम्यग्दृष्टि जीव उदीरक हैं।

६ ७५२. त्रादेशसे नारिकयोंमें भिण्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व, सोलह कपाय और सात नोकषायका भंग छ। घके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें नपुं सकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव नहीं हैं। तिर्यव्चोंमें श्रोयके समान मंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें तीन वेदकी अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव भिण्यादृष्टि हैं। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय नियञ्च- त्रिक्कमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें खीवेदकी उदीरणा नहीं है और योनिनियोंमें पुरुपवेद तथा नपुं सकवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा इनमें खीवेदके उदीरकोंवा अवक्तव्यपद नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त छोर मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोके उदीरक जीव कोन हैं श्री अन्यतर जीव उदीरक हैं। मनुष्यितिकमें श्रोयके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें खीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुपवेद श्रीर नपुं सकवेदकी उदीरणा नहीं है। मनुष्यिनियोंमें खीवेदकी अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कौन हैं श्री अन्यतर सम्यग्दृष्टि जीव उदीरक हैं।

[§] ७१३. देवोंमं सत्ताईस प्रकृतियोंका भंग श्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें स्नीवेद श्रीर पुरुषवेदकी श्रवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव नहीं हैं। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म श्रीर ऐशानकल्पके देवोमें जानना चाहिए। इसीप्रकार सनत्कुमारसे लेकर सहस्रारकल्पतकके देवोमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्नीवेदकी उदीरणा नहीं है। श्रानतकल्पसे लेकर नौ प्रैवेयकतकके देवोमें मिथ्यात्व श्रीर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी श्रव्यतर श्रीर श्रवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कौन हैं श्रिष्टात्व प्रियादिष्ट जीव उदीरक हैं। सम्यक्तकी भुजगार, श्रव्यतर श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कौन हैं श्रिन्यतर सम्यक्तकी भुजगार, श्रव्यतर श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कौन हैं।

श्रवत्त० कस्स १ अण्णद० मिच्छाइडि० सम्माइडिस्स वा । एवं पुरिसवे० । एविरि अवत्त० एतिथ । अणुदिसादि सन्बद्धा ति वीसं पय० सन्वपदा कस्स १ अण्णद० । एत्थोघपरूवणाए पुरिसवे०-चदुमंजलणभुजगारो सम्माइडिस्स वि लन्भइ । एवं मणुसतिए चदुसंजलणभुजगारो वत्तन्वो । एविरि एस संभवो एत्थ ण विविक्षिओ । एवं जाव० ।

७१४. कालाणुगमेण दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ० भुज० जह० एयम०, उक० चत्तारि मनया। श्रप्प०द्विदिउदी० जह० एयमभन्नो, उक० एकत्तीमं मागरो० मादिरेयाणि । श्रविद्विदिउदी० जह० एगममओ, उक० अतोमुहुत्तं । श्रवत्त०द्विदिउदीरणा० जह० उक० एयस० । मम्म० भुज०-श्रविद्वि०-श्रवत्त०द्विदिउदी० जह० उक० एयस०। श्रप्प०द्विदिउदी० जह० श्रंतोमु०, उक० छावद्विमागरो० देस्णाणि । मम्मामि० श्रप्प०द्विदिउदी० जह० उक० अंतोमु०। श्रवत्त० जह० उक० एथम०। मोलसक०-भय-दुगुंद्वा० भुज०द्विदिउदी० जह० एगम०, उक० एगम०। सम्मामि० श्रप्प०द्विदिउदी० जह० एगम०, उक० एगम०। एवं हस्म-एदि०। जह० एयम०, उक० श्रंतोमु०। अवत्त० जह० उक० एगम०। एवं हस्म-एदि०।

बारह कथाय श्रीर छह से प्रपासकी श्रालांतर श्रीर अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कीत हैं ? अन्यतर मिश्यादृष्टि श्रीर र स्थरदृष्टि जात्र उदीरक है। इगीप्रकार पुरुष्वेदके विषयमें समस्ता चाहिए। इतनी विशेषता हैं कि इतमें पुरुष्येद ती श्रावकत्य स्थिति उदीरणा नहीं है। श्रावुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देदोंने बीस प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीव कीत हैं। श्रान्यतर जीव उदीरक हैं। यहाँपर श्रीयपस्त्रपणांके श्रान्मार पुरुष्वेद श्रीर चार संज्ञातनका सुजगारपद सम्यादृष्टिके भी उपलब्ध होता है। इसीप्रकार समुद्धितिकों चार संज्ञातनका सुजगारपद कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह र स्मन्न ह इसकी यहाँ विश्वता नहीं है। इसीप्रकार श्राहारक मार्गणातक जानना चाटिए।

१७१४. कालानुगम की अपेन्ना निर्देश दो प्रकारवा है — आंच और आवंश। आंवसं निष्यात्वकी मुजगार स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर है। अवस्थित स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर है। अवस्थित स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उन्कृष्ट काल स्थन्त मुहर्त है। अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्वकी मुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अल्पतर स्थिति उदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मूहर्त है और उत्कृष्ट काल स्थन्त मुहर्त है। अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य काल चन्त्र है। सालह कपाय, भय और जुगुष्साकी मुजगारिस्थित उदीरणाका जघन्य काल एक समय है। सालह कपाय, भय और जुगुष्साकी मुजगारिस्थित उदीरणाका जघन्य काल एक समय है। सालह कपाय, भय और उत्कृष्ट काल अल्पतर और अवस्थितिस्थित उदीरणाका जान्य काल एक समय है सालह कपाय, भय और उत्कृष्ट काल अल्पतर और अवस्थितिस्थित उदीरणाका जान्य काल एक समय है। इमीप्रकार

णविर श्रप्पद० जह० एयस०, उक्क० छम्माया । एवमरिद-मोग० । णविर श्रप्प० जह० एयस०, उक्क० पिलदो० श्रमंखे०भागो । एवमित्थिवे० । णविर श्रप्प० जह० एगस०, उक्क० पणवण्णपिलदो० देस्रणाणि । एवं पुरिसवे० । णविर श्रप्प० जह० एयम०, उक्क० तेविद्विमागंगवमयदं तीहि पिलदोवमेहि सादिरेयं । एवं णवुंस० । एविर श्रप्पद० जह० एयम०, उक्क० तेतीसं सागरो० देस्रणाणि ।

हास्य और रितकी अपेचा जानना चाहिए। इननी विशेषता है कि इनकी अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल छह महीना है। इसीप्रकार अरित और शोककी अपेचा जानना चाहिए। इननी विशेषता है इनकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातचें भागप्रमाण है। इसीप्रकार स्त्रीवेदकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुद्ध कम पचवन पत्य है। इसीप्रकार पुरुपवेदकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन पत्य अधिक एकसी बेसठ सागर है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसका अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुद्ध कम तेनीस सागर है।

विशेषार्थ-जिस जीवने मिध्यात्वका कमसे कम एक समयतक मृजगारिस्थितिबन्ध किया है उसके तदनुसार एक समयतक भुजगार स्थिति उदीरणा होनेपर मिध्यात्वकी भुजगार स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय कहा है। तथा जिस जीवने श्रद्धात्तय श्रोर संक्लेश-चय आदिके क्रमसे अधिकसे अधिक चार समयतक मिध्यात्वकी भूजगार स्थितिका बन्ध किया हैं उसके चार समयतक भूजगार स्थिति उदीरणा सम्भव होनेसं मिश्यात्वकी भूजगार स्थिति-उदीरणाका उत्कृष्ट काल चार समय कहा है। जिस जीवने कमसे कम एक समयतक श्रल्पनर स्थितिका बन्य किया है उसके मिथ्यात्वकी एक समय तक श्रहातर स्थितिउदीरणा सम्भव होनेसे उसका जबन्य काल एक समय कहा है। तथा नीवें प्रैवेयकमें मिध्यादृष्टिके मिध्यात्वर्का निरन्तर ऋल्पतर स्थिति उदीरणा होनेसे उमका उत्कृष्ट काल इकतीस सागर कहा है। जिस जीवने सत्कर्मके समान भिध्यात्ववी ऋवस्थित स्थितिका एक समयनक बन्ध किया है उसके एक समयतक उसकी अवस्थित स्थितिउदीरणा सम्भव होनेसे उसका जघन्य काल एक समय कहा है। तथा जिसने सत्कर्मक समान अन्तर्मुहर्त कालतक उसका अवस्थित स्थितिबन्ध किया है उसके उतने कालनक मिथ्यात्वकी ऋवस्थित स्थितिउदीरणा सम्भव होनेसे उसका उत्कृष्ट काल अन्तर्महर्त कहा है। इसकी अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है यह स्पष्ट ही हैं, क्योंकि जो सम्यान्हिंड जीव मिध्यात्वका ऋतुदीरक होकर मिध्याहिष्ट होनेपर प्रथम समयमे इसकी उदीरणा करता है उसकी श्रवक्तव्य संज्ञा है। वेदकसम्यक्त्वका जघन्य काल अन्तर्भुहर्त है श्रोर उत्कृष्ट काल कुछ कम छचासठ सागर है, इसलिए सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थिति उदीरसाका जघन्य काल अन्तर्महर्त झौर उत्कृष्ट काल कुछ कम छ्यासठ सागर कहा है। जो मिध्यादृष्टि जीव सम्यक्त्व सत्कर्मसे दो समय अधिक आदि मिध्यात्वर्का स्थिति बाँधकर वेदकसम्यग्दृष्टि होता है उसके सम्यक्त्वकी भुजगार स्थितिविभक्ति एक समय तक पाई जानेसे उसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। जो निध्यादृष्टि जीव

" ७१४. श्रादेसेण ऐग्इय० मिच्छ०-सोलमक०-छण्णोक० सुज०द्विदिउदी० जह० एयम०, उक्क० तिण्णि समया श्रद्धारम समया । श्रप्प०-श्रवद्वि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। श्राप्त० जह० उक्क० एयस०। एविंग श्राप्ति-सोग० श्रप्पद० जह० एयस०, उक्क० पित्ति श्राप्ति श्राप्ति श्राप्ति सोग०

सम्यक्त सत्कर्मसे मिथ्यात्वकी एक समय श्राधिक स्थिति बाँधकर वेदकसम्यग्द्राष्ट्र होता है उसके सभ्यक्त्वकी श्रवस्थित स्थितिविभक्ति एक मण्यतक पाई जानेसे उमका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा जो मिध्याद्यव्टि या उपशमसम्यग्द्रव्टि जीव वेदक-सम्यग्द्रिंट होता है उसके प्रथम समयमे एक समयतक अवक्तव्य स्थिति उदीरणा होनेसे उसका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। सम्यागिध्यात्व गुण्स्थानका काल श्रन्तर्मुहूर्त है, इमलिए सम्यग्निश्यात्वकी श्राल्पनर स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रान्तर्मूहर्त कहा है। तथा इस गुणुस्थानके प्रथम समयमें समयग्निध्यात्वकी श्ववक्तव्य स्थितिउदीरणा होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। सोलह कवाय श्रीर नौ नोकषायोंकी भुजगार, श्रल्पतर श्रौर श्रवस्थित स्थितिउदीरणाठा जवन्य काल एक समय मिध्यात्वकी भुजगारादि स्थितिउदीरणाके जघन्य वालके समान घटित कर लेना चाहिए। इन सब प्रकृतियोंकी भुजगार स्थित खीरणाका जो उत्कृष्ट काल उन्नीस समय बतलाया है उसका खुलामा इम प्रकार हैं-जिस एकेन्द्रियकी सत्रह समय अधिक एक आवित आयु शेप है वह विश्वति कपायके सिवाय शेप पन्द्रह कपायोंका क्रममं श्रद्धात्त्वय होनेसं स्थिति बढ़ाकर बन्ध करे. फिर बन्यक्रमसे एक आविल कान जानेपर उनी क्रमसे पन्द्रह समयोक भीतर विविच्चित कपायमें उनका संक्रम करें। इसप्रकार भुजगारके ये पन्द्रह समय हुए। पुनः सोलहवें समयमें श्रद्धात्त्रयसं विवत्तित कपायका स्थिति बढ़ाकर बन्ध करे, पुनः सत्रहवें समयमे संक्लेशत्त्रयसे विविज्ञत कपायके साथ सब कषायांका स्थिति बढ़ाकर बन्ध करे, पुनः श्रठारहवें समयमें मरकर एक विष्रहसे सिज्ञयोमें उत्पन्न होकर असंज्ञीके योग्य मुजगार स्थितिका बन्ध करे, पुनः उन्नीसवें समयमें संज्ञीक योग्य स्थिति बढ़ाकर बन्य करे। इस प्रकार प्रत्येक कपायके भुजगारके उन्नीस समय होकर इसी क्रमसे उदीरणा होनंपर प्रत्येक कपायकी भूजगार स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल उन्नीस समय कहा है। इसीप्रकार ना नाकपायोंकी मुजगार स्थितिउदीरणाका काल यथासम्भव जान लेना चाहिए। इन सब प्रकृतियोंकी अवक्तव्य स्थितवदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है यह स्पष्ट ही हैं। इन सब प्रकृतियोंकी श्रविश्थित श्रिविन उदीरगाका उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहुर्त है यह भी स्पष्ट है। मात्र इनकी श्रल्पतर स्थिति उदीरगाका काल १८ का अन्तर्मुहर्त ओर शेषका जुदा-जुदा है सो जानकर घटित कर लेना चाहिए। कोई कठिनाई न होनंस यहाँ अलगस स्पर्धां करण नहीं किया।

े ७१५. त्रादंशसं नारिकयोमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय श्रोर छह नोकपायकी भुजगार स्थिति उदीरणाका जवन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल तीन समय तथा श्रठारह समय है। अल्पतर श्रीर अवस्थित स्थिति उदीरणाका जवन्य काल एक समय श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त हैं। अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। इतनी विशेषता है कि श्ररित श्रीर शोककी अल्पतर स्थिति उदीरणाका जवन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यात में भागप्रमाण है। हास्य श्रीर रितकी भुजगार

जह० एयस०, उक्क० मत्तारम समया । सम्म० भुज०-अन्निहि०-अन्ति० जह० उक्क० एगस० । अप्प०द्विदिउदी० जह० एगम०, उक्क० तेत्तीमं मागरो० देसणाणि । सम्मामि० ख्रोघं । णवुंम० भुज०द्विदिउदी० जह० एयम०, उक्क० अद्वारस समया । अप्प० जह० एगम०, उक्क० तेत्तीमं मागरो० देसणाणि । ख्रवद्वि० जह० एयस०, उक्क० अंतोम्र० । एवं पढमाए । णवरि सगद्विदी । अरदि-मोग० अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोम्र० ।

६ ७१६. बिदियादि मत्तमा ति मिच्छ०-मोलमक०-छण्णोक० भुज० जह० एयसमञ्चो, उक्क० बेसमया सत्तारम समया । अप्पद्० अवट्टि० अवच्च० पटमाए भंगो । सम्म० ओघं । णवि अप्पद्० जह० अतोमु०, उक्क० सगद्धिदी देख्णा । सम्मा० ओघं । णवुंम० भुज०द्दिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० मत्तारस समया । अप्पद्० जह० एयम०, उक्क० सगद्धिदी देख्णा । अवद्दि० ओघं । णवि मत्तमाए

स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सत्रह समय है। सम्यक्त्वकी भुजगार, श्रविश्वित श्रोग अवस्त्रव मिथितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट के ल एक समय है। श्रवित इंगिरणाका जघन्य काल एक समय है श्रोग उत्कृष्ट के ल एक समय है। श्रवित उदीरणाका जघन्य काल एक समय है। सम्यगिष्ण्यात्वका भंग श्रोघके समान है। नपुंसकवेदकी भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रवारह समय है। श्रवित उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस संगर है। श्रवित स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ काल श्रव्या स्थित संगर है। अवस्थित स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रव्या स्थिति कहनी है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए। इन्हीं विशेषता है कि श्रपनी स्थित कहनी चाहिए। श्रव्यति श्रोर श्राककी श्रव्यत स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रव्यति श्रीर

विशेषार्थ— "केन्द्रिय जीव मरकर नरकमे नहीं उत्पन्न होता, इमिलए याँ मिध्यात्वकी मुजगार स्थितिउदीरणांक तीन समय खोर लीलह कपाय तथा खरित-शांक और भय-जुगुष्साकी मुजगार स्थितिउदीरणांक खठारह समय कहे हैं। मात्र मुजगार स्थितिउदीरणांक खठारह समय कहे हैं। मात्र मुजगार स्थितउदीरणांक ये खठारह समय हास्य खौर रितिके नहीं प्राप्त होते, इसिलिए इनकी खपेचा सत्रह समय कहे हैं। शेष कथन सुगम है।

६ ७१६. दूमरी पृथिवीसे लंकर सातवी पृथिवीतकके नार्राक्यों में मिण्यात्व, सालह कपाय और छह नांकपायको भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय तथा सबह समय है। अल्यतर अवस्थित और अवकल्य स्थितिउदीरणाका भग प्रथम पृथिवीके समान है। स्थयक्तवका भंग आघके समान है। इतनी विशेषता है कि अल्पतर स्थितिउदीरणाका जवन्य काल अन्तर्मुहत है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यिमध्यात्वका भंग ओघके समान है। न्पुंसकवेदकी भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय ह और उत्कृष्ट काल सबह समय है। अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय ह आर उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय ह आर उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अवस्थित स्थितिउदीरणाका मंग ओघके समान है। इतना विशेषता है कि सातवीं पृथिवीम

त्रादि-मोग० त्रप्प० जह० एयम०, उक्त० पत्तिदो० त्रमंखे०भागो ।

६ ७१७. तिरिक्खेसु मिच्छ० श्रोध । णविर श्रप्त० जह० एयम०, उक्क० तिण्णि पिलदो० मादिरेयाणि । एउमित्थिवेद-पुरिमवेदार्गा । मोलस्य०-छण्णोक० श्रोधं । णविर श्ररदि-मोग०-हस्म-एदि० श्रप्प० जह० एयम०, उक्क० अंतोसु० । मम्म० ओधं । णविर श्रप्प० जह० एयम०, उक्क० तिण्णि पिलदो० देस्णाणि । मम्मामि० श्रोधं । णवुम० श्रोध । णविर श्रप्प० जह० एगम०, उक्क० पिलदो० श्रसंखे०भागों । एवं रिचिदियतिरिक्खितिए। णविर णवुंस० श्रप्प० जह० एयम०, उक्क० पुट्यकोडिपुधत्त । पञ्जत० इत्यिवे० णित्य । जाणि तीसु पुरिमवेद-णवुंम० णित्य । हत्यिवे० अवत्तव्यं च णित्य । सम्म० श्रप्प० जह० अंतोसु०, उक्क० तिण्णि पिलदो० देस् पाणि।

श्चरति त्र्योग शोक्की शल्प र स्थितिउदीरगाका जयन्य काल एक समा ह श्रोर उत्कृष्ट काल पल्यके श्वसंख्यातचे साग सागा है।

विश्वेषार्थ — द्वितीयादि सरकोमे असंज्ञा जीय मरकर नहीं उत्पन्न होता, इमिलिए इसमें मिथ्यात्वकी मुजगार स्थितिउदीरणाचा चत्वृष्ट वाल दो समय तथा सोलह बपाय और सात नोकपायोकी मुजगार रिथितिउदीरणाचा चत्वृष्ट माल स्वत्र समय वया हो। अरित और शोककी चल्यत करितादारणाचा चल्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण सातवें नरकमें ही प्राप्त होता है। बोप कथन सुगम है।

७१७ निर्यक्रोमे मिथ्यात्यमा भंग श्रोचके समान है। इतनी विशापता है कि श्रालपतर स्थिनिउर्दारणाका जवन्य काल एक गमय ह अर उत्कृष्ट काल साधक तीन पल्य ह । इसीप्रकार खींचे श्रोर पुरुष्यक्रा अपचा जानना चाहिए। सालह कपाय श्रोर छह नो क्ष्पत्यका भंग श्रोपक मान है। इतनी विश्वपता त कि श्रार्थन-शोक तथा हाम्य-रिनर्श श्रालपतर रिथिनि उदीरणाका जवन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रान्तमूहर्त है। सम्यक्त्वका भंग श्रोपक समान है। इतनी विशेषता है कि इनकी श्रालपतर स्थित-उदीरणाका ज न्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल कुछ कम तान पल्य है। सम्यांमध्यात्यका भंग श्रोपक समान है। नपुंसकवेदका भंग श्रोपक समान है। इतनी विश्वपता है कि श्रान्य रिथिनि उदीरणाका जवन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रासंख्यात्रवे भागप्रमाण है। इसीप्रकार पश्चीन्द्रयित्यिक्चित्रको कान्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल पृत्वकोटिष्टथक्त्वप्रमाण है। पर्याप्तकोमे खीवेदकी उदीरणा नहीं है श्रार योनिनयोमे पुरुपवेद तथा नपुंसकवेदकी अद्युर्ण नहीं है। पर्याप्तकोमे खीवेदकी उदीरणा नहीं है श्रोर उत्कृष्ट याल कुछ कम तीन पल्य है।

विशेषार्थ — नपु सकवेदका अल्पतर स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण सामान्य तियञ्जो ही सनता है। शष कथन सुगम है। ९ ७१८. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ञ०-मणुसअपञ्ज० मिच्छ० भ्रुज०द्विदिउदी० जह० एगस०, उक्क० चत्तारि समया । अप्प०-अवद्वि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। एवं णवुंस०। णविर भ्रुज० जह० एयस०, उक्क० एगूणवीसं समया। एवं सोलसक०-इण्णोक०। णविर अवत्त० जह० उक्क० एयसमञ्जो।

१७१९. मणुमतिए पंचिदियतिरिक्खतियभंगो । णवरि सम्म० अप्प० जह० अंतोम्र० । पञ्जत्त० सम्म० अप्प० जह० एगस० । मणुसिर्णा० इत्थिवे० अवत्त० जह० उक्क० एयस० ।

६ ७२०. देवगदीए देवेसु मिच्छ०-सोत्तसक०-छण्णोक० पढमपुढविभंगो । एविरि मिच्छ० ऋष्प० जह० एगस०, उक्क० एकत्तीसं सागरोवमाणि । हम्स-रिद० भुज० जह० एयम०, उक्क० ऋद्वारस समया । ऋष्प० जह० एगम०, उक्क० छम्मासं । ऋरदि-मोगाएं भुज० जह० एयस०, उक्क० सत्तारस ममया । सम्म० ऋोघं । णर्वार

६७१८. पञ्चोन्त्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त श्रीर मन्ष्य अपर्याप्तकोमे मिध्यात्वकी भुजगार म्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल चार समय है। अल्पनर श्रीर अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल उन्नीस समय है। इसीप्रकार संलह कपाय श्रीर छह नोकपायकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है।

६७१६. मनुष्यत्रिकमे पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी श्रव्यतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल श्रन्तर्मुहूर्त है। मनुष्य पर्याप्तकोंमें सम्यक्त्वकी श्रव्यतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है। मनुष्यिनियोमे स्नीवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है।

विशेषाथं— उत्तम भागभूमिकी अपेत्ता मनुष्य पर्याप्तकोमें सम्पक्ष्यकी श्रल्पतर स्थितिउदीरणाका जपन्य काल एक समय बन जाना है. क्योंकि जो मनुष्यिनी जायिक सम्यक्ष्यको ।
उत्पन्न कर रही है उसके सम्यक्ष्यकी उदीरणामें एक समय शेष रहने पर भरकर वहाँके ।
मनुष्य पर्याप्तकांमें उत्पन्न होनेपर यह काल प्राप्त होता है तथा उपशमश्रेणिकी अपेत्ता
मनुष्यिनियोंमें खीवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय बन
जाता है। शेष कथन सुगम है।

्र ७२०. देवगितमे देवोमे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नेकपायका भंग प्रथम पृथिवीके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उन्कृष्ट कान इकतीम सागर है। हास्य और रितकी भुजगार स्थिति- उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उन्कृष्ट काल अठारह समय है। अल्पतर स्थिति- उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उन्कृष्ट काल छह महीना है। अर्रात और शोककी

१. ता०-भा०प्रत्योः उक्क० देवगदीए इति पाठः ।

श्राप्य जह एयस , उक्क तेत्तीसं मागरोत्रमाणि । सम्मामि श्रोघं । इत्थिवे - पुरिस्तवे हस्मभंगो । एवरि श्राप्य जह एयम , उक्क पणत्रण्णं पितदोत्रमं देसणं तेत्तीसं सागरोत्रमं । श्रवत्त एरिय । एवं भवण - वाणवें । एवरि सगिहिदी । मिच्छ । श्राप्य जह एयस , उक्क श्रांतोमु । सम्म श्राप्य जह अंतोमु । इत्थिवे श्राप्य जह एयस , उक्क तिण्णि पितदो देस णाणि पितदो । सादिरेयाणि । हस्स-रिव श्राप्य जह एगम , उक्क अंतोमु । जोदिमि वाण-वेंतरभंगो । णवरि मिच्छ - मोलसक श्रहणोक भुन जह एगस , उक्क वे समया मत्तारम समया । मोहम्मादि जात्र महस्मारे ति एवं चेत्र । णवरि मगिहिदी । मम्म श्राप्य जह एयम , उक्क सगिहिदी । इत्यिवेद श्राप्य जह एयस , उक्क पणवण्णं पितदोवमं देस गां । सणक्कुमार्गाद सु इत्थिवेद । णित्य । महस्मारे हस्म-रिव श्राप्य श्रोघं ।

भजगार स्थितिउदीरणाका जवन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल सत्रह समय है। सम्यक्त्वका भंग स्रोचक समान है। इननी विशेषता है कि अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है छोर उत्क्रप्ट काल तेतीस सागर है। सम्यग्मिश्यात्वका भंग खोचके समान है। स्त्रीवेद और परुपवेदका भंग हास्यके समान है। इतनी विशेषता है कि अल्पतर स्थिति-उदीरगाका जबन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कमसे कुछ कम पचवन पल्य और पूरा तेतीस सागर है। इनकी अवक्तस्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासी श्रीर व्यन्तर देोमे जानना चाहिए। इतनी त्रिशेषता है कि श्रपनी स्थित कहनी चाहिए। मिण्यात्वर्वा अल्यनर रिथनिउदीरणाका जबन्य काल एक समय है स्त्रीर उत्कृष्ट काल स्रन्तर्सृहर्त है। सम्यक्त्वकी ऋल्पनर् स्थितिउदीरणाका जघन्य काल श्रन्तर्मुहर्त है। स्त्रीवेदकी श्रल्पतर स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य श्रीर साधिक एक पत्य है। हास्य-रितकी ऋल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल झन्तर्महर्त है। ज्योतिर्पा देवोंमें व्यन्तरदेवोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, सोलह केषाय श्रीर श्राठ नोकषायकी भुजगार स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय श्रीर सत्रह समय है। सीधर्म श्रादिसे लेकर सहस्रार कल्पनकके देवोमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। सम्यक्त्वकी श्रल्पतर स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्क्रष्ट काल श्रपनी स्थितिप्रमास है। स्त्रीवेदकी श्रलपतर स्थिति उदीरमाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम पचवन पल्य है। सनत्कुमारादिम स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। सहस्रारमें हास्य और रतिकी श्रलपतर स्थिति उदीरणाका भंग श्रोघके समान है।

विशेषार्थ—जो जीव मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है उसके मरणके पूर्व अरित और शोकका बन्ध नहीं होता, इसलिए देवोमें अरित और शोककी भुजगार स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल सत्रह समय कहा है। इसीप्रकार नारिकयोंमें मरकर जो जीव उत्पन्न होता है उसके मरणके पूर्व हास्य और रितका बन्ध नहीं होता, इसलिए नारिकयोंमें हास्य और रितकी भुजगार स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल सत्रह समय कह आये हैं। शेष कथन सुगम है।

- ५७२१. त्राणदादि जाव णवगेवजा नि मिच्छ० ऋप्पै० जह० संतोमुहुत्तं, उक्क० मगद्विदी । अवत्त० जह० उक्क० एयम० । सम्प्र० भ्रज०-अवत्त० जह० उक्क० एयम० । अप्प० जह० एयम०, उक्क० मगद्विदी । सम्प्रामि० ओघं । सोलस्क०- छण्णोक० अप्प० जह० एगम०, उक्क० अंतोमु० । अवत्त० जह० उक्क० एगम० । पुरिमवे० अप्प० जहण्णुक्क० जहण्णुकस्मद्विदी ।
- ५७२२. ऋणुहिमादि मन्बद्घा ति सम्म० ऋष्० जह० एगम०, उक्क० समिद्विदी । अवत्त० जह० एयम०, उक्क० एगसमञ्जी । प्रिसिये० ऋष्प० जहण्णुक्क० जहण्णुकम्मद्विदीश्रा । वारमक०-छण्णोक० ऋष्प० जह० एगरा०, उक्क० यांनीमु० । अवत्त० जह० उक्क० एगम० । एवं जाव० ।
- : ७२३. श्रंतराणु० दुदिहो णि०-- श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ० भुज०-श्रवद्वि० जह० एयम०, उक० नेवद्विमागरोवमगदं नीहिं पिनिद्रविमेहिं सादिरेयं। अप्प० जह० एयम०, उक० बेछाउद्विपागरो० देस्साहित्। श्रवत्त० जह० अंतोमु०,
- े ७२१. त्रान्तवलपसे लंकर मी प्रैवेयक तकके देत्रोमें मिण्यात्वकी अल्पत्र स्थितिउद्गिगाका जपन्य काल अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है।
 अवक्तव्य स्थितिउद्गिगाका जपन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्वकी भुजगार
 और अवक्तव्य स्थितिउद्गिगाका जपन्य और उन्कृष्ट काल एक समय है। अल्पतर स्थितिउद्गिगाका जपन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट कल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है।
 सम्यग्निश्यात्वरा भंग ओपके रामान है। सोलह कपाय और छह नोकपायकी अल्पतर
 रिथितिउद्गिग्णाका जपन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त है। अवक्तव्य
 स्थितिउद्गिरणाका जपन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। पुरुषवेदका अल्पतर स्थितिउद्गिरणाका जपन्य और उत्कृष्ट काल जपन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।
- ६७२२. श्रमुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धिनकके देवोम सम्यक्त्वकी श्रल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय हे छोर उन्हरूट काल अपनी-श्रपण स्थितिप्रमाण है।
 श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है छोर उत्हरूट काल एक समय है।
 पुरुपवेदकी श्रल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्हरूट काल अघन्य श्रीर उत्हरूट
 स्थितिप्रमाण है। बारह कपाय श्रीर छह नोक गयकी श्रल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य
 काल एक समय है और उत्हरूट काल श्रन्तर्मुहर्त है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर
 उत्हरूट काल एक समय है। इसीवकार श्रमहारक मार्गणाक जानना चाहिए।
- ७२३. अन्तरानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—आव और आदेश। श्रोघसे मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर तीन पत्य अधिक एकसी त्रेसठ सागर है। अत्यत्तर स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छुचामठ सागरप्रमाण है। अवक्तट्य

१. म्राब्प्रती मिब्बुव जहर स्राप्तव, ताब्द्र से मिब्बुव जहर (सुत) स्रव्यव इति पाठः ।

उक्क० उन्हुपोग्गलपियट्टं। एनमणंताणु०४। णनि स्रवत्त० जह० स्रंतोमु०, उक्क० बेद्धानिहिसागरो० देख्याणि। एनमहुकसाय०। णनि स्रप्य०-स्रवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० पुन्नकोडी देख्या। एनं चदुसंजल्या-भय-दुगुंद्धा०। णनि श्रप्य०-स्रवत्त० जह० एगस०, उक्क० स्रंतोमु०। एनं हस्स-रिद०। यानि श्रप्य०-स्रवत्त० जह० एगम० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सािद्रियाणि। एनमरिद-सोग०। णनि श्रप्य० जह० एगम०, उक्क० द्यमासं। सम्म० भुज०-स्रप्य०-स्रविह०-स्रवत्त० सम्मािन० श्रप्य० स्रवत्त० जह० स्रंतोमुहुत्तं, उक्क० उन्नह्रपोग्गलपियट्टं। इत्थिवे० पुरिसवे० भुज०-स्रप्य०-स्रविह० जह० एयम०, स्रवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० सन्वेमिमणंतकालमसंखेला पोग्गलपियट्टा। णवुं स्वे० भुज०-स्रप्य०-स्रविह० जह० एगम०, उक्क० सागरोनमसद्वयन्तं। स्रवत्त० इत्थिवेरभंगो।

. स्थितिउद्दोरण(का जबन्य अपनार अपन्तर्मुहूर्त है ओर उत्कृष्ट अपनार कुब्र कम अर्घपुद्गाल-परिवर्तनप्रमाण है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी ऋषेज्ञा जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्महर्ते है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छचावठ सागरप्रमाण है। इसीप्रकार आठ कषायांकी अपेत्रा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रल्पतर श्रौर श्रवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर क्रमसे एक समय और अन्तर्म हुर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है। इसीप्रकार चार संज्वलन, भय श्रोर जुगुप्साकी श्रपेका जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्राल्यतर श्रीर अवक्तव्य स्थिति उदीर ए।का जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर हिर्न है। इसीप्रकार हास्य और रतिकी ऋषेज्ञा जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अल्पतर श्रीर अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तर क्रमसे एक समय श्रीर अन्तर्म हुर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक तंतीस सागर है। इसीप्रकार अरित और शोककी अपेसा जानना चाहिए। इतनी विशोषता है कि अल्पतर स्थिति उदीरणाका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर छह महीना है। सम्यक्त्वकी भुजगार, श्रल्पतर, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्य रिथति उद्देरिगाका तथा सम्यग्निध्यात्वकी श्राल्पतर श्रीर श्रावक्तव्य स्थिति उदीरगाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्महर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम श्रर्ध पुरूलपरिवर्तनप्रमाण है। स्नीवेर श्रीर पुरुषवंदकी भूजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो श्रासंख्यात पुद्रलपरिवर्तनप्रमाण है। नपुंसकवेदकी भुजगार, श्रल्पतर श्रीर श्रवस्थित स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर सौ सागर प्रथक्त्व-प्रमाण है। श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग त्रांघके समान है।

विशेषार्थ — जिन्होंने मनुष्यों श्रीर तिर्यक्कोंमे मिथ्यात्वकी सुजगार श्रीर श्रवस्थित स्थितिका उदीरणा प्रारम्भ किया। पुनः वहींपर श्रन्तसुंहूर्त कालतक श्रल्पतर स्थितिउदीरणासे उन्हें श्रन्तरित किया। पुनः वे तीन पल्यकी श्रायुवाले जीवोंमें उत्पन्न होकर श्रीर एकसी नेसठ सागर कालतक परिश्रमण करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुए श्रीर वहाँपर उन्होंने श्रन्तसूंहर्त

१. ता०प्रती अवत्त०-ग्रप्प० इति पाठः ।

९ ७२४. त्रादेसेण ग्रोग्ड्य० मिच्छ०-त्रणंताणु०४-हस्स-रिद० श्रुज०-श्रप्प०-श्रवद्वि० जह० एयस०, श्रवत्त० जह० अंत्रोग्नु०, उक्क० सच्वेसिं तेत्रीसं सागरो०

कालके बाद संक्लेशकी पर्ति करके भुजगार श्रीर श्रवस्थित स्थितिका बन्ध कर उनकी उदीरणा की। इसप्रकार मिथ्यात्वकी इन दोनों स्थिति उदीरणा श्रोंका तीन पत्य श्रधिक एकसौ त्रेसठ सागर-प्रमाण उत्कृष्ट अन्तर काल प्राप्त होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। जो जीव बीचमें सम्यग्निध्यात्व-को प्राप्त कर कुछ कम दो छ्यासठ सागर कालतक सम्यक्त्वके साथ रहकर मिध्यात्वमें आकर मिध्यात्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणा करता है उसके मिध्यात्वकी अल्पतर स्थिति-उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम दो छ यासठ सागरप्रमाण प्राप्त होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। किसी जीवके सम्यक्तवकी कमसे कम अन्तर्महर्तके अन्तरसे और अधिकसे अधिक कुछ कम श्रर्धपुद्रलपरिवर्तन कालके श्रन्तरसे उदीरणा होती है, इसलिए इसकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्रलपरिवर्तन-प्रमाण कहा है। कोई जीव कमसे कम अन्तर्मुहूर्त कालके अन्तरसे और आधिकसे अधिक कुछ कम दो छचासठ सागर कालके अन्तरसे पुनः मिध्यादृष्टि हो सकता है, इसलिए अनन्तानुबन्धीचतुष्कको अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दा छचासठ सागर कहा है। क्रमसे देशसंयम और सकल संयमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है, इसलिए आठ कषायोंकी अवत्तव्य स्थिति उदीर्णाका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त और अल्पतर व अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका उत्कृष्ट भन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि बन जानेसे तत्प्रमाण कहा है। उपशमश्रेणिमे चार संज्ञालन, भय, जुगुप्ताकी उदीरणा श्रान्तर्महर्त कालके श्रान्तरसे होती है, इसलिए इनकी श्रालपतर श्रीर श्रावक्तव्य स्थिति उदीरगाका उत्कृष्ट श्रान्तरकाल श्रान्तर्महर्त कहा है। सातवें नरकमें तथा उसमें उत्पन्न होनेके पूर्व श्रीर वहाँसे निकलनेके बाद श्रन्तर्गुहर्त कालतक हास्य श्रीर रतिकी उदीरणा न हो यह सम्भव है, इसलिए हास्य श्रीर रतिकी श्रत्पतर श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिच्दीरणाका उत्कृष्ट अन्तर काल साधिक तेतीस सागर कहा है। सहस्रार कल्पमें अरित श्रीर शोककी छह माहतक उदीरणा न हो यह सम्भव है, इसलिए इनकी श्रल्पतर स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट श्रन्तर काल छह महीना कहा है। यह जीव श्रनन्त काल अर्थात् असंख्यात पुद्रलपरिवर्तन कालतक नपु सकवेदी बना रहे यह सम्भव है, इसलिए खीवेद खौर पुरुषवेदकी भुजगारादि चारों स्थितिउदीरणाश्चोंका उत्कष्ट श्रन्तरकाल उक्त कालप्रमाण कहा है। यह जीव सौ सागर पृथक्त कालतक पुनः नपु सकवेदी न हो यह सम्भव है, इसलिए नपु सकवेदकी भुजगार, अल्पतर स्त्रीर स्रवस्थित स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट स्रन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। कोई जीव नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा करके अनन्त काल अर्थात् असंख्यात पुद्रलपरिवर्तन कालतक नपुंसकवेदी रहा, पुनः मरणपूर्वक श्रन्य वेदी होकर श्रन्तर्मुहूर्त काल बाद मरणपूर्वक पुन: नपुंसकवेदी हो गया उसके स्त्रीवेदके समान नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरगाका उत्कृष्ट श्रन्तर काल बन जानेसे वह उक्तप्रमाग कहा है। शेष कथन सुगम है।

९ ५२४. छ।देशसे नारिकयोंमें मिध्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, हास्य श्रीर रितकी भुजगार, श्रत्पतर श्रीर अवस्थित स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, श्रवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर कुक कम तेतीस सागर है।

देस्णाणि । एतमरिद-मोग० । णवि अप्प० जह० एयस०, उक्क० अंतोसु० । एवं बारसक०-भय-दुगुंद्धा० । णवि अवत्त० जह० उक्क० अंतोसु० । एवं णवुंस० । णवि अवत्त० जह० उक्क० अंतोसु० । एवं णवुंस० । णवि अवत० णित्थ । सम्म० भुज०-अवि०-अवित० सम्मामि० अप्प०-अवत्त० जह० अंतोसु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देस्रणाणि । एवं सत्तमाए । एवं पढमादि जाव बद्धि ति । णवि सगद्विदी देस्रणा । णवि हस्प-रिद० अप्प०-अवत्त० अगदि-सोग० अवत्त० जह० एगस० अंतोसु०, उक्क० अंतोसु०।

७२४. तिरिक्खेसु मिच्छ० सुज०-अनिहु० जह० एयस०, उक्क० पित्रो० असंखे०भागो । अप्प० जह० एगम०, उक्क० तिरिण पित्रदेवमाणि देस्रणाणि । अन्त० श्रोघं । एनमणंताणु०४ । णनिर अन्त० जह० अंतोसु०, उक्क० तिरिण पित्रदेशे देस्रणाणि । एनमपचक्खाण चउक्क० । एनिर अप्पद०-अन्त० अंतोसु०, उक्क० पुन्नकोडी देस्रणा । एनमदुकसा०-छण्णोक० । एनिर अप्प०-अन्त०

इसीप्रकार श्ररित और शोककी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार बारड कषाय, भय और जुगुप्साकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। सम्यक्त्वकी मुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका तथा सम्यग्मिध्यात्वकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसीप्रकार सातवी पृथिवीमे जानना चाहिए। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवीतक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। इतनी और विशेषता है कि हास्य और रितकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका तथा अरित और शोककी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

े ७२५. तिर्यक्कोमे मिथ्यात्वकी भुजगार श्रीर श्रवस्थित स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पल्यके श्रमंख्यातवें भागप्रमाण है। श्रवल्पतर स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तीन पल्य है। श्रवल्पत्यका भंग श्रांघके समान है। इसीप्रकार श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी श्रपेत्ता जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रव्लक्ष श्रपेत्ता जानना चाहिए। इतनी विशेषता है। इसीप्रकार श्रप्तद्याख्यानावरणा चतुष्ककी श्रपेत्ता जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी श्रव्यत्य श्रीर श्रवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रार्थ एक समय श्रीर श्रन्तर्मूहूर्त है तथा उत्कृष्ट श्रम्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिशमाण है। इसीप्रकार श्राठ कषाय श्रीर छह नोकषायकी श्रपेत्ता जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी श्रव्यतर श्रीर श्रवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रम्तर कमसे एक समय श्रीर श्रन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट श्रम्तर समसे एक समय श्रीर श्रन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट श्रम्तर सम्तर्मेहूर्त है । इसीप्रकार नपुंसक्वेदकी श्रपेत्ता जानना चाहिए। इतनी

जह० एगस० अंतोम्र०, उक० अंतोम्र० । एवं णवुंस० । णवरि ऋप्प० जह० एयस०, उक्क० पुन्तकोडिपुधत्तं । ऋवत्त० ऋोघं । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवेद० स्रोघं ।

\$ ७२६. पंचिदियतिरिक्खितय० मिच्छ० भुज०-प्रवृद्धि० जह० एयसम्ब्रो, उक्क० पुन्वकोडिपुधत्तं । अप्प० तिरिक्खोघं । अयत्त० जह० अंतोग्च०, उक्क० सगृद्धि । एवमणंताणु०४ । णवरि अवत्त० तिरिक्खोघं । एवं वारमक०-छण्णोक० । एविर्वा अप्प०-अवत्त० तिरिक्खोघं । सम्म० भुज०-अप्प०-अवत्त० सम्मामि० अप्प०-अवत्त० जह० अंतोग्च०, उक्क० सगृद्धिते देख्णा । सम्म० अवद्वि० जह० अंतोग्च०, उक्क० पुन्वकोडिपुधत्तं । तिरिए एवेद० भुज०-अप्प०-अवद्वि जह० एयस०, अवत्त० अंतोग्च०, उक्क० पुन्वकोडिपुधत्तं । णविर पञ्जत्तएसु इत्थिवेदो णित्थ । जोणि ए पुरिसर- णवुंस० एत्थि । इत्थिवे० अवत्त० णत्थ । अप्प० जह० एयस०, उक्क० अंतोग्च० ।

% ७२७. पंचिदियतिरिक्खअपञ्ज०-मणुसञ्चपञ्ज० मिच्छ०-णवुंस० मुज०श्राप०-श्रवद्वि० जह० एयस०, उक्त० श्रंतोमु० । एवं सोलसक०-छएणोक० । णवरि

विशेषता है कि इसकी ऋल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य ऋन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्वकाटि पृथक्त्वप्रमाण है। श्रवक्तत्रय स्थिति उदीरणाका मंग श्राघके समान है। सम्यक्त्व, सम्यिगिथ्यात्व, स्वीवेद श्रीर पुरुषवेदका मंग खोघके समान है।

🖇 ७२६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिश्यात्वकी मुजगार खौर ऋर्वास्थत स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व प्रमाण है। अल्पतर स्थित-उदीरणाका भंग सामान्य तिर्यञ्चोके समान है। श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहुर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रपनी स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार श्रनन्तानुबन्धीचतुष्ककी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषना है कि इनकी श्रवक्तव्य स्थितिवदीरणाका भंग सामान्य तिर्यक्कोंके समान जानना चाहिए। इसीप्रकार बारह कपाय श्रीर छह नोकपायकी अपेत्रा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी ऋल्पतर श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग सामान्य तिर्यञ्जांके समान है। सम्यक्त्वकी भुजगार, ऋल्पनर श्रीर अवक्तव्य स्थिति-उदीरगाका तथा सम्यग्मिध्यात्वकी त्रलपतर और त्रवक्तव्य स्थिति उदीरगाका जघन्य त्रन्तर अन्तर्सुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम श्रपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्वकी श्रवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्महुन है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। तीन वेदोंकी भुजगार, श्रल्पतर श्रीर श्रवस्थित स्थितिउदीरणाका जवन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर श्रवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्महुर्त है तथा उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्वकोटि-पृथक्त्वप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है श्रीर योनिनियोंने पुरुषवेद श्रौर नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा इनमे स्वीवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। तथा त्रल्पतर स्थिति उदीरणाका जघन्य त्रान्तर एक समय है त्रीर उत्कृष्ट त्रान्तर ऋन्तर्मृहूर्त है।

्रे ७२७. पद्मेन्ट्रिय तिर्येष्ट्र अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिध्यात्व और नपुंसक-वेदकी भुजगार, अल्पनर और अवस्थित स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्हाब्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार सोलह कपाय और छह नोकषायकी अपेन्ना जानना श्चवत्त० जह० उक्क० श्रंतोग्र०।

१७२८. मणुसतिए मिच्छ०-ग्रणंताणु०४-चदुसंजलण-छएणोक० मुज०अवद्वि० जह० एयसमन्रो, उक्क० पुन्तकोडी देस्रणा। अप्प०-त्रवत्त० पंचिदियतिरिक्खभंगो। श्रद्धक० मुज०-श्रप्प०-अवद्वि० जह० एयस०, श्रवत्त० अंतोस्र०,
उक्क० सन्वेसिं पुन्तकोडी देस्रणा। सम्म०-सम्मामि०-तिण्णि वेद० पंचिदियतिरिक्खभंगो। णवरि पजत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि। मणुसिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि।
इत्थिवे० मुज०-श्रवद्वि० जह० एयस०, उक्क० पुन्तकोडी देस्रणा। श्रप्प० जह०
एयस०, उक्क० अंतोस्र०। श्रवत्त० जह० श्रंतोस्र०, उक्क० पुन्तकोडिपुधत्तं।

९०२९. देवेसु मिच्छ०-श्रणंताणु०४ मुज०-श्रवद्वि० जह० एयस०, उक्क० श्रद्वारस सागरो० सादिरेयाणि । श्रप्प०-श्रवत्त० जह० एगसमञ्चो अंतोस्च०, उक्क० एकत्तीसं सागरो० देखणाणि । एवं बाग्मक०-भय-दुगुंछा० । णविर श्रप्प०-श्रवत्त० जह० एयस०, उक्क० श्रंतोस्च० । एवमरिद-सोग० । णविर श्रप्प०-अवत्त० जह० एयस० श्रंतोस्च०, उक्क० झम्मासं । एवं हस्स रिद० । णविर श्रप्प० जह० चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी श्रवक्तन्य स्थिति उदीरणाका जधन्य श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्महर्त है।

६ ७२८. मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्दीचतुष्क और छह नोकपायकी भुजगार खोर खबरिथत स्थितिउदीरणाका जयन्य धन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिशमाण है। अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जयन्य धन्तर एक समय है। आठ कपायकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जयन्य धन्तर एक समय है, अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जयन्य धन्तर एक समय है, अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जयन्य धन्तर खन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिशमाण है। सम्यक्त्व, सम्यिग्धिथ्यात्व और तीन वेदोंका भंग पक्कोन्द्रय तियेख्वोंके समान है। इतनी विशेषता हं कि पर्याप्तकोंमें खीवेदकी उदीरणा नहीं है और मजुष्यितयोंमें पुरुषवेद तथा नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा इनमें खीवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिशमाण है। अल्पतर स्थितिउदीरणाका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिशमाण है। अल्पतर स्थितिउदीरणाका जयन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिश्यक्तविश्वयक्तविश्वयक्तियित्वा है।

् ७२६. देवांमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी भुजगार और अवस्थित स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जवन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मृहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। इसीप्रकार बारह कषाय, भय और जुगुष्साकी अपेना जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। इसीप्रकार अरित और शोककी अपेना जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मृहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसीप्रकार एयम०, उक्क० अंतोमु०। एवं पुरिम०। णवरि अवत्त० णिथि। सम्म० भुज०अप्प०-अवत्त० सम्मामि० अप्प०-अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० एकत्तीसं सागरो०
देख्रणाणि। सम्म० अवहि० जह० अंतोमु०, उक्क० अहारम मागरो० मादिरेयाणि।
इत्थिवे० भुज०-अवहि० जह० एयस०, उक्क० पणवण्णं पित्तदो० देख्णाणि। अप्प०
जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं भवणादि जाव सहस्सार ति। एवरि सगिहिदीओ
भाणिद्व्वाओ। हस्म-रिद अरिद-मोग० अप्प०-अवत्त० जह० एगस० अंतोमु०, उक्क०
अंतोमु०। महस्मारे हस्म-रिद-अरिद-मोग० अप्प०-अवत्त० देवोघं। एविर भवण०वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाण० इत्थिवेद० भुज०-अवहि० जह० एगम०, उक्क०
तिण्णि पित्तदो० देख्णाणि पित्तदो० मादिरेयाणि-पित्त० मादिरे० प्रावर्णां पित्तदो०
देख्णाणि। अप्प० जह० एयस०, उक्क० अतोमु०। उविर इत्थिवेदो एत्थि।

् ७३०. त्राणदादि णवगेवजा ति मिच्छ०-सम्मामि०-त्ररणंताणु०४ त्रप्प०-श्रवत्त० सम्म० भुज०-त्रप्प० त्रवत्त० जह० त्रांतोग्रु०, उक्क० सगद्विदी देस्रणा । बारसक०-छण्णोक० त्रप्प०-त्रवत्त० जह० उक्क० अताग्रु०। पुरिमवे० त्रप्प० णित्य

हास्य और रतिकी ऋषेचा जानना चाहिए। इननी विशेषना है कि इसकी ऋल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहर्त है। इसीप्रकार पुरुष-वेदकी अपेत्ता जानना चाहिए। इतनी विशोषता है कि इसकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। सम्यक्त्वकी भूजगार, श्राल्पतर श्रीर श्रावक्तव्य स्थिति उदीरणाका तथा सम्यग्निध्यात्वकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थिति प्दीरगाका जधन्य अन्तर अन्तर्महूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। सम्यक्त्वकी अवस्थित स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्महुर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर सायिक श्रठारह सागर है। स्त्रीवेदकी भुजगार श्रीर श्रवस्थित स्थिति-उदीरगाका जबन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पत्य है। अल्पतर स्थिति उदीरणाका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महुर्त है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पनक जानना चाहिए। इतनी विशेषना है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए । हास्य-रित और ऋरित-शोककी ऋल्पतर और ऋवक्तव्य स्थितिउदीरणा-का जवन्य अन्तर एक समय श्रीर अन्तर्मुहर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त है। सहस्रार कल्पमे हास्य-रति तथा ऋरति-शोककी अल्पतर और अवत्त व्य स्थितिउदीरणाका भंग सामान्य देवोके समान है। इतनी विशेषना है कि भवनवासी, ब्यन्तर, ज्यांतिषी तथा सौयर्म ऋौर ऐशानकल्पमें स्त्रीवेदकी भूजगार त्र्रीर त्र्यवस्थित स्थितिउदीरणाका जयन्य त्र्यन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तीन पल्य, साधिक एक पल्य, माधिक एक पल्य श्रीर कुछ कम पचवन पत्य है। त्राल्पनर स्थिति उदीरणाका जयन्य त्रान्तर एक समय है त्र्योर उत्कृष्ट स्रान्तर श्चन्तर्मृहर्त है। श्चागे स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है।

१७३०. श्रानतकल्पसे लेकर नौ श्रेवेयकतकके देवामे मिध्यात्व, सम्यग्मिध्यात्व श्रीर श्रानन्तानुबन्धीचतुष्ककी श्रालपतर श्रीर श्रावक्तव्य स्थिति उदीरणाका तथा सम्यक्तवकी सुजगा, श्रालपतर श्रीर श्रावक्तव्य स्थिति उदीरणाका जधन्य श्रान्तर श्रान्तर्सुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तर कुछ कम श्रापनी श्रापनी स्थितिष्रमाण है। बारह कषाय श्रीर छह नोकषायकी श्रालपतर श्रीर अंतरं । ऋगुहिसादि मन्त्रद्वा त्ति सम्म० ऋप्प०-अवत्त० पुरिसवे० ऋप्प० गिरिथ ऋंतरं । बारमक० छण्णोक० ऋप्पद०-ऋवत्त० जह० उक्क० अंतोमु० । एवं जाव० ।

६ ७३१. णाणार्जावेहि भंगविचयागु० दुविहो णि०—श्रोघेण स्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०-णवुंम० भ्रज०-श्रप्प०-श्रवद्धि० णिय० श्रात्थि, सिया एदे य श्रवत्तव्यगो य, सिया एदे च श्रवत्तव्यगा य । सम्म० श्रप्प० णि० श्रात्थि । सेसपदाणि भयणिजाणि । सम्मामि० श्रप्पद०-श्रवत्त० भयणिजा । सोत्तसक०-छण्णोक० मव्यपदा णिय० श्रात्थि । इत्थिवे०-पुग्सिवे० श्रप्प०-श्रवद्धि० णिय० श्रात्थि । सेसपदा० भयणिजा० । एवं तिग्विता० ।

\$ ७३२. श्रादेसेण ऐरइय० मिच्छ०-सोत्तसक०-छण्णोक० श्रप्प०-श्रवद्वि० णिय० श्रित्थ । सेसपदा० भयणिजाणि । मम्म०-सम्मामि० श्रोघं । णवुंम० श्रप्प०-श्रवद्वि० णिय० श्रित्थ, सिया एदे य भ्रजगारद्विदिउदीरगो य, सिया एदे च भ्रज०-द्विदिउदीरगा च । एवं सन्वरोरइय० ।

१ ७३३. पंचिंदियतिरिक्खतिए मिच्छ०-सोलमक०-एविग्योक० अप्प०-अवद्धि० णिय० अत्थि । सेमपदा भयणिजा । सम्म०-सम्मामि० ओवं। णवरि पजा० इत्थिवेदो

भवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्भुहूर्त है। पुरुषवेदकी श्रव्यतर स्थिति उदीरणाका श्रन्तरवाल नहीं है। श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थि सिद्धितक के देवों से सम्यक्तक श्रियति उदीरणाका तथा पुरुषवेदकी श्रव्यतर स्थिति उदीरणाका तथा पुरुषवेदकी श्रव्यतर स्थिति उदीरणाका श्रन्तरकाल नहीं है। बारह कथाय श्रीर छह नोकपायकी श्रव्यतर श्रीर श्रवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर श्रन्तर हो। इसीप्रकार श्रनाहारक भागीणातक जानना चाहिए।

\$ ७३१. नाना जीवोंका अवलम्बन लेकर भंगविचयानुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है—स्रोघ स्रोर आदेश। स्रोघसे मिध्यात्व स्रोर नपुंसकवेदकी भुजगार, स्रल्पतर स्रोर स्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये जीव हैं स्रोर स्रवक्तव्य स्थितिका उदीरक एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं स्रोर स्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक नाना जीव हैं। सम्यक्तवर्का अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। शंष पद भजनीय हैं। सम्यग्निध्यात्वके स्रवल्पतर स्थीर अवक्तव्य पद भजनीय हैं। सोलह कपाय स्रोर छह नोकपायके सब पदोंके उदीरक जीव नियमसे हैं। स्थावेद स्थीर पुरुषवेदकी स्रवल्पतर स्थीर अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। शोष पद भजनीय हैं। इसीप्रकार तिर्यक्षांमें जानना चाहिए।

\$ ७३२. ब्रादेशसे नारिक योमें मिध्यात्व, सालह कषाय और छह नोकषायकी ब्रल्पतर और ब्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। सम्यक्त और सम्यग्निध्यात्वका भंग ब्रोघके समान है। नपुंसकवेदकी ब्रल्पतर ब्रीर ब्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये जीव हैं ब्रीर सुजगार स्थितिका उदीरक एक जीव हैं, कदाचित् ये जीव हैं ब्रीर सुजगार स्थितिका उदीरक एक जीव हैं, कदाचित् ये जीव हैं ब्रीर सुजगार स्थितिके उदीरक नाना जीव हैं। इसीप्रकार सब नारिक यों में जानना चाहिए।

§ ७२२. पंचेन्द्रिय तिर्येखित्रिकमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय श्रीर नौ नोकषायकी अल्पतर स्रोर भवस्थित स्थितिके उदोरक जोव नियनसे हैं। शोर यह मजनीय हैं। सम्यक्त श्रीर सम्यग्नि- णित्य । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंम० सिर्थ । इत्थिवे० अवत्त० सिर्थ । पंचिदिय-तिरिक्ख अपञ्ज० मिन्छ०-एवुंम० अप्प०-अविष्ठ० णिय० अत्थि, सिया एदे च भुज०द्विदिउदीरगो च, सिया एदे च भुज०द्विदिउदीरगा च । सोलमक०-छण्णोक० अप्प०-अविद्वि० णिय० अत्थि । सेसपदाणि भयणिजाणि । मणुसतिए पंचि०-तिरिक्खतियभंगो । स्वारि मणुसिसी० इत्थिवे० अवत्त० अत्थि । मणुसअपञ्ज० मन्वपयडीणं सन्वपदा० भयणिजाणि ।

९ ७३४. देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक०-सम्म०-सम्मामि० पंचिदिय-तिरिक्खभंगो । इत्थिवे०-पुरिसवे० श्रप्प०-श्रवद्वि० णिय० श्रत्थि, सिया एदे च भ्रजगारो च, सिया एदे च भ्रजगारा च । एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाण० । एवं सणकुमारादि जाव सहस्मार चि । णवरि इत्थिवेदो एत्थि ।

६ ७३५. आणदादि एवगेवजा ति मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक० अप्प० णिय० अत्थि, सिया एदे च अवत्तन्त्रगो च, सिया एदे च अवत्तन्त्रगा च । सम्म० ओघं। णवरि अवद्वि० णत्थि। सम्मामि० ओघं। पुरिसवे० अप्प० णिय० अत्थि।

श्यात्वका भंग स्रोघके समान है। इननी विशेषता है कि पर्याप्तकोमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं हैं तथा योनिनियोंमें पुरुषवेद स्रोर नपुंसरुवेदकी उदीरणा नहीं हैं। इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पश्चेन्द्रिय तियंच अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसरुवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पश्चेन्द्रिय तियंच अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसरुवेदकी अवक्षतर स्थिति अविश्वित स्थिति उदीरक जीव हैं। स्वाचित् ये जीव हैं और भुजगार स्थितिक उदीरक नाना जीव है। सोलह क्षाय और छह नोकषायकी अलग्नर स्थार अवस्थित स्थितिक उदीरक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। मनुष्यितिकों प्रवक्ति अवक्ति स्थितिक समान भंग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यितियोंमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके सम पद भजनीय हैं।

§ ७३४. देवोंमें मिध्यात्व, सोलह कपाय, छह नोकषाय, सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिध्यात्वका भंग पंचेन्द्रिय नियंचोंके समान है। स्त्रीवंद श्रीर पुरुषवेदकी श्राल्पतर श्रीर श्रावस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये जीव हैं श्रीर भुजगार स्थितिका उदीरक एक जीव हैं, कदाचित् ये जीव हैं श्रीर भुजगार स्थितिका उदीरक एक जीव हैं, कदाचित् ये जीव हैं श्रीर भुजगार स्थितिके उदीरक नाना जीव हैं। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिपा तथा सीधर्म-ऐशानकल्पके देवोंमें जानना चाहिए। इसीप्रकार सन्तकुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्नोवेदकी स्थितिउदीरणा नहीं है।

े ७३५. श्रानतकल्पसे लेकर नौ प्रैवेयकतकके देवोंमें मिध्यात्व, सोलह कषाय श्रीर छह नोकषायकी श्रल्पतर स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये जीव हैं श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिका उदीरक एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक नाना जीव हैं। सम्यक्तवका मंग श्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रवस्थित पद नहीं है। सम्यक्तिका मंग श्रोघके समान है। पुरुषवेदकी श्रव्पतर स्थितिके उदीरक जीव नियमसे

त्रणुद्दिसादि सव्वद्वा त्ति बारसक०-सत्तणोक० त्राणदर्भगो । सम्म० हस्सभंगो । एवं जाव० ।

\$ ७३६. भागाभागाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण आदेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०-णवृंस० भुज० सन्वजी० केव० भागो १ असंखे०भागो । अप्प० संखेजजा भागा । अवद्वि० संखे०भागो । अवत्व० अणंतभागो । सम्मामि० अप्प० द्विदिउदी० असंखेजा भागा । सेमपदा असंखे०भागो । सोलसक०-अहणोक० अप्प० संखेजा भागा । अवद्वि० संखे०भागो । सेसपदा० असंखे०भागो । एवं तिरिक्खा० ।

९ ७३७. त्रादेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तरणोकै० ऋष्प०द्विदिउदी० संखेजा भागा । अवद्वि० संखे०भागो । सेमपदा० असंखे०भागो । सम्म०-सम्मामि० श्रोघं । एवं सन्वणेरइय० ।

९ ७३८. पंचि०तिरिक्खितिय० मिच्छ०-सोलसक०-एावणोकै० अप्प०द्विदिउदी० संखेजा भागा । अवट्वि० संखे०भागो । सेसप० असं०भागो । सम्म०-सम्मामि० अोघं । णविर पज्ज० इत्थिवेदो एात्थि । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णित्थ । इत्थिवे०

हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें बारह कपाय और सात नोकपायका भंग आनतकल्पके समान है। सम्यक्त्वका भंग हास्यके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ७३६. भागाभागानुगमकी ऋषेत्वा निर्देश दो प्रकारका है—ऋोय श्रीर आदेश। श्रोघसे मिध्यात्व और नपुं सकवेदकी भुजगार स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं श्र असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। श्रवित्तवें अदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। सम्यग्मिध्यात्वकी श्रव्पतर स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। श्रेप पदोके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। श्रोप पदोके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार तिर्थक्कोंमें जानना चाहिए।

् ७३७. त्रादेशसे नारिकयोंमें मिध्यात्व, सोलह कषाय श्रीर सात नोकषायकी श्रत्यतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। श्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्यात्वें भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्यात्वें भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्यात्वका भंग श्रोधके समान है। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए।

६ ७३८. पंचेन्द्रिय तिर्यक्चित्रिकमें मिध्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्बग्धि-ध्यात्वका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकों स्त्रीवेद नहीं है। योनिनियों में

ता॰प्रती याव (सत्त) योक॰ इति पाठः । २. ता॰प्रती सत्तयोक इति पाठः ।

श्रवत्त० णत्थि । पंचि०तिग्विख्यप्रपञ्ज०-मणुमत्रपञ्ज० मिच्छ०-सोलमक०-सत्तणोक० अप्पद० संखेजा भागा । अवट्टि० संखे०भागो । सेमपदा० श्रसंखे०भागो ।

५ ७३९. मणुसेसु मिच्छत्त-सोलमक०-सत्तणोक० पंचिदियतिरिक्खभंगो । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुग्मिवे० अप्प० संखेजा भागा । सेसपदा संखे०भागो । मणुमपज्ञ०-मण्सिणी० सञ्चपय० अप्पद० संखेजा भागा । सेसपदा संखे०भागो ।

१ ७४०. देवेसु मिच्छ०-सोलमक०-ग्रहणोक० ऋप्प० संखेजा भागा। ऋवहि० संखे०भागो। सेमप० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० ऋोघं। एवं भवण०-वाणवे०-जोदिसि०-सोहम्भीसाणे त्ति। एवं सणकुमारादि सहस्सार ति। णवरि इत्थिवेदो णित्थ।

९ ७४१. त्राणदादि स्वायंत्रज्ञा ति मिच्छ०-सम्मामि०-मोलसक०-छण्णोक० श्रप्प० श्रसंखेजा भागा । सेमप० श्रसंखे०भागो । पुरिमवे० स्वार्थ भागाभागो । श्रप्यके० श्रप्प० श्रसंखे०भागा । श्रवत्त० श्रप्पे०भागो । पुरिसवे० स्वायं । स्वायं भागाभागो । स्वायं स्वायं । स्वायं । स्वायं । स्वायं ।

पुरुषवेद श्रीर नपुंसकवेद नहीं है। इसमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्ज अपर्याप्त श्रीर मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिध्यात्त्व, सोलह कपाय श्रीर सात नोकषायकी श्रुल्पतर स्थितिक उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। श्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं।

\$ ७३६. मनुष्योंमें मिध्यात्व, सोलह कपाय श्रोर सात नोकषायका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, स्त्रीवेद श्रोर पुरुपवेदकी श्रल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। रोष पदोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। मनुष्य पर्याप्त श्रोर मनुष्यिनियोंमें सब प्रकृतियोंकी श्रल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है। शेष पदोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण है।

े ७४०. देवों मे मिथ्यात्व, सोलह कषाय श्रोर श्राठ नोकषायकी श्रल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है। श्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यात वे भागप्रमाण हैं। शेष पदोके उदीरक जीव श्रसंख्यात में भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व श्रोर सम्यिगिध्यात्वका भंग श्रोघके समान है। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी देवों तथा सौधर्म श्रीर ऐशान कल्पके देवों ने जानना चाहिए। इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवों ने जानना चाहिए। इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवों ने जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद नहीं है।

§ ७४१. द्यानतकल्पसे लेकर नी प्रैवेयकतकके देवोंमें मिध्यात्व, सम्यग्मिध्यात्व, सोलह कवाय श्रीर छह नोकषायकी श्रालपतर स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव श्रसंख्यात मागप्रमाण हैं। पुरुषवेदकी श्रापेश्चा भागाभाग नहीं है। श्राष पदोंके उदीरक जीव श्रासंख्यातवें भागप्रमाण हैं। पुरुषवेदकी श्रापेश छह नोकषायकी श्रालपतर स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यातवें सागप्रमाण हैं। श्रावक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यातवें भागप्रमाण हैं। पुरुषवेदकी श्रापेश मागभाग नहीं है। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थ स्थितिके स्थानमें संख्यात करना चाहिए। इत्योगकार श्रानाहरक मार्गणा

६ ७४२. परिमाणाणु० दुविहो णि० — श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०-एावुंम० भुज०-अप्प०-अवद्वि० केत्तिया ? अएांता । अवत्त० केत्ति० ? असंखेआ । मोत्तमक०-छण्णोक० मन्वपदा के० ? अणंता । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिस० सन्वपदा के० ? असंखेआ । एवं तिरिक्खा० ।

७४३, सन्त्राणेर०-मन्त्रपंचिं ० तिरिक्ख-मणुमञ्जपञ्ज०-मन्त्रदेवा ति सन्त्रपय० सन्त्रपदा केत्तिया ? श्रमंखेञा। णत्रारि श्रणुद्दिमादि श्रत्रराजिदा ति सम्म० श्रवत्त० केत्ति १ संखेञा। सन्त्रद्धे सन्त्रपथडीणं सन्त्रपदा केत्तिया ? संखेञा।

७४४. मणुसेस मिच्छ०-सोलमक०-सत्तणोक० मव्यपदा के० ? असंखेआ। णविर मिच्छ०-एवुंम० अवत्त० के० ? संखेआ। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सव्यपदा के० ? संखेआ। मणुमपञ्ज०-मणुसिणी० सव्यपदीणं सव्यपदा के० ? संखेआ। एवं जाव०।

५ ७४४. खेत्राणुगमेण दुविही णि० — श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०-मोलसक०-सत्तरणोक० सव्यपदा केविड खेत्ते ? सव्वलोगे । णविर मिच्छ०-एावुंम०

तक जानना चाहिए।

७४२. परिमाणानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघके मिथ्यात्व श्रोर नपुंमकवेदकी भुजगार, श्राल्पतर श्रीर श्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं श्रित्तन हैं। श्रावक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं श्रित्तक त्राव स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं श्रित्तक हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, श्रोद ह्यार पुरुषवेदके सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं श्रित्रक्त हैं। इसीप्रकार नियंचोंमें जान लेना चाहिए।

७४३. सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य अपर्याप्त श्रीर सब देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोके उदीरक जीव कितने हें ? श्रसंख्यात हैं। इतनी विशेषता है कि श्रनुदिशासे लेकर श्रपराजिततकके देवोमे श्रवक्तव्य पदके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। सर्वार्थ-सिद्धिमें सब प्रकृतियोंके सब पदोके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं।

\$ ७४४. मनुष्योमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय श्रोर सात नोकषायके सम परोंके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रसंख्यात हैं। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व श्रोर नपुंसकवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। सम्यक्तव्य, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद श्रोर पुरुषवेदके सब परोंके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त श्रोर मनुष्यिनयोंमें सब प्रकृतियोंके सब परोंके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

९ ७४५ च्रेत्रानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। आघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सान नोकषायके सब पदांके उदीरक जीवाका कितना चेत्र है ? सर्वलोक चेत्र है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके

श्रवत्त ० सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सन्वपदा लोगस्स श्रसंखे०भागे । एवं तिरिक्खा० । सेसगदीसु सन्वपयडीर्णं सन्वपदा लोग० श्रसंखे०भागे । एवं जाव० ।

§ ७४६. पोसणागु० दुविही णि० — स्रोघेण त्रादेसेगा य । त्रोघेगा मिच्छ० सोलसक०-सत्तणोक० सन्वपदेहिं केविडयं खेत्तं पोसिदं १ सन्वलोगो । णविर मिच्छ० अवत्त० लोग० असंखे०मागो, अट्ठ-बारहचोहस भागा वा देख्या । णवुंस० अवत्त० लोग० असंखे०मागो, सन्वलोगो वा । सम्म०-सम्मामि० सन्वपदा लोग० असंखे०-मागो, अट्ठचोहस० देख्या । इत्थिवे०-पुरिमवे० सन्वप० लोग० असंखे०मागो, अट्ठचोहस० देवसणा । णविर अवत्व० लोग० असंखे०मागो, सन्वलोगो वा । पविर अवत्व० लोग० असंखे०मागो, सन्वलोगो वा ।

उदीरक जीवोंका तथा सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके सब पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार सामान्य तियंचोंमें जानना चाहिए। शेष गतियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

5 ७४६. स्पर्शनानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश । श्रोघसे मिथ्यात्व, सोलह कवाय श्रीर सात नोकवायके सब पदोंके उदीरकोंने कितने त्रेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्व लोकत्रेत्रका स्पर्शन किया है । मिथ्यात्वकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके श्रसंख्यात्वें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ श्रीर बारह भागप्रमाण क्रेत्रका स्पर्शन किया है । नपु सकवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यात्वें भाग श्रीर सर्व लाकप्रमाण क्रेत्रका स्पर्शन किया है । सम्यक्तव श्रीर सम्यग्निथ्यात्वके सब पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यात्वें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण क्रेत्रका स्पर्शन किया है । श्रीवेद श्रीर पुरुषवंदके सब पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यात्वें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम श्राठ भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण क्रेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि इसकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके श्रसंख्यात्वें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण क्रेत्रका स्पर्शन किया है ।

विशेषार्थ—जो देव विहारवत्स्वस्थानके समय सम्यक्त्वसे च्युत होकर मिध्यात्वको प्राप्त होते हैं उनके मिध्यात्वकी श्रवक्तन्य स्थितिके उदीरकोंका त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण स्पर्शन पाया जाता है। तथा नीचे कुछ कम पाँच राजु श्रीर ऊपर कुछ कम सात राजु इसप्रकार मिध्यात्वकी श्रवक्तन्य स्थितिके उदीरकोंका त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम बारह भागप्रमाण स्पर्शन भी बन जाता है। यहाँ मिध्यात्वकी श्रवक्तन्य स्थितिके उदीरकोंका जो स्पर्शन कहा है उसमेंसे स्पष्टीकरण योग्य स्पर्शन यह खुलासा है। वेदक-सम्यग्हिष्ट श्रीर सम्यग्मध्यादिष्ट जीवोंके स्पर्शनको ध्यानमें रखकर यहाँ सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मध्यात्वके सब पदोंके उदीरकोंका स्पर्शन कहा है। उससे श्रन्य कोई विशेषता न होनेसे यहाँ श्रलगसे खुलासा नहीं किया है। पञ्चेत्त्रिय श्रीर पंचेत्रिय पर्याप्त जीवोंके स्पर्शनको ध्यानमें रखकर यहाँ श्रीवेद श्रीर पुरुषवेदके सब पदोंके उदीरकोंका स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भाग तथा श्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण कहा है। मात्र श्रागमसे इन जीवोंके लोकका श्रसंख्यात बहुभाग स्पर्शन प्रतरसमुद्धातकी श्रपेत्ता कहा गया है, किन्तु श्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी उदीरणा करनेवाले जीवोंके प्रतरसमुद्धात नहीं होता,

६ ७४७. श्रादेसेण ऐरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० सम्बद्धा लोग० श्रमंखे०भागो, खचोइस०। णवरि मिच्छ० श्रवत्त० लोग० श्रमंखे०भागो, पंच-चोइस०। सम्म०-सम्मामि० खेत्तं। एवं विदियादि सत्तमा ति। एवरि सगपोसएं। सत्तमाए मिच्छ० श्रवत्त० खेत्तं। पढमाए खेत्तभंगो।

६ ७४८. तिरिक्खेसु मिच्छ० श्रोघं। एवरि श्रवत्त० लोग० श्रसंखे०भागो, सत्तचोइस०। सम्म० श्रप्प० छचोइम०। सेसपदाणं खेतं। सम्मामि० खेतं। सोलसक०-सत्तरणोक० श्रोघं। इत्थिवे०-पुरिसवे० सच्वपदा लोग० श्रसंखे०भागो सन्वलोगो वा।

श्रतः उक्त स्पर्शनका उल्लेख यहा नहीं किया गया है। इतना विशेष यहाँ और समभता चाहिए कि स्नीवेद श्रीर पुरुषवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरणाके समय त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमण स्पर्शन नहीं घटित होता, इसलिए यहाँ स्नीवेद श्रीर पुरुषवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन मात्र लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण बत्ताथा गया है। शेष कथन सुगम है।

ु ७४७. चादेशसे नारिकयोंमे मिण्यात्व, सोलह कपाय चौर सात नोकषायके सब परोंके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग चौर त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिण्य त्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंने कुछ कम पाँच भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्तव चौर सम्यग्मिण्यात्वका भंग चेत्रके समान है। इसीप्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवीतक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए। सातवीं पृथिवीमें मिण्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

विशेषार्थ—मिण्यात्वकी अवक्तन्य स्थितिउदीरणा होती तो साता पृथिवियोंमें है, किन्तु सातवें नरकमें मारणान्तिक समुद्धातके समय और वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मिण्यात्वकी अवक्तन्य स्थितिउदीरणा सम्भव नहीं है, इसलिए मिण्यात्वकी अवक्तन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन सामान्यसे नारिकयोंमें त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम पाँच भागप्रमाण और सातवें नरकमें लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

६ ७४८. तिर्यक्कोंमं मिध्यात्वका भंग घोघके समान हैं। इतनी विशेषता है कि इसकी ध्यवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम स्थात भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भंग चेत्रके समान है। सम्यग्मिध्यात्वका भंग चेत्रके समान है। सोलह कषाय और सात नोकषायका भंग आधिके समान है। सीवेद और पुरुषवेदके सब पदोंके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ — जो तिर्यक्ष या मनुष्य मरणके बाद प्रथम समयमें मिध्याद्दव्दि होकर एकेन्द्रियों में उत्पन्न होते हैं वे ऊपर त्रसनात्तीके चीदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण १७४९. पंचिदियतिरिक्खितए मिच्छ०-सोलसक०-एवएोक० सव्वपदा लोग० स्रसंखे०भागो सव्वलोगो वा। णवरि मिच्छ० स्रवत्त० सत्तचोद्दस०। एवंतर स्रवत्त० इत्थिवे०-पुरिसवे० भुज०-स्रविद्धि०-स्रवत्त० खेतं। सम्म०-सम्मामि० तिरिक्खोगं। एवरि पज्जत० इत्थिवेदो एत्थि। जोणिणीसु पुरिसवे०-एवंस० णत्थि। इत्थिवे० स्रवत्त० णत्थि। पंचि०तिरिक्खन्नप्रपज्ज०-मणुसन्त्रपञ्ज० सव्वपयडीणं सव्वपदा लोग० स्रसंखे०भागो सव्वलोगो वा। मणुसतिए मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० पंचि०तिरिक्खितयभंगो। सम्म०-सम्मामि० खेतं। णवि पञ्ज० इत्थिवे० णत्थि। मणुसिएा० पुरिसवे०-णवुम० एत्थि। इत्थिवे० स्रवत्त० खेतं।

९ ७४०. देवेसु मन्वपयडीणं सन्वपदा लोग० असंखे०भागो अट्ट-णवचोहस० । णविर इत्थिवे०-पुरिसवे० भुज०-अविद्वि० सम्म०-सम्मामि० सन्वपदा लोग० असंखे०-भागो अट्टचोहस० । एवं सोहम्मीसाग्रे। एवं भवणा०-वाणवें०-जोदिसि० । णविर चेत्रका स्पर्शन करते हैं, इसलिए यहाँ पर मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोका स्पर्शन उक्त चेत्रप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ७४६. पक्चेन्द्रिय तिर्यक्चित्रिकमें मिण्यात्व, सोलह कपाय श्रोर नी नोकपायके सब पदोंके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग श्रोर सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिण्यात्वकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमें कुछ कम सात भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। नपुं सकवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका तथा खीवेद श्रोर पुरुषवेदकी भुजगार, श्रवस्थित श्रोर श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। सम्यक्तव श्रोर सम्यिमण्यात्वका भंग सामान्य तिर्यचीके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमे खीवेद नहीं है तथा योजिनियोंमे पुरुपवेद श्रोर नपुं सकवेद नहीं है। इनमें स्त्रीवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्य श्रप्याप्त श्रोर सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यित्रकमें मिण्यात्व, सोलह कपाय श्रोर नी नोकषाय का भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्यक्तिके समान है। सम्यक्त्व श्रोर सम्यिग्ण्यात्वका भग चेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुपवेद श्रोर समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुपवेद श्रोर नपुं सकवेद नहीं है। इनमे स्त्रीवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग चेत्रके समान है।

विशेषार्थ — पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकके ऊपर एकेन्द्रियोमें मारणान्तिक समुद्घात करते समय मिध्यात्वकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा बन जानी है, इसलिए मिध्यात्वकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम सात भागप्रनाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ७५०. देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रमनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और नौ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंने तथा सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वके सब पदवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सौधर्म और ऐशान-

सगपोसणं । सणकुमारादि जाव सहस्सार त्ति सन्वपयडीणं सन्वपदा लोग० श्रसंखे०-भागो श्रद्धचोदम० । श्राणदादि श्रन्जुदा त्ति सन्वपयडीणं सन्वपदा लोग० श्रसंखे०भागो, ब्रचोदस० । उविर खेत्रं । एवं जाव० ।

६ ७५१. णाणाजीवेहिं कालाणु० दुनिहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०-मोलमक०-मत्तणोक० सन्वपदा सन्वद्धा । णविर मिच्छ०-णवुंसय० श्रवत्त० जह० एयस०, उक्क० श्रावित० श्रमंखे०भागो । इत्थिवेद-पुरिसवेद० श्रप्द०-श्रविद्धि० सन्वद्धा । सेसपदाणं जह० एयस०, उक्क० श्रावित० श्रमंखे०भागो । सम्म० श्रप्प० मन्वद्धा । सेसपदा जह० एगम० उक्क० श्रावित० श्रमंखे० सम्मामि० श्रप्प० जह० अंतोम्र०, उक्क० पिलदो० श्रमंखे०भागो । श्रवत्त० मिच्छत्तभंगो । एवं तिरिक्खा० ।

कल्पमें जानना चाहिए। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर श्रीर ज्योतियी देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रपना श्रपना स्पर्शन कहना चाहिए। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवालोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानतकल्पसे लेकर श्रच्युत कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंक सब पदवालोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। उपर चेत्रके समान स्पर्शन है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विश्रोपार्थ — देवोके एकेन्द्रियाम मारणान्तिक समुद्धात करते समय स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित उदीरणा सम्भव नहीं है श्रीर न ही इनके सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्वकी उदय-उदीरणा सम्भव है, इसलिए स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदके उक्त दो पदवालोंका तथा सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिश्यात्वके सब पदवालोंका स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागामेसे इन्न कम श्राठ भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

१ ७५१. नाना जीवोका श्रालम्बन लेकर कालानुगमकी श्रापेता निर्देश दो प्रकारका है— श्राय श्रोर श्रादेश । श्रायसे मिध्यात्व, सोलह कपाय श्रोर सात नाकषायके सब पदवालोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्व श्रोर नपुंसकवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकोका जयन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। स्रिवेद श्रोर पुरुषवेदकी श्रवपतर श्रोर श्रवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जयन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्तवकी श्रवपतर स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदके उदीरकोंका जयन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यिपध्यात्वकी श्रवपतर स्थितिके उदीरकोंका जयन्यकाल श्रन्तमुंहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यिपध्यात्वकी श्रवणतर स्थितिके उदीरकोंका जयन्यकाल श्रन्तमुंहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। स्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग मिध्यात्वके समान है। इसीप्रकार सामान्य तिर्यक्रोमें जानना चाहिए।

विश्वेषार्थ — यहाँ जिन प्रकृतियोंके जिन पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है उन्होंका उत्कृष्ट काल आवित्ति के आसंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। सम्यग्निध्यात्व

६ ७४२. श्रादेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तरणोक० श्रप्य०-श्रवहि० सञ्बद्धा । सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० श्रावित्वि० श्रसंखे०मागो । सम्म०-सम्मामि० श्रोघं । एवं सञ्वणेरइय० ।

१७४३. पंचिदियतिरिक्खितिए सन्त्रपयडी० अप्प०-अनिद्धे० सन्तद्धा । सेसपदा० जह० एगस०, उक० आनिलि असंखे०भागो । एवरि सम्म०-सम्मामि० भोघं। पंचि०तिरिक्ख०अपज० सन्त्रपयडीणं अप्प०-अनिहि० सन्तद्धा । सेसपदा जह० एगस०, उक० आनिलि असंखे०भागो । मणुसेसु मिन्छ०-सोलसक०-सत्तरणोक० पंचिदियतिरिक्खभंगो । णगरि मिन्छ०-णनुंस० अन्तर जह० एगस०, उक० संखेजा समया । इत्थिवे०-पुरिसवे० अप्प०-अनिद्धि० सम्म० अप्प० सन्तद्धा । सेमपदा० जह० एयम०, उक० संखेजा समया । सम्मामि० अप्प० जह० उक० अंतोस्र०। अन्तर सम्मत्तभंगो ।

गुणका एक जीवकी अपेत्ता भी उत्कृष्ट काल श्रम्तर्मुहर्त है, इसलिए यहाँ सम्यग्मिध्यात्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

े ७५२. आदेशसे नारिकयोमें मिध्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। रोष पदोंके उदीरकोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्तव और सम्यिगिध्यात्वका भंग आधके समान है। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए।

१०५३, पक्रोन्द्रिय तिर्यक्कित्रकां सब प्रकृतियोंकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेप पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवित्त के असंख्यात मागप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त और सम्यग्मिध्यात्वका भंग ओवके समान है। पक्षोन्द्रिय तिर्यक्क अपर्यप्त जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवित्रके असंख्यातवें भागप्रमाण है। मनुष्योंमें मिध्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायका भंग पश्चेन्द्रिय तिर्यक्कोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्व और नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। स्नोवेद और पुरुषवेदकी अल्पतर आर अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका तथा सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है। शोष पदोके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है। शोष पदोके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यग्मिध्यात्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यग्निध्यात्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग सम्यक्त्वके समान है।

विशेषार्थ — मनुष्योंमें मिध्यात्व, नपुंसकवेद, और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिकी उदीरणा मनुष्य पर्याप्त तथा मिध्यात्व और स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिकी उदीरणा मनुष्यिनी जीव ही करते हैं। यतः इनकी संख्या संख्यात है अतः मनुष्योंमें उक्त प्रकृतियोंकी अवक्तव्य स्थितिकी उदीरणा करनेवालोंका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। शेष कथन सुगम है।

६ ७५४. मणुसपञ्ज०-मणुसिणी० सव्यपयदी० ऋष्प०-अवद्वि० सव्यद्धा । सेसपदा जह० एयस०, उक्क० संखेजा समया । णविर सम्म०-सम्मामि० मणुसभंगो । ऋणुसऋषञ्ज० सव्यपयदी० ऋष्प०-अवद्वि० जह० एयस०, उक्क० पित्रो० ऋसंखे०-भागो । सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० श्राविरु० ऋसंखे०भागो ।

१ ७४४. देवेसु सन्त्रपद० अप्प०-अवड्ठि० सन्त्रद्धा । सेमपदा० जह० एयस०, उक्त० आत्रलिं० असंखे०भागो । णवरि सम्म०-सम्मामि० ओघं । एवं भवणादि जाव सहस्तार ति । आणदादि णवगेवजा ति मिन्छ०-सम्म०-सोलसक०-छण्णोक० अप्प० सन्तद्धा । सेमपदा० जह० एगस०, उक्त० आत्रलि० असंखे०भागो । पुरिसवे० अप्प० सन्तद्धा । सम्मामि० ओघं । अणुद्दिमादि अवराजिदा ति सम्म० अप्प० सन्तद्धा । अवत्त० जह० एगममओ, उक्त० संखेजा समया । बारसक०-छण्णोक० अप्प० सन्तद्धा । अवत्त० जह० एगसनो, उक्त० संखेजा समया । पुरिसवे० अप्प० सन्तद्धा । एवं सन्तद्दे । णवरि अवत्त० जह० एयसमो, उक्क० संखेजा

्र ७५४. मनुष्य पयीप्त श्रीर मनुष्यिनियोंमें सब प्रकृतियोंकी श्रह्णतर श्रीर श्रवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। रोष पदाके उदीरकोंका जवन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिध्यात्वका भंग मनुष्योंके समान है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमे सब प्रकृतियोंको श्रवणतर श्रीर अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका जवन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। शेष पदोंके उदीरकोंका जवन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रावलिक श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है।

\$ ७५५. देवोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय हैं और उत्कृष्ट काल आवितिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त और सम्यिमध्यात्वका भंग भोघके समान है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लंकर सहस्रार वल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। आनत कल्पसे लेकर नौ प्रैवेयकतकके देवोंमें भिध्यात्व, सम्यिमध्यात्व, सालह कपाय और छह नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवित्रके असंख्यातवें भागप्रमाण है। पुरुषवेदकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सम्यिमध्यात्वका भंग आघिके समान है। अनुदिशसे लेकर अपराजिततकके देवोंमें सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। बारह कषाय और छह नोकपायकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवित्रके असंख्यात में भागप्रमाण है। पुरुपवेदकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सर्वार्थिदिमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिके उदीरकांका जघन्य काल एक समय है। इसीप्रकार सर्वार्थिदिमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है। इसीप्रकार

१. ता॰प्रती पिंत्रदो॰ इति पाठः ।

समया । एवं जाव० ।

७५६. अंतराणृ० द्विहो णि०—-ग्रोघेण त्रादेसेण य । त्रोघेण मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० मन्वपदाणं णित्थ अंतरं । णविर मिच्छ० ग्रवत्त० जह० एयस०, उक्क० मत्त रादिदियाणि । एवि म० श्रवत्त० जह० एयम०, उक्क० चउवीस-मुहुत्तं । मम्म० भुज० जह० एयस०, उक्क० चउवीममहोरत्ते सादिरेगे । श्रप्प० णिथ श्रंतरं । श्रवत्त० जह० एयस०, उक्क० मत्त रादिदियाणि । श्रविष्ट० जह० एगसमश्रो, उक्क० श्रंगुलस्य श्रसंखे०भागो । सम्मामि० श्रप्प०-श्रवत्त० जह० एगस०, उक्क० पिलदो० श्रमंखे०भागो । इत्थिवेद-पुरिमवेद० भुज० जह० एयस०, उक्क० श्रंतोमु० । श्रप्प०-श्रविष्ट० एत्थि श्रंतरं । श्रवत्त० णवुंस०भंगो । एवं तिग्विखा० ।

अताहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

्ष्र्इ. प्रस्तरानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है— प्राध्य और आदेश । श्रोधसे मिध्यास्य, सोलह कपाय आर सात नोकपायके सब पहों के उदीरकोका अन्तरकाल नहीं हैं । इतनी विशेषता है कि मिध्यास्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोका जयन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल सात दिन-रात है । नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोका जयन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल चौबीस मुहूर्त है । सम्यक्त्वकी भुजगार स्थितिके उदीरकोंका जयन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौबीस दिन-रात है । अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जयन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल सात दिन-रात है । अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जयन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल आवित्रके उदीरकोंका जयन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल आवित्रके उदीरकोंका जयन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल आवित्रके असंख्यातवें भागप्रमाण है । सम्यग्निध्यात्वकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जयन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कामगण अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका जयन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भेग नपुंसकवेदके समान है । इसीप्रकार सामान्य तिर्यक्रोंम जानना चाहिए।

विशेषार्थ — आयकं अनुमार व्यय होता है इम नियमकं अनुसार उपशासम्यवत्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोके उत्कृष्ट अन्तरकालके समान यहाँ मिण्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट अन्तर मान दिन रात कहा है। नपुंमकवेदभी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सामान्यसे यदि अधिकसे अधिक काल तक न हो तो चौबीम मुहूर्त तक नहीं होते। इसीसे यहाँ इसकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल चौबीम मुहूर्त कहा है। क्षीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल इतना ही है, इसलिए उसे नपुंसकवेदके समान जाननेकी सूचना की है। जो मिण्यादृष्टि जीव सम्यवत्यके सत्कर्मसे अधिक मिण्यात्वकी स्थित बॉधकर स्थितियात किये बिना वेदकसम्यग्रहिष्ट होते हैं उनके सम्यक्त्वकी मुजगार स्थितिउदीरणा बनती है। यतः यह उत्कृष्टक्रपसे साधिक चौबीस दिन-रातके अन्तरसे प्राप्त होती है, इसिन ए सम्यक्त्वकी मुजगार स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट अन्तर-

े ७५७. आदेसेण ऐरइय० सोलमक०-छएएोक० भुज०-अवत्त० जह० एगम०, उक्क० अंतोमु० । सेमं णित्थ अंतरं । एवं मिच्छ० । णवरि अवत्त० ओघं । एवं एवं एवं मे । एवं स्वरं अवत्त० णित्थ । सम्म० सम्मामि० ओघं । एवं स्वरं ऐरइय० ।

६ ७५८. पिचंदियतिरिक्खतिय० मिच्छ० - सम्म० - सम्मामि० - सोलसक०-छण्णोक० सारयभंगो । तिरिस्तिकेद० भुज० जह० एगम०, उक्क० अंतोमु० । श्रवत्त० श्रोघं । एवं सेमपदाणं सार्व्य श्रंतरं । णवरि पज्ज० इत्थिवंदो णित्थ । जोस्सिसि पुरिसवे० स्वच्च० णित्थ । पिचंदियतिरिक्ख अपज्ज० मिच्छ०-मोलसक०-मत्तणोक० णारयभंगो । सार्वरि मिच्छ० अवत्त० णित्थ । मणुमतिस् पिच०तिरिक्खतियभंगो । सार्वरि मसुसिर्सा० इत्थिवे० अवत्त० जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं । मणुमअपज्ज० मन्वपग० मन्वपदा० जह० एयस०, उक्क० पिलंदो० स्रसंखे०मागो ।

काल साधिक चौबीस दिन-रात कहा है। सम्यक्त्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकींका उत्कृष्ट अन्तरकाल सात दिन-रात उपशमसम्यक्त्वके उत्कृष्ट अन्तरकालको ध्यानमे रखकर कहा है। शेप कथन मुगम है। आगे गीतमार्गणाके उत्तर भेदोमें यह अन्तरकाल इस अन्तरकालको ध्यानमे रखकर यथायोग्य जान लेना चाहिए।

१७५७. श्रादेशसे नारिकयोंमे सोलह कपाय श्रीर छह नोकपायकी भुजगार श्रीर अवत्तन्य स्थितिके उदीरकोका जघन्य श्रान्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रान्तर श्रान्तर्मुहूर्त है। श्राप पदोंक उदीरकोंका श्रान्तरकाल नहीं हैं। इसीप्रकार मिण्यात्वकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी श्रावक्तन्य स्थितिके उदीरकोंका श्रान्तरकाल श्रोघके समान है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यहाँ इसका श्रावक्तन्य पद नहीं है। सम्यक्त्व श्रीर सम्यग्मिण्यात्वका भंग श्रोघके समान है। इसीप्रकार सब नारिकयोंमे जानना चाहिए।

्ष्रेट. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रक्षं मिथ्यात्व, मन्यक्त्व, सन्यग्निध्यात्व, सोलह कपाय श्रोर छह नोक्षप्यका भंग नारिकयों के समान है। तीन वेदों की मुजगार स्थितिके उदीरकों का जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है। श्रवक्तव्य पदका भंग श्रोधके समान है। इसीप्रकार शेष पदाके उदीरकों का श्रन्तर नहीं है। इतनी विशेषता है कि तिर्यव्य पर्याप्तकों स्त्रीवेद नहीं है तथा योनिनियों में पुरुषवेद श्रोर नपु सक्तवेद नहीं है। इनमें स्त्रीवेदकी श्रवक्तव्य स्थिति उदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रप्याप्तकों में मिथ्यात्व, सोलह कषाय श्रीर सात नोक्षपायका भंग नारिकयों के समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्वकी श्रवक्तव्य स्थिति उदीरणा नहीं है। मनुष्यितक में पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रक समान भंग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियों स्त्रीवेदकी श्रवक्तव्य स्थिति के उदीरकों का जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पत्यके श्रवख्यातवें समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पत्यके श्रवख्यातवें भागप्रमाण है।

् ७४९. देवेसु मिच्छ०-सोलमक०-श्रद्धणोक०-सम्म०-सम्मामि० पंचिदिय-तिरिक्खभंगो । णवरि इत्थिवे०-पुरिमवे० श्रवत्त० सात्थि । एवं भवस०-वास्त्रवे०-जोदिसि०-सोहम्मीसासे त्ति । एवं मसाकुमागदि सहस्मागत्ति । णवि इत्यिवेदो पत्थि ।

९ ७६१. भावागु० मन्वत्थ स्रोदइस्रो भावो ।

् ७६२. श्रप्पाबहुश्राणु० दुविहो णि०—श्रीघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०-णवुंस० मञ्बत्थोवा श्रवत्त० । भुज०द्विदिउदी० श्रणंतगुणा । श्रविद्विश् श्रसंखे०गुणा । श्रप्प० मंखे०गुणा । मम्म० मन्बत्थोवा श्रविद्विउदी० । भुज० श्रसंखे०गुणा । श्रवत्त० असंखे०गुणा । श्रप्प० श्रसंखे०गुणा । सम्मामि० मन्बत्थो०

े ७५६. देवों में मिथ्यात्व, सोलह कषाय, आठ नोकपाय, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व-का भंग पञ्चेन्द्रिय निर्यञ्जोंके समान हैं। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं हैं। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म और ऐशानकल्पके देवों में जानना चाहिए। इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवों में जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद नहीं हैं।

६७६०. श्रानतकलपसे लंकर नौ प्रेवंयकतककं देवोंमे भिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय श्रीर छह नोकपायकी अलगतर श्रीर अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग नारिक्योंके समान है। पुरुषवेदकी अल्पतर म्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्वका भंग ब्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ इसकी अवस्थित स्थितिउदीरणा नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थीसिद्धितकके देवोंमें मम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका ज्ञानतर कमसे वर्षप्रथक्त और पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण है। बारह कपाय, छह नोकषाय और पुरुषवेदका भंग आनतकल्पके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ७६१. भावानुगमकी अपेत्ता सर्वत्र औदयिक भाव है।

९७६२. श्रव्यबहुत्वानुगमको श्र्यपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोधसे मिध्यात्व श्रीर नपुंसकवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार स्थितिके उदीरक जीव श्रान्तगुर्ग हैं। इनसे श्रवम्थत स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यातगुर्ग हैं। इनसे श्रव्यातगुर्ग हैं। सम्यक्तवर्भ स्विधित स्थितिके उदीरक जीव स्थानक हैं। इनसे भुजगार स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यातगुर्ग हैं। इनसे श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यातगुर्ग है। इनसे श्रवक्तवर

अवत्त ० हिदिउदी० । ऋष्प० हिदिउदी० असंखे० गुणा । सोलसक० - अरणोक० सन्तरथोवा अज्ञ ० हिदिउदी० । अवत्त ० हिदिउदी० संखे० गुणा । अवहि० हिदिउदी० असंखे० गुणा । अप्प० हिदिउदी० संखे० गुणा । इत्थिवे० - पुरिसवे० मन्त्रतथोवा अवत्त ० । अज्ञ ० हिदिउदी० संखे० गुणा । अप्प० हिदिउदी० संखे० गुणा । अप्प० हिदिउदी० संखे० गुणा । एवं तिरिक्खा० ।

३ ७६३. आदेसेण णेग्डय० सोलसक०-छण्णोक०-सम्म०-सम्मामि० स्रोघं०। मिच्छ० सव्वत्थोवा स्रवत्त ०द्विदिउदी०। भुज० स्रसंखे०गुणा। स्रवद्वि० स्रांखे०गुणा। स्रवद्वि० संखे०गुणा। एवं एव्वं स०। एवरि स्रवत्त० एत्थि। एवं सव्वरोग्डय०।

६ ७६४. पंचिंदियतिरिक्खितए ख्रोघं। णवरि मिच्छ०-णवु स० सव्वत्थोवा अवत्त०द्विदिउदी० । भुज०द्विदिउदी० असंखे०गुणा। अवद्वि०उदी० असंखे०गुणा। अप्प०द्विदिउदी० संखे०गुणा। एवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो एप्तिथ। एवुंसय० पुरिसभंगो। जोणिएपीसु पुरिय०-णवु स० एप्तिथ। इत्थिवे० अवत्त० णित्थ।

६ ७६४. पंचि०तिरि०त्रपञ्ज०-मण्सत्रपञ्ज० मिन्छ०-णबुंसय० सन्त्रत्थोवा

स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। सम्यग्निध्यात्वकी श्रवक्तन्य स्थिनिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रव्यतर स्थितिके उदीरक जीव ज्ञमंख्यातगुणे हें। सालह कपाय श्रीर छह नोव पायकी गुजगार स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रवक्तन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवक्तन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवक्तन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रव्यतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रुवगार स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रविक उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रव्यातगुणे हैं। इसीप्रकार सामान्य तिर्थश्चोमे जानना चाहिए।

९७६३. श्रादेशसं नारिकयोमं सोलह कपाय, छह नोकपाय, सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिश्यात्वका भग श्रांचके समान है। मिश्यात्वकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक
हैं। इनसे मुजगार स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवस्थित स्थितिके उदीरक
जीव श्रसख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवपतर स्थितिक उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार
नपुंसकवेदकी श्रपेचा जानना चाहिए। इननी विशेषता है कि यहाँ इसकी श्रवक्तव्य स्थितिके
उदीरक जीव नहीं है। इसीप्रकार सब नारिकयोमे जानना चाहिए।

§ ५६४. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकमे श्रोयके समान भंग है। इननी विशेषता है कि मिथ्यात्व श्रोर नपु सकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक है। उनसे भुजगार स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रव्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्वीवेद नहीं हैं। नपु सकवेदका भंग पुरुषवेदके समान हैं। यानिनी निर्यञ्जोगं पुरुषवेद श्रीर नपु सकवेद नहीं है। इनमें स्वीवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है।

६ ७६४. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मतुष्य अपर्याप्तकोमे मिथ्यात्व और नपुंसकः

भुजः । अबद्धिः असंसे त्युणा । अप्पदः संसे त्युणा । मोलमकः व्यण्णोकः श्रोघं । ७६६. मण्सेसु मिच्छः न्मोलमकः सत्तणोकः पंचिदियतिरिक्सभंगो । सम्मः सन्वत्थोवा अबद्धिः । भुजः संसे त्युणा । अवतः संसे त्युणा । अप्पः संसे त्युणा । एवं अप्पः संसे त्युणा । एवं मणुसपञ्जः । णविः संसे अपुणां कादव्यं । इत्थिवेदो एत्थि । एत्युमः पुरिसमंगो । मणुमिणीः एवं चेव एविः पुरिसमे त्युणः णविः । इत्थिवेदः मणुमोषं ।

७६७. देवेसु मिच्छ०-मोलसक०-छण्णोक०-मम्म०-सम्मामि० णारयभंगो । इत्थिवेद-पुरिसवेद० मिच्छत्तभंगो । णवि अवत्त० णित्थ । एवं भवणादि जाव सोहम्मीमाणे ति । एवं मणक्कुमागदि जाव महस्मार ति । एवरि इत्थिवेदो णित्थ । आणादादि णवगेवज्ञा ति मिच्छ०-सम्मामि०-सोलसक०-छएणोक० मच्वत्थोवा अवत्त० । अप्पद० असंखे०गुणा । सम्म० सच्वत्थोवा भुज० । अवत्त० असंखे०गुणा ।

वेदकी मुजगार स्थितिके श्टीरक जाव सबस स्तोक है। इनस श्रवस्थित स्थितिक उदारक जीव श्रासंख्यातगुर्गे हैं। इनस श्रलपनर स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुर्गे हैं। सोलह कपाय श्रीर छह नोकपायका मंग श्रोधके समान है।

(७६६. मनुष्योमे मिग्यात्व, सोलह कपाय श्रीर सात नोकपायका संग पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्चोंके समान है। सम्यवत्वकी श्रवस्थित स्थितिक उदीरक जीर सबसे स्तांक है। उनसे भुजगार स्थितिक उदीरक जाव सरुयत्वगारे है। उनसे श्रवक्तव्य स्थितिक उदीरक जाव संख्यात गुरों है। उनसे श्रवक्तव्य स्थितिक उदीरक जाव संख्यात गुरों है। उनसे श्रवकाय विश्वित उदीरक जाव रंख्यात गुरों है। स्थितिक उदीरक जाव संख्यात गुरों है। स्थितिक उदीरक जाव संख्यात गुरों है। उनसे श्रवित उदीरक जाव संख्यात गुरों है। उनसे श्रवतिक प्रविद्या स्थान चाहिए। स्थितिक उदीरक जाव संख्यात गुरों है। उनसे श्रवतिक प्रविद्या स्थान चाहिए। स्थितिक उदीरक जाव संख्यात गुरों है। उनसे श्रवतिक प्रविद्या स्थान चाहिए। स्थितिक उदीरक जाव संख्यात गुरां है। उनसे श्रवतिक प्रविद्या स्थान चाहिए। स्थावद विश्वतिक उदीरक जाव संख्यात गुरां है। स्थावद का चाहिए। स्थावद विश्वतिक उदीरक जाव संख्यात गुरां है। स्थावद का चाहिए। स्थावद विश्वतिक उदीरक जाव संख्यात गुरां है। स्थावद का चाहिए। स्थावद का प्रविद्या स्थावद का समान है। स्थावद का समान है। स्थावद का समान है।

५ ७६७ देवामे मिण्यास्व, सोलह कपाय, छह नोकपाय, सम्यक्त्व श्रोग सम्यग्मिण्यास्वका भग नार्राक्योक समान ह । स्त्रीवद श्रार पुरुपवेदका भंग मिण्यास्वरे समान ह । इत्रीं विश्रपता है कि इनका अवक्तव्य स्थिति उदीरणा नहीं है । इसीप्रवर्ग भवनवानियोसे लकर सोधम श्रोर ऐशान कल्पनक देवामें जानना चाहिए। इसी।कार सनत्कुमाग कल्पसं लेकर सहस्रार कल्पनक देवामें जानना चाहिए। इत्रीं विश्रपता हैं कि इनमें स्नावेद नहीं है । श्रानत कल्पसं लेकर नो प्रवयकत्वक देवामें मिण्यात्व, सम्यग्मिण्यात्व, सोलह कपाय श्रोर छह नाकपायका अवक्तव्य स्थातक उदारक जीव सबसे स्तोक है । इनसे श्रव्यतर स्थितिक उदीरक जीव असर्व्यातगुरों है । सम्यक्तवर्का सुजगार स्थितिक उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं।

ऋष्प० ऋसंखे०गुणा । पृग्सिवेद० एतिथ ऋष्पाबहुअं । ऋणुहिमादि सव्वट्टा ति सम्म०-बारसक०-ऋएणोक० सव्यत्थोवा ऋवत्त० । ऋष्प० प्रसंखे०गुणा । पुग्सि० णतिथ ऋष्पाबहुअं । णवगि सव्वट्टे संखेजगुणं कादव्यं । एवं जाव० ।

भुजगारद्विदिउदीरणा ममत्ता ।

९ ७६८. पदिणक्खेंचे तत्थ इमाणि तिष्णि श्रिणयोगद्दाराणि—ममुक्तित्तणा मामित्तमप्पाबहुश्रं च । समुक्तित्तणाणु० दृविहं—जहण्णुक्तस्मभेएण । उक्तस्से पयदं । दृविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०-सम्म०-सोलमक०-णवणोक० श्रात्थ उक्त० बहुी० हाणी श्रवद्वाणां च । सम्मामि० श्रात्थ उक्त० हाणी । श्रादेसेण सव्योगद्य०-मव्यतिरिक्ख-सव्यमणुम्म-मव्यदेवा ति जाश्रो पयडीश्रो उदीरिज्जंति तासिमोघं । णवि श्राणदादि णवगेवज्ञा ति सम्म० श्रात्थ उक्त० बहुी हाणी च । श्रवद्वाणं णित्थ । सेमपयडीग्णमित्थ उक्त० हाणी । श्रणुद्दिसादि सव्यद्वा ति सम्म०-बारसक०-मत्तणोक० श्रात्थ उक्त० हाणी । एवं जाव० ।

५ ७६९. एवं जहण्णयं पि सोद्च्वं ।

७७०, सामित्तं द्विहं — जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । द्विहो णि० — त्रोघेण त्रादेसेण य । त्रोघेण मिच्छ०-मोलमक० उक्क बिहुद्विदिद्वि। कस्स १ इनसे श्रवत्तव्य म्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे श्रवत्वर म्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । श्रववेदकी श्रपेत्ता अल्पबहुत्व नहीं हैं । श्रवदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्ध तकके देवोमे सम्यक्तव, वारह कपाय और छह नाक्षपायकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं । पुरुपवेदकी श्रपेत्ता श्रव्यबहुत्व नहीं हैं । इतनी विशेषता है कि सर्वार्थिसिद्धिमें संख्यातगुणा करना चाहिए । इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गगातर जानना चाहिए ।

इसप्रकार भुजगार स्थिति उदीरणा समाप्त हुई।

्ष्रिट. पदिन्तिपमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। समुत्कीर्तनानुगम दो प्रकारका हैं—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण हैं। निर्देश दो प्रकारका हैं—जोघ और आदेश। जोगमे गिष्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कपाय और नो नोकपायकी उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थान है। सम्यग्मिष्यात्वकी उत्कृष्ट हानि है। आदेशसे सब नारकी, सब निर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देव जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा करते हैं उनका भंग आघे के समान है। इतनी विशेषता है कि आनतकल्पसे लेकर नो मैवेयकतकके देवोंमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट वृद्धि और हानि है। अवस्थान नहीं है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट हानि है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कपाय और सात नोकषायकी उत्कृष्ट हानि है। इसीव्रकार अनाहारक मार्गणातक आनना चाहिए।

६ ७६९. इसीप्रकार जघन्यका भी कथन करना चाहिए।

🖇 ७७०. स्वामित्व दो प्रकारका है-जघन्य श्रीर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश

श्राण्णद जो तप्पाश्चोग्ग-जहण्णि दिमुदीरेमाणो उक्कस्मिद्धि पबंधो तस्स श्रात्र तिया-दीदस्म तम्स उक्क विष्ठिउदी । तस्सेव से काले उक्क श्रवहाणं । उक्क हाणी कस्स ? श्रण्णदरस्म जो उक्कस्मिद्धि दिमुदीरेमाणो उक्कस्मिद्धि दिखंड यं हणि तस्स उक्क हाणी । एवं णवणोक । एवर्ग उक्क विष्ठी कस्स ? श्रण्णद जो तप्पाश्चोग्गजहण्ण-दिदिमुदीरेमाणो उक्कस्मिद्धि पिर्डिच्छिदो तस्म श्रावित्यादीदस्म उक्क विष्ठी । तस्सेव से काले उक्क श्रवहाणं । सम्म उक्क विष्ठी कस्म ? श्रण्णद मिच्छत्तस्स उक्कस्स-दिदि बंधि उत्त अंगेमुहुत्तेण दिदिघादमकाद्ण सम्मत्तं पिर्डिवण्णो तस्स विदियसमय-वेदग्यममाइहिस्स उक्क विद्वी । उक्क हाणी कस्स ? श्रण्णद जो उक्कस्मिद्धि दिमुदीरे-माणो उक्क दिदिखंड यं हणिद तम्स उक्क हाणी । उक्क श्रवहाणं कस्स ? श्रण्णद जो पुच्चुप्पएणादो सम्मत्तादो मिच्छत्तस्म मययुत्तरिद्धिं बंधि उत्त सम्भत्तं पिर्डिवण्णो तस्स विदियसमयवेदगसम्माइहिस्स उक्क श्रवहाणं । सम्मामि उक्क हाणी कस्म ? श्रण्णद जो उक्कस्मिद्धिदिमुदीरेमाणो उक्क दिदिखंड यं हणिद तस्म उक्क हाणी । सव्वर्णेरइय - निरिक्च-पंचिदिय-निरिक्खितय-मणुमितय-देवा भवणादि जाव सहस्सार सि जाश्चो पथडीश्चो उदी एडजीत तासिमोघं ।

दो प्रकारका है-स्रोप स्त्रीर त्यादेश। स्त्रोपसे मिध्यात्व स्त्रीर सोलह कपायकी उत्कृष्ट वृद्धि स्थिति उदीरमा किसके होती है ? जो तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिकी उदीरमा करनेवाला उत्कृष्ट म्थितिका बन्ध करता है, एक आविलके बाद अन्यतर उस जीवके उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा होती है। तथा उसीके अनन्तर समयमे उत्कृष्ट अवरथान होता है। उत्कृष्ट हानि स्थिति उदीरणा किसके होती हैं ? जो उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिकाएडकका घात करता है अन्यतर उस जीवके उत्कृष्ट हानि स्थिति उदीरणा होती है। इसीप्रकार नौ नोकषायोकी ऋषेद्या जानना चाहिए। इननी विशेषना है कि इनकी उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो तत्वायांग्य जघन्य न्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिका नौ नोकपायरूप संक्रम करता है अन्यतर उसके एक आविलके बाद उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरगा होती है। उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। सम्यक्तको उत्कृष्ट बृद्धि स्थिति उदीरणा किसके हानी है ? जो मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति बाँधकर स्थितिचात किये बिना श्चन्तर्महर्त्तमें सम्यक्तको प्राप्त हुआ अन्यतर द्वितीय समयवर्ती उस वेदकसम्यग्दृष्टिके उत्क्रष्ट बुद्धि स्थिति उदीरणा होती है। उत्कृष्ट हानि स्थिति उदीरणा किसके हाता है ? जो उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला उत्कृष्ट स्थितिकाएडकका घात करता है अन्यतर उसके उत्कृष्ट हानि स्थिति उदीरणा होती है। उत्कृष्ट भवस्थान किसके होता है ? जो पूर्वमें उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे (पूर्वमें उत्पन्न हुई सम्यक्त्वकी स्थितिसे) निध्यात्वकी एक समय अधिक स्थितिका बन्धकर सम्यक्त्वको प्राप्त हुन्ना दूसरे समयमें स्थित हुए अन्यनर उस वेदकसम्यग्हि जीवके उत्कृष्ट श्रवस्थान होता है। सम्यगिमध्यात्वकी उत्कृष्ट हानि स्थिति उदीरणा किसके होती है ? जो उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात करता है अन्यतर उसके उत्क्रष्ट हानि स्थिति उदीरणा होती है । सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिक. मनुष्यत्रिक, देव तथा भव खासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पनकके देव जिन प्रकृतियों को उदीरणा

§ ७७१. पंचिदियतिरिक्खअपञ्च०-मणुमअपञ्च० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० वही कस्स ? अएएद० जो तप्पाओग्गजहण्णद्विदिम्रदीरेमाएो तप्पाओग्गउक्क०-द्विदिम्रदीरेदि तस्स उक्क० वही । तस्सेव से काले उक्क० अवद्वाणं । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरस्स मणुस्स-मणुस्मिणीए वा पंचिदियतिरिक्खजोणिणीयस्स वा उक्कस्सिद्विदि घादयमाएो अपञ्चत्तएस उववएएो तस्स उक्क०द्विदिखंडगे हदे तस्स उक्क० हाएरी।

१ ७७२. श्राणदादि एवगेवजा ति मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० तप्पाओग्गउक०द्विदिमुदीरेमाणो पढमसम्मत्ताहिमुहेण पढमे द्विदिखंडए हदे तस्स उक्क० हाणी । सम्म० उक्क० वङ्घी० कस्म ? श्रण्णद० जो वेदगसम्मत्तपाओग्गजहण्णद्विदिसंतकिम्म० सम्मत्तं पिडवण्णो तस्म विदियसमय-वेदगसम्माइद्विस्स उक्क० वङ्घी । उक्क० हाणी कस्म ? श्रण्णद० जो तप्पाओग्गउक०-द्विदिसंतकिम्म० श्रणंताणुवंधि विसंजोजयस्म पढमे द्विदिखंडए हदे तस्स उक्क० हाणी । सम्मामि० उक्क० हाणी कस्म ? श्रण्णद० अधिद्विदं गालेमाणगस्स तस्स उक्क० हाणी ।

करते हैं उनमें उनका भंग श्रोघके समान है।

§ ७७१. पञ्चेन्द्रिय तिर्येख्न अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकांमें निष्यात्व, सोलह कपाय और सात नोकपायकी उत्कृष्ट युद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती हैं ? जो तत्त्रायोग्य जघन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव तत्त्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करता है अन्यतर उसके उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती हैं। उसीक तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता हैं। उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती हं ? जो मनुष्य या मनुष्यिनी या पञ्चेन्द्रिय तिर्येख्व-योनि जीव उत्कृष्ट स्थितिका घात करना हुआ अपर्या्तकोंमें उत्पन्न हुआ अन्यतर उस जीवके उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात करनेपर उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होनी हं।

§ ७७२. श्रानतकल्पसे लेकर नौ प्रेवेयकतकके देवोंमें मिध्यात्व, सोलह कपाय श्रीर सात नोकपायकी उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती हैं ? तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जो जीव प्रथम सम्यक्त्वके श्राममुख हाकर प्रथम स्थितिकारडकका घात करता है अन्यतर उसके उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती हैं । सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती हैं ? वेदकसम्यक्त्वके प्रायोग्य सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिसत्कर्मवाला जो जीव सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ दूसरे समयमें स्थित श्रान्यतर उस वेदकसम्यग्दृष्टि जीवके उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा होती हैं । उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती हैं ? तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाले जिस जीवने श्रान्यतानुबन्धीकी विसंयोजना करते हुए प्रथम स्थितिकाएडकका घात किया है उसके उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती हैं । सम्यग्निथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके वात करते हुए प्रथम स्थितिकाएडकका घात किया है उसके उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती हैं । सम्यग्निथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती हैं ? श्रायःस्थितिको गलानेवाले श्रान्यतर जीवके उसकी उत्कृष्ट हानि स्थितउदीरणा किसके होती हैं ।

\$ ७७३. म्रणुद्दिमादि मव्बद्घा ति सम्म०-बारसक०-सत्तरणोक० उक्क० हाणी कस्स ? श्रवणद० श्रर्णताणुर्बोधं विसंजीजयस्म पढमे द्विदिखंडए हदे तस्स उक्क० हाणी । एवं जाव० ।

१७७४. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० जह० वड्ढी कस्स ? श्रएणद० जो समयूणद्विद- मुदीरेमाणो उक्कस्सिट्ठियुदीरेदि तस्स जह० वड्ढी । जह० हाणो कस्स ? श्रण्णद० जो उक्क०द्विदिमुदीरेपि तस्स जह० वड्ढी । एगदरत्थावट्ढाणं । सम्म० जह० वड्ढी कस्स ? श्रण्णद० जो पुच्चुप्पण्णादो सम्मत्तादो मिच्छत्तस्स दुसमयुत्तरं द्विदि बंधिऊण सम्मत्तं पिडवण्णो तस्स विदियसमयवेदगसम्माइहिस्स जह० वड्ढी । जह० श्रवट्ढाणमुक्कस्सभंगो । जह० हाणी कस्म ? श्रएणद० श्रधद्विदिं गालेमाणयस्स तस्स जह० हाणी । सम्मामि० जह० हाणी कस्स ? श्रण्ण० श्रधद्विदिं गालेमाणयस्स ।

§ ७७४. त्रादेसेण सन्वर्णरइय०-सन्वतिरिक्ख-सन्वमणुस्स-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्रि जात्रो पयडीत्रो उदीरिजंति तासिमोधं। त्राणदादि एवगेवजा त्रि

५ ७७३. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवां सम्यक्तव, बारह कषाय और सात नोकषायकी उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती हैं ? अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवालेके प्रथम स्थितिकाण्डकका घात करनेपर उनकी उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

[§] ७७४. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है— श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे मिध्यास्त, सोलह कषाय श्रोर नो नोकषायकी जघन्य वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो एक समय कम स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा किसके होती है। जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव एक समय कम स्थितिकी उदीरणा करता है श्रन्यतर उसके उन प्रकृतियोंकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा होती है। तथा किसी एक स्थानपर जघन्य श्रवस्थान होता है। सम्यवत्वकी जघन्य वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो पूर्वमें उत्पन्न हुए सम्यवत्वकी स्थितिसे मिध्यात्वकी दो समय श्रिष्ठ स्थितिका बन्ध कर सम्यवत्वको प्राप्त हुश्चा, दूसरे समयवर्ती वेदकसम्यग्टिष्ट श्रन्यतर उस सम्यग्टिष्टके उसकी जघन्य वृद्धि स्थितिउदीरणा होती है। जघन्य श्रवस्थानका मंग उत्कृष्टके समान है। जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? श्रधःस्थितिको गलानेवाले श्रन्यतर उस जीवके उसकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा होती है। सम्यग्मिध्यात्वकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है । स्थितिउदीरणा किसके होती है । स्थितिउदीरणा होती है । स्थित उदीरणा किसके होती है । स्थितिउदीरणा होती है । स्थिति इसकी जघन्य हानि स्थिति इदीरणा होती है ।

६ ७७४. श्रादेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य, देव, भवनवाक्षियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देव जिन प्रकृतियोंकी ख्दीरणा करते है उनका भंग श्रोधके समान है।

सम्म० जह० वही कस्स १ अण्णद० जो सम्माइट्टी मिच्छत्तं गंतूण एगमुन्वेछ्लणकंदयमुन्वेल्लेऊण सम्मत्तं पिडवण्णो तस्स बिदियसमयवेदयसम्माइट्टिस्स जह० वही ।
जह० हाणी कस्म० १ अण्णद० अधिद्विदं गालेमाणगस्स तस्म जह० हाणी । मिच्छ०सम्मामि०-सोलसक०-सत्तर्णोक० जह० हाणी कस्स १ अण्णदरस्स अधिद्विदं गालेमाणगस्म । अणुदिसादि सन्त्रद्वा ति मम्म०-बारसक०-सत्तणोक० जह० हाणी कस्स १
अण्णद० अधिद्विदं गालेमाणयस्म तस्स जह० हाणी । एवं जाव० ।

§ ७७६. ऋष्पाबहुऋं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०— श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० सव्वत्थोवा उक्क० हाणी। वही अवट्ठाणं च विसेमाहियं । सम्म० सव्वत्थोवमुक्कस्समवट्ठाणं । उक्क० हाणी असंखे०गुणा । उक्क० वही विसेमा० । सम्मामि० णित्थ अप्पाबहुअं ।

§ ७७७. त्रादेसेण सन्त्रणेरइय-तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खितय-मणुसितय-देवा भवणादि जात्र सहस्सार त्ति जात्रो पयडीक्रो उदीरिजंति तासिमोघं। पंचिदिय-तिरिक्खत्र्यपञ्ज०-मणुमश्रपञ्ज० मिच्छ०-सोलसक०-मत्तर्णोक० मन्त्रत्थोवा उक्क० वट्टी त्रवट्टाणं च । उक्क० हाणी संखे०गुणा। त्राणदादि एवगेवजा ति एत्थि श्रप्पाबहुअं।

श्रानतकल्पसे लेकर नौ प्रैवेयक तकके देवोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य यृद्धि स्थितिउदीरणा किसके हाती है ? जो सम्यग्टिंट मिध्यात्वको प्राप्त होकर एक उद्वेलना काण्डककी उद्वेलना कर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ, दूसरे समयमें स्थित श्रम्यतर उस वेदकसम्यग्टिंट जीवके उसकी जघन्य यृद्धि स्थितिउदीरणा होती है । जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है । मध्यात्व, सम्यग्मिध्यात्व, सोलह कषाय श्रोर सात नोकपायकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है । श्रम्यामध्यात्व, सोलह कषाय श्रोर सात नोकपायकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है । श्रम्यास्थितिको गलानेवाले श्रम्यत्व जीवके उनकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा होती है । श्रमुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय श्रोर सात नोकपायकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके हाती है ? श्रधःस्थितिको गलानेवाले श्रम्यतर जीवके उनकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके हाती है । इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

१००६. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य श्रीर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोय श्रीर श्रादेश । श्राधसे मिध्यात्व, सोलह कषाय श्रीर नौ नोकपायकी उत्कृष्ट हानि सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट वृद्धि श्रीर श्रवस्थान विशेष श्रीधक है। सम्यक्त्वका उत्कृष्ट श्रवस्थान सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। उससे उत्कृष्ट वृद्धि विशेष श्रीधक है। सम्यम्भिध्यात्वका श्रव्यवहुत्व नहीं है।

५ ७७७. आदेशसे सब नारकी, तिर्यक्क, पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्कित्रक, मनुष्यित्रक, देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है उनका मंग श्रोचके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्क अपयीप्त श्रार मनुष्य अपयीप्तकोंमें मिध्यात्व, सोलह कपाय श्रीर सात नोकपायकी उत्कृष्ट वृद्धि श्रीर अवस्थान सबसे स्ताक है। उससे उत्कृष्ट हानि संख्यातगुणी है। श्रानतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें अल्पबहुत्व नहीं

णवरि सम्म० मन्वत्थोवा उक्क० हाणी । वड्ढी संखे०गुणा । श्रणहिसादि सन्वद्वा ति णत्थि श्रप्पाबहुअं । एवं जाव० ।

§ ७७८. जह० पयदं । दुविहो णि०—श्रोधेण श्रादेसेण य । श्रोधेण मिच्छ०सोलसक०-एवणोक-सम्म० जह० वड्डी हाणी श्रवद्वाणाणि मिरसाणि । सम्मामि०
णिरिध श्रप्पाबहुअं।

९ ७७९ त्रादंसेण मन्त्रणेग्हय०-सन्त्रतिरिक्ख०-सन्त्रमणुस-देवा भवणादि जाव सहस्सारा ति जात्रो पयडीत्रो उदीरिज्ञंति तामिमोधं। त्राणदादि एवगेत्रज्ञा ति णित्थ अप्पाबहुअं। णत्रिर मम्म० मन्त्रत्थोत्रा जहण्णिया हाणी। जहण्णिया बहुी श्रसंखेज्ञगुणा। त्राणुदिसादि सन्त्रद्वा ति णित्थ त्रप्पाबहुत्रं। एवं जात्र०।

५७८०. बिहु द्विदिउदीरणाए तत्थ इमाणि तेरम अणियोगदाराणि—
ममुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए ति । ममुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—अघेण आदेसेण
य । अघेण मिच्छ०-सम्म०-इत्थिवे०-णवृंम० अत्थि तिणिणविहु-चत्तारिहाणिअवद्विदाणि-अवत् । सम्मामि० अत्थि तिण्णिहाणि-अवत् । वारसक०-छण्णोक०
अत्थि तिण्णिविहु-हाणि-अवद्वि०-अवत् । चदुसं त०-पुरिसवे० अत्थि चत्तारिविहुहाणि-अवद्वाणमवत्तव्ययं च । एवं मणुमितए । एवरि पुरिसवे० अमंखे०गुणविहुी०
है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट वृद्धि
संख्यातगुणी है। अनुदिशसं लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंम अल्पबहत्व नहीं है। इमीप्रकार

श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए। १७७८. जयन्यका प्रकरण है। निर्देश हो प्रकारका है—श्रोच श्रोर श्राइंश। श्रोघसे मिध्यात्व, सोलह कपाय, नो नोकपाय श्रोर सम्यक्त्वकी जयन्य वृद्धि, हानि श्रोर अवस्थान समान हैं। सम्यग्मिध्यात्वका श्रहपबहत्व नहीं है।

§ ७७६. आदेशसे सब नारकी, सब तिर्ग्रश्च, सब मनुष्य, देव श्रीर भवनवासियोसे लकर सहस्रार कलपतकके देवोमे जिन प्रकृतियोकी उदीरणा होती है उनका भंग श्रीघके समान है। श्रानतकलपसं लकर नी प्रैवेयकतकके देवोमे श्राल्पबहुत्व नहीं है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्तवकी जघन्य हानि सबसे स्तोक है। उसमे जघन्य वृद्धि श्रासंख्यातगुणी है। अनुदिशसे लकर सर्वार्थीसिद्धितकके देवोमे श्राल्पबहुत्व नहीं है। इसीप्रकार श्रानाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

१७८०. वृद्धि स्थिनिउदीरणाका प्रकरण हैं । उसमें ये तेरह अनुयोगद्वार हैं—
समुद्धितनासे लेकर अल्पबहुत्व तक । समुद्धितनानुगमकी अपेता निर्देश दो प्रकारका हैं—
और और आदेश । आयसे मिध्यात्व, सम्यक्त्व, स्त्रीवंद और नपुंसकवेदकी तीन वृद्धि,
चार हानि, अवस्थान और अवक्तव्य स्थिनिउदीरणा है। सम्यिगध्यात्वकी तीन हानि और
अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। बारह कषाय और छ्रह नांकपायकी तीन वृद्धि, तीन हानि,
अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा हे। चार संज्यलन और पुरुषवेदकी चार वृद्धि,
चार हानि, अवस्थान और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। इसीप्रकार मनुष्यितकमें जानना

एतिथ । पञ्जत्तपसु इत्थिवेदो एतिथ । मणुसिणी० पुरिसवे०-एवुंस० णत्थि ।

६ ७८१. स्रादेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्मामि० स्रोघं। सम्म०-सोलसक०-सत्तरणोक० स्रत्थि तिण्णिवहि-हाण्यि-स्रवद्धि०-स्रवत्त०। खवरि णवुंस० स्रवत्त० खिथा एवं सव्वर्णेरइय०।

६ ७८२. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० णारय-भंगो । तिण्णिवेद० ऋत्थि तिण्णिवहि-हाणि-ऋबद्धि०-ऋबत्त० । एवं पंचिदियतिरिक्ख-तिए । णवरि पञ्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवेद-णवुंस० णत्थि । इत्थिवेद० ऋवत्त० णत्थि । पंचिदियतिरिक्खऋपञ्ज०-मणुसऋपञ्ज० मिच्छ०-णवुंस० ऋत्थि तिण्णिवहि-तिण्णिहाणि-ऋबद्धि० । सोलसक०-छण्णोक० णारयभंगो ।

 ६०८३. देवेसु दंसणितय-सोलसक०-श्रहणोक० तिरिक्खभंगो । णवरि इत्थिवेद-पुरिसवेद० श्रवच० णित्थ । एवं भवणादि जाव सोहम्मीसाणा चि । एवं सणकुमारादि जाव सहस्साग चि । णवरि इत्थिवेदो स्राह्य ।

९ ७८४. आणदादि एवगेवजा ति मिच्छ० श्रित्थ श्रसंखे०भागहार्ण-संखे०-भागहाणि-श्रसंखे०गुणहाणि-श्रवत्त०उदीर० । सम्म० तिण्णिवहि-दोहाणि-श्रवत्त०-

चाहिए। इतनी विशंपता है कि पुरुपवेदकी श्रासंख्यात गुणवृद्धि नहीं है। पर्याप्तकों में स्त्रीवेद नहीं है तथा मनुष्यिनियों में पुरुपवेद स्त्रीर नपुंसकवेद नहीं है।

§ ७८१. छादेशसे नारिकयोंमें मिध्त्रात्व श्रीर सम्यग्मिध्यात्वका मंग श्रोघके समान है। सम्यक्त्व, सोलह कषाय श्रीर सात नोकषायकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए।

७८२. तिर्यक्वोंमें मिध्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्निध्यात्व, सोलह कपाय श्रीर छह नोकपायका भंग नार्यक्योंके समान हैं। तीन वेदोंकी तीन युद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्षित्रिक्षे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्थिवेद नहीं है। योनिनियोंमें पुरुपवेद श्रीर नपुंसकवेद नहीं है। इनमे स्त्रीवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्य श्रपर्याप्त श्रीर मनुष्य श्रपर्याप्तकोंमें मिध्यात्व श्रीर नपुंसकवेदकी तीन युद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित स्थितिउदीरणा है। सोलह कपाय श्रीर छह नोकपायका भंग नारिकयोंके समान है।

१०८३. देवोंमें तीन दर्शनमोहनीय, सोलह कषाय श्रीर श्राठ नोकषायका भग सामान्य तिर्यक्कांके समान है। इतनी विशेषता हैं कि क्षीवेद श्रीर पुरुषवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सीधर्म श्रीर ऐशान कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए तथा इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्नीवेद नहीं है।

्र ७८४. स्थानतकल्पसे लेकर नौ भैंवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्वकी स्थासंख्यात भागहानि, संख्यात भागहानि, स्रसंख्यात गुणहानि स्रोर स्रवक्तव्य स्थितिउद्दीरणा है। सम्यक्तवकी तीन उदी । सम्मामि श्रित्थ श्रसंखे भागहाणि-स्रवत्त । सोतासक ०-छण्णोक ० श्रित्थ श्रसंखे ० भाणहाणि-संखे ० भागहाणि-स्रवत्त । एवं पुरिसवेद ० । णविर स्रवत्त ० णित्थ । श्रिश्चादि सञ्बद्घा ति सम्म० -बारसक ० - छएणोक ० स्रत्थि दोहाणि - स्रवत्त । एवं पुरिसवेद ० । णविर स्रवत्त ० णित्थ । एवं जाव ० ।

्र ७८४. सामित्ताणु० दुविहो णि० — श्रोघेण आदेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०- श्रणंताणु० चउक० मन्वपदा कस्स ? श्रण्णद० मिच्छाइहिस्स । सम्माः कस्स ? श्रण्णद० सम्माः कस्स ? श्रण्णद० सम्माः मिच्छाइहिस्स । वारस०-णवणोक० तिण्णिविह्न-श्रविष्ठि० कस्स ? श्रण्णद० मिच्छाः इहिस्स । वारस०-णवणोक० तिण्णिविह्न-श्रविष्ठि० कस्स ? श्रण्णद० मिच्छाः इहिस्स । तिण्णिहाणि-श्रवत्त० कस्स ? श्रण्णद० सम्माः हि० मिच्छाः इहिस्स वा । णविष्ठि चदुमं जल०-पुरिसवे० श्रमंखे०गुणविह्न-हाणि० इत्थिवे०-णवुं स० श्रसंखे०-गुणविह्न-हाणि० कस्स ? श्रण्णद० मम्माः इहिस्स । एवं मणुसतिए । णविष्ठि पुरिसवे०-चदुसंजल० श्रमंखे अगुणविह्न० णित्थ । णिसेयपहाणते चदुसंजल० श्रमंखे गुणविह्न० मणुसतिए वि संभवः , खवगसेढीए किट्टीवेदगम्मि संगहिकिट्टीणं संधीमु तदुवलंभादो । लोभसंजलणस्स पुण कालपहाणते वि श्रमंखे अगुणविह्न० श्रित्थ, उवसमसेढीए सुहुम-

यृद्धि, दो हानि श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। सम्यग्मिण्यात्वकी श्रसंख्यात भागहानि श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। सोलह कपाय श्रीर छह नोकषायकी श्रसंख्यात भागहानि, संख्यात भागहानि श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। इसीप्रकार पुरुपवेदकी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषना है कि इसकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धितकके देवोंमें सम्यवत्व, बारह कषाय श्रीर छह नोकपायकी दो हानि श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। इसीप्रकार पुरुपवेदकी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषना है कि इसकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार श्रवाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

१ उद्दर्श, स्वामित्वानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंच श्रीर आदेश। आंचसे मिण्यात्व श्रीर अनन्तानुबन्धी चतुक्क सब पद किसके हाते हैं ? अन्यतर मिण्यादिक होते हैं । सम्यक्त्वके सब पद किसके हाते हैं ? अन्यतर सम्यग्दिष्ट होते हैं । सम्यग्दिण्यादिक सब पद किसके हाते हैं ? अन्यतर सम्यग्दिण्यादिक होते हैं । बारह कपाय और नी नोक्षायकी तीन दृद्धि श्रोर अवस्थित स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अन्यतर मिण्यादृष्टिके होती है । वात् कपाय और अवस्थित स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अन्यतर मिण्यादृष्टिके होती है । इतनी विशेषता है कि चार संज्वलन और पुरुषवेदकी असंख्यात गुणदृद्धि और असंख्यात गुणदृद्धि होती है । इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और चार संज्वलनकी असंख्यात गुणदृद्धि स्थितिउदीरणा नहीं है । निषेकोंकी प्रधानतामें चार संज्वलनकी असंख्यात गुणदृद्धि स्थितउदीरणा नहीं है । निषेकोंकी प्रधानतामें चार संज्वलनकी असंख्यात गुणदृद्धि स्थितउदीरणा मनुष्यिकमें भी सम्भव है, क्योंकि चपकश्रेणिमें कृष्टिवेदकके संप्रहृकृष्टियोंको सिन्धयोंमें वह पाई जाती है । परन्तु लोभसंज्वलनकी कालकी प्रधानतामें भी असंख्यात

किट्टीवेदगपढमसमए परिष्फुडमेव तदुवलंभादो । णवरि एवंविहसंभवो उचारणाकारेण ए विविक्खित्रो । पञ्जत्तएसु इत्थिवेदो णित्थ । मणुसिणीसु पुरिसवेद-एावुंस० एात्थि । इत्थिवेद० अवत्त० सम्माइहिस्स ।

§ ७८६. त्रादेसेण गोरइय० मिच्छ०-सम्मामि०-म्रणंताणु०४ स्रोघं। सम्म० स्रोघं। गावरि त्रसखे०गुणहाणि० णित्थ। बारसक०-छण्णोक० ओघं। णवरि चदुसंज० स्रसंखे०गुणबिह्न-हाणि० णित्थ। एवं णवुंस। गावरि स्रवत्त० गात्थि। एवं सव्वगोरइय०। तिरिक्खेसु पढमपुढिविभंगो। णविर तिण्णवे० तिण्णिबिह्न-हाणि-स्रबिद्धि स्रोधं। स्रवत्त० कस्स १ स्रण्णद० मिच्छाइिह्स्स। एवं पंचिदियतिरिक्खितिए। णविर पज्ज० इत्थिवेदो णित्थ। जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० गात्थि। इत्थिवे० स्रवत्त० णित्थ। पंचि०तिरिक्खत्रपञ्ज०-मणुसस्रपञ्ज० श्रणुदिसादि सव्बद्धा ति सव्वपयडीगं सव्वपदा कस्स १ स्रण्णदरस्स।

१ ७८७. देवेसु मिच्छ०-सम्मामि०-सम्म०-सोलसक०-श्रहणोक० तिरिक्ख-भंगो । णवरि इत्थिवे०-पुरिसवे० श्रवत्त० सारिथ । एवं भवसादि जाव सोहम्मीसाणा

गुणवृद्धि स्थिति उदीरणा है, क्योंकि उपशमश्रेणिमें सूच्मकृष्टिवेदकके प्रथम समयमें स्पष्ट रूपसे वह उपलब्ध होती है। इतनी विशेषता है कि इसप्रकारका सम्भव उच्चारणाकारने विवत्तित नहीं किया। पर्याप्तकोंमे स्त्रीवेद नहीं है तथा मनुष्यिनियोमें पुरुषवेद स्रौर नपुंसकवेद नहीं है। इनमें स्त्रीवेदकी स्रवक्तव्य स्थिति उदीरणा सम्यग्दृष्टिके होती है।

§ ७८६. आदेशसे नारिकयोमें मिध्यात्व, सम्यिमध्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका मंग श्रीषके समान है। सम्यक्तका मंग श्रीषके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। बारह कषाय और छह नोकषायका मंग श्रीषके समान है। इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनकी श्रासंख्यात गुणहादि श्रीर श्रासंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेत्रा जानना चिहए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। तिर्यक्कोंमें प्रथम पृथिवीके समान मंग है। इतनी विशेषता है कि तीन वेदोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अविश्वत स्थितिउदीरणाका भंग श्रीषके समान है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणा किसके होती है श्रीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्थक्किकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्थिवेद नहीं है। योनिनियोंमें पुरुषवेद श्रीर न ंसकवेद नहीं है। इनमें स्थिवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पद्मेन्द्रिय तिर्थक्क श्रीर न ंसकवेद अपर्याप्त श्रीर अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पद किसके होते हैं श्री अव्यत्क होते हैं।

े ७८७. देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्निथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय और आठ नोकषायका भंग तिर्यक्रोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सौधर्म और ऐशान कल्पतकके देवोंमें त्ति । एवं सणकुमारादि महम्मार ति । णवरि इत्थिवदो णत्थि ।

६ ७८८. त्राणदादि णवगेवजा ति मिच्छ०-त्र्रणंताणु०४ सव्वपदा कस्स ? श्रणणद० मिच्छाइष्टि०। सम्म० सगपदा सम्माइष्टिम्म। सम्मामिच्छ० सगपदा सम्मामिच्छाइष्टिस्म। बारमक०-मत्तरणोक० मगपदा कस्स ? श्रणणद० सम्माइष्टि० मिच्छाइष्टि० वा। एवं जाव०।

े ७८९. कालाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ० तिण्विबहु० जह० एगम०, उक० वे समया । श्रमंखे०भागहाणि० जह० एयम०, उक० एकत्तीमं मागरोवमाणि मादिरेयाणि । तििएणहाणि०-श्रवत्त ० जहण्णुक० एयममओ । श्रविह० जह० एगममश्रो, उक्क० अंतोमु० । सम्म० श्रमंखे०भागहाणि० जह० श्रंतोमु०, उक्क० द्वाविद्वमागगे० देखणाणि । सेमपदा० जह० उक० एगममश्रो । सम्मामि० श्रमंखे०भागहाणि० जह० उक्क० अंतोमु० । दोहाणि-श्रवत्त ० जह० उक० एगम० । सोलमक०-भय-दुगुंछ० श्रमंखे०भागविह० जह० एगम०, उक्क० सत्तारम समया। श्रसंखे०भागहाणि० जह० एगसमश्रो, उक्क० अंतोमु०। सेमपदाणं मिच्छत्तमंगो। एविर चदुमंजल० श्रमंखेजगुणविह-हाणि० जह० उक्क० एगस०। पुरिभवे० श्रसंखे०-

जानना चाहिए। इसीप्रकार सनत्कुभारसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमे स्त्रीवेद नहीं हैं।

ु ७८८. श्रानतक्ष्यसे लेकर नौ श्रेवेयकतकके देवोम मिण्यात्व श्रौर श्रनन्तानुबन्धी-चतुष्कके सब पद किसके होते हैं १ श्रन्यतर मिण्याद्यष्टिके होते हैं। सम्यक्ष्वके श्रपने पद सम्यग्द्यष्टिके होते हैं। सम्यग्निण्यात्वके श्रपने पद सम्यग्निण्यादृष्टिके होते हैं। बारह कषाय श्रीर सात नोकषायके श्रपने पद किसके होते हैं १ श्रन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिण्यादृष्टिके होते हैं। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

् ७८६. कालानुगमकी अपेद्या निर्देश दां प्रकारका हं—अांत्र और आदेश। आघसे मिध्यात्वकी तीन वृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर है। तीन हानि और अवक्रव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्भुहूर्त है। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यितिअदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यितिअदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सोलह कपाय, भय और अवक्तव्य स्थितिअदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सोलह कपाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यात भागवृद्धि स्थितिअदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल स्वत्र समय है। असंख्यात भागहानि स्थितिअदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल स्वत्र समय है। श्रेष पदोका भंग स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल स्वत्र समय है। श्रेष पदोका भंग मिथ्यात्वके समान है। इतनी विशेषता है कि चार संज्यातका असंख्यात गुगुवृद्धि और

भागहाणि जह एगस ०, उक्क तेव द्विसागरोव मसदं। संखे ० भागव द्वि जह ० उक्क ० एगस ०। सेसपदा संजलण भंगो। एव मि स्थिवेद ०। एव रि असंखे ० गुराव द्वी एए स्थि। असंखे ० भागहाणि ० जह ० एगस ०, उक्क ० पणवणण पित्रो ० देखणाणि। एवं संजल एगस ०, उक्क ० पणवणण पित्रो ० देखणाणि। एवं संजल एगस ०, उक्क ० तेत्री संसागरो ० देखणाणि। हस्स-रिं असंखे ० भागहाणि जह ० एगस ०, उक्क ० तेत्री संसागरो ० देखणाणि। इस्स-रिं असंखे ० भागहाण् जह ० एगस ०, उक्क ० वस्मासं। सेसपदार्णं भयभंगो। अरदि-सोग ० असंखे ० भागहाण् जह ० एगस ०, उक्क ० पित्रो ० असंखे ० भागो। सेसपदार्णं भयभंगो।

श्चसंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। पुरुषवेदकी श्रमंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। शेष पदींका भंग संज्वलनके समान है। इसीप्रकार स्त्रीवेदकी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यात गुणवृद्धि स्थितिउदीरणा नहीं है। श्रसंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम पचवन पल्य है। नपुंसक वेदका भंग संज्वलनके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणा नहीं है। श्रसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। श्रसंख्यात भागहानि रिथितिउदीरणा नहीं है। श्रसंख्यात भागहानि रिथितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। हास्य श्रीर रिविकी श्रसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। हास्य श्रीर रिविकी श्रसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यात भागहानि है। शेष पदींका भंग भयके समान है।

विशेषार्थ-जो जीव श्रद्धात्तय या संक्लेशत्त्रयसे एक समयतक मिध्यात्वकी स्थितिको बढाकर बाँघता है श्रीर एक श्रावलिके बाद उसी रूपमें उसकी उदीरणा करता है। उसके मिध्यात्वकी वृद्धि स्थितिउदीरणा पाई जाती है जो असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि श्रीर संख्यात गुणवृद्धि इन तीनों रूप सम्भव है। इसलिए मिध्यात्वकी इन तीन वृद्धि स्थिति-उदीरगात्र्योंका जधन्य काल एक समय कहा है। इनका उत्कृष्ट काल दो समय है। खलासा इस प्रकार है-प्रथम समयमें ऋद्धात्त्रयसे श्रीर दूसरे समयमें संक्लेशत्त्रयसे मिध्यात्वका श्रसंख्यात वृद्धिरूप स्थिति बन्ध कराके एक श्राविलके बाद उसी रूपमें उदीरणा होनेपर मिध्यात्वकी असंख्यात वृद्धि स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त हो जाता है। किसी द्वीन्द्रिय जीवने संक्लेश च्रयसे एक समयतक मिध्यात्वका संख्यातवृद्धि रूप स्थितिबन्ध किया। इसके बाद दूसरे समयमें वह मरा और त्रीन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर वहाँ प्रथम समयमें पुनः संख्यात भागवृद्धिको लिये हुए तत्प्रायोग्य स्थितिबन्ध किया । अनन्तर एक आवलिके बाद उनकी उसी क्रमसे उदीरणा हुई। इसप्रकार मिध्यात्वकी संख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त होता है। तथा किसी एक एकेन्द्रिय जीवने एक विप्रहसे संज्ञी पर्ख्वेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर श्रसंज्ञीके योग्य मिध्यात्वका स्थितिवन्ध करके संख्यात गुणवृद्धि की तथा दूसरे समयमें शरीरको प्रहण करके संज्ञीके योग्य मिध्यात्वका स्थितिबन्ध करके संख्यात गुण्यृद्धि की। श्रनन्तर एक श्रावितके बाद उनकी उसी क्रमसे उदीरणा की। इसप्रकार मिध्यात्वकी संख्यात गुण्युद्धि स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त होता है। जो जीव एक समयतक मिध्यात्वके स्थितिसत्त्वसे एक समय कम स्थितिका बन्ध कर बन्धावितके बाद

१७९० त्रादेसेण ऐरइय० निच्छ०-सोलसक०-इस्स-रिद-मय-दुगुंद्धाणं असंखे०-भागवट्टी जह० एयस०, उक्क० बेसमया मत्तारस समया। असंखे०भागहाणि-अविद्वि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। सेमपदाणं जह० उक्क० एगस०। सम्म० असंखे०-भागहा० जह० एगम०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसणाणि। सेसपदाणं जह० उक्क० एगस०। अरदि-सोगाणं हस्सभंगो। णवरि असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो। एवं एावुंस०। णवरि असंखे०भागहाणी ओघं। सम्मामि० ओघं। एवं सत्तमाए। एवरि सम्म० असंखे०भागहाणी जह० अंतोमु०, उक्क०

इसी क्रमसे उसकी उदीरणा करता है उसके मिध्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है। तथा जो जीव नौवें प्रैवेयकमें इकतीस सागर काखतक मिध्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणा करके मनुष्योंमं उत्पन्न हो तत्प्रायोग्य काल तक असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणा करता रहता है उसके मिध्यात्वकी असंख्यात भाग-हानि स्थिति उदीर गाका उत्क्रष्ट काल साधिक इकतीस सागर प्राप्त होता है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि नौवें प्रैवेयकमें जानेके पूर्व भी तत्त्रायोग्य कालतक असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणा बन जाती है। मिध्यात्वकी संख्यात भागहानि श्रीर संख्यात गुराहानि स्थित-उद्दीरणा अपने-अपने योग्य काएडकघातकी अन्तिम फालिके पतनके समय एक समयतक ही होती है तथा असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा मिध्यात्वकी उपशमनाके कालमें एक समय तक होती है, इसलिए इन तीन हानियांका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय ही प्राप्त होता है। अवक्तर्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अवस्थित स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त है यह स्पष्ट ही है। यहाँ मिथ्यात्व कर्मकी असंख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणा आदिके जघन्य और उत्कृष्ट कालका जिस प्रकार खलासा किया उसीप्रकार अन्य प्रकृतियोंके यथायाग्य पर्दोका खलासा कर लेना चाहिए। तथा गतिमार्गणाके भेद-प्रभेदोंने भी इसीप्रकार विचार कर कालप्रकृपणा जान लेनी चाहिए।

े ७५०. आदेशसे नारिकयों में मिध्यात्व, सोलह कषाय, हास्य, रित, भय और जुगुण्याकी ससंख्यात भागवृद्धि स्थित उदीरणाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल मिध्यात्वका हो समय तथा शेषका सत्रह समय है। असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है। शेष पहोंका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्तकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय है। सम्यक्तकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय है। अरि उत्कृष्ट काल एक समय है। अरि अरि शोकका भंग हास्यके समान है। इतनी विशेषता है कि इनकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यात भागवाण है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेत्रा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका काल ओवके समान है। सम्यगिनध्यात्वका भंग ओवके समान है। इसीप्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सम्यक्तकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जयन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट

तेत्तीसं सागरो० देख्रणाणि । एवं पढमाए जाव छड्डि ति । एवरि सगड्डिदी देख्रणा । अरिद-सोग० हस्समंगो । एवरि पढमाए सम्म० श्रसंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० सागरोवमं देख्रणं ।

१ ७९१. सिरिक्खेसु मिच्छ० श्रोघं। सविर असंखे०भागहासि० जह० एयस०, उक्क० तिरिस पिलदो० सादिरेयासि । सम्म० संखे०भागहासि० जह० एयस०, उक्क० तिरिस पिलदो० देखणाणि । सेसपदाणं जह० उक्क० एयस० । सम्मामि० श्रोघं । सोलमक०-छरसोक० असंखे०भागवष्टि० श्रोघं । असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० अंतोष्ठ० । सेसपदासं मिच्छनभंगो । इत्थिवे०-पुनिसवेद० अपपप्यसो पदासमोघं । साविर असंखे०भागहाणि० मिच्छनभंगो । सावुं स० हस्सभंगो । साविर असंखे०भागहाण जह० एयस०, उक्क० पिलदो० असंखे०भागो । एवं पंचिदिय-तिरिक्खितए । साविर मिच्छ०-सोलसक०-सत्तसोक० संखे०भागवष्टि० जह० उक्क० एयस० । पार्वास असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० पुन्वकोडिपुधनं । साविर पजत्तस्य इत्थिवेदो साविथ । जोणिणी० पुरिस०-णवुंस० प्रतिथ । इत्थिवे० अवत्तव्यं च प्रतिथ । सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० अंतोष्ठ०, उक्क० तिरिस पिलदो०

काल कुछ कम तैतीस सागर है। इसीप्रकार पहली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवीतकके नारिकयों-में जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। अरित और शोकका भंग हास्यके समान है। इतनी विशेषता है कि पहली पृथिवीमें सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणाका जबन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर है।

§ ७६१. तिर्यक्कोंमें मिध्यात्वका भंग श्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है। सम्यक्तको ऋसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्क्रष्ट काल कुछ कम तीन पत्य है। शेष पदोंका जघन्य खोर उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यग्मि-थ्यात्वका भंग ओघके समान है। सोलह कषाय श्रीर छह नोकषायोंकी असंख्यात भागवृद्धि स्थिति उदीर णाका भंग स्रोघके समान है। इसंख्यात भागहानि स्थिति उदीर णाका जधन्य काल एक समय है और उस्क्रप्ट काल अन्तर्महर्त है। शेष पदोंका भंग मिथ्यात्वके समान है। स्वीवेद और पुरुषवेदके अपने-अपने पदोंका भंग छोघके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका भंग मिध्यात्वके समान है। नप् सक्रवेदका भंग हास्यके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि स्थिति उदीर एएका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल परुयके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्येख्निकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्व, सोलह कषाय श्रीर सात नोकषायकी संख्यात भागवृद्धि स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। नपुंसकवेदकी असंख्यात भागहानि स्थिति उद्गेरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्तवप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकों में स्त्रीवेद नहीं है तथा योनिनियों में पुरुषवेद स्त्रीर नपु सकवेद नहीं है और योनिनियोंमें कावेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। तथा इनमें सम्यक्तकी

देसूणाणि ।

१ ७९२. पंचि०तिश्विखश्रपञ्च०-मणुसश्चपञ्च० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० श्रमंखे०भागवङ्घि० जह० एयम०, उक्क० वेममया सत्तारम समया । श्रमंखे०भागहाणि-अवद्वि० जह० एयस०, उक्क० श्रंतोष्ठ० । संखे०गुणवङ्गि० जह० एयस०, उक्क० वेसमया । सेसपदाणं जह० उक्क० एयम० ।

६ ७९३. मणुसितय० पंचिदियतिरिक्खित्यभंगो । णत्रिर जासि पयडीणं असंखे०गुणहाणि० अस्थि तामि जह० उक्क० एगम० । णत्रिर सम्म० असंखे०भागहा० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पिलदो० देख्रणाणि । पज्जन० इत्थिवे० णस्थि । सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० तं चेत्र । मणुसिणी पुरिसवे०-णतुंम० एस्थि । इत्थिवे० श्रवत्त० जहण्णुक० एगम० ।

६ ७९४. देवेसु मिच्छ०-सोलमक०-छण्णोक०-सम्मामि० पढमपुढिविभंगो । णविर मिच्छ० असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० एकत्तीसं सागरो० । हस्स-रिद० असंखे०भागहाणि० श्रोघं । इत्थिवेद-पुरिमवे० हस्सभंगो । णविर अवत्त० एत्थि । असंखे०भागहाणि० जह० एगम०, उक्क० पणवएणं पिलदो० देस्णाणि तेत्तीमं अराख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जवन्य काल अन्तर्मुहर्त है श्रोर उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है ।

७५२. पश्चेन्द्रिय निर्यक्ष अपयीत और मनुष्य अपयीतकोंमें मिध्यात्व, सीलह कषाय और सात नोकपायकी असंख्यात भागवृद्धि स्थिति उदीरणाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल मिध्यात्वका दा समय तथा शेपका सबह समय है। असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थिति उदीरणाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्भृहते हैं। संख्यात भागवृद्धि स्थिति उदीरणाका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। शेष पदीका जयन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

े ७५३. मनुष्यत्रिकमं पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि जिन प्रकृतियोंकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा है उनका जवन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जवन्य काल अन्तर्मुहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पत्य है। पर्याप्तकोंमे स्वीवेद नहीं है। इनमें सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जवन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल वहीं है। मनुष्यिनयोंमे पुरुषवेद श्रोर नपुंसकवेद नहीं है। इनमें स्वीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जवन्य श्रोर उत्कृष्ट काल एक समय है।

§ ७-५४. देवांमं मिथ्यात्व, सोलह कषाय, छह नोकषाय झोर सम्यग्मिथ्यात्वका भंग प्रथम पृथिवीक समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल इकतीस सागर है। हास्य झौर रितर्जा असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणाका काल श्रीष्ठके समान है। स्थिवेद और पुरुषवेदका भंग हास्यके समान ह। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थिति उदीरणा नहीं है। असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय हें झौर उत्कृष्ट काल क्रमशः

सागरोवमाणि । सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० तेत्रीसं सागरो० । सेसपदाणं जह० उक्क० एगसमश्रो । एवं सोहम्मादि जाव सहस्सार त्ति । एविर सगहिदी । हस्स-रदि० अरदि-सोगभंगो । मिच्छ० असंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० अंतोम्रहुत्तं । णविर सहस्सारे हस्स-रदि० देवोघं । सोहम्मीसाणे इत्थिवेद० देवोघं । उविर एग्तिथ ।

१ ७९४. भवण०-वाणवें०-जोदिसि० सोहम्मभंगो । णवरि सगद्विदी । सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० अंतोम्र०, उक्क० सगद्विदी देखणा । इत्थिवेद० असंखे०-भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पत्तिदो० देखणाणि पत्तिदो० सादिरेयाणि २ ।

१ ७९६. त्राणदादि जान एवगेनजा ति मिच्छ०-पुरिसने० श्रसंखे०भागहाणि० जह० त्रंतोष्ठ्र०, उक्क० सगद्विदीश्रो एादच्नाश्रो । सेमपदाएं जह० उक्क० एयस० । सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० मगद्विदी देखएा । सेमपदाणं जह० उक्क० एयस० । सम्मामि० श्रमंखे०भागहाणि० जह० उक्क० श्रंतोष्ठ्र० । श्रन्त० जह० उक्क० एयस० । सोलसक०-छण्णोक० श्रमंखे०भागहाणि जह० एगस०, उक्क०

कुछ कम पचवन पत्य और तेतीस सागर है। सम्यक्षकी असंख्यात भागहानि स्थिति-खदीरणाका जवन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। शेष पदोंका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसीपकार सीधर्म कल्पसे लंकर सहम्रार कल्पतक जानना चाहिए। इतती विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। हास्य और रितका भंग अरित और शोकके समान है। मिण्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणाका जवन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि सहस्रार कल्पमें हास्य-रितका भंग सामान्य देवोंके समान है। सीधर्म और ऐशानकल्पमें स्थिवेदका भंग सामान्य देवोंके समान है। उत्पर स्वीवेद नहीं है।

् ७६५. भवनवासी, व्यन्तर श्रोर ज्योतिपी देवोमें सौधर्म कल्पके समान भंग हैं। इतनी विशेषता हैं कि श्रपनी स्थिति कहनी चाहिए। सम्यक्त्वकी श्रसंख्यात भागहानि स्थिति-उदीरणाका जधन्य काल श्रन्तर्भहुते हैं श्रोर उत्क्षप्ट काल कुछ कम श्रपनी स्थितिप्रमाण है। स्त्रीवेदकी स्रसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जधन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य, साधिक एक पल्य श्रोर साथिक एक पल्य है।

े ७६६. त्रानतकलपसे लेकर नो मैंवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व और पुरुपवेदकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण जानना चाहिए। शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यवत्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यिग्धियात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यिग्धितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सोलह कथाय और छह नोकषायकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल

श्रंतोग्च० । सेसपदाणं जहण्णुक ० एवस० ।

७९७. त्राषुदिसादि सञ्बद्घा ति सम्म०-पुरिसवेद० श्रसंखे०भागहाणि० जह० एयस० श्रंतोष्ठ०, उक्क० सगद्विदी । सेसपदा जह० उक्क० एगस० । बारसक०- इण्णोक० श्राणदभंगो । एवं जाव० ।

१७९८. अंतराणु० दुविहो णि०—श्रोघेण त्रादेसेण य । श्रोघेण मिन्छ० स्रसंखे०भागविद्व-अविद्व जह० एगस०, उक० तेविद्वसागरीवमसदं तीहि पिलदोवमेहिं सादिरेयं । असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक० बेळाविद्वसागरीवमाणि देखणाणि । दोविष्टु-हाणि० जह० एगस० अंतोमु०, उक० अणंतकालमसंखेजा० । श्रमंखे०गुण-हाणि० जह० पिलदो० श्रसंखे०भागो, अवत्त० जह० अंतोमु०, उक० दोएहं पि उवहुषोगगलपरियट्टं । एवमणंताणु०४ । जविर असंखे०गुणहाणि० जिथ । अवत्त० जह० अंतोमु०, उक० बेळाविद्वसागरो० देखणाणि । एवमहुक० । जविर असंखे०भाग-हाणि-अवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक० वेत्रां सागरोवमं

अन्तर्मुहर्त है। शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

[्]र ७८७. श्रमुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धिनकके देवोंमें सम्यक्त्व श्रीर पुरुषवेदकी श्रसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काज एक समय श्रीर श्रन्तर्मुहर्त है तथा उत्कृष्ट काल श्रापनी-श्रपनी स्थितिप्रमाण है। शेष पदोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। बारह कषाय श्रीर छह नोकपायका भंग श्रानतकल्पके सभान है। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

[§] ७६८. अन्तरानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—अंग और आहेश। ओषसे मिध्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर नीन पत्य अधिक साधिक एकसी त्रेसठ सागर हैं। असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्यासठ सागर है। दो वृद्धि और दो स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर काल है जो असंख्यात पुद्रलपरिवर्तनप्रमाण हैं। असंख्यात गुण्हानिका जघन्य अन्तर पत्यके असंख्यातवें भागरमाण है और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्रलपरिवर्तनप्रमाण है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्किकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी असंख्यात गुण्हानि स्थितिउदीरणा नही है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्यासठ सागरप्रमाण है। इसीप्रकार आठ क्षायकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका अघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। इसीप्रकार हास्य और रिनकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अन्तर्मुहूर्त है तथा

सादिरेयं। एवमरिद-सोग०। एविर असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० अम्मासं। एवं चदुसंजल०-भय-दुगुंछा०। णविर असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एयस० अंतोष्ठ०। उक्क० अंतोष्ठ०। णविर चदुसंजलए० असंखे०गुएविह णित्थ अंतरं। असंखे०गुणहाणि० जह० अंतोष्ठ०, उक्क० उवहुपोग्गलपिरयट्टं। हित्थवेद० असंखे०भागविहु-हाणि-अविद्वि० संखे०गुणविहु० जह० एयस०, संखे०भागविहु हाणि-संखे०गुणहाणि-अवत्त० जह० अंतोष्ठ०, उक्क० सन्वेसिमएंतकालमसंखेआ पोग्गलपिरयट्टा। असंखे०गुणहाणि० संजलणभंगो। एवं पुरिसवेद०। णविर असंखे०गुणविहु० एिथ अंतरं। एवंस० असंखे०भागविहु-हाणि-अविद्व०। णविर असंखे०गुणविहु० एिथ अंतरं। एवंस० असंखे०भागविहु-हाणि-अविद्व० जह० एयसमञ्जो, उक्क० सागरोवम-सदपुधत्तं। सेसपदाएामित्थिवेदभंगो। णविर संखे०भागविहु० जह० एयसमञ्जो, सेमप० जह० वं चेव। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० जह० एयसमञ्जो, सेमप० जह० अंतोष्ठ०, उक्क० सन्वेसिमुवहूपोग्गलपरियट्टं।

उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। इसीप्रकार अरित और शोककी अपेक्षा जानना चाहिए। इसनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि स्थिति उदीर एक जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर छह महीना है। इसीप्रकार चार संज्वलन तथा भव श्रीर जुगुप्साकी अपेत्रा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थिति-खदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्भृहर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भहर्त है। इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनकी असंख्यात गुणवृद्धि उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। असंख्यात गुणहानि स्थिति उदीरणाका जयन्य अन्तर अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपद्रलपरिवर्तनप्रमाण है। स्त्रीवेदकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहाति, श्चवस्थित श्रोर संख्यात गुणवृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय है, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागहानि, संख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुहलपरिवर्तन-प्रमाण है। असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका भंग संज्वलनके समान है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेत्ता जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणवृद्धि स्थिति उदीरणाका -श्रन्तरकाल नहीं है। नपुंसकवेदकी श्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागहानि श्रीर श्रवस्थित स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सो सागर प्रथकत्त्रप्रमाण है। शेष पदोंका भंग स्त्रीवेदके समान है। इतनी विशेषता है कि संख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, शेष पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्रलपरिवर्तनप्रमाण है।

विशेषार्थ—अजगारप्ररूपणामें मिथ्यात्वकी अजगार और अवस्थित स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल तीन पत्य अधिक एकसी त्रेसठ सागर घटित करके बतला आये हैं वहीं यहाँ मिथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका प्राप्त होनेसे उक्त प्रमाण कहा है। मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छत्यासठ सागरप्रमाण है उसे ध्यानमें रसकर यहाँ मिथ्यात्वकी आसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त काल-

§ ७९९. त्रादेसेण णेरइय० मिच्छ० त्रमंखे०भागविष्ट-हाणि-श्रविष्ट्रि० जह० एयम०, दोविष्ट्र-हाणि-श्रवत्त० जह० अंतोमु०, त्र्रसंखे०गुणहाणि० जह० पित्तदो० श्रसंखे०भागो, उक्क० सन्वेसिं तेत्तीसं सागरो० देस्रणाणि । एवमणंताणु०४-हस्स-रदीणं । णविर श्रसंखे०गुणहाणि० णिथ । एवमरिद-सोग० । णविर श्रसंखे०-

प्रमाण कहा है। निरन्तर एकेन्द्रियोंमें रहनेका उत्कृष्ट काल ध्यनन्त काल है। इस कालके मध्य मिथ्यात्वकी दो बृद्धि और दो हानि स्थिति उदीरणा नहीं होती. इसलिए इनका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्तकालप्रमाण कहा है। एक जीवकी अपेचा प्रथमीपराम सम्यक्तवका जबन्य अन्तरकाल पल्यके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण है और मिध्यात्व गुणस्थानका जधन्य अन्तरकाल अन्तर्महर्त है, इसलिए तो मिथ्यात्वकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर पल्यके श्चमंत्र्यातवें भागप्रमाण श्रीर उसकी श्रवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल श्रन्तर्महर्त कहा है तथा सामान्यसे सम्यक्त्वका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। इतने कालतक कोई जीव प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि न हो और मिण्यादृष्टि बना रहे यह सम्भव है, इसलिए भिध्यात्वके उक्त दोनों पदोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपद्रलपरिवर्तन-प्रमाग कहा है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सब परोंका अन्तरकाल बन जानेसे उसे मिध्यात्वके समान जाननेकी सचना की । मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यात गुणहानि स्थिति उदीरमा नहीं होती, इसलिए उसका निषध किया है। यहाँ इतना और विशेष समझना चाहिए कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्य पद मिध्यादृष्टिके होता है, इसलिए मिध्यात्वके उत्कृष्ट अन्तरकालको ध्यानमे रखकर यहाँ उसका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छत्यासठ सागरप्रमाण कहा है। जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है यह सुगम है। इसीप्रकार आठ कपायोंकी अपेता जातना चाहिए मात्र इनकी उदीराए। कमसे पाँचवें श्रीर छठे गुए। स्थानमें नहीं होती. इसलिए उन गुणस्थानोके उत्कृष्ट कालको ध्यानमें रखकर यहाँ इनकी असंख्यात भागहानि श्रीर अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि कहा है। इनका जघन्य अन्तरकाल क्रमसे एक समय श्रीर अन्तर्गुहर्त सुगम है। हास्य श्रीर रितकी किसी जीवके सातवें नरकमें उदीरणा ही न हो यह सम्भव है, इसलिए इनकी श्रसंख्यात भागहानि श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका उरकृष्ट श्रन्तरकाल साधिक तेतीस सागर कहा है। श्चरति श्चीर शोककी किसी जीवके बारहवें कल्पमें छह माह तक उदीरणा न हो यह भी सम्भव है. इसलिए इनकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल छह माह कहा है। चार संज्वलनकी उदीरणा उपशमश्रेणिमें अन्तर्मुहर्त कालतक नहीं होती, तथा भय श्रीर जगुप्साकी निरन्तर उदीरणाका नियम नहीं। हाँ संसार अवस्थामें अधिकसे अधिक अन्तर्महर्त कालके बाद इनकी उदीरणा अवश्य होती है, इसिलए इनकी असंख्यात भागहानि श्रीर अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्महूर्त कहा है। शेष कथन सुगम है।

े ७६६. चादेशसे नारिकयांमें मिथ्यात्वकी ध्रमंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि धीर अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, दो वृद्धि, दो हानि धीर अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर हे और असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर अन्तर क्रिक्त है और असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्क, हास्य धीर रितकी अपेत्ता जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार अरित

भागहाणि० जह० एगसमञ्चो, उक्क० श्रंतोग्र०। एवं बारसक०-भय-दुगुंछ०। णविर श्रवत्त० जह० उक्क० श्रंतोग्र०। एवं णवुंस०। एवरि श्रवत्त० णित्थ। सम्म०-सम्मामि० श्रसंखे०भागहाणि० जह० एयस०, सेपपदाणं जह० अंतोग्रु०, उक्क० सन्वेसिं तेत्तीसं सागरो० देस्रणाणि। एवं सत्तमाए। पढमादि जाव छट्टि ति एवं चेत्र। णविर सगट्टिदी देस्रणा। णविर हस्स-रदि-श्ररदि-सोग० भयभंगो।

इत्वा तिरिक्खेसु मिच्छ० असंखे०भागविष्टु-अविष्टि जह० एयस०, उक्क० पिलिदो० असंखे०भागो । असंखे०भागहाणि० जह० एगसम्आ, उक्क० तिण्णि पिलिदो० देसुणाणि । सेममोघं । एवमणंताणु०४ । णविर असंखे०गुणहाणि० णित्थ । अवत्त० जह० अंतोस्र०, उक्क० तिण्णि पिलिदो० देसुणाणि । एवमण्चक्खाण०४ । णविर असखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एयस० अंतोस्र०, उक्क० पुन्वकोडी देसुणा । एवमहुक०-छण्णोक० । एवरि असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० अंतोस्र०। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सन्वपदाणमोघं । एवंस० हस्समंगो ।

स्रोर शोककी अपेता जान लेना चाहिए। इतनी त्रिशेषता है कि इनकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मु हुत है। इसीप्रकार बारह कपाय, भय और जुगुप्साकी अपेत्रा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेत्रा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। सम्यक्त्व और कम्यिमध्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है, शेष पदोंका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है। इसीप्रकार सातवी पृथिवीमें जानना चाहिए। प्रथम पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवीतक इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। इतनी विशेषता है कि हास्य, रित, अरित और शोकका भंग भयके समान है।

्र ८००. तिर्यक्रोंमें मिध्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य हं। शेष भंग आघके समान है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेत्ता जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्भुदूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। इसीप्रकार अप्रत्याख्यानावरणचतुष्ककी अपेत्ता जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्भु हूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकाटि है। इसीप्रकार आठ कषाय और अन्तर्भु हूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकाटि है। इसीप्रकार आठ कषाय और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भु हूर्त है। सन्यक्तव, सन्यग्निध्यात्व, स्थीवेद और पुरुषवेदके सब पदीका भंग आघके समान है। नपु सक्वेदका भंग हास्यके समान

ए। एवरि श्रमंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० पुन्तकोडिपुधत्तं । श्रवत्त० श्रोघं ।

१८०१. पंचिदियतिरिक्खितय० मिच्छ० स्रसंखे०भागविह्न-संखे०गुणविह्न-स्रवे जह० एयसमस्रो, संखे०भागविह्न-संखे०गुणहाणि० जह० स्रतोष्ठ०, उक्क० सम्बेसंपु व्वको डिपुधत्तं । स्रसंखे०भागहाणि० तिरिक्खोधं । स्रसंखे०गुणहाणि-स्रवत्त० जह० पित्तदो० स्रसंखे०भागो अंतोष्ठ०, उक्क० सगिहिदी । संखे०भागहाणि० जह० स्रतोष्ठ०, उक्क० तिण्णि पित्तदो० मादिरेयाणि । एवं सोलसक०-द्रण्णोक० । एवि स्रसंखे०गुणहाणि० णित्य । स्रसंखे०भागहाणि० स्रवत्त० तिरिक्खोधं । सम्म० तिण्णि विह्न-संखे०भागहाणि-स्रवत्त० जह० स्रतोष्ठ०, स्रसंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० मन्वेमि मगिहिदी । संखे०गुणहाणि-स्रविद्वि० जह० अंतोष्ठ०, उक्क० पु व्वको डिपुधत्तं । सम्मामि० स्रसंखे०भागहाणि० जह० एयस०, स्रवत्त० जह० स्रतोष्ठ०, उक्क० पु व्वको डिपुधत्तं । दोहाणि० जह० अंतोष्ठ०, उक्क० पु व्वको डिपुधत्तं । इत्थिवे०-पुरिसवेद० हस्सभंगो । णविर स्रसंखे०भागहाणि-स्रवत्त० जह० एगस० अंतोमुहत्तं, उक्क० पु व्वको डिपुधत्तं । एवं णवु स० । णविर संखे०भागहा० जह० अंतोमुहत्तं, उक्क० पु व्वको डिपुधत्तं । एवं णवु स० । णविर संखे०भागहा० जह० अंतोमुहत्तं, उक्क० पु व्वको डिपुधत्तं । एवं णवु स० । णविर संखे०भागहा० जह० अंतोमुहत्तं, उक्क० पु व्वको डिपुधत्तं । एवं णवु स० । णविर संखे०भागहा० जह० अंतोमुहत्तं, उक्क० पु व्वको डिपुधत्तं । एवं णवु स० । णविर संखे०भागहा० जह०

है। इतनी विशेषता है कि ऋसंख्यात भागटानि स्थितिउदीरणाका जघन्य ऋन्तर एक समय है और उत्कृष्ट ऋन्तर पृवकोटिपृथवत्वप्रमाण है। अवक्ष्वय स्थितिउदीरणाका भंग श्रोघके समान है।

८ ८०५. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकमे किथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुरावृद्धि श्रीर श्रवस्थित स्थितिउदीरणका जयन्य श्रन्तर एक ममय है, संख्यात भागवृद्धि श्रीर संख्यात गुणवृद्धि स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि-प्रथक्तवप्रमाण है। असंख्यान भागहानि न्थिति उदीरणाका भंग मामान्य तिर्यक्रोके समान है। असंख्यात गुराहानि और अवक्तव्य स्थितिपदीरसाका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमागा श्रीर श्रन्तर्भृहर्त है तथा उत्क्रष्ट श्रन्तर श्रपनी रिथतिप्रमागा है। संख्यात भागहानि स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। इसीप्रकार सोलह कपाय और छह नोकपायकी अपेत्रा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यात गुणहानि स्थिति उद्देरणा नहीं है । श्रसंख्यात भागहानि श्रीर श्रवक्तव्य स्थित-उदीरणाका भंग सामान्य तिर्यञ्चाके समान है। सम्यक्तको तीन वृद्धि, संख्यात भागहानि श्रीर श्रवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर् अन्तर्मृहर्त है, असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणाका जवन्य श्रन्तर एक समय हं श्रीर सबका उत्कृष्ट श्रन्तर श्रापनी स्थितिप्रमाण है। संख्यात गुणहानि श्रीर श्रवस्थित स्थिनि उदीरणाका जयन्य श्रन्तर श्रन्तर्महर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्वकाटिपृथक्त्वप्रमाण है। सम्यामध्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणाका जघन्य श्चन्तर एक समय है, अवक्तव्य स्थिति उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और दोनोंका ही उत्कृष्ट ऋन्तर अपनी स्थितिप्रमाण है। दो हानि स्थितिउदीरणाका जधन्य अन्तर अन्तर्महर्त है भौर उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्वप्रमास है। स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदका भंग हास्यके समान हैं। इतनी विशंपता है कि श्रसंख्यात भागहानि श्रौर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्भृहर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्तवप्रमाण है। इसीप्रकार

अंतोमु०, उक्क० पुन्तकोडिपुधत्तं । णवरि पज्जत्त०-इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० सात्थि । इत्थिवे० अवत्तन्वं पि णत्थि । असंखे०भागहाणि० जह० एयसमस्रो, उक्क० अंतोमु० ।

§ ८०२. पंचिदियतिरिक्खश्रपञ्ज०-मणुसश्रपञ्ज० मिच्छ०-सोलमक०-सत्ताणोक० श्रसंखे०भागवड्डि हाणि-संखेञ्जगुणवड्डि-श्रवट्टि० जह० एयम०, उक्क० श्रंतोमु० । सेमपदाणं जहएणुक्क० श्रंतोमु० ।

६ ८०३. मणुसेसु मिच्छ० श्रसंखे०भागविहु-संखेजगुणविहु-स्रविद्धि जह० एयस०, संखे०भागविहु संखे०गुणहािण जह० अंतोमु०, उक्क० मन्वेमि पुन्वकोडी देस्रणा । सेमपदाणं पंचिदियतिरिक्खभंगो । एवमग्रांताणु०४ । णविर श्रसंखे०गुण-हािण० णित्थ । स्रवत्त० पंचिदियतिरिक्खभंगो । एवमहक० । णविर श्रसंखे०भागहा०-स्रवत्त० श्रोघं । एवं चदुसंजलण०-छण्णोक । णविर श्रसंखे०भागविहु-स्रविद्धि जहै० एयस०, उक्क० अंतोमुहुतं । एवरि चदुमंज० श्रसंखे०गुणहािण० जह० अंतोमु०,

नपुंसकवेदकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संख्यात भागहानि स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है स्रोर उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्वप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोमे स्त्रीवेद नहीं है। तथा योनिनियोमे पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। तथा योनिनियोंमें स्त्रीवेदकी अवक्तन्य स्थितिउदीरणा भी नहीं है। असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त है।

्र ८०२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंने निध्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, संख्यात गुणवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त है। शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त है।

६८०३. मनुष्यों में भिष्यात्व, श्रसंख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुगावृद्धि श्रोर श्रवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय है, संख्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तमुंहर्त है श्रोर सबका उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है। शेष पदोंका भंग पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इसीप्रकार श्रनन्तानुवन्धी-चतुष्ककी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग पश्चेन्द्रिय तिर्यचोंके समान है। इसीप्रकार श्राठ कषायोंकी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यात भागहानि श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग श्रोघके समान है। इसीप्रकार चार संज्वलन श्रीर छह नोकषायकी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यात भागवृद्धि श्रीर श्रवस्थित स्थिति उदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है। इतनी विशेषता है कि वार संज्वलनकी श्रसंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है श्रीर

९ श्रा॰प्रतौ छ्यगोंक॰ । श्रसंबेभागवड्डि जह॰ इति पाटः ।

उक्क पुरुषकोडिपुत्रचं । सम्म०-सम्मामि०-तिण्णिवेदाणं पंचिं ०तिरिक्खभंगो । स्वरि तिर्ग्हं वेदास सम्म० असंखे ० गुस्सा एक्ष्मिया । स्वरि पञ्च च इत्थिवेदो स्वरिथ । मसुमिसी० पुरिस० पात्रुं स० सितिथ । इत्थिवे० संजलसभंगो । पात्रिर अवन्न जह अंतोम्च०, उक्क० पुरुषकोडिपुधनं ।

इति प्रस्ति मिच्छ० असंखे०भागविष्ठ०-अविष्ठि जह० एयस०, उक्क० अद्वारम सागरो० सादिरेयाणि असंखे०भागहाणि० जह० एयम०, संखे०भागहाणि-अवत्त० जह० अंतोम्रु०, असंखे०गुणहाणि० जह० पित्ति असंखे०भागो, उक्क० चदुग्हं पि एकत्तीमं सागरो० देस्र्णाणि । सेमपदाणं जह० अंतोम्रु०, उक्क० अद्वारम सागरो० सादिरेयाणि । एवमणताणु०४ । णवि असंखे०गुणहाणि० णित्थ । एवं बारसक०-अर्णोक० । णवि असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एगम० अंतोम्रु०, उक्क० अंतोम्रु० । णवि हस्स-रि० अवत्त० जह० अंतोम्रु०, उक्क० अम्मामं । अरिदिसोग० असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एयम० अंतोम्रु०, उक्क० अम्मामं । सम्म० तिण्णिविष्ठ-संखे०भागहाणि-अवत्त० जह० यम०, असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० संखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० सच्वेसिमेकत्तीसं सागरो० देस्र्णाणि । संखे०गुणहाणि-अविष्ठ० सम्मामि०

उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्टथक्त्यप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिण्यात्व और तीन वेदांका भंग पंचेन्द्रिय तियैचोके समान है। इतनी विशेषता है कि तीन वेद और सम्यक्त्वकी ऋसंख्यात गुणहानि स्थिति उदीरणाका भंग संज्वलनके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकों स्त्रीवेद नहीं है, मनुष्टियनियों पुरुपवेद और नपुंसकवेद नहीं है। स्त्रीवेदका भंग संज्वलनके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थित उदीरणाका जयन्य अन्तर अन्तर्भु हूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्टथक अपमाण है।

्र ८०४. देवांमे मिध्यात्वकी श्रसंख्यात भागवृद्धि श्रौर श्रवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय हे श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक श्रठारह सागर है। संख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय है, संख्यात भागहानि श्रोर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मु हूर्त है, श्रसंख्यात गुण्हानि स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर पल्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है तथा चारोका ही उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। शेष पदोका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर भू हूर्त है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक श्रठारह सागर है। इसीप्रकार श्रन्तनानुबन्धीचतुष्ककी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यात गुण्हानि स्थितिउदीरणा नहीं है। इमीप्रकार बारह कषाय श्रोर छह नोकपायकी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यात भागहानि श्रोर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर श्रन्तर्मु हूर्त है तथा उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मु हूर्त है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मु हूर्त है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर छह महीना है। श्ररति श्रीर श्रोककी श्रसंख्यात भागहानि श्रोर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर एक समय श्रीर श्रन्तर्मु हूर्त है तथा उत्कृष्ट श्रन्तर छह महीना है। सम्यक्त्वकी तीन वृद्धि, संख्यात भागहानि श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय है। स्थितउदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर है, श्रसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय है

दोहाणि० जह० श्रंतोमु०, उक्क० श्रद्वारस सागरो० सादिरेयाणि । श्रसंखे०माणहाणिश्रवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० एक्कतीसं सागरो० देस्रणाणि । इत्यिवेद०
श्रमंखे०मागविहु-श्रविहु० जह० एयस०, दोविहु-हाणि० जह० अंतोमु०, उक्क०
सन्वेसि पणवण्णं पिलदो० देस्रणाणि । श्रमंखे०मागहाणि० जह० एयस०, उक्क०
अंतोमु० । पुरिसवेद० भय-दुगुंब्रमंगो । एवि श्रवत्तन्व० णित्थ । एवं मवणादि
जाव सहस्सारा ति । एवि सगिहुदीश्रो । हस्स-रिद-श्ररिद-सोग० भयमंगो । णवि
सहस्सारे हस्स-रिद-श्ररिद-सोग० श्रमंखे०मागहाणि-श्रवत्त० देवोघं । एवि भवणा०वाण०-जोदिसि० इत्थिवे० श्रमंखे०मागविहु-अविहु० जह० एयस०, दोविहु-हाणि०
जह० अंतोमु०, उक्क० सन्वेमिं तिण्णि पिलदो० देस्रणाणि पिलदो० सादिरेयाणि
पिला० सादिरे० । श्रमंखे०मागहाणि० जह० एगम०, उक्क० श्रंतोमु० । सोहम्मीसाणे
इत्थिवेद० देवोघं । उविर इत्थिवेदो एत्थि ।

६ ८०४. त्राणदादि जात्र रावगेवजा ति मिच्छ० श्रसंखे०भागहाणि० जह० एयस०, संखे०भागहार्शि-अवत्त० जद० श्रंतोम्र०, श्रसंखे०गुणहाणि जह० पितदो०

श्रीर सबका उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। संख्यात गुणहानि श्रीर अवस्थित स्थिति उदीर ए। का तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी दो हानि स्थिति उदीर ए। का जघन्य अन्तर अन्तर्कर्त है और उत्कृष्ट भन्तर साधिक श्रठारह सागर है। श्रसंख्यात भागहानि और श्रवक्तस्य स्थिति-उदीरणाका जबन्य अन्तर एक समय और अन्तर्महर्त है तथा उत्क्रष्ट अन्तर कुछ कम-इक्तीस सागर है। स्त्रीवेदकी असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य कान्तर एक समय है, दो वृद्धि और दो हानि स्थितिउदीरणाका जवन्य अन्तर अन्तर्महर्त है क्या सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचनन पल्य है। असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जनन्य श्चन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर श्चन्तर्मुहर्त है। पुरुषवेदका भंग भय **और जुगुरसाके** समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थित कहनी चाहिए। हास्य, रति, अरति श्रीर शोकका भंग भयके समान है। इतनी विशेषता है कि सहस्रार कल्पमें हास्य, रति, अरति श्रोर शोककी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्विति-उदीरणाका भंग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें स्त्रीवेदकी असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जवस्य अन्तर एक समय है, दो वृद्धि श्रीर दो हानि स्थिति उदीर एका जघन्य श्रन्त श्रन्त भ्रन्त भ्रन्त श्रे सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य, साधिक एक पल्य और साधिक एक पल्यप्रमाख है। श्रसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उरकृष्ट भन्दर श्रन्तर्मुहुर्त है। सौधर्म श्रीर ऐशानकल्पमें स्त्रीवेदका भंग सामान्य देवोंके समान है। आगे स्त्रीवेद नहीं है।

§ ८०५. श्रानतकल्पसे लेकर नौ प्रैवेयकतकके देवोंमें मिध्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य श्रन्तर एक समय है, संख्यात भागहानि और श्रवक्तव्य स्थिति- उदीरणाका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर श्रम्तर

असंखे०मागो, उक्क० सन्वेसि सगद्विदी देखणा। एवमणंताणु०४। णवरि असंखे०गुणहाणि० णित्थ। एवं बारसक०-छण्णोक०। णवरि असंखे०भागहाणि-अवत्त०
जह० एयस० अंतोम्च०, उक्क० अंतोमु०। सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० एयस०,
असंखे०भागविद्व-संखे०भागहाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, दोविद्व० जह० पितदो०
असंखे०भागो, उक्क० सन्वेसि सगद्विदी देखणा। सम्मामि० असंखे०भागहाणि-अवत्त०
जह० अंतोमु०, उक्क० सगद्विदी देखणा। पुरिसवे० असंखे०भागहाणि० जह० उक्क०
एयस०। संखे०भागहाणि० मिन्छत्तभंगो।

§ ८०६. त्राणुहिसादि सन्बद्घा ति सम्म० श्रसंखे०भागहाणि० जह० उक्क० एयस०। संखे०भागहाणि० जहण्णुक्क० अंतोग्र०। श्रवत्त० णित्थ अंतरं। एवं पुरिसवे०। णविर श्रवत्त० णित्थ। बारसक०-छण्णोक० श्रसंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० अंतोग्रु०। संखे०भागहाणि-स्रवत्त० जह० उक्क० अंतोग्रुठ। संखे०भागहाणि-स्रवत्त० जह० उक्क० अंतोग्रुठ्तं। एवं जाव०।

६ ८०७. णाणाजीवेहि भंगविचयाणु० दुविहो णि०— स्रोघेण आदेसेण य । स्रोघेण पिच्छ०-णवुंम० स्रसंखे०भागवड्डि-हाणि-अवद्वि० णिय० स्रस्थि । सेमपदा भयणिजा । सोलमक०-छण्णोक० स्रसंखे०भागवड्डि-हाणि-अवद्वि०-प्रवत्त० णिय०

पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितियमाण है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेत्रा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार बारह कपाय और छह नोकपायकी अपेत्रा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थिति- उत्तेरणाका जपन्य अन्तर एक ममय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जपन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जपन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, दो बुद्धियोंका जपन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तर इक्क कम अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यग्मिध्यात्वकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जपन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। पुरुषवेदकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जपन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जपन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका भंग मिध्यात्वके समार है।

६८०६. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धितकके देवोमें सम्यक्त्वकी असंख्यान भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त हैं। अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं हैं। बारह कषाय और छह नोकषायकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त हैं। संख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त हैं। संख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ८०७. नाना जीवोंका श्रवलम्बन कर भंगविचयानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—स्रोध श्रीर श्रादेश। स्रोधसे मिथ्यात्व श्रीर नपुंसकवेदकी श्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रोलह कषाय

ऋत्थि । सेसपदा भयणिजा । सम्म० श्चसंखे०भागहाणि० णियमा श्चर्त्थि । सेसपदा भयणिजा । सम्मामि० सन्वपदा भयणिजा । इत्थिवेद-पुरिसवेद० श्चसंखे०भागहाणि-श्चवद्वि० णियमा श्चर्त्थि । सेसपदाणि भयणिजाणि । एवं तिरिक्खा० ।

६ ८०८, आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० असंखे०भागहाणि-भ्रवष्ठि० णियमा श्रित्थ । सेसपदा भयणिजा । सम्म०-सम्मामि० सम्बप्दाणमोषं । एवं सन्वर्णरइय-सन्वर्वचिदियतिरिक्ख-मणुसतिय-देवा भवणादि जाव सहस्सार ति सन्वपयडीणमसंखे० भागहाणि-अवष्ठि० णियमा अत्थि । सेमपदा भयणिजा । णवरि सम्म०-सम्मामि० श्रोषं । मणुमञ्जपञ्ज० सन्वपयडी० सन्व० भयणिजा ।

्र ८०९. आणदादि णवगेवजा ति सञ्चपय० त्रसंखे०भागहाणि० णियमा त्र्यतिथ । सेसपदा भयणिजा । णविर सम्मामि० सञ्चपदाणि भयणिजाणि । श्रणुदि-सादि सञ्बद्घा ति सञ्चपयडी० त्र्रसंखे०भागहाणि० णियमा श्रात्थि । सेसपदा० भयणिजा । एवं जाव० ।

६ ८१०. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । श्रोबेण मिच्छ०-एार्वुस० असंखे०भागवड्डिउदी० सब्बजी० केव० १ असंखे०भागो । असंखे०-

श्रीर छह नोकपायकी श्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागहानि, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। सम्यक्तवकी श्रसंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणा नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। सम्यग्मिण्यात्वके सब पद भजनीय हैं। स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदकी श्रसंख्यात भागहानि श्रोर श्रवस्थित स्थितिउदीरणा नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। इसीप्रकार तिर्यक्रोंमें जानना चाहिए।

\$ ८०८. श्रादेशसे नारिकयोंमें मिध्यात्व, सोलह कषाय श्रौर सात नोकषायकी श्रसंख्यात भागहानि श्रौर श्रवस्थित स्थितिउदीरणा नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। सम्यक्त्व श्रौर सम्यिग्धियात्वके सब पदोंका भंग श्रोधके समान हैं। इसीप्रकार सब नारिकयोंमें जानना चाहिए। सब पञ्चेन्द्रिय निर्यञ्च, मनुष्यित्रक, सामान्य देव तथा भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमे सब प्रकृतियोंकी श्रसंख्यात भागहानि श्रौर श्रवस्थित स्थितिउदीरणा नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। इतनी विराषता है कि सम्यक्त्व सम्यग्मिध्यात्वका भंग श्रोधके समान है। मनुष्य श्रपर्यातकोंमें सब प्रकृतियोंके सब पद भजनीय हैं।

५ ८०६. श्रानतकल्पसे लेकर नौ प्रैवेयकतककं देवोमे सब प्रकृतियोंकी श्रसंख्यात भागहानि स्थितिचर्दारणा नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिध्यात्वके सब पद भजनीय हैं। श्रमुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी श्रसंख्यात भागहानि स्थितिचदीरणा नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। इसीप्रकार श्रनाहार्क मार्गणातक जानना चाहिए।

१ ८१०. भागाभागानुगमकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोध श्रीर श्रादेश। श्रोधसे मिथ्यात्व श्रोर नपु सकवेदकी असंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने सामहा॰ संखेजा भागा। श्रवट्टि॰ संखे॰भागो। सेसपदा॰ श्रणंतभागो। एवं सोखसक०-इण्णोक०। णवरि श्रवत्त० श्रसंखे॰भागो। सम्म०-सम्मामि० श्रसंखे॰-भागहा० श्रसंखेजा भागा। सेसपदा॰ श्रसंखे॰भागो। इत्थिवे॰-पुरिसवे॰ श्रवट्टि॰ संखे॰भागो। श्रसंखे॰भागो। श्रसंखे॰भागो। सेसपदा॰ श्रसंखे॰भागो। सेसपदा॰ श्रसंखे॰भागो। एवं विरिक्खा॰।

६ ८११, सन्त्रणेरह्य-सन्त्रपंचिदियतिरिक्ख-मणुसत्रपञ्ज० देवा भवणादि जाव सहस्सारा ति सन्त्रपयडी० श्रवद्वि० संखे०भागो । श्रसंखे०भागहाणि० संखेजा भागा। सेसपदा० श्रसंखे०भागो । णवरि जिम्म सम्म०-सम्मामि० श्रत्थि तिम्म सन्त्रपदाणमोघं।

§ ८१२. मणुसेसु सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवेद-पुरिसवेद० अमंखे०भागहाणि० संखेआ भागा । सेसपदा० संखे०भागो । सेसपयडीणं णारयभंगो । पज्जत्त-मणुसिणी-सब्बहुदेवेसु सव्वपयडीणमसंखे०भागहाणि० संखेजा भागा । सेसपदा० संखे०भागो । आणदादि अवराजिदा त्रि अप्पप्पणो पयडीणमसंखे०भागहाणि० असंखेजा भागा । सेसपदा० असंखेजा भागा । सेसपदा० असंखेजा भागा । सेसपदा० असंखेजा भागा ।

भागप्रमास हैं ! असंख्यातवें भागप्रमास हैं । असंख्यात भागहानि स्थिनिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमास हैं । अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमास हैं । शेष पदोंके उदीरक जीव अनन्तवें भागप्रमास हैं । इसीप्रकार सोलह कपाय और छह नोकपायकी अपेन्ना जानना चाहिए । इतनी विशेषता हैं कि इनकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमास हैं । सम्यक्तव और सम्यिमध्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमास हैं । शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमास हैं । स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमास हैं । असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमास हैं । असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमास हैं । असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमास हैं । असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमास हैं । इसीप्रकार तिर्थक्कों जानना चाहिए ।

६ ८११. सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य श्रपर्याप्त, सामान्य देव श्रीर भवनबासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। श्रसंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभाग-प्रमाण हैं। शोष पदोंके उदीरक जीव श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इतनी विरोषता है कि जहाँ सम्यक्त और सम्यग्निथ्यात्व है वहाँ सब पदोंका भंग श्रोधके समान है।

६ ८१२. मनुष्योंमें सम्यक्त्व, सम्यग्मिध्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पहोंके उदीरक जीव संख्यात वे भागप्रमाण हैं। शेष प्रकृतियोंकी अपेक्षा मंग नार्राक्योंके समान है। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थिसिक देवोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव संख्यात भागप्रमाण हैं। आनतकल्पसे लेकर अपराजित कल्पतकके देवोंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि स्थितिके क्वीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यात मागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यात मागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यात भागप्रमाण हैं। इसिप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

- \$ ८१३. परिमाणाणु० दुविहो णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०णवुंम० श्रसंखेजभागविद्ध-हाणि-श्रविद्ध० केति० ? अणंता । सेसपदा० केति० ?
 श्रसंखेजा । जवरि णवुंस० श्रसंखे०गुणहाणि० केति० ? संखेजा । सम्म० श्रसंखे०गुणहाणि० के० ? संखेजा । सेसपदा० के० ? श्रसंखेजा । एवमित्थिवेद-पुरिसवेद० ।
 णविर पुरिसवे० श्रसंखे०गुणविद्ध० के० ? संखेजा । सोलसक०-व्रण्णोक० मिच्छत्तभंगो । एवरि श्रवत्त० श्रणंता । चदुसंजल० श्रसंखे०गुणविद्ध-हाणि० केति० ? संखेजा ।
- ६८१४. सन्त्रागेरइय०-सन्त्रपंचिदियतिरिक्ख-मणुसश्चपञ्ज० देवा भवणादि जाव एविगेवज्ञा ति ऋष्पष्पणो पयडीगां सन्त्रपदा० के० १ श्रमंखेजा।
- ६८१४. तिरिक्षेसु मन्वपयडी० सन्वपदा० त्रोघं। मणुसेसु मिन्छ०-णवुंस० असंखे०गुणहाणि०-अवत्त० के० १ संखेजा। सेमपदा० केति० १ असंखेजा। एवं चदुमंजलण०। एवरि अवत्त० केति० १ अमंखेजा। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०- पुरिसवे० मन्वपदा० के० १ संखेजा। वारसक०-छण्णोक० सन्वपदा० के० १ असंखेजा। मणुमपजत-मणुसिणी-सन्बद्ददेवा० अप्पष्णो प्यडी० मन्वपदा० के० १ संखेजा।
- § ८१३. परिमाणानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है— स्रोघ और आदेश। श्रोघसे मिध्यात्व और नपुंसकवेदकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात मागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदकी असंख्यात गुण्हानि स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। शेष पदांकी स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। शेष पदांकी स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसीप्रकार स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी असंख्यात गुण्वृद्धिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। सोलह कथाय और छह नोकपायका भंग भिथ्यात्वके समान है। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तत्र्य स्थितिक उदीरक जीव अनन्त हैं। चार संज्वलनकी असंख्यात गुण्वृद्धि और असंख्यात गुण्वृद्धि जीद उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। चार संज्वलनकी असंख्यात गुण्वृद्धि और असंख्यात गुण्वृद्धि स्थितिक उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं।
- ्र ८१४. सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य श्रपर्याप्त सामान्य देव तथा भवन-वासियोंसे लेकर नो मैंवेयक तकके देवोंमें श्रपनी-श्रपनी प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? श्रसंख्यात हैं।
- ्रदश्र. तिर्यद्वचोंमं सब प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीवोंका मंग श्रोधके समान है। मनुष्योंमें मिध्यात्व श्रीर नपुंसकवेदकी श्रमंख्यात गुणहानि श्रोर श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ! संख्यात हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव कितने हें ! श्रसंख्यात हैं। इसीप्रकार चार संज्वलनकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ! श्रसंख्यात हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मध्यात्व, स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ! संख्यात हैं। बारह कषाय श्रीर छह नोकषायके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ! असंख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यानी श्रीर

श्रगुद्दिसादि अवसाजिदा त्ति मन्वपयडीणं मन्वपदा० के०? असंखेजा। णविर मम्म० अवत्त ० केति०? मंखेजा। एवं जाव०।

ृ ८१६. खेत्ताणु० दुविहो णिहेसो—ओघेण आदेसेण य । श्रोघेण मिच्छ०-णवुंस० श्रसंखे०भागविष्टु-हाणि-श्रविद्धि केविडिखेत्ते १ सव्वलोगे । सेसपदा० लोग० श्रसंखे०भागे । एवं सोलमक०-छएणोक० । णविर श्रवत्त० सव्वलोगे । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवेद-पुरिसवेद० सव्वपदा० लोग० असंखे०भागे । एवं तिरिक्खा० । सेमगदीसु सव्वपदी० सव्वपदा० लोग० श्रसंखे०भागे । एवं जाव० ।

प्रशंकि कोमणाणु० दुविही णि०—श्रोघेण श्रादेसेण य । श्रोघेण मिच्छ० श्रमंखे०भागविह्न-हाणि-श्रविद्ध० केव० कोसिदं ? सञ्वलोगो । दोविह्न-हाणि० लोग० श्रसंखे०भागो श्रद्धचोद्दम० मञ्बलोगो वा । श्रमंखे०गुणहाणि० लोग० श्रमंखे०भागो श्रद्धचोद्दम० । श्रवत्त० लोग० श्रमंखे०भागो श्रद्धचोद्दस० । एवं मोलमक०-छण्णोक० । णवरि श्रवत्त० सञ्बलोगो । चदुमंज० श्रसंखे०गुणविह्न-

सर्वार्धीमां इके देवींमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? रांख्यान है। अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्तकी अवक्तव्य स्थितिक उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

८८१६. त्रेत्रानुगमकी अपेत्रा निर्देश दो प्रकारका है— श्रोघ और श्रादेश। श्रोघसे मिध्यात्व श्रोर नपुंसकवेदकी श्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागवानि श्रीर श्रवस्थित स्थितिक उदीरक जीवोंका कितना त्रेत्र हैं ! सर्व लोकत्तेत्र हैं । शेष पद स्थितिक उदीरक जीवोंका कितना त्रेत्र हैं ! सर्व लोकते श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसीप्रकार सोलह कपाय श्रीर छह नोकपायकी श्रपेत्ता जानना चाहिए । इतनी विशेषता हैं कि इनकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंका त्रेत्र सर्व लोकप्रमाण हैं । सम्यक्त्व, सम्यग्मध्यात्व, स्थीवेद श्रीर पुरुषवेदके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीवोंका त्रेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसीप्रकार सामान्य नियंश्रोम जानना चाहिए । शेष गतियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीवोंका त्रेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसीप्रकार श्रमाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

दः ७. स्पर्शनानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है— श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे मिश्यात्वर्का ध्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागद्द्वानि श्रीर श्रविश्वित उदीरक जीवोनि कितने चेत्रका स्पर्शन किया है । सब लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । दो वृद्धि श्रीर दो हानि स्थितिके उदीरक जीवोने लोकके श्रसंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौद्द्द भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । श्रसंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीवोने लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रीर त्रसनालीके चौद्द्द भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोने लोकके श्रसंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौद्द भागोंमेंसे कुछ कम श्राठ श्रीर बारह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । इसीप्रकार सोलह कथाय श्रीर छह नोकपायकी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोने सर्व लोकप्रमाण चेत्रका

हाणि केव को सिदं ? लोग व असंखे अगो । सम्म - सम्मामि सव्वपद केव व पोमिदं ? लोग व असंखे अगो । अहुचो हस । पवि सम्म असंखे अगुणहाणि खेतं । इत्थिवे - पुरिमवे व तिण्णिवाङ्गि-अविहि के १० फोमिदं ? लोग असंखे - भागो अहुचो हम । तिण्णिहाणि केव पोमिदं ? लोग असंव भागो अहुचो हम । तिण्णिहाणि केव पोमिदं ? लोग असंव भागो अहुचो हम देस्णा मव्वलोगो वा । अवत्त लोग असंखे अगो मव्वलोगो वा । असंखे - गुणहाणि खेतं । पुरिम असंखे व गुणवाङ्गि - हाणि खेतं । पुरिम असंखे व जाग असंव को गो मव्वलोगो वा । असंखे - गुणहाणि खेतं ।

५८८. आदेसेण छोग्इय० मिच्छ०-सोलमक०-सत्तर्णोक० सव्वपदा० केव० पा० १ लोग० अमंखे०भागो छचोइस० । णवरि मिच्छ०ग्रमंखे०गुणहाणि० खेत्तं । अवत्त० लोग० असंखे०भागो पंचचोइस० । सम्म०-सम्मामि० खेत्तं । एवं विदियादि

स्पर्शन किया है। चार संज्वलनकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यान गुणहानि स्थितिके उदीरक जीवोने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके श्रमंख्यातवें भागप्रमाग चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व ऋौर सम्यग्मिथ्यात्वके सब पहांकी स्थितिक उदीरक जीवोने किनने चेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके ऋसंख्यातवे भाग तथा त्रसनालीके चोदह भागोमेसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषना है कि सम्यक्त्वकी असंख्यात गुणहानि स्थितिक उदीरक जीवोका स्पर्शन चेत्रक समान है। स्वीवेट और पुरुप-वंदकी तीन वृद्धि ऋौर ऋवस्थित स्थितिके उदीरक जीवाने कितने त्रेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके अमुख्यातवे भाग श्रीर त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। तीन हानि स्थितिके उदीरक जीवाने कितने ज्ञेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग. त्रमनालीके चौदह भागोमेसे आठ भाग आर सर्व लोकप्रमाण चेत्रका म्पर्शन किया है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोने लोकके आसंख्यातवें भाग और सर्व लाकप्रमाग ज्ञेत्रका रुपर्शन किया है। श्रामंख्यात गुगाहानि स्थितिके उदीरक जीवांका स्पर्शन चेत्रके समान है। पुरुषवेदकी असंख्यात गुणवृद्धि श्रीर असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीवोका स्पर्शन चेत्रके समान है। नपुंसकवेदका भंग मिश्यात्वके समान है। इतनी विशेषता हैं कि दो बृद्धि, दो हानि ऋौर अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोने लोकके असंख्यातवें भाग श्रीर सर्व लोकप्रमाग चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रमंख्यात गुग्हानि स्थितिके उदीरक जीवोका स्पर्शन चेत्रक समान है।

विशेषार्थ—मिश्यात्वादि किस प्रकृतिके कीन कीन पद हैं श्रीर उनका स्वामी कीन-कीन जीव है इसका स्वामित्वानुगमसे विचार कर स्पर्शन जान लेना चाहिए। इसीप्रकार चागे गतियो श्रीर उनके श्रवान्तर भेदोंमें भी स्पर्शन जान लेना चाहिए।

३ ८१८. श्रादेशसं नारिकयोमं मिश्यात्य, सोलह कपाय श्रोर मात नोकपायके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीवोने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है १ लोकके असंख्यातवें भाग श्रोर त्रसनालीके चोदह भागोमेसे छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशंषता है कि मिश्यात्वकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीवोका स्पर्शन चेत्रके समान हैं। अवक्तन्य स्थितिके उदीरक जीवोने चोदह भागोमेसे

जाव सत्तमा ति । एवरि सगपोसणं । एवरि सत्तमाए मिच्छ० श्रवत्त० खेतं । पटनाए खेदभंगी ।

८ ८१९, तिरिक्लेसु मिच्छ० असंखे०भागविष्टु-हाणि०-अविद्वि० सव्वलोगी। दोविष्टु-हाणि० लोग० असंखे०भागो सन्वलोगो वा। अवत्त० लोग० असंखे०भागो सत्तचोहस०। असंखे०गुणहाणि० खेत्तं। एवं णवुं म०। णविर असंखे०गुणहाणि० णित्थ। अवत्त० लोग० असं०भागो सन्वलोगो वा। एवं सोलसक०-छण्णोक०। णविर अवत्त० केव० पो० १ सन्वलोगो। सम्म०-सम्मामि० खेतं। णविर सम्म० असंखे०भागहाणि० लोग० असंखे०भागो छचोहस०। इत्थिवेद-पुरिसवेद० तिण्णि-विष्टु०-अविद्वि० खेत्तमंगो। तिण्णिहाणि-अवत्त० लोग० असंखे०भागो सन्वलोगो वा।

ं ८२०. पंचिं०तिरिक्खतिय० मिच्छ०-मोत्तसक०-णवणोक० सव्वपद० लोग० श्रमंखे०भागो सव्वलोगो वा । णवरि मिच्छ० श्रवत्त० लोग० श्रसंखे०भागो

कुछ कम पाँच भागप्रमाग् चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्निध्यात्वका भंग चेत्रक समान है। इसीप्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवी पृथिवीतकके नारिकयोंमे जानना चाहिए। इतनी विशेषना है कि अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए। इतनी और विशेषता है कि सातवी पृथिवीमे मिध्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। पहिली पृथिवीमे स्पर्शन चेत्रके समान है।

्टर्ट. तियञ्ज्ञामे मिथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोने सर्व लोकप्रमाण सेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानि स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यातवे भाग और सर्व लोकप्रमाण सेत्रका म्पर्शन किया है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रस्त्रालीकं चीदह भागोंमेसे कुछ कम सात भागप्रमाण सेत्रका म्पर्शन किया है। असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोका स्पर्शन सेत्रके समान है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेत्रा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी असख्यात गुणहानि स्थितिव उदीरणा नहीं है। अत्रक्तव्य स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण सेत्रका स्पर्शन किया है। इमीप्रकार सोलह कपाय और छह नोकपायकी अपेत्रा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उनकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोने कितने सेत्रका स्पर्शन किया है। सर्व लोकप्रमाण सेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यिग्मध्यात्वका भंग सेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यात मागहानि स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यात मागहानि स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यात मागहानि स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यात है। स्थितिद और प्रस्पनेदकी तीन वृद्धि ओर अवस्थित स्थितिक उदीरकोका स्पर्शन केत्रक समान है। तीन हानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोको स्पर्शन स्थितिक उदीरकोका स्पर्शन केत्रक समान है। तीन हानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोको स्पर्शन सेत्रके समान है। तीन हानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोको स्पर्शन सेत्रको स्थितिक उदीरकोका स्पर्शन सेत्रक समान है। तीन हानि क्रीर स्थितिक उदीरकोका स्पर्शन सेत्रक समान है।

§ ८२०. पद्मेनिद्रय तिर्यक्षत्रिकमं मिथ्यात्व, सांलह कपाय और नी नोकपायके सब पटोकी स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया ह । इतनी विशेषना है कि मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोने लोकके असंख्यातवें सत्तवोद्दस् । असंखे ॰ गुणहाणि ॰ इत्थिवेद-पुरिसवेद तिण्णिवड्डि-अवट्ठि०-अवत्त ॰ गावुं म०-अवत्त ॰ केव ॰ पो० १ लोग ॰ असंखे ॰ भागो । सम्म०-सम्मामि ॰ तिरिक्खो छं । यावरि पज्ज ॰ इत्थिवेदो णित्थ । जो गिणि ग्रीसु पुरिस०-णवुंस० णित्थ । इत्थिवेद० अवत्त ॰ गातिथ । पंविं ॰ तिरिक्ख अपज्ज-मणुम अपज्ज ॰ मिच्छ०-सो लमक०-सत्तणो क० मच्वपद ॰ केव ॰ खेतं पो मिदं १ लोग ॰ असंखे ॰ भागो मच्वलो गो वा । मणुसितिए पंचिदियतिरिक्ख तियभगो । णविं सम्म०-सम्मामि ॰ खेतं । मिच्छ०-च दुसंजल०-तिण्णिवेद ॰ असंखे ॰ गुणहाणि ॰ खेतं । गाविर पञ्ज ॰ इत्थिवे ॰ णित्थ । मणुसिणी ॰ पुरिसवे ॰ णित्थ ।

६८२१. देवेसु अप्पणो पयिष्ठ० सन्वपद० लोग० श्रसंसे०भागो अहु-चोइम०। णवरि मिच्छ० असंसे०गुणहाणि० सम्म०-सम्मामि० सन्वपदा० इत्थिवे०-पुग्सिवे० तििएणविष्ट-अविद्वि० अहुचोइम०। एवं मोहम्भीमाण०। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिमि०। णगरि जिम्ह अहुचोइम० तिम्ह अद्धुट्टा वा अटुचोइम०।

भाग और त्रसनालीं के चौदह भागोमें से कुछ कम सात भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसकी असंख्यात गुणहानि स्थिति, स्रीवेद और पुरुपवेदकी तीन वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थिति तथा नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यिग्ध्यात्वका भग सामान्य तिर्यञ्जोंक समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्नीवेद नहीं है। योनिनयोमें पुरुपवेद और नपुंसकवेद नहीं है तथा स्नावदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पञ्जेन्द्रिय तिर्यञ्ज अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिध्यात्व, सोलह कपाय भौर सात नाकपायके सब पदाकी स्थितिके उदीरगोंने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है? लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यितकमें पञ्जेन्द्रिय तिर्यञ्जितकके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यिग्ध्यात्वका भंग चेत्रके समान है। स्वत्वित चार संज्वलन और तीन वेदकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोका स्पर्शन चेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंम स्थिवेद नहीं है तथा मनुष्यितियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है।

८८९१. देवोमे श्रपनी-श्रपनी प्रकृतियोके सब पदोकी स्थितिक उदीरकोन लोकके श्रसंख्यातवें भाग श्रोर त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण त्रेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्वकी असंख्यात गुणहानि स्थिति, सन्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिध्यात्वके सब पदोकी स्थिति तथा स्थीवंद श्रीर पुरुषवेदकी तीन बृद्धि श्रोर खबस्थित स्थितिके उदीरकोने त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम आठ भागप्रमाण त्रेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सौधर्म श्रोर ऐशानकल्पमे जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर श्रीर ज्योतियी देवोमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जहाँ 'त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम श्राठ भागप्रमाण त्रेत्रका स्पर्शन किया है' यह कहा है वहाँ 'त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम साढ़े तीन श्रोर श्राठ भागप्रमाण त्रेत्रका स्पर्शन किया है' यह कहा है वहाँ 'त्रसनालीके चौदह भागोमेसे कुछ कम साढ़े तीन श्रोर श्राठ भागप्रमाण त्रेत्रका स्पर्शन किया है' यह कहा चाहिए।

इन्टर. सणकुमारादि सहस्सार ति सन्त्रपयडी० सन्त्रपदा० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो अट्टचोइस० । आणदादि अच्चुदा ति सन्त्रपयडि० सन्त्रपद० केव० पोसिदं ? लोग० असंखे०भागो अचोइस० । उवरि खेत्तभंगो । एवं जाव० ।

इत्र कालाणु० दुविहो णि०—श्रोषेण श्रादेसेण य। श्रोषेण मिन्छ० श्रमंखे०भागविह-हाणि-श्रविह० केविचं ? मन्वद्धा। सेमपद० जह० एयम०, उक्क० श्रावित० श्रसंखे०भागो। एवं णवुंम०। णविह श्रसंखे०गुणहाणि० जह० एयम०, उक्क० मंखेजा ममया। एवं चदुमंजल०। णविह श्रवत्त० मन्वद्धा। श्रमंखे०गुणविह० जह० एयम०, उक्क० संखेजा ममया। एवं वाग्मक०-छण्णोक०। णविह श्रसंखे०गुणविहि-हाणि० णिव्य। सम्म० श्रसंखे०भागहाणि० सन्वद्धा। सेमपदा० जह० एयस०, उक्क० श्रावित० श्रमंखे०भागो। श्रमंखे०गुणहाणि० जह० एगम०, उक्क० संखेजा समया। सम्मामि० अमंखे०भागहा० जह० अंतोमु०, उक्क० पितदो० श्रमंखे०भागो। सेमपदा० जह० एयम०, उक्क० श्रावित० श्रमंखे०भागो। हिन्थवेद-

्ट्र. सनत्कुमार वल्पसे लेकर सहस्रार वल्पनवके देवीमे सब प्रकृतियोक सब पदीकी स्थितिक उदीरकीने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और असनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । आनतकल्पसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोंमे सब प्रकृतियोंके सब पदीकी स्थितिक उदीरकीने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और असनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है । उपर स्पर्शन चेत्रके समान है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

६ ८२३. कालानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है--श्रोध श्रोर श्रादेश। श्रीयसे मिध्य त्वकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यान भागहानि श्रीर अवस्थित स्थितिके उदीरकींका कितना काल है। सर्वदा काल है। रोष पदांकी स्थितिके उदीरकोका जधन्य काल एक समय है श्रीर उन्कृष्ट काल श्रावलिके त्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी श्रपेद्या जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुगुहानि स्थितिके उदीरकांका जघन्य काल एक समय है और उत्क्रप्ट काल संख्यात समय है। इसीप्रकार चार संज्वलतींकी अपेला जानमा चाहिए। इननी विशोपना है कि अवक्तव्य स्थितिक उदीरकोका काल सर्वदा है। श्चमंख्यात गुगावृद्धि स्थितिक उदीरकोका जयन्य काल एक समय है। श्चीर अक्षप्र काल संख्यात समय है। इसीप्रकार बारह कपाय श्रीर छह नोकपायोंकी श्रपेता जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानि स्थिति दिशिषा नहीं हैं। सम्यक्तवकी श्रासंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वेटा है। शेप पदांशी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्क्रप्त काल आवलिके ऋ हंस्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यात गणहानि स्थितिके उदीरकोंका जयन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यान समय है। सम्यम्मिभ्यात्वकी असंख्यान भागहानिकी स्थितिके उदीरकोंका जबन्य काल श्वन्तर्महर्त है श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रमंख्यातचें भागप्रमाण है। शेप पदोंकी स्थितिके उदीरकोका जवन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

पुरिसवेद० श्रसंखे०भागहाणि-श्रवद्वि० सन्त्रद्धा । सेसपदा० सम्मत्तभंगो । णवरि पुरिमवे० श्रमंखे०गुणवड्ढि० जह० एगस०, उक्क० संखेजा समया ।

६८२४. श्रादेसेण सञ्चणेग्इय०-पंचिदियतिरिक्खितय-देवा भवणादि जाव सहस्सारा ति अप्पप्पणो पयिष्ठ० श्रसंखे०भागहाणि-अविष्ठ० सञ्बद्धा । सेसपदा० जह० एयम०, उक्क० श्रावित्वि० श्रसंखे०भागो । णविर सम्मामि० श्रोघं । सम्म० श्रसंखे०भागहाणि० सञ्बद्धा । सेमपदा० जह० एगम०, उक्क० श्रावित्वि० श्रमंखे०भागो ।

् ८२५. तिरिक्खेसु मञ्जपयडी० सञ्जपदा० श्रोघं। पंचिदियतिरिक्खअप० सञ्जपयडी० श्रमंखेजभागदा०-श्रवद्वि० मञ्बद्धा। सेमपदा० जह० एग०, उक्क० श्रावित्वि० श्रमंखे०भागो।

्र ८२६. मणुसेसु भिच्छ०-एात्रुंम० पंचिदियतिरिक्खभंगो । एावरि श्रसंखे०-गुर्णहाणि-श्रवत्त० जह० एगस०, उक्त० मंखेञा समया । सम्म० श्रसंखे०भागहाणि० इत्थिवे०-पुरिम० श्रसंखे०भागहा०-श्रवद्वि० सच्वद्वा । सेसपदा० जह० एगम०,

स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका भंग सम्यक्त्वके समान है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी असंख्यात गुग्गृबृद्धिकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष काल संख्यात समय है।

\$ ८२४. आदेशसे सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय निर्यक्चित्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि और अविभिन्न स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेप पदोकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सम्यिग्ध्यात्वका भंग ओघके समान है। सम्यक्टवकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेप पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

ह ८२४. तिर्यक्कोमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका भंग श्रोघके समान है। पक्केन्द्रिय तिर्यक्क श्रपर्याप्तकोमें सब प्रकृतियोंकी श्रसंख्यात भागहानि छौर श्रवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उद्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है।

्र ८२६. मनुष्योमें मिथ्यात्व श्रोर नपुंसकवेदका भंग पञ्चोन्द्रिय तिर्यञ्चोके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यात गुण्हानि श्रीर अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यक्तवकी श्रसंख्यात भागहानि स्थिति तथा खीवेद श्रीर पुरुपवेदकी श्रसंख्यात भागहानि श्रीर श्रवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल

उक्कः निर्मेखे त्रा समया । सम्मामि० असंखे०भागहा० जह० उक्कः श्रंतोम्र० । सेसपदा० जह० एगम०, उक्कः निर्मेखे त्रा समया । सोलसक०-छण्णोक० पंचिदियतिरिक्खभंगो । एयरि चदुसंज० असंखे अगुणहाणि० अरोघं ।

्र ८२७. मणुमपज्ज०-मणुमिणीसु सन्वपयडी० असंखे०भागहाणि-अवद्वि० सन्वद्धा । सेसपदा० जह० एयस०, उक० संखेज्जा समया । णवरि सम्म०-सम्मामि० मणुसोघं । मणुमत्रपञ्ज० सन्वपयडी० असंखे०भागहाणि०-अवद्वि० जह० एगस०, पत्तिदो० असंखे०भागो । सेसपदा० जह० एगस०, उक० आवत्ति० असंखे०भागो ।

८२८. त्राणदादि जाव एवगेवङ्जा ति मिच्छत्त-सम्म०-मोलसक०-सत्तणोक० त्रमंखे०भागहाणि० सन्बद्धा । सेमपदा० जह० एगम०, उक्क० त्रावलि० त्रमंखे०भागो । सम्मामि० भसंखे०भागहाणि०-त्रवत्त० त्रोघं ।

८२९. ऋणुद्दिसादि सन्बद्घा ति मन्त्रपयिष्ठि० श्रमखे०भागहाणि० सन्बद्धा । सेमपदा० जह० एगम०, उक्क० श्रावित श्रमखे०भागो । णविर सम्म० श्रवत्त० जह० एयम०, उक्क० संखेजा समया । एविरि सन्बद्धे संखेजजममया कादन्वा । संख्यात समय है । सम्यिमध्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्भुहूर्त है । शेप पदोकी स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । सोलह कषाय श्रीर छह नोकवायका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्वांके समान है । इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनकी श्रसंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोका

भंग श्रोघके समान है।

्रट्य मनुष्य पर्याप्त श्रोर मनुष्यिनियोमे सब प्रकृतियोकी श्रसंख्यात भागहानि श्रोर श्रवस्थित स्थितिके उदीरकोका काल सर्वदा है। शेप पदोक्ती स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त श्रीर सम्यिमध्यात्वका भंग सामान्य मनुष्योके समान है। मनुष्य श्रप्याप्तकोमे सब प्रकृतियोकी श्रसंख्यात भागहानि श्रीर श्रवस्थित स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय हे श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है।

१८२८. द्यानतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोमे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कपाय श्रीर सात नोकपायकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकांका काल सर्वदा है। शेष पदोकी स्थितिके उदीरकांका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल आवितिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि श्रीर अवक्तव्य स्थितिके उदीरकांका भंग श्रोघके समान है।

्ट्रिश्तः अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमे सब प्रकृतियोंकी ऋसंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोका काल सर्वटा है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। इतनी विशेषना है कि सम्यवत्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें आविलके असंख्यातवें भागके स्थानमे

एवं जात्र०।

इट्ठ. अंतराणु० दुविही णि०—श्रोघेण आदेसेण य। श्रोघेण मिच्छ०णवुंस असंखे०भागनष्टि-हाणि-श्रविट णित्थ अंतरं। सेसपदा० जह० एयस०, उक०
अंतोम्रु०। णविर संखे०गुणहाणि-श्रवत्त० जह० एयस०, उक० सत्त रादिंदियाणि।
णवुंस० श्रवत्त० भ्रुज०भंगो। असंखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक० वासपुधत्तं।
सम्म० अमंखे०भागहाणि० णित्थ अंतरं। अविट्ठि०-श्रवत्त० भ्रुजभंगो। सेसपदा०
जह० एगम०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। असंखे०गुणहाणि० जह० एयम०,
उक्क० ल्रम्मासं। सम्मामि० सव्वपदा० जह० एयस०, उक्क० पितदो० असंखे०भागो।
सोलसक०-छण्णोक० असंखे०भागविहि-हाणि-श्रविट ०-श्रवत्त० णित्थ अंतरं।
सेमपदा० जह० एगस०, उक्क० अंतोम्र०। णविर चदुसंज० असंखे०गुणविह० जह०
एयस०, उक्क० वासपुधत्तं। असंखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक्क० वासं सादिरेयं।
णविर लोसंभजल० असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० वस्मासं। इत्थिवे०पुरिसवे० असंखे०भागहाणि-श्रविट णित्थ अंतरं। सेसप० जह० एयस०, उक्क०

संख्यात समय कहना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

६ ८३०. श्रन्तरानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है--आध और आदेश। आधिसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोका अन्तरकाल नहीं है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त है। इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणहानि और श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जधन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर सात दिन-रात है। नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग भुजगारके समान है। असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकांका जवन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षपृथक्त्व-प्रमाण है। सम्यक्त्वकी श्रसंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका श्रन्तरकाल नहीं है। श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग भुजगारके समान है। शेष पदीकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रातप्रमाण है। असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना प्रमाण है । सम्यग्निध्यात्वके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण है। सोलह कषाय और छह नोकपायकी श्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागहानि, श्रवरिथत और श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरकांका अन्तरकाल नहीं है। रोष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहर्त है। इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनकी असंख्यात गुण्यृद्धि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्तवप्रमाण है। असंख्यात गुग्रहानि स्थितिके उदीरकांका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष है। इतनी विशेषता है कि लोभसंज्वलनकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। शेष पदोंकी

श्रंतोमु० । णवरि श्रवत्त० णवुं सयभंगो । श्रमंखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक्र० वामपुधत्तं । पुरिसवे० श्रमंखे०गुणवड्डि-हाणि० कोहमंजलणभंगो ।

८३१. आदेसेण णेरइय मिच्छत्त-मोलसक०-सत्तरणोक० त्रसंखे०भागहाणि-अवद्वि० एत्थि अंतरं । सेमपदा० जह० एयम०, उक्क० अंतोष्ठ० । णवरि मिच्छ० अमंखे०गुणहाणि-अवत्त० ओवं । सम्म०-मम्मामि० सन्वपदा० ओघं । एवं मन्वणेरइय० ।

८३२. तिरिक्खेमु मन्त्रपयडी० ऋष्पष्पणो पदा० श्रोघं । पंचिदियतिरिक्खितिण् णाग्यभंगो । णत्रि तिरिण्यवेद० श्रमंखे०भागहा०-श्रवद्वि० णित्थ
अतरं । सेमपदा० जह० एगम०, उक्क० अंतोमु० । श्रवत्त० श्रोघं । णविर पज्जत्त०
इत्थिवेदां णित्थि । जोणिणीमु पुरिमवे०-णवुंम० णित्थि । इत्थिवे० श्रवत्त० णित्थि ।
पंचि०तिरि०श्रपज्ज० सन्त्रपय० श्रमंखे०भागहाणि-श्रवद्वि० णित्थि श्रंतरं । सेसपदा०
जह० एयस०, उक्क० श्रंतोमु० ।

८ ८३३. मणुमतिए पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णगरि सम्म०-सम्मामि० श्रोघं।

स्थितिकं उदीरकोका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त है। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग नपुंसकवेदकं समान हं। असंख्यात गुग्गहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्तवप्रमाण् है। पुरुषवेदकी असंख्यात गुग्गवृद्धि और असंख्यात गुग्गहानि स्थितिके उदीरकोंका भंग कोथसंज्वलनके समान है।

८६३१. आदेशसे नारिकयोमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय और सान नोकपायकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोका अन्तरकाल नहीं है। शेप पदोकी स्थितिके उदीरकोका अन्तरकाल नहीं है। शेप पदोकी स्थितिके उदीरकोका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोका भंग आयके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्निथ्यात्वके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोका भंग आयके समान है। इसीप्रकार सब नारिकयोमे जानना चाहिए।

८ ८३२. तिर्यक्चोमे सब प्रकृतियोके अपने अपने परोकी स्थितिके उदीरकोका मंग श्रोधके समान है। पर्छ्वोन्द्रिय तिर्यक्चीत्रकमे नारिकयोके समान मंग है। इतनी विशेषता है कि तीन विदोकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोका अन्तरकाल नहीं है। शेष पदोकी स्थितिके उदीरकोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका मंग श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमे स्त्रीवेद नहीं है। योनिनियोंमे पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका अपर्याप्तकोंमे सब प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्र इत्तर है।

६ ८३३. मनुष्यत्रिकमे पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि

चदुसंजल ० - तिण्णिवेद० असंखे०गुणहाणि० श्रोघं। णवरि पज्ज० इत्थिवेदो णित्थ। मणुसिस्मी० पुरिम० - णवुंस० स्मिथ्। इत्थिवे० अवत्त० जह० एगम०, उक्क० वामपुधत्तं। जिम्ह अम्मासं वासं सादिरेयं तिम्ह वामपुधत्तं। मसुमञ्जपज्ज० सन्ब-पयडीणं सन्वपदा० जह० एगम०, उक्क० पित्तदो० स्रमंखे०भागो।

८३४. देवाणं पचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि णवुंम० णत्थि । इत्थिवे०-पुरिसवे० त्रवत्त० णन्थि । एवं भवणादि सोहम्मा त्ति । एव मणक्कुमारादि जाव सहस्सारा त्ति । णवरि इत्थिवे० णत्थि ।

१८३४. श्राणदादि णवगेवज्जा ति मिच्छ० श्रमंखे०भागहाणि० णिथ्य श्रंतरं। सेमप० जह० एयम०, उक्क० मत्त रादिंदियाणि । सम्म० तिण्णिवहि-दोहाणि-श्रवत्त० श्रोघं। मम्मामि० श्रमंखे०भागहाणि-श्रवत्त० श्रोघं। मोलमक०-द्रण्णोक० श्रमंखे०भागहाणि० णिथ्य अंतरं। संखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। श्रवत्त० जह० एयम०, उक्क० अंतोम्र०। एवं पुरिम०। एवरि श्रवत्त० णिथ्य।

सम्यक्त्व श्रोर सम्यग्मिश्यात्वका भंग श्रोघक समान है। चार संज्वलन श्रोर तीन वदकी श्रमंख्यात गुण्हानिके स्थितिके उदीरकोका भंग श्रोघके समान हैं। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोमे म्त्रीबेट नहीं है। मनुष्यिनियोंमे पुरुषवेट श्रोर नपुंसकवेट नहीं है। मन्नीवेदकी श्रवक्तव्य म्थितिके उदीरकोका जघन्य श्रम्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रम्तर वर्षप्रथक्तवप्रमाण् हैं। जहाँ छह माह श्रोर साधिक एक वर्ष श्रम्तर कहा है वहाँ वर्षप्रथक्तव कहना चाहिए। मनुष्य श्रप्याप्तकोमे सब प्रकृतियोक सब पदोकी स्थितिके उदीरकोका जघन्य श्रम्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रम्तर प्रस्थके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है।

८३४. देवोमे पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्षोके समान भंग है। इतनी विशेषना हे कि इनमें नपुंसकवेद नहीं है। तथा स्त्रीवेद श्रोर पुरुषवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसी प्रकार भवनवासियोसे लेकर सौधर्म-ऐशान कल्पतकके देवोमे जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पनकके देवोमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद नहीं है।

६ ८३४. त्रानत कल्पसं लकर नो प्रेवेयकतककं देवांम मिध्यात्वकी श्रमस्यात भागहानि स्थितिकं उदीरकोका अन्तरकाल नहीं हैं। राष पदोंकी स्थितिकं उदीरकोका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है। सम्यक्त्वकी तीन वृद्धि, दो हानि श्रार अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोका भंग ओघके समान हैं। सम्यिगध्यात्वकी असंख्यात मागहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोका भंग ओघके समान हैं। सोलह कपाय और छह नोकपायकी असंख्यात भागहानिकी रिथितिके उदीरकोका अन्तरकाल नहीं हैं। संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात हैं। अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात हैं। इसीप्रकार पुरुपवेदकी अपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं हैं।

९८३६. अगुद्दिसादि सन्बद्घा ति सम्म० असंखे०भागहा० ग्रात्थि अंतरं। संखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एगम०, उक्क० वासपुधत्तं। सन्बद्घे पितदो० संखे०-भागो। एवं पुरिसवे०। णवरि अवत्त० ग्रात्थि। एवं बारसक०-छण्णोक०। णवरि अवत्त० जह० एयस०, उक्क० अंतोष्ठ०। एवं जाव०।

६८३७. भावाणुगमेण सन्वत्थ स्रोदइस्रो भावो ।

्रद्रितः अप्पाबहुआणु० दृविहो णि०—अघेण आदेसेण य। अघेण भिच्छ०-णवृंस० सव्वत्थो० असंखे०गुणहाणि०। अवत्त०उदीर० असंखे०गुणा। संखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा। संखे०भागहाणि० संखे०गुणा। संखे०गुणवहि० असंखे०गुणा। मंखे०भागवहि० संखे०गुणा। असंखे०भागविह० अणंतगुणा। अवदि० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा।

इन्दे९, सम्मत्ति सन्त्रत्थोवा असंखे०गुणहाणि० । श्रवद्वि० श्रसंखे०गुणा ।
 श्रसंखे०मागवद्वि० श्रसंखे०गुणा । संखेजगुणवद्वि० श्रसंखे०गुणा । संखे०भागवद्वि० संखे०गुणा ।
 संखे०गुणा । संवे०गुणहाणि० श्रसंखे०गुणा । संखे०भागहाणि० श्रसंखे०गुणा ।

े ८३६. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थिसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी असल्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। संख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षप्रथक्त्वप्रमाण है। सर्वार्थिसिद्धमें पल्यकं संख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार बारह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

६८३७, भावानुगमकी अपेचा सर्वत्र खोद्यिक भाव है।

६८३८. श्रल्पबहुत्वानुगमकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रीघ श्रोर त्रादेश। श्रीघसे मिण्यात्व श्रोर नपुंसकवेदकी श्रसंख्यात गुगाह।नि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक है। उनसे श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात गुगाह।नि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात गुगाह।नि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात गुगाह।नि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात गुगाह।नि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात गुगाह।नि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात गुगाह।हि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात गागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात गुगाहे। उनसे श्रसंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात गुगाहे। उनसे श्रसंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यात गुगाहे।

\$ ८३९. सम्यक्तकां श्रासंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे श्रावस्थित स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रासंख्यात मागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव श्रासंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणहानि

श्रवत्त० त्रसंखे०गुणा । श्रसंखे०भागहा० श्रसंखे०गुणा ।

§ ८४०. सम्मामि० सव्बत्थो० संखे०गुणहाणि० । संखे०भागहाणि० संखे०-गुणा । त्रवत्त० त्रसंखे०गुणा । त्रसंखे०भागहाणि० त्रसंखे०गुणा ।

ह ८४१. बारसक०-छण्णोक० सन्वत्थो० संखे०गुणहाणि० । संखे०भागहाणि० संखे०गुणा । संखेजगुणविक्व० असंखे०गुणा । संखे०भागविक्व० संखे०गुणा । असंखे०-भागविक्व० अपंतगुणा । अवत्त० संखे०गुणा । अविद्व० असंखे०गुणा । असंखे०-भागहाणि० संखे०गुणा ।

६८४२. चदुसंजलण० सन्वत्थोवा ऋसंखे०गुणवड्ढि०। ऋसंखे०गुणहाणि० संखे०गुणा । संखे०गुणहाणि० ऋसंखे०गुणा । सेस कसायभंगो ।

्र ८४३. इत्थिवेद० सन्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि०। संखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा । संखे०भागहाणि० संखे०गुणा । संखे०गुणावह्वि० असंखे०गुणा । मंखे०भागवह्वि० संखे०गुणा । असंखे०भागवह्वि० असखे०गुणा । अवत्त० संखे०गुणा । अवद्वि० असंखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० मंखे०गुणा ।

द्यसंख्यातगुर्ण हैं। उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव द्यसंख्यातगुर्ण हैं। उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुर्ण हैं।

८ ८४०. सम्यग्निध्यात्वकी संख्यात गुगाहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात गुगो है। उनसे श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव श्रमख्यातगुणे है। उनसे श्रमख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव श्रमख्यातगुणे है।

्र ८४१. वारह कपाय श्रोर छह नोकषायकी संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्ताक हैं। उनसे संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रमन्तगुणे हैं। उनसे श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवक्तिक उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रमंख्यातगुणे हैं।

८४२. चार संज्वलनकी ऋसंख्यात गुण्युद्धि स्थितिक उदीरक जीव सबसे स्तांक है। उनसे ऋसंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुण्हानि स्थितिके उदीरक जीव ऋसंख्यातगुणे हैं। शेप भंग कपायोके समान है।

§ ८४३. श्रीवेदकी श्रसंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात न्याण्ये हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवस्थित स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं।

- ्र ८४४. पुरिसवेद० सन्वत्थोवा असंखे०गुणवृद्धि०। असंखे०गुणहाणि० संखे०गुणा । सेसमित्थिवेदभंगो । एवं तिरिक्खा० । णवरि चदुसंजलण-तिण्णिवेद-सम्म० असंखे०गुणवृद्धि-हाणि० णित्थ ।
- ८८४४. ब्रादेसेण ऐग्इय० मिन्ब० मन्वत्थोवा अमंखे०गुणहाणि०। अवत्त० असंखे०गुणा। मंखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा। संखे०गुणवड्ढि० विसेमाहिया। संखे०-भागवड्ढि-हाणि० दो वि सरिमा संखे०गुणा। अमंखे०भागवड्ढि० असंखे०गुणा। अवत्ति० असंखे०गुणा। अवत्ति० असंखे०गुणा। अमंखे०भागहाणि० मंखे०गुणा। सम्म० श्रोघ। णवरि असंखेजगुणहा० णिथा। सम्मामि० श्रोघं।
- ८४६. मोत्तसक०-छण्णोक० मन्वत्थोवा मंखेजगुणहा० । संखे०गुणबह्धि० विसेमा० । संखेजभागविह्न-हा० दो वि मरिमा संखे०गुणा । स्रमखे०भागविह्ध० स्रसंखेजगुणा । स्रवत्त० संखे०गुणा । स्रविद्ध० ऋसंखेजगुणा । स्रसंखे०भागहा० मंखे०गुणा । एवं णवुंम० । एवरि स्रवत्त० पत्थि । एवं पढमाए । बिदियादि सत्तमा

८४८. पुरुषवदकी श्रमंख्यात गुगावृद्धि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक है। उनसे श्रमंख्यात गुगाहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यानगुरो है। शेष भंग स्थिवेदके समान है। इमीप्रकार सामान्य तिर्यक्कामे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें चार संज्वलन, तीन वेद श्रीर सम्यक्त्वकी श्रमंख्यात गुगावृद्धि श्रीर श्रसंख्यात गुगाहानि रिथितिउदीरगा। नहीं है।

[्]ट४५. श्रादेशमे नारिकयोमे भिण्यान्वकी अमंख्यात गुणहानि रियतिक उदीरक जीव सबसे स्तांक है। उनसे श्रवक्त य स्थितिक उदीरक जीव असंख्यातगुण है। उनसे मख्यात गुणहानि स्थितिक उदीरक जीव अमख्यातगुण है। उनसे मख्यात गुणहानि स्थितिक उदीरक जीव अमख्यातगुण है। उनसे मख्यात भागहानि इन दोनों ही स्थितियोक उदीरक जीव समान होकर सख्यातगुण है। उनसे अमख्यात भागहादि स्थितिक उदीरक जीव असंख्यातगुण है। उनसे अवक्तव्य स्थितिक उदीरक जीव संख्यातगुण है। उनसे श्रवक्तव स्थितिक उदीरक जीव संख्यातगुण है। उनसे श्रवक्तव स्थितिक उदीरक जीव संख्यातगुण है। उनसे श्रवक्तव स्थितिक उदीरक जीव संख्यातगुण है। सम्यक्त्यका मंग श्रोवक समान है। इतना विशेषता है कि इसकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। सम्यिग्यत्वका मंग श्रोवक समान है।

१८४६. सोलह कपाय श्रोर छह नोकपायकी संख्यात गुण्यहानि स्थितिके उद्देशक जीव सबस स्तोक है। उनसे संख्यात गुण्यवृद्धि स्थितिके उद्दीरक जीव विशेष श्रिधिक है। उनसे सख्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात भागवृद्धि श्रोर संख्यात भागवृद्धि स्थितिके उद्दीरक जीव परस्पर समान होकर संख्यातगुणे है। उनसे असंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उद्दीरक जीव असख्यातगुणे है। उनसे अवस्थातगुणे है। उनसे अवस्थातगुणे है। उनसे अवस्थातगुणे है। इसीप्रकार असख्यातगुणे है। इसीप्रकार स्थितिके उद्दीरक जीव संख्यातगुणे है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेसा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अवस्त्वत स्थिति उद्दीरणा नहीं ह। इसीप्रकार पहिली पृथिवीमे जानना चाहिए। दूसरसे लेकर सातवी पृथिवीतकी

ति एवं चैव । एवरि मिच्छ०-सोलमक०-सत्तराोक० संखे०गुणविश्व-हाणि० दो वि सिरसा । पंचिदियतिरिक्खितिए णारयभंगो । णविर इत्थिवे०-पुरिसवे० कपायभंगो । णवुंस० मिच्छत्तभंगो । णविर असंखे०गुणहाणि० रात्थि । पज्जत्त० इत्थिवेदो णित्थ । णवुंसय० पुरिसवेदभंगो । जोरिएसीसु पुरिस०-एवंस० णित्थ । इत्थिवे० अवत्त० प्रत्थि । पंचिदियतिरिक्खअपञ्ज०-मणुसअपञ्ज० सोलमक०-छण्णोक० पंचि०तिरिक्खभंगो । एवं मिच्छ०-णवुंस० । एवर्गि अवत्त० एत्थि ।

६ ८४७. मणुसेमु मिच्छ०-णवुंम० सन्वत्थोवा अमंखे०गुणहाणि० । अवत्त० संखे०गुणा । सेमं पंचिदियतिरिक्खभंगो । सम्म० सम्मामि० श्रोघं । णवरि संखेजनुणं कायव्वं । वारसक०-छण्णोक० पंचिदियतिरिक्खभंगो । चदुसंजल० सन्वत्थो० अमंखे०गुणहाणि० । संखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा । संखेजगुणवड्ढि० विसेमाहिया । सेसं पंचि०तिरिक्खभंगो । इत्थिवे०-पुरिम० एवं चेव । एवरि संखे०गुणं कायव्वं । एवं मणुमपजा० । णवरि मंखे०गुणं कायव्वं । एवरि इत्थिवेदो एत्थि । णवुंस० पुरिम०भंगो । मणुमिणी० एवं चेव । एवरि पुरिस०-णवुंम० एत्थि । इत्थिवेद०

इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषना है कि मिण्यात्व, सोलह कषाय श्रीर सात नोकषाय-की संख्यात गुग्गवृद्धि श्रीर संख्यात गुग्गहानि इन दोनो स्थितियों के उदीरक जीव समान हैं। पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रकमें नार्शकयों के समान संग है। इतनी विशेषता है कि खीवेद श्रीर पुरुष-वेदका संग कषायके समान हैं। नषु सकवेदका संग मिण्यात्वके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रासंख्यात गुग्गहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। पर्याप्तकों से खीवेद नहीं हैं। नषु सकवेदका संग पुरुषवेदके समान है। योनिनियों पुरुषवंद श्रीर नषु सकवेद नहीं है। खीवेदकी श्रावक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रापयीप्त श्रीर मनुष्य श्रपयीप्तकों से सोलह कपाय श्रीर छह नोकषायका संग पश्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों समान है। इसीप्रकार मिण्यात्व श्रीर नपु सकवेदकी श्रापता जानना चाहिए। इतनी विश्वपता है कि श्रावक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है।

६ ८४७. मनुष्योमं मिथ्यात्व स्रोर नपुं सकवेदकी स्रसंख्यात गुगहानि स्थितिक उदीरक जीव सबसे स्ताक है। उनसे स्वक्तव्य स्थितिक उदीरक जीव संख्यातगुर्गो है। रोग भंग पंचेन्द्रिय निर्यक्रोंके समान है। उनसे स्वक्तव्य स्थितिक उदीरक जीव संख्यातगुर्गो है। रोग भंग पंचेन्द्रिय निर्यक्रोंके समान है। उनसे विशेषता है कि संख्यातगुर्गा करना चाहिए। बारह कपाय श्रीर छह नोकपायका भंग पठचेन्द्रिय तिर्यक्रोंके समान है। चार संज्वलनकी श्रमंख्यात गुणहानि स्थितिक उदीरक जीव सबसे स्ताक है। उनसे संख्यात गुणहानि स्थितिक उदीरक जीव सबसे स्ताक है। उनसे संख्यात गुणहिं स्थितिक उदीरक जीव विशेष श्रीक है। रोप भंग पंचेन्द्रिय तिर्यवोंके समान है। स्त्रीवेद श्रीर पुरुषवेदका भंग इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुर्गा करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुर्गा करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुर्गा करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदके समान है। मनुष्यिनियोमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदके समान है। मनुष्यिनियोमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पुरुपवेद श्रीर नपुं सकन

१ ता०प्रती एवं चेव । एवं इति पाठः ।

मन्त्रत्थोता अतत्त । असंखे े गुणहाणि ० संखे ० गुणा । सेसं तं चैव ।

ः ८४८. देवाणं पंचिदियतिरिक्खभंगो । स्विरि णवुंम० सिथ । इत्थिवे०-पुरिसवे० श्रवत्त० सिथ । एवं भवण०-वास्पवें०-जोदिमि० । सोहम्मीसास० विदियपुढविभंगो । स्विरि इत्थिवे०-पुरिसवेद० कमायभंगो । श्रवत्त० सिथ । स्वित्यपुढिविभंगो । स्वित्वकुमागदि जाव महस्साग त्ति । स्वित्यवेदो सिथ ।

६ ८४९. त्राणदादि णवगेवजा ति मिन्छ० मन्वत्थावा स्रसंखे०गुणहाणि० । संखे०भागहाणि० मंखे०गुणा। स्रवत्त० स्रमंखे०गुणा। स्रसंखे०भागहा० स्रमंखे०गुणा। सम्म० मन्वत्थोवा स्रमंखे०भागविष्ठि० । संखे०गुणविष्ठि० स्रमंखे०गुणा। संखे०भागविष्ठि० संखे०गुणा। संखे०भागविष्ठि० संखे०गुणा। संखे०भागहाणि० स्रमंखे०गुणा। सम्मामि० सन्वत्थोवा स्रवत्त० । स्रमंखे०भागहा० असंखे०गुणा। मोलसक०-छण्णोक० सन्वत्थोवा संखे०भागहाणि०। स्रवत्त० स्रमंखे०गुणा। स्रसंखे०भागहाणि०। स्रवत्त० स्रमंखे०गुणा। स्रसंखे०भागहाणि०। स्रवत्त० स्रमंखे०गुणा। स्रसंखे०भागहाणि०। स्रवत्त० प्रतिथ।

वेद नहीं हैं। इनमें स्वीवेदकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक है। उनसे श्रसंस्णात गुण्हानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। शेप उसी प्रकार है।

प्रय देवोमे पंचित्विय तिर्यक्कोंके समान भंग हैं। इतनी विशेषता है कि नपुं सक्वेद नहीं है। स्त्रीवेद झोर पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवतवासी, व्यन्तर झोर ज्योतिषी देवोमे जानना चाहिए। सीधर्म झोर ऐशान कल्पमे दूसरी पृथिवीके समान भंग हैं। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भंग कपायके समान है। इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। नपुं सकवेद नहीं है। इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद नहीं हैं।

दिश्रह. श्रान्त कल्पसे लेकर नौ श्रेवेयकतक देवों में भिण्यात्वकी श्रसंस्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्ताक हैं। उनसे संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे श्रवंस्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रमंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्वकी श्रसंख्यात भागहाद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे मंख्यात गुण्युद्धि स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागहादि स्थितिके उदीरक जीव स्थांतगुणे हैं। उनसे संख्यात भागहादि स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रमंख्यात भागहानि स्थितिक उदीरक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। उनसे श्रमंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार पुरुषवेदकी श्रपेचा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी श्रवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है।

१ म्रा॰प्रती संखे॰ इति पाठः।

्र ८४०. त्र्रणुदिसादि सन्बद्घा त्ति सम्म० सन्बत्थोवा श्रवत्त०। संखे०-भागहाणि० श्रसंखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० श्रसंखे०गुणा। वारसक०-सत्तणोक० श्राणदभंगो। णवरि सन्बद्धे जम्हि श्रसंखे०गुणा तम्हि सखेजगुणं कादन्वं। एवं जाव०।

एवं वड्डिउदीरणा समत्ता ।

्र ८४१. एतथ द्वाणपरूवणे कीरमाणे द्विदि-संक्रमभंगो । णविर ऋष्पष्पणो उक्कस्सद्विदिउदीरणमादिं काद्ण जाव ऋष्यप्पणो उदीरणा-पाऋरगजहण्णद्विदिसंतकम्मे चि स्रोदारिय । तदो 'को कदमाए द्विदीए पवेसगो' चि पदस्स ऋत्थो समचो ।

गेण्हियव्वं एवं द्विदिउदीरणा समता।

९ ८५०. श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी श्रवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुर हैं। उनसे श्रसंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव श्रसंख्यातगुर हैं। बारह कपाय श्रीर सात नोकपायका भंग श्रानतकल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें जहाँ श्रसंख्यातगुर्णा है वहाँ संख्यातगुर्णा करना वाहिए। इसीप्रकार श्रनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

इसप्रकार वृद्धिउदीरणा समाप्त हुई।

\$ ८५१. यहाँपर स्थानप्ररूपणा करनेपर स्थितिसंक्रमके समान मंग है। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणासे लेकर अपने-अपने उदीरणा प्रायोग्य जघन्य सन्कर्मतक उतारकर ग्रहण करना चाहिए। इसके बाद 'को कदमाए टिदीए पवेसगो' इस पदका अर्थ समाप्त हुआ।

इसप्रकार स्थिति उदीरणा समाप्त हुई।

शुद्धि-पत्र

		થશુદ્ધિ	শুৱি
वृष्ट	पं०		
१६	१३	जानना चाहिए । प्रथम नरक्षे	जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमे अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए । प्रथम नरनमे
95	२४	अनुदीरक होते है। पञ्चेन्द्रिय	अनुदीरक होते हैं । योनिनी तिर्यञ्चोमें स्त्रीवेदकी अनुदीरणा नही है । पञ्चीन्द्रय
२४	२	पलिदोवमगि पुन्वकोडिपुवर्त्त	
		णब्महियाणि ?	पु ब्दकोडिपुध स [्]
28	३१	मन्मुख क्षायिक सम्यग्दिष्ट	गन्मुख वेदक मम्यग्हिष्ट
२७	१७	रहता है।	सम्भव है ।
३१	१६	दो क्रोबोका नियमन	दो क्रोधोका तथा नपुनकवेदका नियममे
३ १	32	स्त्रावेदकी	नपृसक्रवेदकी
⊅ ३	७ ५	सिया। उदीर०	मिया उदीर०
દુ હ	3 6	भीतर दा बार	भीतर सयमासयमके साथ दो बार

स्यूचता—यहाँपर हमने प्रकृत भागके कुछ उपयुक्त सशाधन दिये हैं। इसमे यदि विषय सम्बन्धी कुछ सशोधन स्वाध्यायप्रीमयोके ध्यानमे आवें तो उनकी सूचना मिलनेपर परामर्श करके उन्हे अगले भागमे दे दिया जायगा। जायववलाके पूरे मुद्रणके अन्तमे इस ग्रत्थके विषय-सम्बन्धी सब संशोधनोको देनेवा भी हमारा विचार है।